आर.एन.आई., भारत सरकार/1272856/यू.पी.एच.आई.एन.–46478; दिनांक: 09.06.2015

आई.एस.एस.एन.(प्रिन्ट): 2322-0708, आई.एस.एस.एन.(ऑनलाइन) : 2350-0123

अनुसंधान

विज्ञान शोध पत्रिका

खण्ड-4, अंक 1

क्रियेटिव कॉमन्स(सी.सी.) एट्रीब्यूशन 4.0 इंटरनैशनल लाइसेंस के अंतर्गत

हिन्दी में प्रकाशित ओपेन एक्सेस, पियर रिव्यूड, वार्षिक, अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान शोध पत्रिका

वर्ष 2016

INDEXED IN DOAJ

crossref

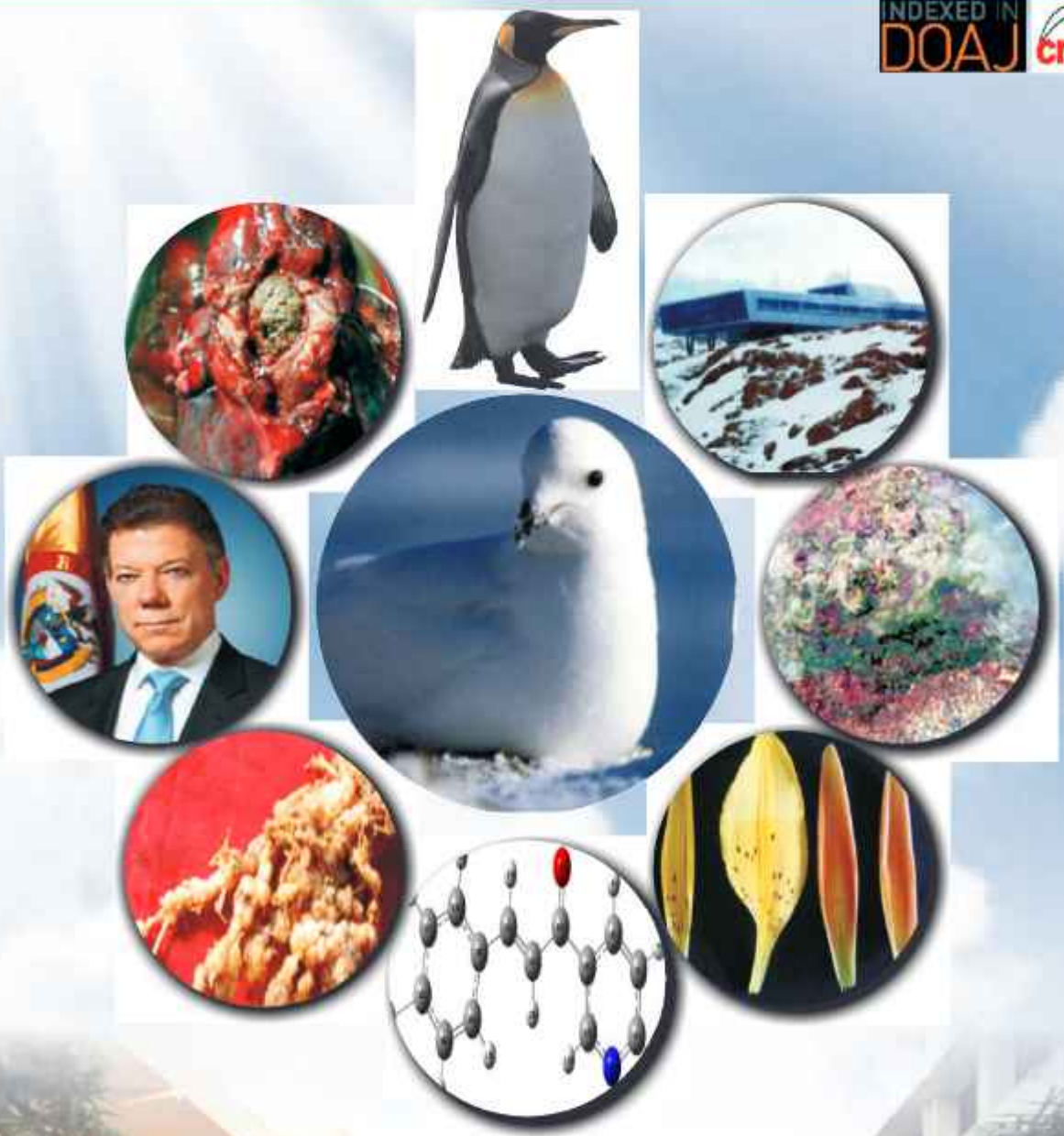

बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद

बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय(के0के0वी0)

नैक प्रत्यायित "बी" संस्था

(लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)

स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ-226001, उ0प्र0, भारत

www.bsnvpgcollege.in/vp

आई.एस.एस.एन.(प्रिन्ट) : 2322-0708 अनुसंधान विज्ञान शोध पत्रिका

बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय(के0के0वी0)

(लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)

स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत

नैक प्रत्यायित "बी" संस्था

बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद

www.bsnvpgcollege.in/vp

संवैधानिक संरचना

मुख्य संरक्षक	श्री टी0 एन0 मिश्र, मंत्री / प्रबंधक, बी.एस.एन.वी. पी.जी. कॉलेज, लखनऊ
संरक्षक	श्री राकेश चन्द्र, प्राचार्य(पदेन)
अध्यक्ष	डॉ0 सुधीश चन्द्र, पूर्व अध्यक्ष–प्राणि विज्ञान विभाग एवं पूर्व प्राचार्य
उपाध्यक्ष	डॉ0 संजय शुक्ल, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भूगर्भ विज्ञान विभाग
उपाध्यक्ष	डॉ0 के0 के0 बाजपेई, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, गणित विभाग
सचिव	डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव, एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग
संयुक्त सचिव	डॉ0 वीना पी0 स्वामी, असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राणि विज्ञान विभाग

संस्थापक मंडल

श्री बृजेन्द्र सिंह(प्राणि विज्ञान)
डॉ0 सुधीश चन्द्र(प्राणि विज्ञान)
डॉ0 जी0 सी0 मिश्र(अरब कल्चर)
डॉ0 संजीव शुक्ल(प्राणि विज्ञान)
डॉ0 संजय शुक्ल(भूगर्भ विज्ञान)
डॉ0 यू0 एस0 अवस्थी(वनस्पति विज्ञान)
डॉ0 के0 के0 बाजपेई(गणित)
श्री राम कुमार तिवारी(भौतिक विज्ञान)
डॉ0 ए0 पी0 वर्मा(वनस्पति विज्ञान)
डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव(गणित)
डॉ0 वीना पी0 स्वामी(प्राणि विज्ञान)
डॉ0 राजेश राम(रसायन विज्ञान)

सम्पादक-मंडल

प्रधान सम्पादक

डॉ0 सुधीश चन्द्र
पूर्व अध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग एवं पूर्व प्राचार्य
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
sudhish1953@gmail.com

सम्पादक

डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
dksflow@hotmail.com

सह–सम्पादक

डॉ0 संजीव शुक्ल
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
sanjiveshukla@gmail.com

डॉ0 संजय शुक्ल
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भू–विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
drsanjaygeo@gmail.com

डॉ0 अर्चना राजन
एसोसिएट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग
राजकीय स्ना0 महा0, हरख, बाराबंकी
rajanarchana2512@gmail.com

डॉ0 ऋचा शुक्ला
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
प्राणि विज्ञान विभाग
नवयुग कन्या महाविद्यालय, लखनऊ
sanjiveshukla@gmail.com

डॉ0 ज्योति काला
एसोसिएट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
jyotikala2010@gmail.com

श्री राम कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, भौतिक विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
rktshri@yahoo.co.in

डॉ0 वीना पी0 स्वामी
असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राणि विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
veenapswami@gmail.com

डॉ0 राजेश राम
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
rajesh_ram_2006@yahoo.co.in

डॉ0 अल्का मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफेसर,
गणित एवं खगोलशास्त्र विभाग,
लखनऊ वि0 वि0, लखनऊ–226007
alkamisra99@gmail.com

इं0 मनोज कुमार वार्ष्णेय
वरिष्ठ प्रवक्ता एवं अध्यक्ष
सिविल इंजीनियरिंग डी0एन0 पॉलीटेक्निक,
परतापुर, मेरठ–250103
manojvarshancy17@rediffmail.com

डॉ0 आलोक मिश्र
एसोसिएट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग
जे0 एन0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001
alok.1953.m@gmail.com

डॉ0 रेनू सिंह
वैज्ञानिक, पर्यावरण विज्ञान एवं जलवायु–समुत्थानशील कृषि
केन्द्र, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
renu_icar@yahoo.com

डॉ0 अर्चना रानी
प्रोफेसर, शरीर रचना विभाग
के0जी0एम0यू0 लखनऊ–226003
archana71gupta@yahoo.co.in

डॉ0 महेन्द्र प्रताप सिंह
उप वन संरक्षक, कार्यालय प्रमुख वन संरक्षक,
17, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ–226001
mahendrapratapsingh1960@gmail.com

सलाहकार-मंडल

प्रमुख सलाहकार

श्री टी0 एन0 मिश्र
अध्यक्ष, बी0 एस0 एन0 वी0 इंस्टीट्यूट, लखनऊ

अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार मंडल

प्रो0 एच0 एम0 श्रीवास्तव(कनाडा)
प्रो0 हेराल्ड रामकिशून(वेस्टइंडीज)
डॉ0 तनवीर आलम(सऊदी अरब)
डॉ0 मनमोहन देव शर्मा(यू0 एस0 ए0)
डॉ0 वृंदा अग्रवाल(यू0 एस0 ए0)
डॉ0 अनूप अग्रवाल(यू0 एस0 ए0)
प्रो0 संजय कुमार श्रीवास्तव(यू0 एस0 ए0)
प्रो0 प्रीति बाजपेई(यू0 ए0 ई0)
प्रो0 एम0 जी0 प्रसाद(यू0 एस0 ए0)
डॉ0 पंकज कुमार तिवारी(कनाडा)

राष्ट्रीय सलाहकार मंडल

प्रो0 भूमित्र देव(लखनऊ)
प्रो0 एच0 आर0 सिंह(इलाहाबाद)
प्रो0 पी0 के0 जैन(दिल्ली)
प्रो0 आर0 सी0 श्रीवास्तव(गोरखपुर)
प्रो0 ए0 के0 चोपड़ा(हरिद्वार)
प्रो0 ए0 के0 शर्मा(लखनऊ)
प्रो0 वाई0 के0 शर्मा(लखनऊ)
प्रो0 सुनील दत्त(लखनऊ)
प्रो0 एस0 पी0 त्रिवेदी(लखनऊ)
प्रो0 पीयूष चन्द्रा(कानपुर)
प्रो0 आनंद कुमार श्रीवास्तव(लखनऊ)
प्रो0 एस0 के0 कुलश्रेष्ठ(चण्डीगढ़)
प्रो0 बी0 एस0 तिवारी(चण्डीगढ़)
प्रो0 आर0 एस0 टण्डन(सुल्तानपुर)

प्रो0 मधु त्रिपाठी(लखनऊ)
डॉ0 एस0 सी0 मिश्र(लखनऊ)
डॉ0 बी0 के0 द्विवेदी(लखनऊ)
डॉ0 एस0 सी0 शुक्ल(लखनऊ)
प्रो0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय(सतना)
प्रो0 यतीश अग्रवाल(दिल्ली)
डॉ0 प्रदीप कुमार श्रीवास्तव(लखनऊ)
डॉ0 शंकर लाल(कानपुर)
डॉ0 उपेन्द्र नन्दन शुक्ल(लखनऊ)
प्रो0 प्रदीप कु0 प्रजापति(जामनगर)
प्रो0 कैलाश डी0 सिंह(लखनऊ)
डॉ0 कृष्ण दत्त(लखनऊ)
डॉ0 संतोष कुमार पाण्डेय(नोयडा)
डॉ0 योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव(भोपाल)

सम्पादकीय

जनमानस का निज मातृभाषा में सोचना, समझना व संप्रेषण एक सहज वृत्ति है। जब हम किसी अन्य भाषा में बोलते या लिखते हैं, तो प्रायः असहज तथा अनावश्यक मानसिक दबाव अनुभव करते हैं। यद्यपि वैज्ञानिक साहित्य अधिकतर अंग्रेजी भाषा में प्रचलित है, तथापि विश्व के अधिकांश देश यथा रूस, जर्मनी, फ्रांस, चीन, जापान, कोरिया आदि विज्ञान का शिक्षण अपनी भाषाओं में कर रहे हैं तथा शोध कार्य भी अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित हैं। हिन्दी एक वैज्ञानिक व सद्भाव की भाषा है, जिसे जैसा लिखते हैं वैसा ही बोलकर सटीक संप्रेषण प्रस्तुत करते हैं। आज भारत में विज्ञान व अन्य विषयों की शिक्षा–दीक्षा अपनी मातृभाषा में करने की महती आवश्यकता है, जिससे सुदूर अंचल में निवसित उत्कंठित छात्र/छात्राएं भी उसका समुचित लाभ उठा सकें तथा देश की मुख्य धारा से जुड़ सकें। इस दिशा में अनेक शासकीय व अशासकीय संस्थायें निरन्तर प्रयासरत हैं। उच्च शिक्षा में भी पाठ्य सामग्री मातृभाषा हिन्दी में उपलब्ध हो रही है। आज हिन्दी विश्व में चौथी संवाद की भाषा है। वर्तमान में एन्ड्रॉयड व वेब प्रोर्टल्स भी हिन्दी में उपलब्ध हैं। आज हम अंतर्राष्ट्रीय मंच पर तो हिन्दी को उचित स्थान देने की बात कर रहे हैं, पर हमें स्वयं भी राज्य व राष्ट्रीय स्तर पर इसके प्रचार–प्रसार व दैनिक कार्यों में हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग बढ़ाना होगा।

बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद ने इसी उद्देश्य से मातृभाषा हिन्दी में "अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)" का प्रकाशन वर्ष–2013 में प्रारम्भ किया जिसमें विज्ञान की विभिन्न धाराओं को सम्मिलित किया गया है। इसमें आंकलित शोधपत्र, आलेख, समीक्षा, तकनीकी व वैज्ञानिक लेख, वैज्ञानिक शोध सार, हिन्दी में आयोजित कार्यशालाओं की आख्या एवं विविध महत्वपूर्ण वैज्ञानिक सूचनाएं इत्यादि समाहित हैं ताकि शोध कार्यों व वैज्ञानिक उपलब्धियों का सीधा लाभ सरलतम भाषा में छात्र/छात्राओं, जनमानस व सुधी जनों तक उपलब्ध कराया जा सके। बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद के प्रयासों से "अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)" आर0एन0आई0, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, द्वारा पंजीकृत, आई0एस0एस0एन0(प्रिंट व ऑनलाइन) प्रदत्त, डायरेक्ट्री ऑफ ओपेन एक्सेस जर्नल्स(डी0ओ0ए0जे0) में अनुक्रमाणित तथा क्रियेटिव कॉमन्स(सी0सी0) एट्रीब्यूशन 4.0 इंटरनैशनल लाइसेंस के अंतर्गत हिन्दी में प्रकाशित ओपेन एक्सेस, पियर रिव्यूड, वार्षिक अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान शोध पत्रिका है। पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति के इस क्रम में पत्रिका के वर्तमान खण्ड–4, अंक–1, वर्ष–2016 के प्रत्येक शोध पत्र/लेख हेतु क्रॉस रेफरेंस एजेन्सी द्वारा डी0ओ0आई(डिजिटल ऑब्जेक्ट आइडेन्टीफायर) संख्या प्राप्त की गई है जिसे शोध पत्रों/लेखों के प्रथम पृष्ठ पर अंकित किया गया है, जिससे पत्रिका में छपी हुई सामग्री पूरे विश्व में अधिक से अधिक शैक्षणिक उपयोग हेतु देखी व पढ़ी जा सकेगी।

सम्पादक मंडल "अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)" की उत्तरोत्तर सफलता हेतु इसके सदस्यों, विद्वानों अध्यापकों, शोधार्थियों, छात्र/छात्राओं व सहयोगियों का आभारी है। प्रयास है कि भविष्य में पत्रिका "प्रभाव गणना कारक" जगत में प्रवेश कर अन्य स्थापित वैज्ञानिक शोध पत्रिकाओं की भांति प्रथम पंक्ति में स्थान बना सकेगी। इस दुरूह कार्य में आप सभी का अमूल्य सहयोग तथा वैज्ञानिक प्रतिभा से विशिष्ट योगदान अपेक्षित है। इसी मंगलकामना के साथ "अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)" का खण्ड–4, अंक–1, वर्ष–2016 विद्यार्थियों, शिक्षकों, वैज्ञानिकों, शोधार्थियों व विचारकों को समर्पित है।

डॉ0 सुधीश चन्द्र
प्रधान सम्पादक
"अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)"
एवं
अध्यक्ष, बी.एस.एन.वी. विज्ञान परिषद

आप की राय

अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) एक सराहनीय प्रयास है कि हम हमारी राजभाषा में अपने शोध का प्रस्तुतीकरण कर रहे हैं। इस प्रकार की पत्रिकाओं को और प्रोत्साहित करना चाहिए।

सचिन सी0 नरवडिया
वैज्ञानिक–सी, विज्ञान प्रसार, नई दिल्ली, भारत
snarwadiya@gmail.com

मुझे अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) के खण्ड–3, अंक–1, वर्ष–2015 को पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। व्यक्तिगत रूप से मुझे पत्रिका स्तरीय लगी जिसमें गलतियाँ नही के बराबर थी तथा प्रकाशित लेख उच्च कोटि के लगे। यह पत्रिका युवा शोधार्थियों को अपने शोध को हिन्दी में छपवाने एवं वैश्विक स्तर पर प्रचार–प्रसार हेतु अच्छा पटल है। पत्रिका के संपादन मंडल का कार्य प्रशंसनीय है। मैं पत्रिका के उज्जवल भविष्य तथा उत्कृष्ट स्तर बनाये रखने की मंगल कामना करता हूँ।

प्रो0 राम निवास
भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226007, उ0प्र0, भारत
rnivas.lu@gmail.com

अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) नवशोधार्थियों को मातृभाषा में शोध प्रकाशित करने की प्रेरणा देता है, इससे अनावश्यक भ्रम की बचत व मौलिक शोध को बढ़ावा मिलता है। आशा करता हूँ कि शोध पत्रिका अपनी गुणवत्ता निखारकर अंतर्राष्ट्रीय जगत में अग्रणी स्थान प्राप्त करेगी। शुभकामनाओं सहित,

डॉ0 संजीव शुक्ल
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष–प्राणि विज्ञान विभाग, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
sanjiveshukla@gmail.com

उत्कृष्ट, उपयोगी, ज्ञानवर्धक एवं सरल हिन्दी भाषा में प्रकाशित 'अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)' के लिये आपको हार्दिक बधाइयाँ एवं शुभकामनाएं। 'अनुसंधान' गत् वर्षों की भांति अपने पाठकों, विशेषकर विद्यार्थियों के ज्ञानार्जन हेतु अत्यंत लाभकारी सिद्ध होगी।

डॉ0 आलोक मिश्र
एसोसिएट प्रोफेसर(सेवानिवृत्त), वनस्पति विज्ञान विभाग, एस0 जे0 एन0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
alok.1953.m@gmail.com

अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) राजभाषा हिन्दी का सम्मान बढ़ाने के साथ–साथ शुद्ध एवं व्यवहारिक विज्ञान के विविध पक्षों पर स्तरीय शोध पत्र प्रकाशित कर एक पंथ दो काज वाली कहावत चरितार्थ कर रहा है।

डॉ0 महेन्द्र पाठक
कार्यक्रम अधिशाषी, आकाशवाणी, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drpathakmp@gmail.co

बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद, लखनऊ, द्वारा प्रकाशित अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) हिन्दी में निकलने वाली एक अनोखी पत्रिका है। हिन्दी में विज्ञान से सम्बन्धित शोध छापने के लिये इसकी टीम के सदस्य बधाई के पात्र हैं।

डॉ0 आनन्द अखिला
पूर्व वरिष्ठ वैज्ञानिक, सीमैप, लखनऊ, उ0प्र0, भारत
akhiladr@hotmail.com

अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) हिन्दी भाषा के माध्यम से विज्ञान के सभी विषयों के शोधपरक, विश्लेषणात्मक, सामान्य विज्ञान की जानकारी, अभिनव उपलब्धियाँ इत्यादि लेख प्रकाशित करता है, यह कार्य बेहद प्रशंसनीय और आवश्यक है। समाज में वैज्ञानिक शोध लाने के लिये ये बहुत आवश्यक है कि विज्ञान की उच्चतम और अभिनव सूचनाएं आम लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा में भी उपलब्ध हो। अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) इस उद्देश्य की पूर्ति में बेहद सफल और संतोषजनक प्रयास है।

रणधीर सिंह
शोध छात्र, बी0एस0आई0पी0, लखनऊ–226007, उ0प्र0, भारत
randheer.singh@gmail.com

अंग्रेजी भाषा में वैज्ञानिक विषयों पर जिस प्रकार स्तरीय पत्रिकायें निकलती हैं। उस प्रकार हिन्दी भाषा में स्तरीय पत्रिकाओं का नितान्त अभाव है। इस दिशा में बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद, लखनऊ द्वारा "अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)" का प्रकाशन करके इस कमी को पूरा करने का 'स्तुत्य' प्रयास किया गया है। यह पत्रिका विज्ञान के लगभग सभी अंगों जैसे गणित, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जन्तु विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान एवं पर्यावरण विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण लेखों का प्रकाशन करती है। इस पत्रिका के स्तरीय लेखों के कारण समाज का प्रबुद्ध वर्ग इसकी ओर आकर्षित हो रहा है। इस अति महत्वपूर्ण कार्य के लिये अनुसंधान पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े विज्ञान परिषद के सभी सदस्य बधाई के पात्र हैं।

डॉ0 महेन्द्र प्रताप सिंह
उप वन संरक्षक, कार्यालय प्रमुख वन संरक्षक, 17, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
mahendrapratapsingh1960@gmail.com

डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव एवं उनके सहयोगियों द्वारा विगत कुछ वर्षों से प्रकाशित अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) अल्प अवधि में ही भारतीय विज्ञान क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बनाने में पूर्ण रूप से कामयाब हुई है। यह शोध पत्रिका हमारी मातृभाषा हिन्दी में वैज्ञानिक शोध में संलग्न शोधार्थियों, वैज्ञानिकों, तथा वैज्ञानिक अभिरुचि रखने वाले व्यक्तियों तक तक आसानी से पहुँचने में सफल रही है। राजभाषा हिन्दी को और अधिक लोकप्रिय बनाने में भी यह एक अभिनव एवं सराहनीय प्रयास है। मै पत्रिका के सम्पादक मंडल को इस अभूतपूर्व प्रयास हेतु बधाई देना चाहता हूँ, साथ ही शोध पत्रिका की उत्तरोत्तर लोकप्रियता की कामना करता हूँ।

डॉ0 बी0 डी0 सुतेरी
अवकाश प्राप्त उपाचार्य, रा0 स्ना0 महा0, पिथौरागढ़–262502, उत्तराखण्ड, भारत
bd@suteri.com

आर.एन.आई., भारत सरकार / 1272856 / यू.पी.एच.आई.एन.–46478; दिनांक: 09.06.2015

स्थापना वर्ष–2013

आई0एस0एस0एन0(प्रिंट): 2322–0708
आई0एस0एस0एन0(ऑनलाइन): 2350–0123

अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)

क्रियेटिव कॉमन्स(सी.सी.) एट्रीब्यूशन 4.0 इंटरनैशनल लाइसेंस के अंतर्गत
हिन्दी में प्रकाशित ओपेन एक्सेस, पियर रिव्यूड, वार्षिक, अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान शोध पत्रिका

खण्ड–04, अंक–01

वर्ष–2016

मुख्य आवरण पृष्ठ
संवैधानिक संरचना एवं संस्थापक मंडल(मुख्य अंतः आवरण पृष्ठ)
सम्पादक मंडल
सलाहकार मंडल
सम्पादकीय लेख
आप की राय

अनुक्रमणिका

भाग / वर्ग	क्र0सं0	शीर्षक व लेखक	मु0पृ0
1 शोध पत्र	1.1	एम0 एड0 स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन के मध्य सम्बन्ध का सांख्यिकीय अध्ययन प्रतिमा श्रीवास्तव	1–9
	1.2	एशियाटिक लिली की पंखुड़ियों में एंथोसाईनिन रंजकता का अध्ययन मस्त राम धीमान; रीता भाटिया; राज कुमार; राम सिंह सुमन; चन्द्रेश; नीरज व महेश गुलेरिया	10–14
	1.3	दक्षिणी राजस्थान में बाघों की उपस्थिति–कुछ प्रमाण सतीश कुमार शर्मा	15–18
	1.4	ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के विद्यार्थियों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन दिनेश कुमार	19–21
	1.5	भूमि उपयोग के संदर्भ में सोन घाटी के पूर्वी क्षेत्र का भू–आकृतिक अध्ययन संजय शुक्ल	22–25
	1.6	होमोफोबिया तथा एल जी बी टी युवा की स्वास्थ्य समस्यायें–एक अध्ययन ज्योति काला	26–29
	1.7	दुर्बल निर्देशित सन्निकटन के अन्तर्गत त्रिफलक अनुप्रस्थ काट की धात्विक परत वाली ऑप्टिकल तरंग वर्तिका के मॉडल कट ऑफ गुणों का विश्लेषण अलका शर्मा	30–34
	1.8	चालकोन डेरिवेटिव 3-(4-chlorophenyl)-1-(pyridin-3-yl) prop-2-en-1-one के प्रथम व द्वितीय घातीय स्थिर अरेखिक प्रकाशकीय गुणों (NLO) का अध्ययन राम कुमार तिवारी एवं राकेश कुमार सिंह	35–38
	1.9	फोनान–फोनान पारस्परिक प्रभाव के कारण NbO में अल्ट्रासोनिक क्षय अरविन्द कुमार तिवारी	39–41
	1.10	अद्भुत अंटार्कटिका एवं यहाँ की पादप एवं जन्तु विविधता: एक संक्षिप्त परिचय प्रतिभा गुप्ता	42–47
2 तकनीकी लेख व समीक्षा आलेख	2.1	डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम द्वारा डाटा का उचित प्रबंधन एवं सुरक्षा राकेश कुमार सिंह और रंजन सिंह	48–52
	2.2	मधुमेह में योग का प्रभाव अंजली वर्मा, तृप्ति मिश्रा, शिप्रा शुक्ला, महेश पाल एवं दलीप कुमार उप्रेती	53–55

	2.3	आणविक अंकित बहुलक एवं कृषि विज्ञान में इसके अनुप्रयोग–एक समीक्षा आर0 के0 प्रजापति एवं एम0 ए0 अन्सारी	56–59
	2.4	जैन गणित रमा जैन	60–62
	2.5	कम्प्यूटर ग्राफिक्स में लीनियर अल्जेब्रा का प्रयोग तथा महत्व प्रीति बाजपेई	63–66
	2.6	दंत–क्षयः कारण व रोकथाम अर्चना रानी एवं जे0 पी0 गुप्ता	67–69
	2.7	विधि रसायनशास्त्री की अपराध अन्वेषण में भूमिका देवेन्द्र कुमार	70–72
	2.8	पादप परजीवी सूत्रकृमि(निमेटोड्स) मोहित कुमार तिवारी एवं प्रतिभा गुप्ता	73–78
	2.9	जैव–विविधताः महत्व, क्षरण एवं संरक्षण अरविन्द सिंह	79–85
3 वैज्ञानिक लेख	3.1	जीका वायरस–मानव जाति के लिए खतरा डी0 के0 अवस्थी एवं सरिता चौहान	86–88
	3.2	कैन्सर एस0 सी0 शुक्ल	89–93
	3.3	रामराज्य और पर्यावरण महेन्द्र प्रताप सिंह	94–98
	3.4	व्यक्तित्व के 'सर्वांगीण विकास' में कौशल शिक्षा की उपादेयता गीता रानी	99–101
	3.5	प्रोटीन ए0 के चतुर्वेदी	102–104
	3.6	वैदिक गणित का पुर्नअनुसंधान जितेन्द्र अवस्थी	105–106
	3.7	सूर्य–प्रतिमायें अनुराधा विनायक	107–110
	3.8	हल्दीः प्रकृति का अमूल्य औषधीय वरदान पल्लवी दीक्षित	111–113
	3.9	न्यूट्रिनों दोलन मीता साह	114–116
	3.10	ग्रीन हाउस प्रभावः एक वैश्विक समस्या निरंजनी चौरसिया	117–119
	3.11	दूब घास के औषधीय गुण सन्तोष कुमार सिंह	120–122
	3.12	उच्च शिक्षा में आई.सी.टी. की भूमिका श्वेता सिन्हा एवं शालिनी लाम्बा	123–125
	3.13	गुरूत्वीय तरंगें क्या हैं? भानु प्रताप सिंह	126–129
	3.14	भारत में जल संकट और संरक्षण राजीव कुमार सिंह	130–132
	3.15	भारत में ग्रीन हाउस कृषिः उत्पादन एवं उपयोगिता ब्रजेश सिंह एवं वर्षा रानी	133–136
	3.16	आपदायें एवं आपदा प्रबन्धन आशुतोष त्रिपाठी	137–140
	3.17	साइबर बुलीइंग शालिनी लाम्बा, श्वेता सिन्हा एवं प्रनती त्रिपाठी	141–143

	3.18	अन्तःगृहीय प्रदूषण कल्पना सिंह	144–145
	3.19	कीटों में जैविक साहचर्य अशोक कुमार एवं सुधीश चन्द्र	146–147
4 विविध	4.1	विज्ञान समाचार–नवीन जानकारी दीपक कोहली	148–151
	4.2	खांसी में रक्तस्राव की उपेक्षा चिन्ताजनक के0 के0 पाण्डेय	152–154
	4.3	डिजिटल लॉकरः भारत सरकार की एक पहल राकेश कुमार सिंह एवं रंजन सिंह	155–158
	4.4	नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान–वर्ष 2016 दिव्यांश श्रीवास्तव	159–163
	4.5	"भारत में जल संसाधनों की उपलब्धता, उनका उपयोग तथा प्रबन्धन" राजभाषा तकनीकी परिसंवाद(सेमिनार)– एक आख्या नवीन प्रकाश सिंह 'नवीन'	164–168

विज्ञान परिषद नियमावली
आजीवन सदस्यता प्रारूप
आजीवन संस्था/पुस्तकालय सदस्यता प्रारूप
लेखक सहमति पत्र/कॉपीराइट फॉर्म
विज्ञापन– आलोक प्रकाशन एवं प्रकाशन केन्द्र(अंत अंतः आवरण पृष्ठ)
नोबेल पुरस्कार विजेताओं के फोटोग्राफ्स(अंत आवरण पृष्ठ)

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 1–9, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4367 शोध पत्र

एम0 एड0 स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन के मध्य सम्बन्ध का सांख्यिकीय अध्ययन

प्रतिमा श्रीवास्तव
शोध छात्रा, शिक्षा–शास्त्र विभाग
आर्यावर्त इंस्टीट्यूट ऑफ हाईयर एजूकेशन, लखनऊ–226025, उ0प्र0, भारत
pratima943a@gmail.com

प्राप्त तिथि– 06.04.2016; स्वीकृत तिथि– 30.08.2016

सार– प्रस्तुत शोध पत्र में विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि तथा समायोजन में सार्थक व सकारात्मक सम्बन्ध होने की परिकल्पना के आँकड़ों को विश्लेषण द्वारा सत्यापित किया गया है। वी0 के0 मित्तल द्वारा विकसित परिसूची स्कूल तथा कॉलेज के छात्रों के लिए बनायी गयी है। इस विधि को दोनों लिंगों के लिए प्रयोग किया जा सकता है। महिला तथा पुरुष के लिए अलग–अलग सीट का प्रयोग किया जाता है। यह उपकरण सुसमायोजित तथा कुसमायोजित बच्चों को पहचानने के लिए प्रयोग किया जाता है।

बीज शब्द– विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि, समायोजन, वी0 के0 मित्तल उपकरण, सांख्यिकीय अध्ययन।

Statistical study on relationship between educational achievements and adjustment of M.Ed. level students

Pratima Srivastava
Research scholar, Department of Education
Aryavart Institute of Higher Education, Lucknow-226025, U.P., India
pratima943a@gmail.com

Abstract

In this paper, author has verified and finds a positive and meaningful relationship between educational achievements and adjustment of students through data analysis with the help of V.K. Mittal's tool for both male and female students.

Key words- Educational achievements of students, adjustment, V.K. Mittal's Tool, data analysis.

1. **प्रस्तावना–** शिक्षा सतत् चलने वाली एक प्रक्रिया है जो समाज को निरन्तर प्रभावित करते हुए स्वयं समाज से प्रभावित होती रहती है। आज की सामाजिक परिस्थिति के लिए यदि शिक्षा को जिम्मेदार ठहराया जाये तो शिक्षा की दयनीय स्थिति के लिए समाज को उत्तरदायी मानना पड़ेगा अर्थात् समाज और शिक्षा एक दूसरे के पूरक है।[1] प्रस्तुत शोधपत्र मे विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि तथा समायोजन में सार्थक व सकारात्मक सम्बन्ध होने की परिकल्पना के आँकड़ों के विश्लेषण द्वारा सत्यापन किया गया है। वी0 के0 मित्तल[2] द्वारा विकसित परिसूची स्कूल तथा कॉलेज के छात्रों के लिए बनायी गयी है। यह दोनों लिंगों के लिए प्रयोग किया जा सकता है। महिला तथा पुरूष के लिए अलग–अलग सीट का प्रयोग किया जाता है। यह उपकरण सुसमायोजित तथा कुसमायोजित बच्चों को पहचानने के लिए प्रयोग किया जाता है।

2. सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन

सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा, किसी भी अनुसंधान समस्या के समाधान की खोज में महत्वपूर्ण कदम है तथा हमारे अनुसंधान नियोजन में भी सहायता करता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अनुसंधानकर्ता, विभिन्न प्रकार के जर्नल्स, शोध प्रबंध, पुस्तकें तथा शोध प्रपत्रों इत्यादि से अपनी समस्या के संदर्भ में जानकारी प्राप्त करता है। सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा से अनुसंधानकर्ता को जिस क्षेत्र में वह अनुसंधान करने वाली है उसे वर्तमान ज्ञान से परिचित कराती है तथा निम्न उद्देश्य पूर्ण करती हैं–

1. सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा से, शोधकर्ता को अपने शोध क्षेत्र की सीमा का निर्धारण करने में सहायता मिलती है।
2. सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा से, समस्या के परिसीमन व उसकी परिभाषा तय करने में सहायता मिलती है।
3. सम्बन्धित साहित्य के ज्ञान से, शोधकर्ता को व्यक्तियों द्वारा किये गये कार्य से पूर्ण परिचय हो जाता है और वह अपने उद्देश्यों का स्पष्ट एवं संक्षिप्त रूप से वर्णन कर सकता है।
4. सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा से वह पहले से ही सिद्ध कार्यों को अनजाने में दोहराने से बचेगा।
5. सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन से, शोधकर्ता अलाभप्रद एवं अनुपयोगी समस्याओं से बच सकता है।

2.1 **अवलोकन–** उपर्युक्त साहित्य के पुनरावलोकन, दृष्टिपात तथा विश्लेषण करें तो यह तथ्य उभर कर आता है कि विभिन्न वर्षों में विभिन्न शोधकर्ताओं द्वारा दिए गए निष्कर्षों में बृहद् सीमा तक समानता है परन्तु देश विदेश में विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने जो भी शोध अध्ययन किये हैं उनमें दोनों चर अर्थात् शैक्षिक उपलब्धि तथा समायोजन के सह–संबंध का अभाव है अर्थात् दोनों चरों के मध्य सह–संबंध किसी भी मनोवैज्ञानिक ने नहीं निकाला है तथा साथ ही साथ किसी मनोवैज्ञानिक ने एम0एड0 स्तर को भी नहीं लिया है अधिकतर माध्यमिक स्तर पर हुए है या प्राथमिक स्तर पर हुए है। अतः एम0 एड0 स्तर पर शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करना नवीन अध्ययन है। भारतीय परिवेश में इस संदर्भ में बहुत कम शोध हुए हैं। विशेषकर कि लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ, एवं सम्बद्ध चार संस्थानों के एम0एड0 स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करना एक पूर्णतः नवीन अध्ययन है।

2.2 **न्यादर्श–** न्यादर्श को प्रतिदर्श भी कहते हैं। न्यादर्श जीवसंख्या की विशेषताओं का प्रतिबिम्ब होता है। न्यादर्श समष्टि का वह भाग होता है जिसे अनुसंधानकर्ता द्वारा वास्तविक अध्ययन के लिये चयनित किया जाता है। न्यादर्श समष्टि का प्रतिनिधित्व करने वाला सूक्ष्म रूप होता है तथा इससे प्राप्त सूचनाओं का सामान्यीकरण करके समष्टि के बारे में अनुमान लगाया जाता है। न्यादर्श समष्टि की कुछ ऐसी इकाइयों का संकलन है जिन्हें समष्टि की विशेषताओं को स्पष्ट करने के लिए उदाहरण स्वरूप चुना जाता है।

2.2.1 **न्यादर्शन प्रक्रिया–** प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श चयन की सम्भविता प्रतिदर्श के एक प्रमुख प्रकार साधारण यादृच्छिक प्रतिदर्शन प्रविधि का प्रयोग किया गया है। चयनित इकाईयों को एम0 एड0 स्तर के 100 विद्यार्थियों के आधार पर विवरण तालिका–2.2.1 में दर्शाया गया है।

न्यादर्श तालिका–2.2.1

क्र0सं0	संस्थान का नाम	छात्र	छात्रा	कुल संख्या
1	आर्यावर्त इन्स्टीट्यूट ऑफ हाईयर एजूकेशन, लखनऊ	03	28	31
2	लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ	08	24	32
3	जी0 एस0 आर0 एम0 डिग्री कॉलेज, लखनऊ	00	10	10
4	रामा डिग्री कॉलेज, लखनऊ	02	25	27
			कुल योग– 100	

3 **उपकरण–** प्रस्तुत शोध में एम0एड0 स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन के संदर्भ में प्रदत्तों का संकलन करना है। प्रत्येक संकलन तथा विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भिन्न प्रकार के उपकरण प्रयुक्त होते हैं। अतः संदर्भित शोध अध्ययन की पूर्ति में प्रदत्तों के संकलन मे निम्न उपकरणों का प्रयोग सुनिश्चित किया गया।

3.1 **एम0 एड0 स्तर के विद्यार्थियों की समायोजन क्षमता मापने के लिए वी0 के0 मित्तल की समायोजन परिसूची–** वी0 के0 मित्तल द्वारा विकसित यह परिसूची स्कूल तथा कॉलेज के छात्रों के लिए बनायी गयी है। यह दोनों लिंगों के लिए प्रयोग किया जा सकता है। महिला तथा पुरूष के लिए अलग–अलग सीट का प्रयोग किया जाता है। यह उपकरण सुसमायोजित तथा कुसमायोजित बच्चों को पहचानने के लिए प्रयोग किया जाता है। यह समायोजन परिसूची वी0 के0 मित्तल द्वारा बनायी गयी तथा प्रमाणीकृत किया गया।

3.2 **परिकल्पना–** परिकल्पना परीक्षण के लिए 0.05 स्तर को आधार माना गया।

4. आँकड़ों का विश्लेषण

4.1 **प्रयोग व आँकड़ों का सारांश–** एक विद्यार्थी जो कि समाज के साथ अच्छा तालमेल रखता है उसके अध्ययन के क्षेत्र में सफल होने की अच्छी सम्भावना होनी चाहिये। उक्त कथन के सत्य होने की जांच शोध–पत्र में की गयी हैं। विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि को उनके बी0एड0 के प्रतिशत अंकों से मापा गया है व उसके घर, सामाजिक, स्वास्थ्य व अध्ययनरत

संस्थान में समायोजन को वी0के0 मित्तल द्वारा उपलब्ध प्रश्नावली में प्राप्त प्रतिशत अंको से मापा गया है। प्रयोग मे लाये गये चरों को तालिका–4.1.1 में दर्शाया गया है।

तालिका– 4.1.1
उपयोग में लाये गये चरों का विवरण

विवरण	चर का नाम	चर का प्रकार	आँकड़ों की संख्या
बी0एड0 (% अंक)	उपलब्धि (XBED)	स्वतन्त्र चर	100
ग्रह–समायोजन (% अंक)	होम(YA)	आश्रित चर	100
सामाजिक–समायोजन (% अंक)	सोशल(YB)	आश्रित चर	100
स्वास्थ्य–समायोजन (% अंक)	हेल्थ(YC)	आश्रित चर	100
विद्यालय–समायोजन (% अंक)	स्कूल(YD)	आश्रित चर	100
समायोजन आश्रित चरों का योग	स्मायोजन(YT)	व्युत्पन्न चर	100

विश्लेषण के लिये लखनऊ विश्वविद्यालय एवं सम्बद्ध महाविद्यालयों, लखनऊ जनपद की एम0एड0 की 100 महिला विद्यार्थियों का एक न्यादर्श साधारण यादृच्छिक प्रतिदर्शन प्रविधि से लिया गया है। समष्टि में पुरूष विद्यार्थियों की संख्या अतिअल्प होने के कारण ही शोध के लिये सिर्फ महिला विद्यार्थियों को लिया गया है। समष्टि व न्यादर्श से सम्बन्धित सारी जानकारी को तालिका–4.1.2 में सूचीबद्व किया गया है:–

तालिका–4.1.2
आँकड़ों की सामान्य जानकारी

मद	विवरण
समष्टि	लखनऊ विश्वविद्यालय एवं सम्बद्ध महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थी
विद्यार्थियों के अध्ययन का स्तर	एम0एड0
समष्टि में शामिल विद्यार्थियों का लिंग	महिला
न्यादर्श में शामिल विद्यार्थियों की संख्या	100
न्यादर्श विधि	साधारण यादृच्छिक प्रतिदर्शन प्रविधि

4.2 **विश्लेषण–** न्यादर्श में शामिल विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि व सामाजिक समायोजन से सम्बन्धित चरों का सर्वप्रथम संक्षिप्त अवलोकन व सामान्य वितरण परीक्षण किया गया है। चूँकि सह–सम्बन्ध विश्लेषण सिर्फ सामान्य वितरण का अनुसरण करने वाले चरों पर ही लागू होता है इसलिये चरों का सामान्य वितरण परीक्षण अत्यन्त आवश्यक है। प्रयोग में शामिल विद्यार्थियों को विभिन्न चरों द्वारा चार वर्गो अ, ब, स, द में बांटा गया है। विद्यार्थियों के वर्गीकरण के लिये चरों को वी0के0 मित्तल द्वारा उपलब्ध करायी गयी प्रमाणिक सारणियों का प्रयोग किया गया है। चरों द्वारा वर्गीकरण के लिये मानकीकृत व्युत्पन्न चर व प्राप्तांक दोनों का उपयोग किया गया है। वर्ग अ, ब, स,द के निर्धारण के लिये वी0के0 मित्तल के शोध पत्र से ली गयी सारणियां व अन्य विवरण तालिका–4.2.1 में दिया गया है।

तालिका–4.2.1
विद्यार्थियों कें वर्गीकरण के मानक

विवरण	विद्यार्थी वर्ग	वर्ग मानक
मानवीकृत चरों के लिये	अ	2 से अधिक
	ब	1 से 2 तक
	स	–1 से 1 तक
	द	– 1 से कम

प्राप्तांकों के लिये	अ	219 (91.25%) से अधिक
	ब	207 (86.25%) से 219 तक
	स	183 (76.25%) से 207 तक
	द	183 (76.25%) से कम

इसके बाद विद्यार्थियों के उपरोक्त वर्गीकरण की समीक्षा की गयी है। तदोपरान्त शैक्षणिक उपलब्धि व समायोजन में सह–सम्बन्ध गुणांक का प्रथमतः परिकलन व लेखा–चित्र से उसके परिकल्पना के अनुरूप होने की विवेचना की गयी है। अन्ततः उक्त सह–सम्बन्ध गुणांक के सांख्यिक अर्थपूर्णहोने का परीक्षण किया गया है। समस्त विश्लेषण निम्नलिखित चरणों में किया गया है:–

1. चरों की केन्द्रीय प्रवृत्ति व विचलन
2. चरों का सामान्य वितरण परीक्षण
3. समायोजन व शैक्षणिक उपलब्धि का वर्गीकरण
4. शैक्षणिक उपलब्धि व समायोजन चरों में सह–सम्बन्ध
5. सह–सम्बन्ध परीक्षण

4.2.1 चरों की केन्द्रीय प्रवृत्ति व विचलन– उपलब्धि व समायोजन चरों XBED, YA, YB, YC, YD, YT के माध्य व माध्यिका के मान लगभग बराबर है। अतः चरों के वितरण के सममित होने की सरसरी तौर पर पुष्टि होती है। चरों के संक्षिप्त सांख्यमान, तालिका–4.2.1.1 में दिये गये हैं।

तालिका–4.2.1.1
चरों के संक्षिप्त सांख्यमान

वर्णात्मक आँकड़े	उपलब्धि XBED	होम YA	सोशल YB	हेल्थ YC	स्कूल YD	समायोजन YT
न्यूनतम	50.00	49.00	51.00	38.00	31.00	218.00
प्रथम चतुर्थक	62.00	66.75	69.75	66.00	62.75	269.80
माध्यिका	67.00	73.50	78.00	73.00	70.00	293.00
माध्य	66.18	74.18	77.28	72.87	69.15	293.50
तृतीय चतुर्थक	71.00	83.00	85.25	81.00	77.00	318.20
उच्चतम	78.40	98.00	96.00	97.00	95.00	369.00

चरों के बाक्स चित्र से भी उनके सामान्य वितरण को अनुसरित करने की पुष्टि होती है। साथ ही अतिन्यून मान सिर्फ YC व YD में एक–एक है जो सिर्फ एक ही विद्यार्थी का है। उक्त विद्यार्थी कुल समायोजन चर में प्रदर्शित नहीं है इसलिये इसको विश्लेषण में रखा गया है। चरों के बाक्सचित्र लेखाचित्र–4.01 में दिये गये हैं।

लेखाचित्र–4.01
चरों के बाक्स चित्र

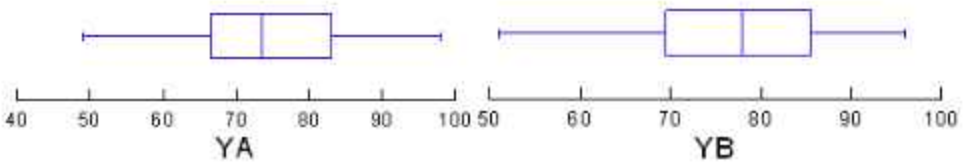

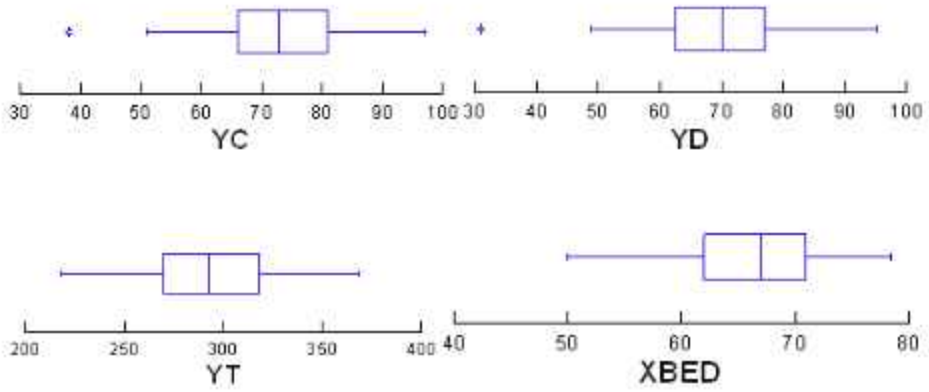

चरों कें आयतचित्र केन्द्र में अधिक विद्यार्थी व पुच्छ में कम विद्यार्थी दर्शाते हैं। जिससे भी चरों के सामान्य वितरण को अनुसरित करने की एक बार और पुष्टि होती है। आयतचित्र लेखाचित्र–4.02 में दिये गये है।

लेखाचित्र–4.02
चरों के आयतचित्र

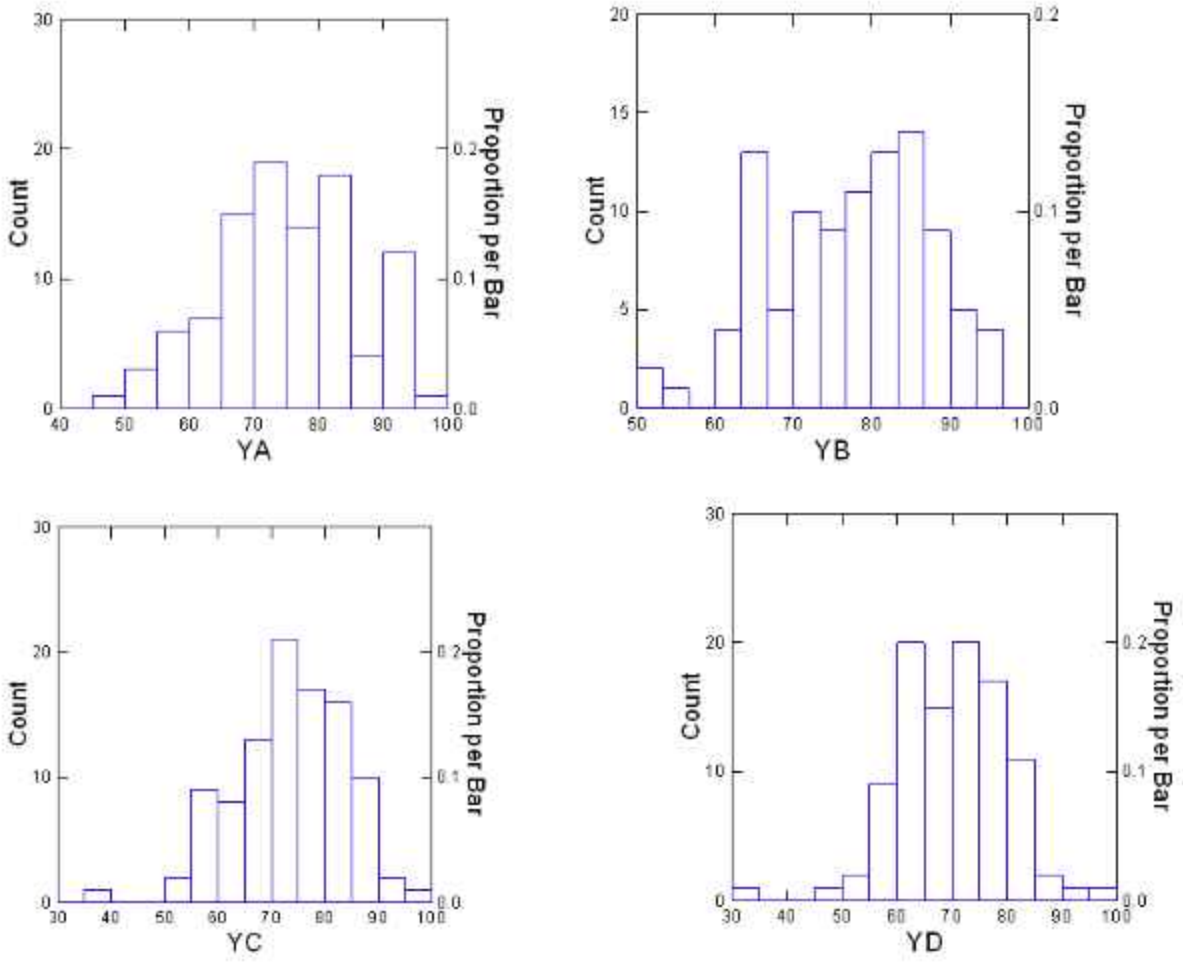

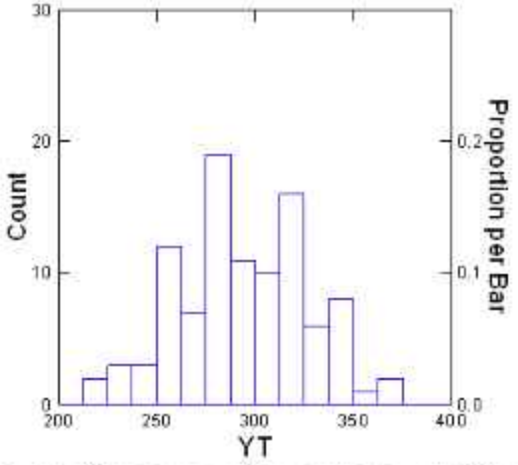

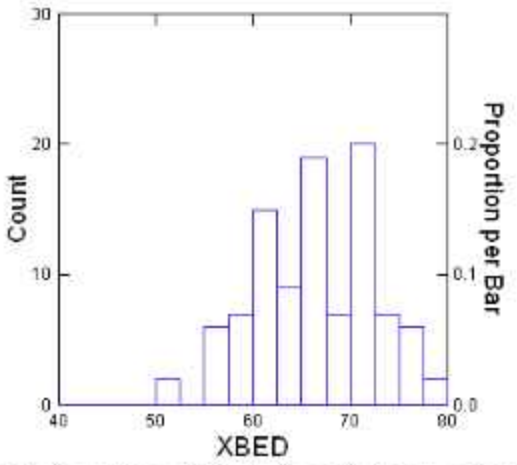

4.2.2 **चरों का सामान्य वितरण परीक्षण–** उपलब्धि व समायोजन चरों के प्रारम्भिक निरीक्षण से उनके वितरण को अनुसरित करने की अधिक सम्भावनाएं है। उक्त का पूर्ण रूप से निर्धारण शैपिरो–विल्क[1] परीक्षण से किया गया है। शैपिरो–विल्क परीक्षण का पी0मान सभी चरों के लिये 0.05 से अधिक है। अतः चरों के सामान्य वितरण से संकलित न होने के पक्ष में पर्याप्त सांख्यिकीय साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। शैपिरो–विल्क(सामान्य वितरण) परीक्षण मान व उसका पी0 मान तालिका–4.2.2.2 में दिये गये हैं।

तालिका–4.2.2.2
चरों का सामान्य वितरण परीक्षण

चर	शैपिरो–विल्क परीक्षण मान	शैपिरो–विल्क परीक्षण पी0 मान
उपलब्धि (XBED)	0.99	0.31
होम (YA)	0.98	0.24
सोशल (YB)	0.98	0.06
हेल्थ (YC)	0.98	0.25
स्कूल (YD)	0.98	0.08
समायोजन (YT)	0.99	0.69

4.2.3 **समायोजन व शैक्षणिक उपलब्धि का वर्गीकरण–** विद्यार्थियों को सभी चरों के आधार पर चार वर्गों अ, ब, स, द में बांटा गया है। मानकीकृत चरों से मिले विद्यार्थी वर्ग लगभग एक जैसे हैं जबकि प्राप्तांकों के आधार पर मिले वर्गों में समरूपता नहीं दिखती है। प्राप्तांकों से एक जैसे वर्ग न मिलने का कारण प्रतिदर्श में विद्यार्थियों की कम संख्या (100) होना है जबकि प्रयोग में लाये गये मानक लगभग (1200) विद्यार्थियों के प्रतिदर्श से वी0के0 मित्तल द्वारा तैयार किये गये हैं। दूसरी तरफ मानकीकृत चरों में वर्गीकरण के मानक व्यापक रूप से स्वीकार है। विद्यार्थियों का वर्गीकरण तालिका–4.2.3.1 में दिया गया है।

तालिका–4.2.3.1
विद्यार्थियों का वर्गीकरण

विवरण	चर	अ	ब	स	द	कुल
मानकीकृत चरों के आधार पर विद्यार्थियों का वर्गीकरण	उपलब्धि (XBED)	1	14	67	18	100
	होम (YA)	1	14	70	15	100
	सोशल (YB)	0	16	64	20	100
	हेल्थ(YC)	1	17	65	17	100
	स्कूल (YD)	2	13	72	13	100
	समायोजन (YT)	2	15	65	18	100
प्राप्तांकों के आधार पर विद्यार्थियों का	उपलब्धि (XBED)	20	22	43	15	100
	होम (YA)	13	4	32	51	100

वर्गीकरण	सोशल (YB)	16	18	31	35	100
	हेल्थ(YC)	4	14	29	53	100
	स्कूल (YD)	4	3	28	65	100
	समायोजन (YT)	2	10	37	51	100

4.2.4 **शैक्षणिक उपलब्धि व समायोजन चरों में सह–सम्बन्ध–** विद्यार्थियों का वर्गीकरण उनकी शैक्षणिक उपलब्धि व समायोजन में सकारात्मक सम्बन्ध होने की प्रारम्भिक पुष्टि होती है। इस सम्बन्ध का गहन अध्ययन चरों के मध्य सह–सम्बन्ध गुणांक के परिकलन से किया गया है। उपलब्धि (XBED) व समायोजन (YT) के मध्य सह–सम्बन्ध गुणांक (तालिका–4.2.4.1) धनात्मक है। उक्त दोनों चरो के मध्य बिन्दु चित्र (लेखाचित्र–4.03) से भी चरों के मध्य एक धनात्मक सम्बन्ध होने की पुष्टि होती है।

तालिका–4.2.4.1
उपलब्धि व समायोजन में सह–सम्बन्ध गुणांक

	उपलब्धि (XBED)	समायोजन(YT)
उपलब्धि (XBED)	1.00	
समायोजन (YT)	0.31	1.00

लेखाचित्र–4.03
उपलब्धि व समायोजन का बिन्दु चित्र

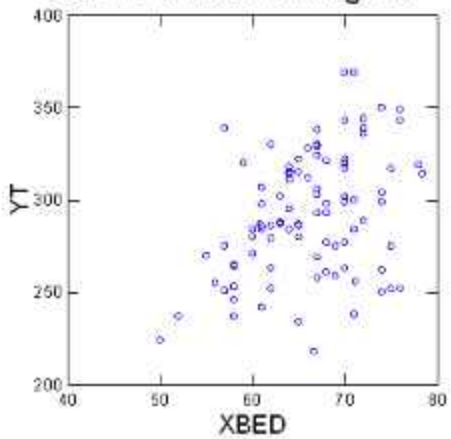

उपलब्धि (XBED) व सभी समायोजन चरों (YA,YB,YC,YD) के मध्य सह–सम्बन्ध गुणांक भी धनात्मक (तालिका–4. 24.2) है। साथ ही उक्त चर–युग्मों के बिन्दु चित्र (लेखा चित्र– 4.04) भी धनात्मक सम्बन्ध होने के एक बार और पुष्टि करते है।

तालिका–4.2.4.2
उपलब्धि व समायोजन में सह–सम्बन्ध गुणांक

	उपलब्धि (XBED)	होम YA	सोशल YB	हेल्थ YC	स्कूल YD
उपलब्धि (XBED)	1.00				
होम (YA)	0.27	1.00			
सोशल (YB)	0.19	0.48	1.00		
हेल्थ(YC)	0.26	0.42	0.60	1.00	
स्कूल (YD)	0.29	0.46	0.49	0.70	1.00

लेखाचित्र–4.04
उपलब्धि व समायोजन चरों का बिन्दु चित्र

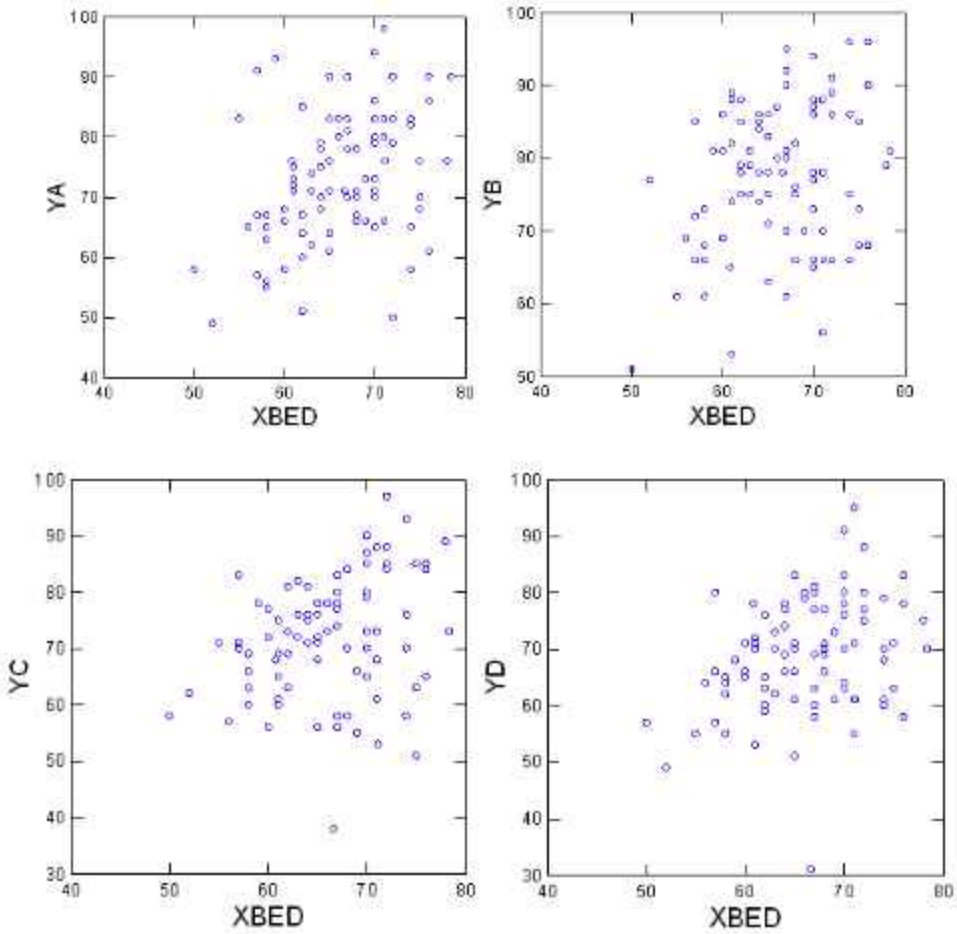

4.2.5 **सह–सम्बन्ध परीक्षण–** उपलब्धि व समायोजन चरों के मध्य विभिन्न सह–सम्बन्ध गुणांकों के धनात्मक होने का सांख्यिकीय परीक्षण टी0–मान से किया गया है। सभी पी0–मान 0.05 से कम (तालिका–4.2.5.1) हैं। अतः उपलब्धि व समायोजन चरों मध्य सकारात्मक सम्बन्ध होने की सांख्यिकी पुष्टि 95% विश्वास से होती है।

तालिका–4.2.5.1
सह–सम्बन्ध गुणांक परीक्षण

चर युग्म	सह–सम्बन्ध गुणांक	टी0–मान	पी0–मान
उपलब्धि (XBED), होम YA	0.27	2.72	0.01
उपलब्धि (XBED), सोशल YB	0.19	1.96	0.05
उपलब्धि (XBED), हेल्थYC	0.26	2.65	0.01
उपलब्धि (XBED), स्कूलYD	0.28	2.88	0.01
उपलब्धि (XBED), समायोजनYT	0.31	3.26	0.00

5. **सीमाएं–** प्रस्तुत लघु शोध अध्ययन में समय की सीमितता के कारण शोधार्थी को अपना अध्ययन निश्चित सीमाओं में सीमाबद्ध करना पड़ा है। इसके फलस्वरूप प्रस्तुत अध्ययन में कुछ कमियां रह गयी है। जिन्हें ध्यान में रखते हुए भावी अनुसांधनकर्ता प्रस्तुत समस्या पर अनेक प्रकार से अध्ययन कर सकते हैं। प्रस्तुत शोध सन्दर्भ में निम्नांकित सीमाएं इस प्रकार हैं–

1. प्रस्तुत शोध में केवल एम0एड0 विद्यार्थियों को लिया गया है। जबकि यह अध्ययन विभिन्न स्तरों पर किया जा सकता है।

2. प्रस्तुत शोध में लखनऊ विभिन्न शहर के चार संस्थानों के विद्यार्थियों को लिया गया है जबकि यह अध्ययन अन्य भिन्न–भिन्न संस्थानों के विद्यार्थियों में तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
3. प्रस्तुत शोध कार्य क्षेत्र केवल लखनऊ जनपद तक ही सीमित है जबकि इसका स्तर और भी व्यापक किया जा सकता है।
4. प्रस्तुत शोध कार्य हेतु संस्थानों में एम0एड0 स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों को भी प्रतिदर्श के रूप में लिया जा सकता है।
5. प्रस्तुत शोध हेतु केवल 100 विद्यार्थियों को प्रतिदर्श के रूप में लिया गया है, जबकि अग्रिम शोधकर्ता विस्तृत न्यायदर्श का चयन करके अपना शोध अध्ययन सम्पादित कर सकता है, जिससे और भी प्रमाणिक निष्कर्ष प्राप्त हो सकें।
6. प्रस्तुत शोध अध्ययन में दो चरों शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन को लिया गया हैं, जबकि अग्रिम शोध के लिए उपर्युक्त चरों के साथ किन्हीं अन्य चरों यथा सृजनात्मकता, प्रतिबद्धता इत्यादि को भी लिया जा सकता है।

6. **निष्कर्ष–** प्रस्तुत शोध का निरीक्षण करने पर यह ज्ञात होता है कि एम0 एड0 स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि तथा समायोजन मे सार्थक व सकारात्मक सम्बन्ध होने की प्रारम्भिक पुष्टि होती है। इस सम्बन्ध का गहन अध्ययन चरों के मध्य सह–सम्बन्ध गुणांक के परिकलन से किया गया है। उपलब्धि(XBED) व समायोजन(YT) के मध्य सह–सम्बन्ध गुणांक(तालिका– 4.2.4.1) धनात्मक है। अतः दोनों चरों के मध्य धनात्मक सम्बन्ध होने की पुष्टि होती है। प्रस्तुत शोधपत्र मे विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि तथा समायोजन मे सार्थक व सकारात्मक सम्बन्ध होने की परिकल्पना के आँकड़ो के विश्लेषण द्वारा सत्यापन किया गया है। प्रतिदर्श मे लिये गये विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि तथा समायोजन के चार विभिन्न क्षेत्रों– गृह समायोजन, सामाजिक समायोजन, स्वास्थ्य समायोजन तथा स्कूल समायोजन मे धनात्मक सह–सम्बन्ध पाया गया है। जिसको विद्यार्थियों के उक्त को निरूपित करने वाले चरों के सामान्य वितरण परीक्षण, सह–सम्बन्ध गुणांक परिकलन व सांख्यिकीय सत्यापन से प्रमाणित किया गया है। विश्लेषण के लिये गये प्रतिदर्श का आकार 100 है, जो कि समस्त परिकलन से प्राप्त हुयी जानकारी के सत्य होने के लिये पर्याप्त है। अर्थात जो विद्यार्थी शिक्षा के क्षेत्र में कुशल हैं वह वैसी ही कुशलता से अपने आपको आसपास के सामाजिक वातावरण में समन्वित कर पाते हैं।

सन्दर्भ

1. शपिरो, एस0 एस0 एवं वलिक, एम0 बी0(1965) एन एनालसिसि ऑफ वेरियस टेस्ट फॉर नॉरमैलिटी, कम्पलीट सम्पलिस बायोमीट्रिक, खण्ड–52, अंक–3–4, मु0पृ0 591–611।
2. मित्तल, वी0 के0(1983) एडजस्टमेंट इंवेंटरी, एन.टी.एल.–1010, नेशनल लाइब्रेरी ऑफ एजुकेशनल एण्ड साइकोलॉजिकल टेस्ट, पृ0 6, एन.सी.आर.टी., नई दिल्ली।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 10–14, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4368 शोध पत्र

एशियाटिक लिली की पंखुड़ियों में एंथोसाईनिन रंजकता का अध्ययन

मस्त राम धीमान; रीता भाटिया; राज कुमार; राम सिंह सुमन; चन्द्रेश, नीरज व महेश गुलेरिया
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, कटराईं
कुल्लू–घाटी– 175129, हि0प्र0, भारत
mrarjun01@yahoo.co.in

प्राप्त तिथि– 18.06.2016; स्वीकृत तिथि– 12.08.2016

सार– अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कंदीय फूलों में लिलियम एक महत्वपूर्ण फूल है, जिसकी अंतर्राष्ट्रीय पुष्प बाजार में काफी माँग है। एशियाई संकर लिली की प्रजातियों की पंखुड़ियों में अन्दर की तरफ लाल धब्बे पाये जाते हैं, इन धब्बों में जो रंजक संचित होता है उसे एंथोसाईनिन कहते हैं। लिलियम में फूलों के रंग और धब्बों के निर्माण के जननिक आधार का ज्ञान इसके विषम युग्मजी जिनोम संरचना के कारण बहुत कम है। वर्तमान अध्ययन में लिलियम के 10 अंतः प्रजातियों, संकरों और इनके जनकों का परीक्षण और मूल्यांकन किया गया है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य एशियाई लिलियम संकरों के फूलों के रंग का अनुमान और विश्लेषण करना था। एंथोसाईनिन की अधिकतम मात्रा पी.एल.के.एच.–12 में(43.48 मि0ग्रा0/100 ग्राम) और पी.एल.के.एच.–6 में निम्नतम (3.670 मि0ग्रा0/100ग्राम) पाई गई। एंथोसाईनिन की मात्रा पंखुड़ियों के उपरी भाग(12.00 मि0ग्रा0/100 ग्राम) की अपेक्षा निचले भाग में थोड़ी अधिक(12.02 मि0ग्रा0/100 ग्राम) थी। एंथोसाईनिन की मात्रा पुष्प खिलने के दो दिन बाद(10.05 मि0ग्रा0/100 ग्राम) की अपेक्षा खिलने वाले दिन अधिक(13.96 मि0ग्रा0/100 ग्राम) थी। वर्तमान जीन प्रकारों में एंथोसाईनिन की मात्रा में भिन्नता से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भिन्नता को भविष्य में लिलियम की स्वदेशी प्रजातियों को विकसित करने, जिनके भिन्न–भिन्न रंग, वर्ग, और पुष्प आयु बढाने में उपयोग किया जा सकता है। यह अध्ययन आनुवंशिक आधार के लक्षणों को समझने और एम0ए0एस0 के लिए मैप(loci) से जुडे हुए आणविक मार्कर लागू करने के लिए भी महत्वपूर्ण है।

बीज शब्द– लिलियम, एंथोसाईनिन, इंटरवेराइटल संकर, पंखुड़ियाँ, रंजकता ।

Anthocyanin pigmentation study in flower petals of Asiatic hybrid lily

Mast Ram Dhiman; Rita Bhatia; Raj Kumar; Ram Singh Suman; Chandresh, Neeraj and Mahesh Guleria
I.A.R.I., Regional Research Centre, Katrain
Kullu Valley-175129, H.P., India
mrarjun01@yahoo.co.in

Abstract- Lilium is very important bulbous flower, cosmopolitan and has high demand in International flower market. Asiatic hybrid lily cultivars often have dark red spots on the interior surface of their petals. Pigments accumulated in petal spots are anthocyanins. In Lilium, the genetic basis of flower colour and spot formation are little understood because of the heterozygous genome structure. In this study 10 intravarietal Lilium hybrids along with their parents were tested and evaluated. The aim of this study was to estimate and analyse the flower colour of Asiatic *Lilium* hybrids. Highest value of anthocyanin was recorded in the hybrid PKLH-12 (43.48 mg/100g) and lowest in hybrid PKLH-6 (3.670 mg/100g). Anthocyanin content in the basal part was slightly higher (12.02 mg/100g) than the upper part (12.00mg/100g). Lilium petal during day of anthesis exhibits the highest amount of anthocyanin (13.96 mg/100g) than the 2 days after anthesis(10.05 mg/100g). Based on the variation in anthocyanin content in the present genotypes it may be concluded that this variability can be used for further development of indigenous hybrids with altered colours, hues, and patterns with long post harvest life. This study is important to understand the genetic basis of the traits and to apply molecular markers linked to map loci for MAS.

Key words- Lilium, anthocyanin, intervarietal hybrids, petals, pigmentation.

1. **प्रस्तावना–** अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कंदीय फूलों में लिलियम एक महत्वपूर्ण फूल है, जिसकी अंतर्राष्ट्रीय पुष्प बाजार में काफी माँग है। इसके लुभावने आकार, नाना प्रकार के रंग, अधिक समय तक ताजा बने रहने व आकर्षक बनावट आदि के कारण इसे कर्तित पुष्प के लिए संसार के कई फूल निर्यातक देशों में उगाया जाता है। लिलियम का उपयोग मुख्यतः गुलदान में सजाने, गमलों में लगाने और गुलदस्ते बनाने के लिए किया जाता है। उत्तरी गोलार्द्ध में वितरित(10^0 एन. से 60^0 एन. लैट.)[2] लिलियम की 100 से अधिक प्रजातियाँ मौजूद है जिन्हें कई वर्गों में वर्गीकृत किया गया है[3,13]। दुनिया भर में लोकप्रिय सजावटी पौधों में से एक एशियाटिक संकर लिली को वर्ग साईनोमारटेगोन की जातियों के अंतरजातीय संकरों द्वारा प्राप्त किया गया है[7]। एशियाटिक लिली के पुष्पों के रंगों में बहुत विभिन्नता पाई जाती है जैसे कि पीला, नारंगी, लाल, गुलाबी, सफेद इत्यादि। केरोटिनाइड मुख्यतः पीले और नारंगी फूलों में पाया जाता है, एन्थोजेनथिन, वोआईलाजेनथिन, और ल्यूटिन पीले फूलों में[17] और कैपसेनथिन नांरगी फूलों का मुख्य रंजक है[4]। गुलाबी फूलों में प्रायः एंथोसाईनिन रंजक का संचय होता है। एंथोसाईनिन और कैपसेनथिन रंजकों के संचय से फूलों का रंग लाल होता है[10,1] एशियाटिक संकर लिली की प्रजातियों की पंखुड़ियों में अन्दर की तरफ लाल धब्बे पाये जाते हैं, इन धब्बों में जो रंजक संचित होता है उसे एंथोसाईनिन कहते हैं[1]।

एंथोसाईनिन व्यापक रूप से पौधों की कई प्रजातियों में पाया जाता है और यह पौधों के भागों में बैंगनी, नीले और गुलाबी रंग के लिए जिम्मेदार होता है। एंथोसाईनिन परागण और बीज विक्षेशक कीटों व जानवरों को आकर्षित करने के लिए फूलों और फलों को रंग प्रदान करता है। तेज धूप और सक्रिय आक्सीजन प्रजातियों ;रियाक्टिव स्पीसिज–आर.ओ. एस. जैसे तनावों से भी यह पौधों की रक्षा करता है[9]। कर्तित पुष्प कटाई के दौरान व दोबारा काटने से प्रनिबल होते हैं यह प्रनिबल तनाव टाईलेक्वाईड झिल्ली, टाईलेक्वाईड परासरणी संभाव्य को प्रभावित करके प्रकाश संश्लेषण में कमी लाता है और आर0ओ0एस0 के उत्पादन में वृद्धि करता है। एंथोसाईनिन कोशिका ऑक्सीकरण को रोक देता है जिससे फूलों के जल्दी मुरझाने की प्रक्रिया धीमी हो जाती है। जो हाइड्रोजन परऑक्साइड एकत्रीकरण व कोशिका झिल्ली, प्रोटीन, लिपिड के निम्नीकरण और आयन रिसाव में वृद्धि के कारण होती है[16,18]। पंखुडियों में उच्च एंथोसाईनिन की मात्रा का होना ही फूलों की लम्बी आयु का एक कारण हो सकता है। पीलारगोनिडीन, साईनीडीन और डेलफीनीडीन के व्युत्पन्न रंजक उच्च पौधों में एंथोसाईनिन वर्ण के तीन मौलिक समूह हैं[12]। लिलियम प्रजातियों में Cyanidin 3-0-B-rutinoside मुख्य वर्णक व Cyanidin 3-0-B-rutinoside 7-0-B glucoside न्यूनतम रूप में पाया जाता है[10]। पौधों का आकर्षण उसके फूलों के रंग पर निर्भर करता है इसलिए यह संकरों के मूल्यांकन का महत्वपूर्ण विशेषक है। शोभाकारी पौधों की नई प्रजातियाँ विकसित करने के लिए जननिक विविधता का होना अति आवश्यक है[9]। लिलियम में फूलों के रंग और धब्बों के निर्माण के जननिक आधार का ज्ञान इसके विषम युग्मजी जिनोम संरचना के कारण बहुत कम जानकारी है। वर्तमान अध्ययन में लिलियम के 10 अंतः प्रजातियों, संकरों और इनके जनकों का परीक्षण और मूल्यांकन किया गया है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य एशियाटिक लिलियम संकरों के फूलों के रंग का अनुमान और विश्लेषण करना था और परिवर्तित रंग, दीर्घ पुष्प आयु वाली नई स्वदेशी किस्मों/संकरों के विकास के लिए प्रयोग करना है।

प्लेट 1: लिलियम की पंखुडियों में धब्बों का चित्रण/मौजूदगी

2. **सामग्री और विधि–** इस अध्ययन में सात एशियाई लिली की प्रजातियां जैसेः पोलियाना, सिराज, एनवोना, ब्रूनिलो, प्रेटो, स्टारगेटर और सम्पलान का डाईएलिलिक संकरण(आंशिक व अधूरा) और कुछ पारस्परिक संकरण से वर्ष 2008 में संकर

बनाए गये थे। इन संकर पौधों को अलग से पॉलीहाउस में उगाया गया और सबसे रुचिकर 10 संततियों का इनके प्रासंगिकता, वाणिज्यिक और कृषि लक्षणों के आधार पर चयन तथा समलक्षणी मूल्यांकन किया गया।

एनथोसाईनिन की मात्रा का मापन– चुने गये प्रत्येक दस संकर पौधों और उनके जनकों में से एक फूल को दो चरणों में लिया गया। (1 खिलने वाले दिन व 2 खिलने के दो दिन बाद) पंखुड़ियों के ऊपरी व निचले भाग में एंथोसाईनिन की मात्रा भिन्न होती है और यह प्रायः धब्बों की उपस्थिति के कारण होता है, क्योंकि पंखुड़ियों के निचले भाग में एंथोसाईनिन की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है, इसके फलस्वरुप दोनों भागों को अलग–अलग एकत्रित किया गया और पंखुड़ियों को 7 मि.मी. X 5 मि.मी. के ऊपरी और निचले हिस्सों में काटा गया। रंजक की मात्रा को रंगना[11] द्वारा दी गई विधि से मापा गया। एंथोसाईनिन का निष्कर्षण इथेनोलिक हाईड्रोक्लोरिक अम्ल के घोल में करने के आद इसका मूल्यांकन स्पेकट्रोस्कोपी मीटर द्वारा 535 एन.एम. ओ.डी. पर प्रमाणीकरण किया गया।

सांख्यिकीय अभिकल्पना– वर्तमान प्रयोग में 3 पुनरावृत्तियों के साथ पूर्णतः मादृरूिछक खंड डिजाइन में किया गया। एशियाई लिलियम संकरों के 17 जीवरूप इस अध्ययन में लिये गये जिनमें प्रत्येक संकर और जनक के फूल पीसकर एवं मिलाकर समांगीकृत किए गये। इन समांगीकृत नमूनों से अध्ययन के लिए आवश्यक मात्रा ली गई और अंततः ASSEX सॉफटवेअर पैकेज द्वारा सांख्यिकीय विधि कार्यान्वित की तथा एल.एस.डी.(पी≤0.05) द्वारा परिकलन करके परिणामों की तुलना ऐनोवा(ANOVA) से की गई।

3. **परिणाम एवं विवेचना–** पौधों के विभिन्न भागों में एंथोसाईनिन विद्यमान होता है। यह कई उपयोगी क्रियाओं से संबंध रखता है और अधिकतर कार्य एंथोसाईनिन से समृद्ध भोजन के एंटीओक्सीडेंट लक्षण एवम् हृदय संवहनी की सेहत को बढ़ाने के लिए केन्द्रित होता है। फूलों की फसलों में ग्राहक के आकर्षण का मुख्य बिन्दु फूलों का रंग होता है। आकर्षित रंग फूलों की शोभा को बढाता है जो विदेशी व घरेलू बाजार में अच्छा मूल्य प्राप्त करने में सहायक होता है। यद्यपि फूलों की फसल में एंथोसाईनिन की उपस्थिति पर कम ध्यान दिया गया है। जब हमने एशियाटिक संकर लिली की F_1 (संकर) संतति एवं जनकों का अध्ययन किया तो हमें कुछ संकरों में सार्थक मात्रा में रंजक मिला, जिनमें जैसे पी.एल.के. एच.12 में अधिकतम (43.48 मि.ग्राम /100 ग्राम) और पी.एल.के.एच.6 में निम्नतम (3.670 मि.ग्राम /100 ग्राम) पाया गया।

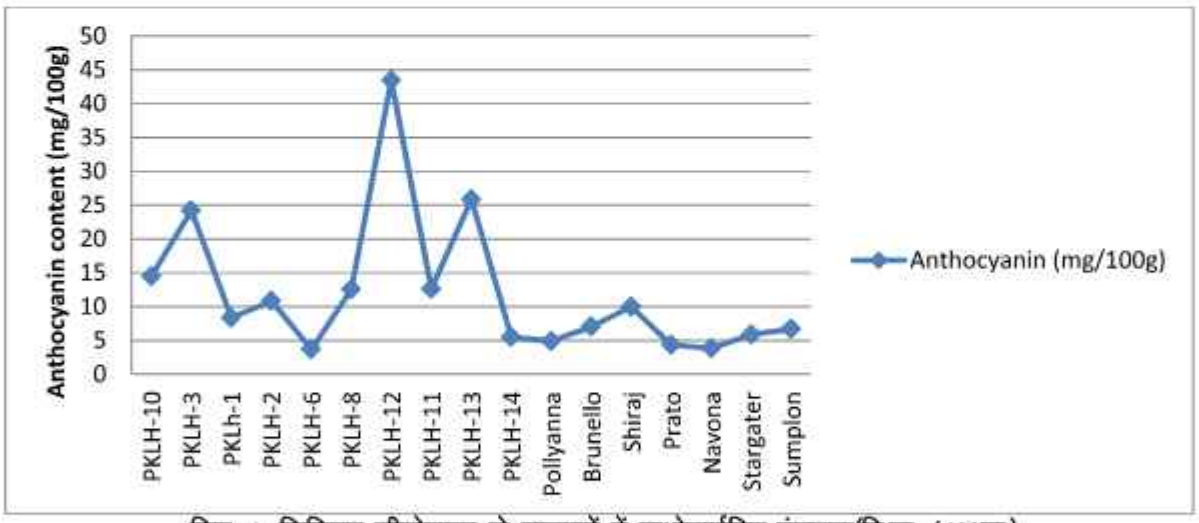

चित्र–1: लिलियम जीनोटाइप के पुष्पदलों में एन्थोसाईनिन रंजकता(मि.ग्रा./100ग्रा.)

यह प्रायः संकर पंखुड़ियों की सतह पर प्रति वर्ग से.मी. क्षेत्र में अधिक धब्बों की संख्या होने के कारण था। इस अध्ययन के परिणाम यह भी दर्शाते हैं कि एंथोसाईनिन की मात्रा पंखुडियों के उपरी भाग (12.00 मि.ग्राम /100 ग्राम) की अपेक्षा निचले भाग में थोडी अधिक (12.02 मि.ग्राम /100 ग्राम) थी ।

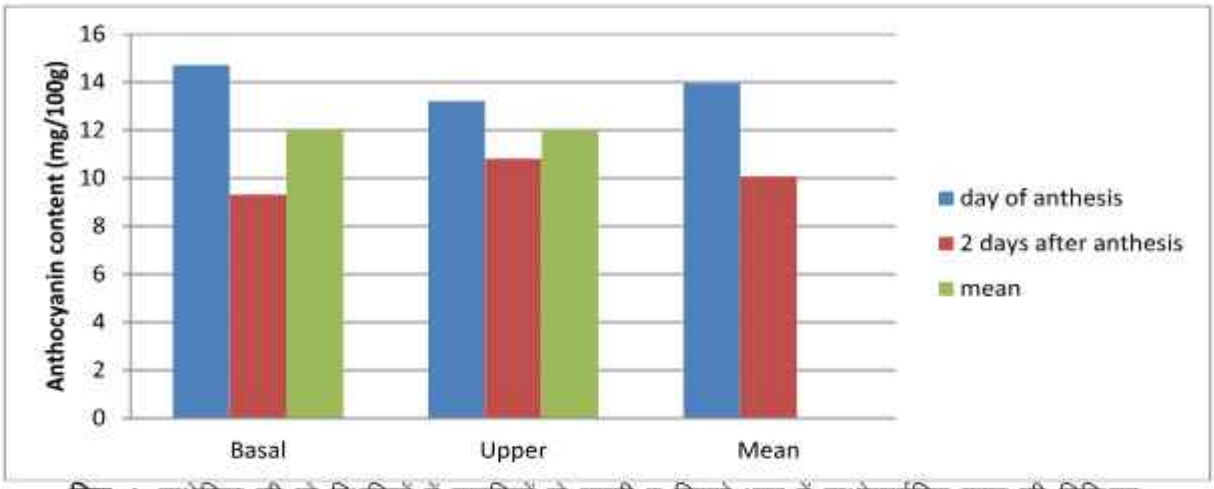

चित्र–2: एन्थेसिस की दो स्थितियों में पुखुड़ियों के ऊपरी व निचले भाग में एन्थोसाईनिन मात्रा की विविधता

एबी और उनके सहयोगियों[1] ने भी लिलियम के संकर पौधों में एंथोसाईनिन की वितरण आवृत्ति का अध्ययन किया और उन्होनें दर्शाया कि इन्हें दो भागों में बांटा जा सकता है। जिनमें एंथोसाईनिन की मात्रा बिल्कुल कम या ना के बराबर (<3 μ mol/cm^2) हो और जिनमें cyanidin-3-0-β-rutinoside (>6μmol/cm^2) हो । इन्होंने यह भी बताया कि "Montreux"(मॉन्ट्रेक्स) प्रजाति की कलियों में प्रति वर्ग से.मी. धब्बों की संख्या(1.49±0.13) और "Connecticut King"(कनेक्टीकट किंग) प्रजाति में 0.001 से भी कम थी, जो दर्शाता है कि बहुत से जीन धब्बों की संख्या से संबन्धित हैं।

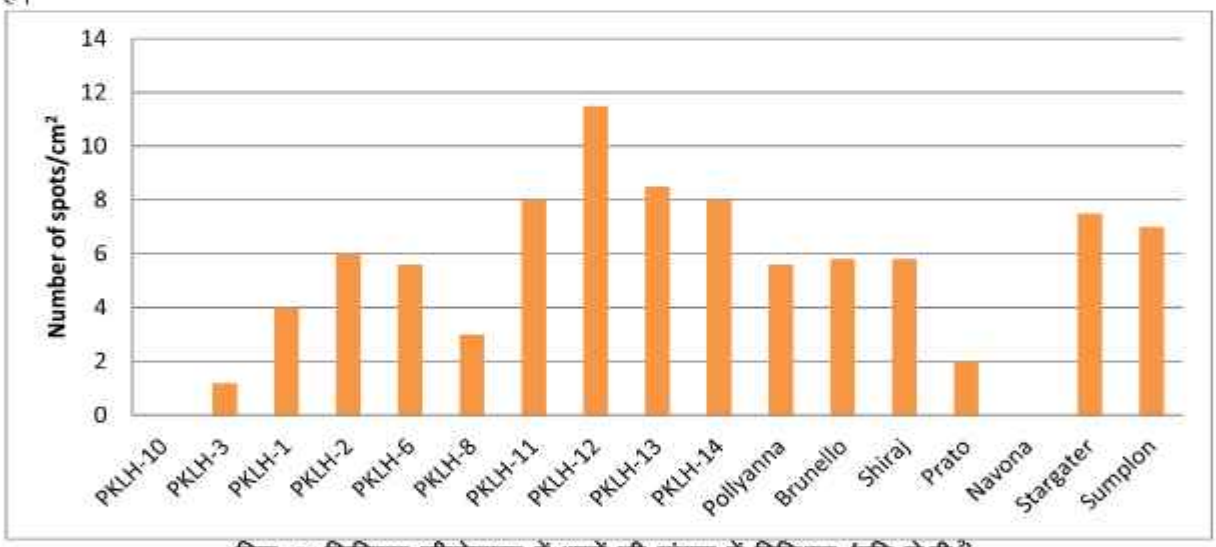

चित्र–3: लिलियम जीनोटाइप में धब्बों की संख्या में विविधता (प्रति से.मी.^{2})

इस अध्ययन में यह पाया गया कि फूलों में एंथोसाईनिन की मात्रा खिलने के दो दिन बाद (10.05 मि.ग्राम /100 ग्राम) की अपेक्षा खिलने वाले दिन अधिक (13.96 मि.ग्राम /100 ग्राम) थी । चित्र–3 यह दर्शाता है कि लिलियम में फूल खिलने और विकास की अवस्था में एंथोसाईनिन की जैव संश्लेषण प्रक्रिया अधिकतम स्तर पर होती है। इस अध्ययन में यह भी पाया गया कि फूल खिलने के समय एंथोसाईनिन की मात्रा में तीव्र वृद्धि होती है जो फूल परिपक्वता के साथ घट जाती है क्योंकि फूल खिलने के दिन पंखुडियों का रंग गहरा होता है जो आंखों द्वारा बिना किसी सहायता के भी देखा जा सकता है जो बाद में कम हो जाता है। एंथोसाईनिन की मात्रा का विघटन अन्य फूलों जैसे कि *पेनूला आईसीफीला*[8] और गुलदाउदी[14] में भी देखा गया है।

निष्कर्ष

वर्तमान जीन प्रकारों में एंथोसाईनिन की मात्रा में भिन्नता से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भिन्नता को भविष्य में लिलियम की स्वदेशी प्रजातियों को विकसित करने, जिनके भिन्न–भिन्न रंग, वर्ग, और दीर्घ पुष्प आयु हो, में उपयोग

किया जा सकता है। यह अध्ययन आनुवंशिक आधार के लक्षणों को समझने और MAS के लिए मैप loci से जुडे हुए आणविक मार्कर लागू करने के लिए भी महत्वपूर्ण है।

संदर्भ

1. एबी, एच0; नाकानो, एम0; नाकाटसुका, ए0; नाकायामा, एम0; कोसिओका, एम0 एवं यामामिसी, एम0(2002) एशियाई संकर लिलि में पुष्प एंथोसायनिन रंजकता के लक्षणों का आणविक संबंध के नक्शे द्वारा आनुवांशिक विश्लेषण, *थियोरेटिकल अप्लाइड जेनेटिक्स*, खण्ड–105, मु0पृ0 1175–1182।
2. एंडरसन, एन0 ओ0(1986) जीनस लिलियम का इसके विकास के संदर्भ में वितरण, *हरबर्टिया*, मु0पृ.0 31–50।
3. कोमबर, एच0 एफ0(1949) लिलियम जीनस का वर्गीकरण *इन* : लिलि वार्षिक किताब, रॉयल बागवानी सोसायटी, लंदन, खण्ड–131, मु0पृ0 85–105। .
4. डैली, जे.; मोलनार, पी0; माटस, जेड0; टुथ, जी0; सटीक, ए0 एवं पफेंडर, एच0(1998) 3,5,6–ट्राईहाड्रोओक्सी–केरोटिनाइड का टाईगर लिलियम की पंखुड़ियों से अलगाव व लक्षणों का वर्णन, *करोमेटोगराफिया*, खण्ड–48, मु0पृ0 27–31।
5. जसटसीन, एच0; एंडरसन, ए0 एस0 एवं वरानडट, के0(1997) *कमपेनुला आईसोफिला* मोरीटी में कली और फूल विकास के दौरान एंथोसायनिन और फलेवोनस का संचय, *वनस्पति विज्ञान का इतिहास*, खण्ड–79, मु0पृ0 355–360।
6. लेसली, ए0 सी0(1982) अंतर्राष्ट्रीय लिलि रजिस्टर, तीसरा एडिसन, रॉयल बागवानी सोसायटी, लंदन।
7. मोहन, जे0(2006) प्रजनन उत्परिवर्तन द्वारा सजावटी पौधों में सुधार. ***एक्टा*** *हौर्टीकल्चर*, खण्ड–714, मु0पृ0 85–98।
8. नागाटा, टी0; टोडोरीकी, एस0; मासुमीजु, टी0; सुधा, आई0; फरुटा, एस.; डीयू, जेड, जे. ऐट आल(2003) ऐरावीडोपसीस में सक्रिय ऑक्सीजन प्रजातियों का एस्कोर्बिक एसिड़ और एंथोसायनिन द्वारा नियंत्रण, *कृषि और खाद्य रसायन विज्ञान जर्नल*, खण्ड–51, मु0पृ0 2992–2999।
9. नोरबेक, आर0 व कोनडो, टी0(1999) लिलियम के फूलों से एंथोसायनिन, लिलिऐसी. फाईटोकेमिस्ट्री, खण्ड–50, मु0पृ0 1181–1184।
10. रंगना, एस0(1979) फलों और सब्जियों के उत्पादों के विश्लेषण का मैनुअल, टाटा मैकग्रा हिल बुक कं0, नई दिल्ली।
11. सचबिन, के0 ई0 व डेविस, के0 एम0(2004) फ्लेबोनोआइड्स, *वार्षिक संयंत्र समीक्षा*, खण्ड–14, मु0पृ0 92–149।
12. समिथ, डी0 आर0; कोनगसुबान, के0 व सुधारोमन, एस0 वी0(1989) लिलियम के गुणसूत्रों में सी–बैंड़ पैटर्न का एक सर्वेज्ञण, लिलिऐसी, ***संयंत्र व्यवस्थित विकास***, खण्ड–163, मु0पृ0 53–69।
13. स्टीकलैंड़, आर0 जी0(1972) गुलदाउदी के विकास पुष्पक में एंथोसायनिन, केरोटिनाइड, क्लोरोफिल और प्रोटीन में परिवर्तन, *वनस्पति विज्ञान का इतिहास*, खण्ड–36, मु0पृ0 459–469।
14. तेहरीसिवा, एन0(2008) लिलियम में एंथोसायनिन जैवसंश्लेषण पर संयंत्र विकास नियामकों का प्रभाव, मास्टर ऑफ विज्ञान शोध, *कृषि संकाय*, गुइलान विश्वविद्यालय, फारसी में।
15. यामागिसी, एम0; किरीमोटो, एस0 व नाकायामा, एम0(2010) एशियाटिक संकर लिलि की केरोटिनाइड संरचना और बाहयदल में केरोटिनाइड जैवसंश्लेषण जीनों की अभिव्यक्ति में परिवर्तन, *पौध प्रजनन*, खण्ड–129, मु0पृ0 100–107।
16. वीइस, डी0(2000) फूल रंजकता और विकास का विनियमनः कई विधियों द्वारा पंखुड़ियों के विस्तार में एंथोसायनिन संश्लेषण पर नियंत्रण, *फिजीयोलोजिय प्लेंटारम*, खण्ड–110, भाग–2, मु0पृ0 152–157।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 15–18, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4369 शोध पत्र

दक्षिणी राजस्थान में बाघों की उपस्थिति–कुछ प्रमाण

सतीश कुमार शर्मा
सहायक वन संरक्षक, वन्यजीव अभयारण्य, जयसमन्द,
जयसमन्द पोस्ट, जिला उदयपुर–313905, राजस्थान, भारत
sksharma56@gmail.com

प्राप्त तिथि– 05.07.2016; स्वीकृत तिथि– 19.08.2016

सार

दक्षिणी राजस्थान के उदयपुर, भीलवाड़ा, राजसमन्द, एवं चित्तौड़गढ़ जिले के विस्तृत क्षेत्र में वर्ष 1902 से 1956 तक बाघों की उल्लेखनीय उपस्थिति थी। तत्कालीन समय वन्य आवास में उनकी संख्या भी अधिक थी। तदुपरांत बढते मानव हस्तक्षेप से उत्पन्न जैविक दबाव के कारण संभवतः यह प्रजाति 1970 से 1980 के मध्य विलुप्त हुई।

बीज शब्द– दक्षिणी राजस्थान, बाघ, प्रमाण।

Presence of tigers in southern Rajasthan-some evidences

Satish Kumar Sharma
Assistant Conservator of Forests, Wildlife Sanctuary, Jaisamand
Post-Jaisamand, District- Udaipur – 313905, Rajasthan, India
sksharma56@gmail.com

Abstract

Tigers were widely present from 1902 to 1956 in Udaipur, Rajasmand, Bhilwara and Chittorgarh districts of southern Rajasthan. During erstwhile time, their number was also good in the wild, but later on, due to increasing anthropogenic pressure tiger became extinct from southern Rajasthan, probably between 1970 to 1980.

Key words- Southern Rajasthan, tiger, evidence.

1. प्रस्तावना– बाघ, सिंह, चीता, तेंदुआ एवं हिम तेंदुआ भारत की महत्वपूर्ण पाँच बड़ी बिल्लियाँ हैं।[1,3,5] राजस्थान में बडी बिल्लियों में केवल बाघ(*Panthera tigris*) तथा तेंदुआ(*Panthera pardus*) वर्तमान में अस्तित्व में हैं।[8] राजस्थान का दक्षिणी भू–भाग "मेवाड़" के नाम से विख्यात है। दक्षिण राजस्थान में मुख्यतया उदयपुर, राजसमन्द, प्रतापगढ़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, भीलवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ जिलों के क्षेत्र आते हैं। प्रतापगढ़ कुछ वर्षों पूर्व चित्तौड़गढ़ जिले का एवं राजसमन्द उदयपुर जिले का ही भाग था। एक समय था जब दक्षिण राजस्थान में जगह–जगह बाघ निवास करते थे लेकिन आज दक्षिण राजस्थान में बाघ का विलुप्तिकरण हो चुका है। दक्षिण राजस्थान से बाघ 1970 से 1980 के मध्य के दशक में विलुप्त हुआ।[7, 8, 9] उदयपुर शहर से मात्र 50 किमी दूर जयसमन्द क्षेत्र बाघों की महत्वपूर्ण शरणस्थली थी जहाँ मेवाड़ के महाराणा उनका शिकार करते थे लेकिन यहाँ अब बाघ नहीं बचे।[4] कभी मेवाड़ के महाराणा चीता(*Actinonyx jubatus*) भी पालते थे जिनका उपयोग हिरणों के शिकार में किया जाता था। चीता मेवाड़ में हुरड़ा, भीलवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ में मिलते थे जो कालान्तर में समाप्त होते गये।[6] बाघ का राजस्थान के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों से विलुप्तिकरण एक अध्ययन का विषय है। सूक्ष्म स्तर पर यह जानना जरूरी है कि वे कौन सी परिस्थितियाँ थी जिनके कारण बाघ समाप्त हुआ। संभागवार बाघ के विलुप्त होने की कालावधि का भी प्रमाणित दस्तावेजीकरण उपलब्ध नहीं है। हाल ही में टॉडगढ़–रावली, बूंदी, फुलवारी अभयारण्य एवं दक्षिण राजस्थान के कतिपय क्षेत्रों के लिए इस तरह का अध्ययन हुआ है।[7–10] प्रस्तुत पत्र में राजस्थान में, विशेषकर दक्षिणी राजस्थान में बाघ के अतीत को जानने की अगली श्रंखला में एक और प्रयास किया गया है। तंवर[4] ने मेवाड़ संभाग में आजादी से एकदम पहले एवं तुरन्त बाद में मेवाड़ के महाराणाओं के शिकार वृतान्तों का ब्यौरा दिया है जो बाघ की उपस्थिति के स्थल व कालावधि जानने में मदद करते हैं।

2. **अध्ययन क्षेत्र एवं अध्ययन काल–** बाघों के राजस्थान में, खास कर दक्षिण राजस्थान, में वितरण को जानने के लिए यह अध्ययन उदयपुर, राजसमन्द, प्रतापगढ़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, भीलवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ जिलों में 1986 से 2015 तक किया गया।

3. **अध्ययन विधि–** विभिन्न उपलब्ध साहित्य का अध्ययन किया गया। बाघों की जानकारी रखने वाले ठिकानेदार, ओहदेदार एवं पुराने शिकारियों से सूचनाऐं प्राप्त की गयी। तत्कालीन शासकों की निजी शिकारगाहों एवं उनमें निर्मित औदियों व अन्य निर्माणों का अवलोकन किया गया। स्थानीय जनता से भी शिकारगाहों, औदियों एवं शिकार प्रकरण संबंधी जानकारियाँ प्राप्त की गयी।

4. **परिणाम एवं विवेचन–** दक्षिणी राजस्थान के संदर्भ में वन्यप्राणियों, खासकर बाघ के वितरण के लिए श्यामलदास[6], तंवर[4], शर्मा[7–9] आदि महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं। तंवर[4] ने अपनी कृति आजादी मिलने के लगभग 9 वर्ष बाद एवं वन्यजीव(सुरक्षा) अधिनियम 1972 के अस्तित्व में आने से 16 वर्ष पूर्व प्रकाशित की थी। यह समय वन्यजीवों की उपलब्धता की दृष्टि से अपेक्षाकृत अच्छा समय था साथ ही "अवैध शिकार" एवं "परमिट शिकार" का बोलबाला भी था।[9–10] तत्कालीन समय में दक्षिण राजस्थान में बाघ की स्थिति को दर्शाने हेतु तंवर[4] की कृति अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वे स्वयं भी बहुत अच्छे शिकारी एवं शिकार प्रबंधक रहे हैं। उन्होंने कालावधि को बताने में संवत् या ईसवीं सन् दोनों का उपयोग किया है। प्रस्तुत पत्र में संवत् को सन् में परिवर्तित कर प्रस्तुत किया गया है। उक्त कृति में 1902 से 1956 तक दक्षिण राजस्थान में बाघों की उपस्थिति के स्थलों का विवरण उपलब्ध है जो निम्न है–

सारणी 1– दक्षिणी राजस्थान में सन् 1902 से 1956 तक बाघों की उपस्थिति के कुछ क्षेत्र

क्र0स0	जिला	वर्ष (AD)	स्थान जहाँ बाघ प्रजाति विद्यमान थी
1	उदयपुर	1902	भोमट का मरवड़ मगरा
		1926	केवड़ा गांव के जंगल
		1926	जयसमन्द
		1937	कानोड़
		1938	जयसमन्द
		1939	बाघदड़ा
		1940	कमलनाथ वन क्षेत्र
		1941	जयसमन्द
		1945	जयसमन्द
		1953	घसार
2	राजसमन्द	1944	पालर शिकरगाह (कुम्भलगढ़)
		1946	रूपनगर (कुम्भलगढ)
3	भीलवाड़ा	1934	माँड़लगढ़
		1941	जहाजपुर, झींकली गांव, बेरीमाता
		1944	माँड़लगढ़
		1950	माँडलगढ
		1956	माँडलगढ़
4	चित्तौड़गढ़	1926	दौलतपुरा गांव के पास जेला की धार
		1932	कूवाखेड़ा गांव के पास
		1934	हथणी शिकारगाह
		1941	आमझर शिकारगाह(बस्सी)
		1941	बोकड़िया शिकारगाह
		1941	धामड़मऊ (भैंसरोड़गढ़ के पास)
		1942	मेनाल
		1956	भैंसरोड़गढ़

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है आधी शताब्दी पूर्व बाघ दक्षिण राजस्थान से दूर–दूर तक निरन्तरता में विद्यमान थे। उदयपुर शहर के आस–पास सटी पहाड़ियों के जंगलों में बाघ की उपस्थिति दर्ज थी। बाघदड़ा के जंगल उदयपुर शहर से मात्र 20 किमी दूर हैं जहाँ बाघ विद्यमान थे। बाघों की अच्छी उपस्थिति के कारण ही क्षेत्र का नाम "बाघदड़ा" यानि "बाघों का दड़ा"

यानि "बाघों का घर" पड़ा। आजकल इसे "बाघदड़ा नेचर पार्क" के नाम से जाना जाता है। यहाँ तीन शिकार औदिया इसकी गवाह हैं जिनमें जनाना औदी काफी सुरम्य है जो बाघदड़ा जलाशय से निकले नाले के किनारे पर स्थित है।[8] नाले की नमी, छाया व शीतलता बाघों को गर्मी के मौसम में सोने व आराम करने की बेहतरीन जगह थी। यहाँ "हाका" कर बाघ को बाहर निकाल कर शिकार किया जाता थी। तत्समय यहाँ सांभर, चिंकारा, चौंसिंगा, जंगली सुअर व नील गाय की अच्छी उपस्थिति थी जो बाघ का भोजन आधार बनते थे। उदयपुर शहर से 15 किमी दूर सलूंम्बर मार्ग पर हल्दूघाटी से दक्षिण दिशा में चलने पर केवड़ा गांव का "केवड़ा की नाल" वनक्षेत्र बहुत सघन एवं शीतल था। कभी नमी युक्त केवड़ा की नाल(संकरी घाटी) में केवड़ा (*Pandanus fascicularis*) उगा करता था जिससे इस नाल का नामकरण भी हुआ। नाल की धारा में आधी शताब्दी पूर्व जगह–जगह गर्मी में भी जल उपलब्ध रहता था लेकिन अब गर्मी में यह धारा सूख जाती है। आज भी इस "नाल वन" में केवडेश्वर महादेव क्षेत्र में सालभर पानी प्रवाहमान रहता है। वहाँ एक विशाल प्राचीन बरगद भी विद्यमान है। यह शीतल एवं पानी से भरपूर क्षेत्र बाघों की अनेकों जैविक जरूरतों को पूरा करता था। इसी क्षेत्र की निरन्तरता में जयसमन्द एंव उससे आगे सलुंबर के वन क्षेत्र हैं जिनमें बाघों की अच्छी संख्या तत्समय विद्यमान थी। आजादी के बाद 1955 में राजस्थान सरकार ने जयसमन्द को अभयारण्य भी घोषित कर दिया।

उदयपुर से ईसवाल की तरफ जाने पर घसार(घसियार), झाड़ोल की तरफ जाने पर मरवड़–अलसीगढ़ मगरा(पहाड़) एवं झाड़ोल से आगे जाने पर कमलनाथ वन क्षेत्र तथा और आगे जाने पर फुलवारी की नाल वन क्षेत्र में सभी जगह बाघ का निवास था। फुलवारी की नाल वनक्षेत्र की निरन्तरता में उत्तरी गुजरात में पोलो वन क्षेत्र तक बाघ की निरन्तरता व आवाजाही थी। राजसमन्द जिले के पालर व रूपनगर वन क्षेत्रों व आस–पास के सभी जंगलों में बाघ था। आज ये क्षेत्र कुंभलगढ़ अभयारण्य के भाग हैं। कुंभलगढ़ अभयारण्य बाघों के लिए हमेशा प्रसिद्ध रहा है। कुंभलगढ़ से लेकर रावली टॉडगढ़ एवं उत्तर दिशा में और आगे अजमेर जिले के पहाड़ों में धौक वनों(*Anogeissus pendula* Forest) में बाघ की उपलब्धता थी। यही स्थिति भीलवाड़ा जिले में भी थी। भीलवाड़ा जिले में जहाजपुर से लेकर माँडलगढ़ एवं उससे आगे मेनाल तक बाघ विद्यमान थे।

चित्तौड़गढ़ जिले में भी दूर–दूर तक बाघ विद्यमान थे। तत्कालीन आमझर शिकारगाह एवं इसके आस–पास का वनक्षेत्र आज बस्सी अभयारण्य (Bassi Wildlife Sanctuary) के नाम से जाना जाता है। इसी तरह चित्तौड़गढ़ जिले का कोटा की सीमा के पास भैसरोड़गढ़ शिकारगाह अब भैसरोड़गढ़ अभयारण्य के नाम से जाना जाता है। बस्सी से लेकर भैसरोड़गढ़, जवाहरसागर एवं दरा तक के जंगलों में बाघ था। दक्षिणी राजस्थान में बाघ का घर–घर में मुख्य प्रवेश द्वार पर चित्रांकन होता था । जब भी किसी के घर में कोई शादी–विवाह होता था, घर के द्वार पर बाघ का चित्रांकन होता था। यह परिपाटी आज भी जारी है। इस चित्रांकन की खास बात यह थी कि एक ऐसे बाघ का चित्रांकन होता है जिसकी पूंछ पर सिंह की पूंछ की तरह बालों का गुच्छा होता है। तत्कालीन समय में दो वन क्षेत्रों के बीच संपर्क मार्ग (Corridore) की कोई समस्या नहीं थी। एक वन क्षेत्र से दूर–दराज तक के वन क्षेत्रों में संपर्क मार्गों का उपयोग कर बाघ आवाजाही करते रहते थे लेकिन आजादी के बाद के विकास में सड़कों, रेलमार्गों, नहरों, खनन, कारखानों, मानव बस्तियों एवं कृषि क्षेत्रों के विस्तार ने कॉरीडोरों को भारी नुकसान पहुंचाया। किसी समय आपस में जुडे वन क्षेत्र अलग–थलग पड़ते चले गये जिससे बाघों सहित अन्य प्राणियों का विचरण बाधित होता चला गया। समय के साथ बाघ का भोजन आधार समाप्त हो गया। सांभर व जंगली सुअर की संख्या में भारी कमी आयी। चिंकारा एवं चौसिंगा भी तेजी से घटने लगे। काला हिरण दक्षिणी राजस्थान से बिल्कुल समाप्त हो गया और अंततः दक्षिणी राजस्थान से बाघ का विलुप्तिकरण भी हो गया।

5. निष्कर्ष

तंवर(1956) एवं शर्मा(2007, 2014) के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि सन् 1956 तक दक्षिणी राजस्थान में बाघ बडे भू–भाग पर वितरित थे। अच्छी संख्या में उपलब्धि के कारण ही उनके शिकार–आखेट प्रक्रम भी होते रहते थे। रावली–टॉडगढ़ के जंगलों में भी बाघ के 1955 तक परमिट शिकार के प्रमाणित दस्तावेज उपलब्ध है(शर्मा 2015 अ)। 1955 तक बाघ के परमिट शिकार के प्रकरण इंगित करते हैं कि बाघों की इतनी संख्या विद्यमान थी कि वैध ढंग से लाइसेन्स लेकर उनका शिकार किया जा सकता था। "राजस्थान वाइल्ड एनीमल्स एवं बर्ड्स प्रोटेक्शन एक्ट 1951" के आगमन पर इस अधिनियम अन्तर्गत रणथम्भौर, सरिस्का, दरा, जयसमन्द एवं वनविहार को नवम्बर 7, 1955 को प्रथम बार अभयारण्य घोषित किया गया(मोहनराज एवं शर्मा, 2013)। ये पाँचों अभयारण्य बाघों के लिए प्रसिद्ध थे। इन पाँचों में तत्समय बाघ विद्यमान थे लेकिन कालान्तर में दरा, जयसमन्द एवं वन विहार में यह बड़ी बिल्ली समाप्त हो गयी तथा केवल सरिस्का एंव रणथम्भौर में ही बाघ बचे। बीच में एक दौर आया जब सरिस्का में भी बाघ समाप्तप्राय हो गये एवं वहाँ रणथम्भौर से लाकर उन्हें पुनः बसाया गया। दक्षिणी राजस्थान में 1950 से 1960 के बीच बाघों की स्थिति संतोषजनक थी। लेकिन बाद में वन विनाश, खनन, बढ़ती आबादी, कृषि विस्तार, वनों का खण्ड़ीकरण, कॉरीडोर विनाश, भोजन आधार विनाश आदि कारकों ने बाघ के लिए स्थितियाँ प्रतिकूल कर दी है एवं उनकी संख्या तेजी से घटते हुए 1970 से 1980 के बीच बाघ दक्षिणी राजस्थान से विलुप्त हो गये।

आभार– लेखक वन विभाग के सभी कर्मचारियों–अधिकारियों एवं उन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं जिन्होंने प्रस्तुत अध्ययन में सहयोग प्रदान किया।

सन्दर्भ

1. मेनन, वी0(2014) इड़ियन मैमल्स–ए फील्ड़ गाइड़, हचेट बुक पब्लिशिंग इण्ड़िया प्रा0 लि0, गुड़गाँव।
2. मोहनराज, टी0 एवं शर्मा, सतीश कुमार(2013) जयसमन्द वाइल्ड़ लाइफ सेंक्चुरी मेनेजमेन्ट प्लान 2013–14 से 2022–23, वन विभाग, राजस्थान।
3. प्रेटर, एस0 एच0(1980) द बुक ऑफ इण्ड़ियन मैमल्स, बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी।
4. तँवर, तुलसीनाथ एवं सिंह धायभाई(1956), शिकारी और शिकार, प्रकाशक धायभाई तुलसीनाथ सिंह तंवर, जगदीश चौक, उदयपुर, मेवाड़), मु0पृ0 1–363।
5. रिचर्डसन, डी0(1992) बिग कैट्स, क्विटर बुक्स, लन्दन।
6. श्यामलदास(1886) वीर विनोद–मेवाड़ का इतिहास, प्रथम भाग।
7. शर्मा, एस0 के0 (2007) स्टड़ी ऑफ बायोडायवर्सिटी एण्ड़ एथनोबायोलोजी ऑफ फुलवारी वाइल्ड़लाइफ सेंक्चुरी, उदयपुर, राजस्थान, पी–एच0 डी0 थीसिस, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान।
8. शर्मा, सतीश कुमार(2014) दक्षिणी राजस्थान के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बाघ से संबधित कुछ तथ्य, अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) खण्ड–2, अंक–1, मु0पृ0 9–17।
9. शर्मा, सतीश कुमार(2015 अ) टॉडगढ़–रावली वन्यजीव अभयारण्यः गत शताब्दी में बाघों की उपस्थिति से सबंधित कुछ ऐतिहासिक तथ्य, अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका, खण्ड–3, अंक–1, मु0पृ0 1–5।
10, शर्मा, सतीश कुमार(2015 ब) राजस्थान के बूंदी जिले में वन्य प्राणियों की 1950 से 1980 तक की अवधि का एक अध्ययन, अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका), खण्ड–59, अंक–1, मु0पृ0 39–44।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 19–21, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4370 शोध पत्र

ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के विद्यार्थियों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

दिनेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, मनोविज्ञान विभाग
पी0बी0 पी0जी0 कॉलेज, प्रतापगढ़–230143, उ0प्र0, भारत
dineshpbpg13@gmail.com

प्राप्त तिथि– 22.07.2016; स्वीकृत तिथि– 31.08.2016

सार– वर्तमान अध्ययन में ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों के मध्य मूल्यों का अध्ययन करना मुख्य उद्देश्य था। अध्ययन हेतु 60 विद्यार्थियों का समूह(छात्र/छात्राएं), जिनमें 30 छात्र तथा 30 छात्राएं थी तथा प्रत्येक समूह में शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र से विद्यार्थी लिये गये। प्रत्येक उपचार में 15 प्रयोज्य को लिया गया। डा0 आर0 के0 ओझा(1971) द्वारा निर्मित मापनी का प्रयोग प्रत्येक प्रयोज्य पर वैयक्तिक किया गया। प्राप्त आंकड़ों पर टू वे एनोवा का प्रयोग किया गया। शहरी क्षेत्र के छात्रों का माध्यमान = 107.666 तथा ग्रामीण क्षेत्र के छात्रों का माध्यमान = 110.667 पाया गया। शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के मूल्य स्तर अपेक्षाकृत अधिक पाया गया। सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

बीज शब्द– ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थी, मूल्यों का अध्ययन।

Comparative analysis of values of rural and urban students

Dinesh Kumar
Assistant Professor, Department of Psychology
P.B.P.G. College, Pratapgarh-230143, U.P., India
dineshpbpg13@gmail.com

Abstract- In present studies value was studied between urban and rural students. A group of 60 students in which there were 30 girls and 30 boys and each group included both from urban and rural area. 15 subjects were taken in each treatment and each subject were treated individual personality with a measurement devised by Dr. R. K. Ojha(1971). Two way Anova was experimented on the data obtained. The mean of urban students was found 107.666 and rural area students was 110.667.The value level of rural students was found to be more as compared urban students. A significant difference was not noticed between them.

Key words- Student of rural and urban areas, study of values.

1. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के विद्यार्थियों के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

वर्तमान समय में प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ न कुछ अनुभव अवश्य होते हैं, जो समय की गति के साथ–साथ बढ़ते जाते हैं इन्हीं अनुभवों के कुछ सामान्य सिद्धान्त जन्म लेते हैं, जो मानव के व्यवहार को निर्देशित करते हैं, ऐसे सामान्य सिद्धान्तों को जो समस्त जीवन को एक दर्शन के रूप में परिवर्तित कर देते हैं तथा समस्त जीवन जीने की एक विशिष्ट कला को जन्म देते हैं, एवं उनके पथ–प्रदर्शक के रूप में कार्य करतें हैं। उन्हें मूल्य के नाम से जाना जाता है। व्यक्ति के मूल्य इस बात का दर्पण होते हैं कि वे अपनी सीमित शक्ति एवं समय में क्या करना चाहते हैं, जीवन के पथ–प्रदर्शक के रूप में मूल्य अनुभवों के साथ–साथ अधिक परिपक्व हो जाते हैं। मूल्य व्यक्ति की रुचियों, प्रेरणाओं एवं अभिप्रेरणाओं की ओर इंगित करते हैं। ब्राइटमैन[1] ने बताया कि मूल्यों से हमारा तात्पर्य किसी पसन्द, पुरस्कार, वांछित वस्तु या आनन्द से है। किसी क्रिया या वांछित वस्तु का वास्तविक अनुभवों पर आनन्द प्राप्त करना ही मूल्य समझा जाता है। मूल्य सामान्य रूप से किसी उद्देश्य की प्राप्ति का एक विन्यास है।

2. **मूल्य का मापन/विधि–** मूल्य मापन की दो विधियाँ उपलब्ध हैं, प्रथम मैरिस की, जिसमें विभिन्न मानवीय मूल्यों का मापन किया जाता है तथा द्वितीय आलपोर्ट की[2], जिसमें व्यक्ति के सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक रुचियों एवं अभिवृत्तियों का मापन किया जाता है। मूल्य अध्ययन की सर्वप्रथम रचना आलपोर्ट ने की तथा लिण्डर्ज के सहयोग से इसे संशोधित किया गया।[3] भारत में सर्वप्रथम मूल्य मापन के क्षेत्र में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के कार्तिक राय चौधरी[4] द्वारा किया गया। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के छात्र/छात्राओं पर पड़ने वाले मूल्यों के प्रभावों का अध्ययन करना है।

3. **परिकल्पना**

1. मूल्यों पर शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।
2. मूल्यों पर छात्र/छात्राओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
3. शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों तथा छात्र/छात्राओं के चरों के मध्य अन्तःक्रिया में सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।

4. **अभिकल्प–** वर्तमान अध्ययन में 2X2 द्विकारक अभिकल्प समूह का प्रयोग किया गया है जिसमें प्रथम चर शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र तथा द्वितीय चर छात्र एवं छात्राओं के लिए गये हैं।

परिवर्त्य–

स्वतन्त्र परिवर्त्य–	क. शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र
	ख. छात्र एवं छात्राएँ
आश्रित परिवर्त्य–	मूल्य

प्रतिदर्श– यह अध्ययन कुछ 60 विद्यार्थियों पर किया गया, जिसमें 30 विद्यार्थी शहरी क्षेत्र से तथा 30 ग्रामीण क्षेत्र से लिए गये एवं दो समूह बनाये गये। 30 छात्र व 30 छात्राएं शामिल की गयी।

सामग्री– मूल्य की मात्रा को मापने के लिए स्टडी आफ वैल्यूज का प्रयोग किया, जो डॉ0 आर0 के0 ओझा[5] द्वारा बनायी गयी मापनी है।

विश्वसनीयता– स्टडी आफ वैल्यूज की कूडर रिचर्डसन सूत्र से प्रत्येक मूल्य की विश्वसनीयता + 0.69 से + 0.89 पायी गयी।

प्रशासन प्रक्रिया– सर्वप्रथम कालेज में शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्राओं को छाँटा फिर उन्हें परीक्षण का उद्देश्य बताया गया तथा उनकी रुचि उत्पन्न की गयी, फिर उन्हें स्टडी आफ वैल्यूज[5] प्रश्नावली दी गयी, तथा बताया गया कि इस प्रश्नावली के दो भाग हैं। प्रथम भाग में 30 कथन हैं तथा द्वितीय भाग में 15 कथन हैं। प्रथम भाग में प्रत्येक कथन के दो उत्तर हैं यदि आप अ से सहमत हैं और ब से असहमत हैं तो प्रथम कोष्ठ अ में संख्या तीन तथा ब में शून्य लिख दें। इस प्रकार यदि आप ब से सहमत हैं तो 3 तथा अ से असहमत हों तो शून्य लिख दें यदि आपका कथन ब से कुछ अधिक प्राथमिकता देना चाहते हैं, तो अ में 2 तथा ब में 1 और यदि कथन अ से कथन ब को अधिक प्राथमिकता देना चाहते हैं तो पहले अ में संख्या–1 तथा ब में 2 लिख दें। भाग दो में कुल पन्द्रह कथन हैं प्रत्येक को चार भाग में अ,ब,स,द में बाँटा गया है। जिस कथन से आप अत्यधिक सहमत हों उसके सामने चार लिखा है। यदि कम सहमत हैं तो तीन या सबसे कम सहमत हैं तो शून्य लिख दें।

प्राप्तांक– स्टडी आफ वैल्यूज में कुल पैंतालीस कथन हैं भाग एक में तीस कथन तथा भाग दो में पन्द्रह कथन हैं। भाग में प्रत्येक कथन का दो भागों में बाँटा गया है। जिसमें आप अधिकतम तीन अंक तथा न्यूनतम शून्य अंक दे सकते हैं। इस प्रकार भाग एक अधिकतम प्राप्तांक नब्बे तथा न्यूनतम शून्य हो सकता है। भाग दो में कुल पन्द्रह कथन हैं तथा प्रत्येक कथन का अधिकतम प्राप्तांक साठ तथा न्यूनतम पन्द्रह हो सकता है। इस प्रक्रिया द्वारा सभी साठ प्रयोज्यों के मूल्यों के अध्ययन प्राप्तांकों को ज्ञात किया गया।

5. **परिणाम व निष्कर्ष–** प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्राओं पर बढ़ने वाले मूल्यों के प्रभावों का अध्ययन करना था। अध्ययन से प्राप्त प्राप्तांक के सांख्यिकी विश्लेषण में टू वे एनोवा का प्रयोग किया गया, प्राप्त परिणाम निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

प्रसारण के स्रोत Source of Variance	वर्गों का योग S.S.	D.F.	M.S.	F-Ratio
अ. (शहरी,ग्रामीण क्षेत्र)	33.449	1	33.449	0.714
ब. (लिंग)	50.416	1	50.416	1.067
अ x ब	20.419	1	20.419	0.432
त्रुटि	2644.999	56	47.232	
योग	2749.583	59		

$F.95(1,56) = 4.03$

प्रथम शोध अध्ययन में पाया गया कि शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों का स्तर उच्च है, शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों के मूल्य का मध्यमान 107.5 तथा ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के मूल्य का मध्यमान 109.33 पाया गया। द्वितीय भाग में शहरी क्षेत्र के छात्रों का मध्यमान मूल्य 107.66 तथा छात्राओं का मध्यमान मूल्य 107.37 पाया गया। ऐसा इसलिए संभव है कि शहर की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र में संयुक्त परिवार होता है तथा उसमें मूल्यों के द्वारा प्रत्येक को बताया जाता है।[7] छात्रों में मूल्य अधिक पाया जाता है। हमने इस शोध में टू वे एनोवा का प्रयोग किया। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों में तथा लिंग में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

सन्दर्भ

1. ब्राइटमैन(1958) स्टडी एण्ड मीजरमेंट ऑफ वैल्यूज, पृ0 526।
2. आलपोर्ट, जी0 डब्ल्यू0(1955) बिकमिंग बेसिक कन्सीडरेशन्स फॉर साइकोलॉजी आफ पर्सनैलिटी, येल यूनिवर्सिटी प्रेस वेब।
3. आलपोर्ट, वर्नन एण्ड लेण्डजे(1960) मैनुअल फार द स्टडी आफ वैल्यूज, बोस्टन पी0आई0, पृ0 9।
4. चौधरी, के0 राय(1958) अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ़।
5. ओझा, आर0 के0(1971) वैल्यू टेस्ट, आगरा, नेशनल साइकोलॉजिकल कॉर्पोरेशन।
6. शेरी, जी0 पी0 एण्ड वर्मा आर0 पी0(1973) पर्सनल वैल्यू क्वैश्चनायर(पी.वी.क्यू.), आगरा नेशनल साइकोलॉजिकल कार्पोरेशन।
7. मैक्क्रेकन, जे0 डेविड(1991) जर्नल आफ रिसर्च आफ रूरल एजूकेशन, खण्ड–7, अंक–2, मु0पृ0 29–40।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 22–25, D.O.I. : 10.22445/avsp.v4i1.4371 शोध पत्र

भूमि उपयोग के संदर्भ में सोन घाटी के पूर्वी क्षेत्र का भू–आकृतिक अध्ययन

संजय शुक्ल
एसोसिएट प्रोफेसर, भूविज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drsanjaygeo@gmail.com

प्राप्त तिथि– 29.07.2016; स्वीकृत तिथि– 16.08.2016

सार– प्रस्तुत शोध पत्र सोन घाटी, जिला सोनभद्र, उ0प्र0 के पूर्वी भाग में किये गये भू–वैज्ञानिक व भू–आकृतिक अध्ययन पर आधारित है। इस अध्ययन का मुख्य क्षेत्र महाकौशल ग्रुप(पूर्व में बीजावर ग्रुप) की चट्टानें हैं जो कि विंध्यन सुपरग्रुप के दक्षिण में स्थित हैं। इस क्षेत्र का भौगोलिक विस्तार अक्षांश $24^0 15' – 24^0 31'$ एवं देशान्तर $82^0 15' – 82^0 30'$ के मध्य स्थित है। यह क्षेत्र सर्वे ऑफ इण्डिया टोपोशीट सं0 63/पी/7 के अंतर्गत आता है। भू–विज्ञानिक तथा भू–आकृतिक अध्ययन के आधार पर इस क्षेत्र को विभिन्न वर्गों में विभक्त किया जा सकता है, जैसे– चरागाह, वानिकी, शुष्क व नम कृषि क्षेत्र। इनका अध्ययन इस क्षेत्र में कृषि व उद्योगों को विकसित एवं प्रोत्साहित करने में सहायक होगा। इस क्षेत्र में उपस्थित खनिजों व चट्टानों का उपयोग भी पर्यावरण को बिना हानि पहुँचाये किया जा सकता है। जिससे क्षेत्रवासी लाभान्वित हो पायेंगे। मौसम की दृष्टि से यह क्षेत्र दीर्घ तप्त ग्रीष्मकाल, कम वर्षा वाला तथा संक्षिप्त एवं साधारण शीतकाल दर्शाता है। इस क्षेत्र का तापमान शीत व ग्रीष्मकाल में क्रमशः 8.5^0 व 46^0 से0ग्रे0 के मध्य रहता है। वर्षा जून से अक्टूबर तक होती है। वनक्षेत्र में महुआ, साल, तेंदूपत्ता तथा बाँस आदि प्रमुख उत्पाद है।

बीज शब्द– एल्यूवियम, कगार(स्कार्प)।

Geomorphologic study of the eastern part of Son-valley with reference to land use

Sanjay Shukla
Associate Professor, Department of Geology
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
drsanjaygeo@gmail.com

Abstract- Geological and geomorphologic studies especially terrain evaluation of the eastern part of Son-valley, District Sonbhadra, U.P., reveals the areas suitable for pastures, forestry, wet and dry cultivation. It can help in the development of sectors like agriculture and industry apart from mining. The utilization of natural resources of the area taking into account the potential and constraints specific to the environment can be properly managed by land use planning.

Key words- Alluvium, scarp.

1. **भू–विज्ञानी स्तरक्रम**(Geological setting)– इस क्षेत्र का भू–वैज्ञानिक अध्ययन ऑडेन[1], घोष एवं अन्य[2] मेडलीकॉट[3], मुखर्जी[4], पास्को[5], शुक्ला एवं श्रीवास्तव[6, 8], शुक्ला[7], मिश्रा एवं अन्य[9] वैज्ञानिकों ने किया है। इस क्षेत्र में तीन मुख्य शैल समूहों की चट्टानें पायी जाती हैं। सबसे प्राचीन दुद्धी ग्रेनीटॉयड कॉम्प्लेक्स, महाकौशल समूह के मेटा सेडीमेंट्स का अनुक्रम व विंध्यन सुपरग्रुप। दो प्रमुख विवर्तनिक फेज के परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के वलनों का निर्माण महाकौशल ग्रुप की चट्टानों में व निम्न(लोअर) विंध्यन की चट्टानों में देखने को मिलता है। महाकौशल ग्रुप की फिलाइट व शिष्ट चट्टानों में ग्रेनाइट के प्लूटॉन के इम्प्लेस्ड(implaced) होने के कारण सभी ओर मेटामॉर्फिक आरियोल का निर्माण हुआ है। भ्रंशों, सिलीसीफाइड ब्रेक्सिया, स्लिकेनसाइड तथा मिनरेलाइजेशन आदि रचनाओं की उपस्थिति इस क्षेत्र में हुई विवर्तनिक गतिविधियों की ओर इंगित करती हैं। क्षेत्र का भूगर्भीय स्तर क्रम निम्न प्रकार से है–

सुपर ग्रुप	ग्रुप	फॉरमेशन	लिथोलॉजी	आयु
		एल्यूवियम	बालू, सिल्ट, क्ले	रिसेन्ट
विंध्यन	कैमूर ग्रुप	कैमूर सैंड स्टोन	सैंडस्टोन	अपर प्रोटीरोजोइक
	सेमरी ग्रुप	पोरसीलेनाइट कजराहट लाइम स्टोन बेसल फारमेशन	पोरसीलेनाइट चूना पत्थर कांग्लोमीरेट(जेस्पर सहित)	लोअर मिडिल प्रोटीरोजोइक

			सैंडस्टोन	
	महाकौशल ग्रुप	पारसोई फारमेशन	डाइक ग्रेनाइट, क्वार्ट्ज वेन फिलाइट, शिष्ट स्लेट व क्वार्ट्जाइट	लोअर प्रोटीरोजोइक
	दुदधी ग्रेनीटॉइड कॉम्प्लेक्स		नाइस व ग्रेनाइट्स	ऑर्कियन

2. **भू–आकृति**(Geomorphology)– इस क्षेत्र के दक्षिणी भाग में ऊँची–नीची पहाड़ियाँ तथा उत्तर में लम्बाकार(linear) स्ट्राइक श्रेणियाँ हैं जो कि कगार(स्कार्प) के रूप में विकसित हैं। मध्यवर्ती भू–भाग लगभग समतल है तथा मिट्टी और बालू से आच्छादित है। इन पहाड़ियों की अधिकतम ऊँचाई 413 मीटर तथा न्यूनतम ऊँचाई 200 मीटर है। इन चट्टानों का सामान्य ढलान उत्तर व पूर्व की तरफ है। इस क्षेत्र को भू–आकृति की दृष्टि से मुख्यतः तीन इकाइयों में बाँटा जा सकता है।

क. पूर्व–पश्चिम दिशा प्रवृत्ति की लम्बाकार व कम ऊँचाई की श्रेणियाँ जो दक्षिणी भाग में स्कार्प(कगार) की तरह दिखती हैं।
ख. लम्बाकार(लीनियर) रिजेज व उनके बीच की घाटियाँ जो कि क्रमशः कठोर व मृदुल शैलों द्वारा निर्मित हैं और मध्य तथा दक्षिणी क्षेत्र में स्थित हैं।
ग. अल्यूवियल प्लेन(सपाट मैदानी भाग) जो उत्तर में सोन नदी, मध्य में पंडा व बिछुली नदियों व दक्षिण में कनहर नदी का क्षेत्र है।

3. **अपवाह तंत्र**(Drainage system) इस क्षेत्र की प्रमुख नदी सोन है जो पूर्व दिशा की ओर लगभग 2 कि.मी. चौड़ी घाटी में बहती है। जल वाहिकाएं(चैनल) छोटी व पतली हैं तथा विसर्पाकार मार्ग से चैनल बार के बीच बहती हैं। कनहर, पंडा, सतबानी, बिछुली आदि नदियाँ ड्रेनेज नेटवर्क बनाती हैं तथा पन्डरवा, सिक्किया, बोमिनी, पूरापानी तथा मेगहरदा आदि सहायक नदियाँ हैं। मैदानी क्षेत्र जो कि ग्रेनाइट, नाइस व अन्य आर्कियन चट्टानों से निर्मित है, डेन्ड्राइटिक प्रतिकृति(पैटर्न) प्रकार का अपवाह तंत्र दर्शाता है। महाकौशल ग्रुप की शिष्ट, फिलाइट स्लेट का क्षेत्र है वहाँ का अपवाह तंत्र सबडेन्ड्राइटिक प्रकार का है और आयताकार प्रतकृति अपवाह तंत्र विकसित है। विंध्यन सुपरग्रुप की चट्टानों में संधि, विभंग व दरारें पायी जाती हैं अतः अपवाह तंत्र उपसमानान्तर व आयताकार दिखता है।

4. **भू–आकृतिक इकाइयाँ**(Geomorphological units)– क्षेत्र की सतह के उच्चावचन(relief) ढलान(slope), सतही(surface) आवरण(cover) व स्थानीय शैलों के आधार पर निम्नलिखित भू–आकृतिक इकाइयों में विभाजित किया जा सकता है–

1. **अनाच्छादन पहाड़ियाँ**(Denudational hills)– महाकौशल ग्रुप व विंध्यन सुपर ग्रुप की चट्टानों को भू–वैज्ञानिक संरचना व शैल लक्षण के आधार पर अनाच्छादन पहाड़ियों को दो भागों में बाँटा जा सकता है–

अ. **उत्तरी क्षेत्र की मॉडरेटली(साधारण) विच्छेदित रिजेज**– ये पहाड़ियाँ रेक्टीलीनियर आकार में मुख्यतया सैंडस्टोन, लाइमस्टोन व पोरसीलेनाइट चट्टानों द्वारा निर्मित हे। जो कि पूर्व–पश्चिम दिशा में लम्बाकार स्ट्राइक रिजेज के रूप में विकसित हैं। ये चट्टानें दक्षिणी भाग में क्वेस्टा(Cuesta) व कमनति वाले कगार(scarp) के रूप में दिखते हैं। पहाड़ियों के ढलान व उनके बीच का भू–भाग मलवा(debris) व मिश्रोढ(colluvial) पदार्थ से ढका हुआ है। भू–आकृतिक रचना विभंगों(fractures) के द्वारा नियंत्रित है। अपवाह तंत्र समानान्तर व आयताकार प्रतिकृति प्रकार का है। इन रिजेज(श्रेणियों) के ऊपर झाड़ीदार वन पाये जाते हैं। क्षेत्र का सामान्य ढलान 17–25° है। क्वेस्टा दृश्यभूमि(cuesta landscape) विंध्यन सैंडस्टोन व पोरसीलेनाइट की विशेषता है।

ब. इस श्रेणी के पहाड़ मुख्यतया स्लेट, फिलाइट व क्वार्ट्जाइट चट्टानों से निर्मित हैं तथा उँची–नीची(undulatory) मेसा का निर्माण करते हैं। यह श्रेणियाँ ट्रेंड(trend) ई.एन.ई.–डब्ल्यू.एस.डब्ल्यू है तथा बीच का घाटीनुमा भू–भाग क्रमशः कठोर व मृदुल शैलों के कारण बना है। इन रिजेज के ऊपरी भाग चौड़े हैं तथा जहाँ पर क्वार्ट्ज और फिलाइट की चट्टानें हैं वहाँ पर संगीय(craggy) स्थालकृति हैं। अपवाह तंत्र आयताकार व ट्रेलिस पैटर्न का है जिसकी मुख्य इकाइयाँ स्थानीय स्ट्राइक के समानान्तर है। इन पहाड़ियों पर मृदा आच्छादन कम है अतः झाड़ीदार वनस्पतियाँ ज्यादा पनपती हैं। जबकि प्रमुख घाटियाँ hill wash पदार्थ से परिपूर्ण हैं और घने वनों से ढकी हुई हैं।

2. **मेसा व ब्यूट**(Mesa and Butte)– पटगढ़ व गरबंध गाँव एक सपाट भूमि पर स्थित है जिसकी लम्बाई 4 कि.मी. व चौड़ाई 3.5 कि.मी. है। यह मेसा भू–आकृति है जिसके सभी तरफ तीव्र ढलान है व चट्टानों की नति(dip) बहुत कम व

दक्षिण की ओर है। यह मेसा अपर विंध्यन ग्रुप के कैमूर सैंडस्टोन का बना हुआ है। एक छोटी अलग हुई इकाई रोहनिया व गरबंध गाँव से 3 कि.मी. दूरी पर मिलती है जिसे ब्यूट(Butte) कहते हैं। इन स्थलाकृतियों के मध्य भाग पर मोटा मृदा आच्छादन है जो कि कैमूर सैंडस्टोन के ऊपर पाई जाने वाली शैल के अपक्षय से बना है।

3. **विच्छेदित पेडिमेंट्स**(Dissected Pediments)– इस क्षेत्र के पेडिमेंट्स मुख्यतया अपरदन शैल पृष्ठ(Eroded Rock Surface) के है जो कि पूर्व से पश्चिम तक डेन्यूडेशनल पहाड़ों के आधार पर स्थित है। इस क्षेत्र के नदियों व उनकी सहायक वाहिकाओं के विच्छेदित अपरदानी व निक्षेपित कार्यों के फलस्वरूप गलींग व शीट वाश(Gullying and sheet wash) की उत्पत्ति हुयी है। कुछ स्थानों पर मलबे की पतली पर्त मिलती है। जबकि अधिकतर क्षेत्रों में मृदा पर्त उपस्थित नहीं है। पेडिमेंट्स की ढलान औसतन कम परंतु कहीं–कहीं अधिक(moderate) है और ग्रेवल(बजरी) तथा मोटी सैंड द्वारा आच्छादित है। जिसके बीच में कहीं–कहीं पर अंशदर्शन(outcrop) दिखता है। नालियों का बनना एक्टिव व प्रोमिनेंट है जिसकी वजह से नीचे की चट्टान दिखाई देती है।

4. **जलोढ़ इकाई**(Alluvial unit)– सोन, कनहर, पन्डा आदि नदियों के निक्षेप इस श्रेणी में आते हैं। उत्तरी क्षेत्र में सोन नदी द्वारा निक्षेपित जलोढ़ कुछ दूरी तक नदी के किनारे पहाड़ों के आधार पर मिलते हैं। पण्डा नदी ने मध्य क्षेत्र में एक बड़ा बेसिन का निर्माण किया है जबकि कनहर नदी ने दक्षिण क्षेत्र में बाढ़ तल निक्षेप का निर्माण किया है। इन नदी प्रवाहिका तंत्र द्वारा दो प्रकार की टिरेसेज(Terraces) निक्षेपित की गयी है।

अ. **प्राचीन जलोढ़ पृष्ठ**(Older Alluvial Surface-T_1) प्राचीन जलोढ़ पृष्ठ, सोन, पण्डा व कनहर नदियों के दोनों किनारों पर मिलते हैं। T_1 व T_0 के बीच का ब्लफ जोन 2.5 से 5.0 मीटर है। T_1 पृष्ठ बनाने वाले अवसाद(सेडिमेंट्स) कम संपिंडित मध्य से महीन कणों वाले सिल्ट, बजरी व पेबेल्स हैं जिनका आहरण आर्कियन, महाकौशल व विंध्यन समूह की चट्टानों से हुआ है। ये कई स्थानों पर ग्रेडेड बेडिंग व करेंट बेडिंग भी दर्शाते हैं।

ब. **नवीन जलोढ़ पृष्ठ**(Younger Alluvial Surface-T_0)– यह इकाई मुख्य सहायक वाहिकाओं के किनारे पतली संकरी जलोढ़ की संस्तर(fringes) बनाती है तथा प्वाइन्ट बार, चैनल बार, कट ऑफ मियान्डर आदि स्थलाकृतियों के आकार में दिखाई देती है। सोन नदी के नवीन जलोढ पृष्ठ 100–150 मीटर तक चौड़े हैं। जबकि पंडा व कनहर नदियों के किनारे यह पतली पट्टिकाओं की भांति मिलते हैं। नवीन जलोढ़ पृष्ठ का निर्माण मध्य से महीन कणों वाली लोम के द्वारा हुआ है जिसमें क्वार्ट्ज, फेल्सपार, फिलाइट व पोरसीलेनाइट आदि से आयातित बजरी व पेबेल्स मिश्रित मिलते हैं। इन अवसादी निक्षेपों की मोटाई 1.0–1.5 मीटर तक है।

5. **मिश्रोढ़**(Colluvium)– मिश्रोढ़ का निर्माण विच्छेदित पेडिमेन्ट्स व पहाड़ों की चट्टानों के शीट वाश इरोजन द्वारा होता है। ये पहाड़ों के आधार के ढलानों व गली में बनते हैं। मिश्रोढ़ का पार्श्विक फैलाव कोन गाँव के पास दिखाई देता है। इसकी चौड़ाई 15–20 मीटर तक है व 270 मीटर तक की ऊँचाई पर मिलती है। इस इकाई का निर्माण सभी प्रकार के अपरिश्कृत शेल फ्रैग्मेंट्स, विभिन्न आकार तथा माप में सिल्ट व क्ले के साथ मिलकर विजातीय(Heterogeneous) मिश्रण द्वारा होता है।

भूमि उपयोग पैटर्न(Land Use Pattern in Area)– अध्ययन क्षेत्र में शहरी निर्माण(urban built up) की रचनायें मौजूद नहीं है। परंतु "विढ़यमगंज" व "नगर उन्टारी" गाँवों को अर्ध–शहरी(semi-urban) की श्रेणी में रखा जा सकता है। एक तिहाई क्षेत्र में कृषि कार्य होते हैं तथा बाकी क्षेत्र में वन हैं। क्षेत्र का सावधानीपूर्वक, वैज्ञानिक तथा तकनीकी जानकारी व विकास की योजनाओं का बेहतर व उपयोगी प्रबंधन के द्वारा अधिक विकास किया जा सकता है। जिससे वहाँ की पर्यावरण व परिस्थितिक तंत्र का विनाश बचाया जा सके। भू–वैज्ञानिक संरचना व भू–आकृति के अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं–

1. अति उपजाऊ जलोढ़ क्षेत्र(T_1) को सजल खेती(wet cultivation) के लिए प्रयुक्त किया जाना चाहिये। वहाँ पर ड्रिलिंग करके ट्यूबवेल व नदियों के ऊपरी स्थानों पर चेक बांध बनाकर जल की व्यवस्था की जा सकती है।
2. प्राचीन जलोढ़ क्षेत्र की बैड लैंड टोपोग्राफी कोन और आस–पास के गाँवों के पास पंडा नदी की कटान व अपक्षयन से बचाया जाये। इसके लिए इस प्रकार की वनस्पतियाँ(पेड़ व झाड़ियाँ) लगाई जायें जो अपनी जड़ों की गहराई तक जाकर मृदा अपक्षयन रोक सके।
3. कम ढलान वाले विच्छेपित पेडिमेंट्स क्षेत्र का उपयोग शुष्क खेतीबारी(dry cultivation) के लिए किया जाना चाहिए। इसके लिये कंटूर बंडिंग की ऊँचाई उठाने तथा समोच्च समानान्तर जुताई(parallel plaughing) व स्टेप फॉर्मिंग का प्रयोग करना चाहिए।
4. $5^0 - 10^0$ ढलान के क्षेत्रों का उपयोग घास के मैदान, चरागाह विकसित करने में होना चाहिए जिससे ढलान(slope) का सुदृढीकरण हो सकेगा।

5. गरबंध गाँव के पास जल संचयन बंधा बनाया जा सकता है जिससे उपजाऊ सूखे क्षेत्र का, सींचने की व्यवस्था के बाद कृषि कार्य में उपयोग हो सकता है।
6. लघु व्यवसाय के रूप में ईंट का व्यवसाय कोन गाँव के पास हो सकता है।
7. सैंडस्टोन, पोरसीलेनाइट, ग्रेनाइट, क्वार्ट्जाइट, एन्डालूसाइट आदि शैलों का प्रयोग निर्माण सामग्री के रूप में किया जा सकता है।
8. विच्छेदित पहाड़ों पर वनीकरण का कार्य किया जा सकता है।

आभार– लेखक डॉ0 जी0 एस0 श्रीवास्तव, पूर्व डिप्टी डायरेक्टर जनरल, भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण, प्रो0 ए0 के0 श्रीवास्तव, भू–विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ एवं प्रो0 एस0 के0 कुलश्रेष्ठ, पूर्व प्रोफेसर, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़, को महत्वपूर्ण चर्चा एवं सुझावों हेतु आभार ज्ञापित करता है।

संदर्भ

1. ऑडेन, जे0 बी0(1933) विंध्यन सेडिमेंटेशन इन सोन वैली, जिला मिर्जापुर, मेमो0 जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, खण्ड–62, मु0पृ0 141।
2. घोष, एस0 एवं अन्य(1976) स्ट्रक्चर एण्ड मेटामॉरफिज्म ऑफ प्रीकैम्ब्रियस रॉक्स ऑफ बैरपन–दुद्धी क्षेत्र, मिर्जापुर, उ0प्र0, खण्ड–4ए।
3. मेडलीकॉट, एच0 बी0(1873) जियोलॉजी ऑफ नॉर्थ–वेस्ट प्रोविन्सेज आर0जी0एस0 इण्डिया।
4. मुखर्जी, जी0(1976) इण्टररिलेशन ऑफ दुद्धी ग्रेनीटायड कॉप्लेक्स एण्ड एन एप्रीसियेशन ऑफ द एसोसिएटेड मेटामॉर्फिक फेसीस, खण्ड–4, ए–2, 125 एनीवर्सरी सेलीब्रेशन, भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण।
5. पॉस्को, ई0 एच0(1950) ए मैन्यूल ऑफ जियोलॉजी ऑफ इण्डिया एण्ड बर्मा, भारत सरकार प्रकाशन, कोलकता, मु0पृ0 483।
6. शुक्ला एवं श्रीवास्तव(1990) माइक्रोस्ट्रक्चरल इवीडेंसेस ऑफ टाइम, रिलेशनशिप बिटवीन मेटामॉर्फिस्म एण्ड डिफॉर्मेशन इन बीजावार, मेटासेडिमेंट्स ऑफ ईस्टर्न पार्ट ऑफ सोन वैली, डिस्ट्रिक्ट मिर्जापुर, यू0पी0 जियोसाइंस जर्नल, खण्ड–11, मु0पृ0 158–168।
7. शुक्ला, संजय(1992) स्टडी ऑफ बागीसोती ग्रेनाइट एण्ड एसोसिएटेड रॉक्स ऑफ एन ईस्टर्न पार्ट ऑफ सोन वैली, उ0प्र0 विद स्पेशल रेफरेंस टु देयर पेट्रोकेमेस्ट्री, अनपब्लिश्ड पी0एच–डी0 थीसिस, भू–विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।
8. शुक्ला एवं श्रीवास्तव, कुमार(2006) बागीसोती प्लूटोन–ए परएल्यूमिनस ग्रेनीटायड इन पारसोई फॉरमेशन, महाकौशल ग्रुप, डिस्ट्रिक्ट सोनभद्र, उ0प्र0, खण्ड–21, अंक–2, मु0पृ0 147–160, जियोसाइंस जरनल 2000।
9. मिश्रा, ए0 के0; मिश्रा, अजय; शुक्ला, संजय एवं अन्य(2009) अरबनाइजेशन व लैण्ड यूज पैटर्न, इन मथुरा डिस्ट्रिक्ट, ए केस स्टडी, रिसर्च इन एनवायरन्मेंट एण्ड लाइफ साइंसेज, मु0पृ0 17–20।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 26–29, D.O.I. : 10.22445/avsp.v4i1.4372 शोध पत्र

होमोफोबिया तथा एल जी बी टी युवा की स्वास्थ्य समस्यायें–एक अध्ययन

ज्योति काला
एसोसिएट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
jyotikala2010@gmail.com

प्राप्त तिथि– 29.07.2016; स्वीकृत तिथि– 30.08.2016

सार– हाशिये पर सिमटे एल जी बी टी(एल–लेस्बियन/समलैंगिक स्त्री, जी–गे/समलैंगिक पुरूष, बी–बायसेक्स्युअल, उभयलिंगी, टी–ट्रांसजेन्डर/लिंग परिवर्तित व्यक्ति) समुदाय को अनेकों सामाजिक, विधिक व मनोवैज्ञानिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है जो विशेषज्ञों तक नही पहुँच पाती। अनेकों सामाजिक, धार्मिक व नैतिक मान्यतायें समाज की मुख्यधारा को इस एकाकी एवं उपेक्षित समुदाय से अन्तःक्रिया करने से रोकती हैं। परिणामतः यह समुदाय एक नागरिक को प्राप्त सामान्य अधिकारों से वंचित रह जाता है। विभिन्न देशों में सम्पादित शोध के आधार पर पत्र में एल जी बी टी समुदाय के स्वास्थ्य एवं चिकित्सा संबंधी समस्याओं को प्रस्तुत कर उनके निदान हेतु प्रयास की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

बीज शब्द– एल जी बी टी, होमोफोबिया, यौन अभिविन्यास।

Homophobia and health issues of LGBT youth- a study

Jyoti Kala
Associate Professor, Department of English
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
jyotikala2010@gmail.com

Abstract- The marginalized LGBT(Lesbian, Gay, Bi-sexual, Transgender) faces many social, legal and psychological problems unattended by the experts concerned. Homophobia due to social, religious and moral assumptions preclude the mainstream society from being interactive with this alienated and neglected part of society. Consequently they remain deprived of the common rights of a citizen. In this paper an attempt has been made to present the health and medical issues of LGBT on the basis of the research conducted in various countries.

Key words- LGBT, Homophobia, Sexual orientation.

1. **प्रस्तावना**– मानव व्यवहार को प्रभावित करने वाले अनेक आनुवंशिक एवं वातावरणीय कारक होते हैं। एक सजग मनुष्य व्यक्तिगत स्तर पर अपने व्यवहार को निरन्तर परिष्कृत कर सकता है परन्तु बहुधा अन्तःक्रियात्मक पक्षों पर उसका पूर्ण नियन्त्रण नहीं होता जीवनयापन के व्यवहारों के निर्धारण में आनुवांशिक गुणों एवं परिस्थितिजन्य अनुभवों की महती भूमिका है जो किसी व्यक्ति के यौन अभिविन्यास को भी प्रभावित करते हैं।

2. **एल जी बी टी का जैविक आधार**– विज्ञान की दृष्टि में किसी व्यक्ति के यौन अभिविन्यास को उसके जैविक कारक(आनुवंशिक गुण, हारमोन, मस्तिष्क, संरचना आदि) तथा सामाजिक कारक प्रभावित करते हैं। जीन्स, प्रिनेटल हारमोन तथा मस्तिष्क की संरचना आदि व्यक्ति के हेट्रोसेक्स्युअल(विपरीत लिंगकामी), होमोसेक्स्युअल(समलैंगिक), बायसेक्स्युअल(उभयलिंगी) अथवा एसैक्स्युअल(अलैंगिक) यौन अभिविन्यास–निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वैज्ञानिक जैविक कारकों का संबंध एल जी बी टी यौन अभिन्यास(एल–लेस्बियन/समलैंगिक स्त्री, जी–गे/समलैंगिक पुरूष, बी–बायसेक्स्युअल, उभयलिंगी, टी–ट्रांसजेन्टर/लिंग परिवर्तित व्यक्ति) से स्थापित करने की दिशा में निरन्तर शोधरत है। डॉ0 काजी रहमान के अनुसार जीन्स की खोज से सम्बन्धित अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि दो समलैंगिक भाइयों के X क्रोमोसोम पर 'यौन अभिविन्यास सम्बन्धित जीन' के लक्षण पाये गये। इन दोनों ही समलैंगिक भाइयों के क्रोमोसोम 8 पर समान लक्षण पाये गये।[1] 1993 में डॉ0 डीन हैमर ने X क्रोमोसोम(region Xq28) तथा यौन अभिविन्यास में अन्तः सम्बन्ध होने का दावा किया। उनके अनुसार 5–30 प्रतिशत समलैंगिक पुरूषों में region Xq28 की प्रभावी भूमिका पायी गई।[2] जन्म से पूर्व के हारमोन भी यौन व्यवहार को प्रभावित करते हैं। उदाहरणतः जिन नवजात

कन्याओं में कान्जेनाइटल एड्रीनल हाइपरप्लासिया (CAH, जो पुरूष सेक्स हारमोन का स्तर बढ़ाता है), पाया गया वयस्क होने पर उनमें समान लिंग के प्रति अधिक रूझान पाया गया।[3]

परन्तु अनेकों वैज्ञानिक यथा डॉ0 बायन और पारसन्स, तथा ह्यूबर्ड और वाल्ड आदि जैविक कारकों के यौन अभिविन्यास से सम्बन्ध की बात को अस्वीकार करते हैं।[4] 1970 से पहले समलैंगिकता को एक मानसिक रोग माना जाता था। अमेरिकन साइकोलॉजिकल एसोसिएशन ने 1975 में समलैंगिकता को मानसिक विकार की श्रेणी से पृथक किया। उनके अनुसार समलैंगिकता जैसी मानसिक बीमारी कभी अस्तित्व में नहीं थी। और उससे संबंधित किये गये सभी उपचार आधारहीन थे जिन्होंने समलैंगिकों को किसी भी प्रकार के लाभ के बजाय अनेक नुकसान पहुचाये थे। परन्तु 'नेशनल एसोसिएशन ऑफ रिसर्च एण्ड थेरेपी ऑफ होमो सेक्स्युलिटी'(NARTH) समलैंगिकता को जैविक कारकों से संबंधित नहीं मानता। NARTH के अनुसार यह एक रोग है और उचित उपचार द्वारा ऐसे यौन अभिविन्यास को परिवर्तित किया जा सकता है।[5] डॉ0 डालस की मान्यता है कि जिस प्रकार मादक द्रव्य का सेवन करने वाले 77 प्रतिशत लोगों में समान जीन्स पाये जाने के बावजूद ऐसे व्यक्तियों ने अपने व्यवहार को नियन्त्रित कर स्वस्थ जीवन जीने की दिशा में सफलता पायी है उसी प्रकार एल जी बी टी समुदाय भी यौन व्यवहार पर नियन्त्रण कर सकता है।[6]

3. **होमोफोबिया का एल जी बी टी समुदाय पर प्रभाव**– वैज्ञानिक शोधों से इतर एल जी बी टी समुदाय के अल्पसंख्यक सदस्य विभिन्न प्रकार की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक दुर्भावनाओं का शिकार बनते हैं। सामाजिक मान्यता के अभाव में इन्हें सामान्य नागरिक के अधिकार भी प्राप्त नही हो पाते। हेटरोसेक्स्युअल(विषमलिंगकामी) व्यक्तियों की तुलना में इस अल्पसंख्यक समुदाय को अत्यधिक असहिष्णुता, विभेद, उत्पीड़न और हिंसा का सामना करना पड़ता है। इस दुर्व्यवहार का कारण है– 'होमोफोबिया', अर्थात समलिंगी व्यक्तियों के प्रति घृणा, क्षोभ अथवा भय की प्रवृत्ति। सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा राजनैतिक धारणायें और मान्यतायें मुख्यधारा समाज में होमोफोबिया का आधार बनते हैं। सामाजिक असुरक्षा की भावना से ग्रसित यह पीड़ित समुदाय समाज से अलग, एकाकी पड़ जाता है और शिक्षा, आजीविका, सुखी वैवाहिक जीवन, आत्मविश्वास, उन्नति, स्वास्थ्य लाभ जैसे मुद्दों पर बहुत पिछड़ा जाता है। जाति, लिंग, गरीबी के कारण एल जी बी टी लोग हाशिये पर होते हैं और निम्नांकित कठिनाइयों का सामना करते हैं–

1. शिक्षा अधूरी छोड़ना
2. घर व परिवार द्वारा तिरष्कृत हो घर छोड़ना
3. जीविकोपार्जन के न्यूनतम अवसर
4. समाज से बहिष्कृत, एकाकी
5. सामाजिक एवं पारिवारिक असहयोग
6. धर्म एवं कानून द्वारा अस्वीकृत
7. आत्महत्या की प्रवृत्ति
8. मादक पदार्थों का सेवन
9. विभिन्न सुविधाओं से वंचित

भारतवर्ष में एल जी बी टी समुदाय का सदस्य होना नितान्त असम्मानजनक माना जाता है। परिवार व रिश्तेदारों के लिए यह सामाजिक उत्पीड़न का कारण बन जाता है जिसे चरित्र में दोष होने से भी सम्बन्धित कर भेदभाव का आधार बना दिया जाता है। हमारे देश में जहाँ यौन विषय पर बातचीत करने का चलन नहीं है वहाँ तो इस विषय पर कुछ भी कहना अमर्यादित व प्रतिबन्धित माना जाता है। भारतीय दंड संहिता–1860 की धारा 377 के अन्तर्गत समलैंगिकता को दण्डनीय अपराध माना गया है जिसके लिए 10 वर्ष के कारावास तक का प्राविधान है। लोगों का ध्यान आकर्षित कर अपनी बात उन तक पहुँचाने के लिए 29 जुलाई, 2008 को दिल्ली, कोलकाता, बैंगलुरू जैसे महानगरों में पहली बार समलैंगिक परेड निकाली गई तथा गोवा सरकार ने एल जी बी टी ट्रीटमेन्ट सेन्टर खोलने का प्रस्ताव रखा जिसका उद्देश्य इस समुदाय के युवाओं को उपचार द्वारा सामान्य बनाने का प्रयास करना निर्धारित किया गया लेकिन एल जी बी टी समुदाय द्वारा इसकी भर्त्सना की गयी।[7]

समाजिक, नैतिक व धार्मिक आधारों पर इस उपेक्षित समुदाय के सही अथवा गलत होने के जटिल प्रश्न में उलझने के बजाय इस विषय को अपने समाज की वास्तविकता के रूप में स्वीकार करते हुए मानवीय आधार पर ध्यान देने की आवश्यकता है। गम्भीर स्वास्थ्य समस्याओं से ग्रसित होने पर यह समुदाय नितान्त असहाय हो जाता है और वह इन गम्भीर समस्याओं का निदान चाहकर भी विषय विशेषज्ञों की सहायता के बिना नही कर सकता। अतः समुदाय विशेष एवं समग्र समाज के हित के लिये संबंधित दुष्परिणामों को रोकने की महती आवश्यकता है।

4. **एल जी बी टी समुदाय की स्वास्थ्य समस्याएं**– हमारे पास एल जी बी टी की स्वास्थ्य संबंधी कठिनाइयों का बहुत ही सीमित ज्ञान उपलब्ध है। पाश्चात्य देशों में शोध के आधार पर पाया गया कि वहाँ लगभग 10 प्रतिशत जनसंख्या इस श्रेणी में आती है और वह स्वास्थ्य संबंधी गम्भीर खतरों से जूझ रही है। उनकी प्रवृत्ति की जानकारी के अभाव में न तो उनकी बीमारी का इलाज संभव हो पा रहा है और न ही समाज में अन्य लोगों को संक्रमित होने से बचाने की दिशा में कारगर उपाय कर पाना संभव हो पा रहा है।[8,9]

इस समुदाय के युवा विशेष रूप से कुछ समस्याओं से ग्रसित होते हैं। इनमें 95 प्रतिशत से ज्यादा भावानात्मक रूप से आहत होते हैं और स्वयं को अपने अन्य साथियों से अलग महसूस करते हैं। अधिकांशतः यह मौखिक उपहास झेलते हैं। व्यक्तिगत सुरक्षा के लिए एल जी बी टी छात्र 5 गुना अधिक स्कूल छोड़ते हैं। इनमें से 28 प्रतिशत हाईस्कूल के बाद पढ़ाई छोड़ देते हैं।[10]

इतना ही नही बहुत से एल जी बी टी युवा या तो पारिवारिक वातावरण में तनाव की वजह से अपना घर छोड़ कर चले जाते हैं या फिर होमोफोबिया के कारण माता–पिता स्वयं उनका परित्याग कर देते हैं।[11] जो बेघर हो जाते हैं उनमें से लगभग 50 प्रतिशत कम से कम एक बार आत्महत्या का प्रयास करते हैं।[12] गिब्सन की रिपोर्ट के अनुसार समलैंगिक युवाओं में से 30 प्रतिशत आत्महत्या कर लेते हैं। लगभग 40 प्रतिशत एल जी बी टी युवाओं ने आत्महत्या का गंभीर प्रयास किया। समलैंगिक पुरूषों ने विषमलिंगी युगल की तुलना में 6 गुना अधिक आत्महत्या के प्रयास किये तथा समलिंगी महिलाओं में विषमलिंगियों की तुलना में दोगुनी आत्महत्या करने की प्रवृत्ति पाई गयी।[13] जो एल जी बी टी युवा साहस बटोर कर जीवन जीने का प्रयास करते हैं उनमें से अधिकांश मादक पदार्थों का सहारा लेते हैं। एक अध्ययन के अनुसार मादक पदार्थों का सेवन करने वाले लगभग 60 प्रतिशत समलैंगिक पुरूषों ने मनोवैज्ञानिकों से सलाह प्राप्त की।[14]

यू0 एस0 गे एण्ड लेस्बियन मेडिकल एसोसिएशन(GALA) की रिपोर्ट के अनुसार अवसाद एवं मादक पदार्थों के सेवन की लत के अलावा एल जी बी टी समुदाय में एच आई वी/एड्स, स्तन एवं सर्वाइकल कैंसर एवं हेपेटाइटिस आदि रोग विषमलिंगियों की अपेक्षा ज्यादा होते हैं।[15] शोध में पाया गया कि लेस्बियन में स्तन कैंसर का खतरा अधिक होता है और अधिकांश लेस्बियन इस जोखिम के प्रति जागरूक नहीं होती और चिकित्सीय परीक्षण नहीं कराती। सेविन विलियम्स ने स्कूल के बच्चों पर किये गये अपने शोध में ज्ञात किया कि एल जी बी टी युवा अन्य युवाओं की अपेक्षा 9 गुना अधिक इन्जेक्शन द्वारा मादक पदार्थों का सेवन करते है। इनमें अधिकांश 13 वर्ष की आयु से पहले ही कोकीन, मारिजुआना, तम्बाकू का सेवन एवं यौन क्रिया प्रारम्भ कर देते है। इनमें कम उम्र में ही यौन संक्रमण जनित गम्भीर बीमारियाँ होने का खतरा अत्यधिक बढ़ जाता है। समलैंगिक पुरूषों में होने वाली बीमारियों जैसे सिफलिस, गोनोरिया(सूजाक), क्लैमाइडिय, प्यूबिक लाइस(जघन जूँ) आदि का उचार तो सम्भव है परन्तु एच0आई0वी0, हिपेटाइटिस, हर्पीज, हयूमन पैपिलोमा वाइरस(एच0पी0वी0) आदि के लिये उपचार उपलब्ध नहीं है। साथ ही प्रोस्टेट, टेस्टीकुलर या कोलन कैंसर से मृत्यु होने का खतरा भी बना रहता है।[16]

ब्रीज एवं जडसन आदि द्वारा समलैगिक एवं विषमलैगिक व्यक्तियों पर की गयी रिसर्च के अनुसार दोनों ही प्रकार के यौन–अभिविन्यास में 'एनल हयूमन पैपीलोमा वायरस' का संक्रमण पाया गया। इस वाइरस का एच0आई0वी0 संबंधित प्रतिरोधक क्षमता की हानि(Immuno Suppression) पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। अनेक साथियों से जुड़े कम आयु के युवाओं में एच0आई0वी0 संबंधित समस्या की अधिक सम्भावना पायी गयी।[17] 2012 के एक विषद विश्लेषण में ट्रांसजेन्डर महिलाओं में सामान्य महिलाओं की अपेक्षा 50 गुना ज्यादा एच0आई0वी0 संक्रमण की संभावना पायी गयी है।[18]

5. **निष्कर्ष**– उपरोक्त विवरण से ज्ञात होता है कि यह प्रश्न विवादास्पद है कि एल जी बी टी यौन अभिविन्यास का कारण आनुवांशिक है अथवा यह एक मानसिक बीमारी है, जिसे उपचार द्वारा ठीक किया जाना चाहिये। परन्तु यह तथ्य कि इस समुदाय के लोग विशेष रूप से गम्भीर स्वास्थ्य समस्याओं से जूझ रहे हैं जो हमारे समाज की सच्चाई है। सामाजिक वर्जनाओं और होमोफोबिया के कारण इनकी सही स्थिति का पता लगाना अत्यन्त दुष्कर है। पश्चिमी देशों में तो विषय संबंधित निरन्तर शोध हो रहे हैं परन्तु हमारे देश में यह समस्या परतों में दबी है और स्वस्थ समाज के लिये गम्भीर खतरा है। विगत वर्षों में कुछ जागरूकता जरूर आयी है लेकिन होमोफोबिया की जंजीरो से स्वयं को मुक्त कर एल जी बी टी युवाओं की गम्भीर स्वास्थ्य समस्याओं के निदान के लिये साहसपूर्ण प्रभावी कदम उठाये जाने की महती आवश्यकता है– न सिर्फ सामाजिक स्वास्थ्य हेतु वरन् इस सीमान्त एवं उपेक्षित समुदाय को मानवीय आधार पर सहायता प्रदान करने के लिये भी।

संदर्भ

1. निकलस, लैंगस्ट्राम; रहमान, काजी; कार्ल्सट्राम, इवा एवं लिंच्टेन्स्टाइन, पॉल(2010) जैनेटिक एण्ड इन्वायरमेन्टल इफेक्टस ऑन सेम–सेक्स सेक्सुअल बिहेवियर, ए पॉपुलेशन स्टडी ऑफ ट्विन्स पद स्वीडेन, आर्चीव्स ऑफ सेक्सुअल बिहेवियर, खण्ड–39, अंक–1, मु0पृ0 75–80।
2. डीन, हैमर एवं अन्य(1993) अ लिंकेज बिटवीन डी.एन.ए. मार्कर्स ऑन द एक्स क्रोमोसोम एण्ड मेल सेक्सुअल ओरिएन्टेशन, साइंस, खण्ड–261, मु0पृ0 145–146।
3. https://www.theguardian.com/science/blog/2015/jul/24/gay-genes-science-is-on-the-right-track.
4. www.samesexattraction.org/ biological - cause – homosexuality. htm retreived 7/12/2016.

5. www. skepticink.com/gps/2013/11/07/ treating – homosexulity-as-disease-to-be-cured/
6. डालस, जा(1991) डिसाइर्स इन कॉन्फ्लिक्ट: होप फॉर मेन हू स्ट्रगल विद सेक्सुयल आईडेन्टिटी, हारवेस्ट हाउस पब्लिशर्स यूजीन, मु0पृ0 20–23।
7. www.dailymail.co.uk/news/article-2907749/
8. किन्से, ए0 सी0; पोमरोय, डब्ल्यू0 एवं मार्टिन, सी0(1948) सेक्सुअल बिहेवियर इन द ह्यूमन मेल, फिलाडेल्फियाः डब्ल्यू. बी. सॉन्डर्स।
9. किन्से, ए0 सी0; पॉमराय, डब्ल्यू0; मार्टिन सी0 एवं अन्य(1953, 2000) सेक्सुअल बिहेवियर इन द ह्यूमन फीमेल, फिलाडेल्फियाः डब्ल्यू. बी. सॉन्डर्स; 1953, वेस्ट जर्नल मेडि. 2000 जून, खण्ड–172, अंक–6, मु0पृ0 403–408।
10. गेरोफेलो, आर0, वुल्फ, आर0 सी0; कसल, एस0 एवं अन्य(1998) द एसोसिएशन बिटवीन हेल्थ रिस्क बिहेवियर एण्ड सेक्सुअल ओरिएन्टेशन एमंग ए स्कूल बेस्ड सैम्पल आफ एडोल्सेन्टस, पीडियाट्रिक्स, खण्ड–101; मु0पृ0 895–902।
11. बॉक्सर, ए0 एम0; कोहलर, बी0 जे0 एवं हर्ड्ट जी0 एवं अन्य(1993) गे एण्ड प्रैक्टिस विद एडोल्लेन्ट न्यूयॉर्कः विले, मु0पृ0 249–280।
12. क्रुक्स जी0(1991) गे एण्ड लेस्बियन होमलेस/स्ट्रीट यूथः स्पेशल दूश्चुज एण्ड कन्सर्न्स, जे एडोल्स हेल्थ, खण्ड–12, मु0पृ0 151–518।
13. गिब्सन, पी0(1994) गे मेल एण्ड लेस्विचन यूथ स्युसाइड, एनः रेमजेडी जी0, एडि डेथ बाच डिनावलः स्टडीज ऑफ स्युसाइड एन गे एण्ड लेस्बियन टीन्स, बोस्टनः एलिसन पब्लिकेशन्स, मु0पृ0 15–88।
14. रेमफेडी, जी0(1987) एडोल्सेंट होमोसेक्सुएलिटीः साइकोलॉजिकल एण्ड मेडिकल इम्प्लीकेशन्स, पीडियाट्रिक्स, खण्ड–79, मु0पृ0 331–337।
15. https://en.wikipedia.org/wiki/Healthcare_and_the LGBT community, retreived 11/7/2016
16. सैविन, विलियम्स आर सी(1994) वर्बल एण्ड फिजिकल एब्यूज ऐज स्ट्रेसर्स इन द लाइन्ज ऑफ लेस्बियन, गेमेल, एण्ड बायसेक्सुअल यूथ्सः एसोसिएशन विद स्कूल प्रॉब्लम्स, रनिंग अवे, सब्सटैन्स एब्यूज, प्रॉस्टी ट्यूशन एण्ड स्यूसाइड", जे कन्साल्ट क्लिन साइकोल, खण्ड–62 मु0पृ0 261–269।
17. ब्रीज, पी0 एल0; जडसन, एफ0 एन0; पेन्ले, के0 ए0; डगलज, ज0 एम0(1995) एनल ह्यूमन पैपिलोमावायरस इन्फेक्शन एमन्ग होमो सेक्स्युअल एण्ड बाइ सेक्स्युअल मेनः प्रिवेलन्स आफ टाइप–स्पेसिफिक इन्फेक्शन एण्ड एसोसिएशन विद ह्यूमन इम्यनो–डिफिसिन्शी वायरस, खण्ड–22, अंक–1, मु0पृ0 7–14।
18. http://dx.doi.org/10.1016/S1473-3099(12)70326-2, Published online Dec. 21, 2012

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 30–34, D.O.I. : 10.22445/avsp.v4i1.4373 शोध पत्र

दुर्बल निर्देशित सन्निकटन के अन्तर्गत त्रिफलक अनुप्रस्थ काट की धात्विक परत वाली ऑप्टिकल तरंग वर्तिका के मॉडल कट ऑफ गुणों का विश्लेषण

अलका शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, भौतिक विज्ञान विभाग
श्री जे0 एन0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
alkasharma.bhu@gmail.com

प्राप्त तिथि– 30.07.2016; स्वीकृत तिथि– 30.08.2016

सार– प्रस्तुत शोध पत्र में एक विशेष अनुप्रस्थ काट की कोर संरचना वाली तरंगवर्तिका से विद्युत चुम्बकीय तरंगों के संचरण पर प्रकाश डाला गया है। इस विशेष तरंगवर्तिका में तीन कोर है जो एक कॉमन धात्विक सीमा रेखा के अन्तर्गत हैं। उचित निर्देशांक प्रणाली का प्रयोग करते हुये अदिश तरंग समीकरण हल करके अभिलाक्षणिक समीकरण निर्देशित मोड के लिये ज्ञात की गई है। इसके लिये दुर्बल निर्देशित सन्निकटन के अन्तर्गत विश्लेषणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है। उपरोक्त तरंगवर्तिका के मौलिक मॉडल गुणों को सरल तरीके से समझने के लिये कट ऑफ समीकरण को प्राप्त कर निम्न श्रेणी के मोड के मॉडल कट आफ मानों को संख्यात्मक रूप से ज्ञात किया गया है। इसके अतिरिक्त लेखक ने प्रस्तुत तरंगवर्तिका का तुलनात्मक अध्ययन वृत्तीय कोर की तरंगवर्तिका तथा परावैद्युत क्लैडिंग की तरंगवर्तिका से किया गया है।

बीज शब्द– त्रिफलक अनुप्रस्थ काट, मॉडल कट ऑफ कंडीशन, विश्लेषणात्मक विधि, ऑप्टिकल फाइबर।

Modal cut off properties of a metal coated optical waveguide with trefoil cross-section under weak guidance approximation

Alka Sharma
Assistant Professor, Department of Physics
Sri J.N.P.G. College Lucknow-226001, U.P., India
alkasharma.bhu@gmail.com

Abstract

In the present paper the author investigated the propagation of electromagnetic wave through the special cross-sectional waveguide whose guiding region consist three cores embedded in common metallic boundary. By choosing an appropriate coordinate system, the scalar wave equation is solved, and thereby characteristic equation for the guided modes under the weak guidance approximation is derived using analytical method. To understand the basic modal properties in a simple manner, the cutoff equation is derived, and the modal cutoff properties of some lower order modes are determined numerically. The author also gave a comparative study of metallic boundary instead of dielectric cladding boundary on the modal cutoff behavior of waveguide.

Key words- Trefoil cross-section, modal cutoff condition, analytical method, Optical fiber.

परिचय– पिछले कुछ दशकों से विश्व में लम्बी दूरी के नेटवर्क में ऑप्टिकल फाइबर के प्रयोग ने शोधार्थियों, वैज्ञानिकों एवं दूर संचार कंपनियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। आरंभ में केवल वृत्तीय कोर[1-2] तथा तलीय कोर[3-4] की तरंग वर्तिका का प्रयोग किया जाता था। परन्तु कुछ समय से विभिन्न अनुप्रस्थ काट की कोर संरचना की तरंग वर्तिका पर बहुत से अन्वेषकों ने अध्ययन किया है।[5–9] सामान्यतः दो अनवृत्तीय अनुप्रस्थ काट की कोर जिनमें आयताकार तथा दीर्घवृत्ताकार प्रमुख हैं, अध्ययन किया गया है। दीर्घवृत्ताकार कोर संरचना की तरंगवर्तिका को मानक वृत्तीय अनुप्रस्थ काट के फाइबर में विरूपण के रूप में देखा गया है। आजकल धात्विक क्लैडिंग ऑप्टिकल तरंगवर्तिका को कुशल ऑप्टिक ध्रुवक[10-11] के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। धात्विक कवर ऑप्टिकल डिवाइस को कनेक्शन में सुविधा प्रदान करता है। यद्यपि धात्विक क्लैडिंग की तरंगवर्तिका लम्बी दूरी के संचार के लिये उपयुक्त नहीं है परन्तु इसकी उपयोगिता

एकीकृत आप्टिकल डिवाइस[12] में अधिक है। प्रस्तुत शोधपत्र में लेखक ने एक विशेष प्रकार के अनुप्रस्थ काट की तरंगवर्तिका का अध्ययन किया है जिसकी अनुप्रस्थ काट त्रिफलक प्रकार की है। इसकी तुलना तीन कोर जो एक ही धात्विक सीमारेखा के अन्तर्गत है, की आप्टिकल तरंगवर्तिका से कर सकते है। इस तरंगवर्तिका का विश्लेषण दुर्बल निर्देशित सन्निकटन विधि के अन्तर्गत किया गया है। तरंगवर्तिका द्वारा संचारित संभावित मोडों का संख्यात्मक मान कट ऑफ समीकरण के द्वारा निकाला गया है। जहाँ तक संभव है कुछ भौतिक अनुमानों का प्रयोग कर अध्ययन को विश्लेषणात्मक रखा गया है।

सिद्धान्त–उपरोक्त वर्णित तरंगवर्तिका की अनुप्रस्थ काट को **चित्र–1** द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

इस तरंगवर्तिका में तीन केन्द्रीय भाग अर्थात तीन कोर है जो एक ही धात्विक सीमा रेखा के अन्दर हैं। इस तरंगवर्तिका का समीकरण इस प्रकार है।

$$r^3 = \xi^3 \sin 3\theta \qquad \ldots\ldots (1)$$

अभिलम्ब समीकरण

$$r^3 = \eta^3 \cos 3\theta \qquad \ldots\ldots (2)$$

चित्र–2 में त्रिफलक संरचना तथा इसके अभिलम्ब को प्रदर्शित किया है।

समय का आवृत्त परिवर्तन मानते हुये विद्युत क्षेत्र $\vec{E}$ की तरंग समीकरण इस प्रकार है

$$\nabla^2 \vec{E} + \frac{n^2\omega^2}{c^2}\vec{E} = 0 \qquad \ldots\ldots (3)$$

जहाँ ω कोणीय वेग, n कोर क्षेत्र के परावैद्युत का अपर्वतनांक है। दुर्बल निर्देशित सन्निकटन का प्रयोग कर समीकरण (3) का अदिश रूप इस प्रकार है।

$$\nabla^2\psi + \omega^2 \mu_0 \in \psi = 0 \qquad \ldots\ldots (4)$$

यहाँ ψ विद्युत/चुम्बकीय क्षेत्र का अदिश रूप है। इस प्रकार की तरंगवर्तिका के विश्लेषण के लिये बेलनाकार ध्रुवीय निर्देशांक का प्रयोग न करके सरलता के लिये नये निर्देशांको (ξ, η, z) का प्रयोग स्केल गुणन की सहायता से करते है। नये निर्देशांकों में समीकरण (4) इस प्रकार है।

$$\frac{(\xi^6+\eta^6)^{4/3}}{\eta^4\xi^4}\frac{\partial}{\partial\xi}\left\{\frac{\xi^4}{\eta^4}\frac{\partial\psi}{\partial\xi}\right\}+\frac{(\xi^6+\eta^6)^{4/3}}{\eta^4\xi^4}\frac{\partial}{\partial\eta}\left\{\frac{\eta^4}{\xi^4}\frac{\partial\psi}{\partial\eta}\right\}+\frac{(\xi^6+\eta^6)^{4/3}}{\eta^4\xi^4}\frac{\partial}{\partial z}\left\{\frac{\xi^4\eta^4}{(\xi^6+\eta^6)^{4/3}}\frac{\partial\psi}{\partial z}\right\}+\omega^2\mu_0\in\psi=0 \quad \ldots(5)$$

इस समीकरण को हम चर राशियों को पृथक करने की विधि से हल करते हैं।

$$\varphi(\xi,\eta,z)=F_1(\xi)F_2(\eta)e^{l\beta z} \quad \ldots(6)$$

यहाँ β संचरण वेक्टर का z अवयव है। समीकरण (6) को समीकरण (5) में प्रयोग करने पर नई समीकरण इस प्रकार प्राप्त होती है।

$$\frac{(\xi^6+\eta^6)^{4/3}}{\eta^8}\left[\frac{4}{\xi}\frac{1}{F_1}\frac{dF_1}{d\xi}+\frac{1}{F_1}\frac{d^2F_1}{d\xi^2}\right]+\frac{(\xi^6+\eta^6)^{4/3}}{\xi^8}\left[\frac{4}{\eta}\frac{1}{F_2}\frac{dF_2}{d\eta}+\frac{1}{F_2}\frac{d^2F_2}{d\eta^2}\right]+\omega^2\mu_0\in-\beta^2=0 \quad \ldots(7)$$

यहाँ स्पष्ट है कि चर राशियों को पृथक करने की तकनीक से भी चर राशि ξ एव η पृथक नहीं हो पाती हैं। अतः हम दो विशेष स्थिति लेते हैं–

(i) $\xi \gg \eta$
(ii) $\eta \gg \xi$

प्रथम स्थिति में समीकरण (7) दो समीकरणों में विभाजित हो जाती है।

$$\frac{d^2F_1}{d\xi^2}+\frac{4}{\xi}\frac{dF_1}{d\xi}+\frac{mF_1}{\xi^8}=0 \quad \ldots(8)$$

$$\frac{d^2F_2}{d\eta^2}+\frac{4}{\eta}\frac{dF_2}{d\eta}+\left(\omega^2\mu_0\in-\beta^2-\frac{m}{\eta^8}\right)F_2=0 \quad \ldots(9)$$

जहाँ m एक अज्ञात नियतांक है। इसी प्रकार द्वितीय स्थिति में भी हमें दो समीकरण मिलती है।

$$\frac{d^2F_1}{d\xi^2}+\frac{4}{\xi}\frac{dF_1}{d\xi}+\left(\omega^2\mu_0\in-\beta^2+\frac{\alpha}{\xi^8}\right)F_1=0 \quad \ldots(10)$$

$$\frac{d^2F_2}{d\eta^2}+\frac{4}{\eta}\frac{dF_2}{d\eta}-\frac{\alpha}{\eta^8}F_2=0 \quad \ldots(11)$$

जहाँ α एक नया अज्ञात नियतांक है। जब $\alpha=0, m=0$ (निम्नतम कोटि के मोड के लिये) समीकरण (9) एंव (10) एक ही समीकरण का रूप हो जाती है।

$$\frac{d^2F_1}{d\xi^2}+\frac{4}{\xi}\frac{dF_1}{d\xi}+(\omega^2\mu_0\in-\beta^2)F_1=0 \quad \ldots(12)$$

शेष समीकरण (8) एवं (11) में μ तथा $\in$ नही है इसीलिये इन समीकरणों से कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है। समीकरण (12) प्रयुक्त तरंगवर्तिका के सम्पूर्ण तरंग पथ का वर्णन करती है। जिसकी शर्त $\xi \gg \eta$ है। फ्रोबीनियस विधि से समीकरण (12) हल करने पर हमें दो सरल स्वतन्त्र श्रेणी हल प्राप्त होते हैं।

$$F_{11} = 3C_0 \left[\frac{1}{3} - \frac{\delta \quad \xi^2}{2.3.5} + \frac{\delta^2 \quad \xi^4}{2.3.4.5.7} - \frac{\delta^3 \qquad \xi^6}{9.7.6.5.4.3.2} + \cdots\right] \ldots\ldots(13)$$

$$F_{12} = C_0 \xi^{-3} \left[1 + \frac{\delta}{2} \ \xi^2 - \frac{\delta^2}{2.4}\xi^4 + \frac{\delta^3 \xi^6}{6.4.3.2} - \cdots\right] \ldots\ldots(14)$$

जहाँ $\delta = \omega^2 \mu_0 \epsilon - \beta^2$ है। इन श्रेणी हलों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि $\xi \to 0, F_{12}$ हल अनन्त की ओर अग्रसर होता है। अतः समीकरण (13) ही कोर क्षेत्र के लिये मान्य हल है। समीकरण (13) को एक सूत्र के रूप में लिखा जा सकता है।

$$F_{11\,(\xi)} = 3C_0 \sum_{n=0}^{\infty} \frac{(-1)^n \left\{(\sqrt{\delta}\,\xi)^2\right\}^n}{2^n\, n! \prod_{l=0}^{n} (2l+3)}$$

अभिलाक्षणिक समीकरण ज्ञात करने के लिये अब सीमा प्रतिबन्धों को लगाते हैं। जिसके अनुसार क्षेत्र φ निर्देशित पथ की सीमा रेखा पर शून्य होना चाहिये।

$$(F_{11})_{\xi=a} = 0 \ldots\ldots(15)$$

F_{11} को ua के रूप में लिखने पर

$$\Delta\,(ua) = \sum_{n=0}^{\infty} \frac{(-1)^n \left\{(\sqrt{u}\,a)^2\right\}^n}{2^n\, n! \prod_{l=0}^{n} (2l+3)} = 0 \ldots\ldots(16)$$

जहाँ $u = \omega^2 \mu_0 \epsilon - \beta^2$ हैं। समीकरण (16) उपरोक्त अनुप्रस्थ काट की तरंगवर्तिका के लिये दुर्बल निर्देशित सन्निकटन के अन्तर्गत तरंग वर्तिका द्वारा संचरित मोड की व्याख्या करती है।

संख्यात्मक परिणाम– समीकरण (16) के द्वारा धात्विक सीमा रेखा के त्रिफलक अनुप्रस्थ काट के फाइबर में संचरित मोड के गुणों का संख्यात्मक अनुमान लगा सकते है। प्रस्तुत शोध पत्र में मोड के कट ऑफ मान पर तथा इसके विश्लेषण पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इसके लिये कोर के परावैद्युत का अपवर्तनांक 1.48 तथा संचरित तरंग का तरंग दैर्ध्य $\lambda = 1.55\mu$ लेते है। मॉडल कट ऑफ मानों को ज्ञात करने के लिये समीकरण (16) का बायां भाग $\Delta\,(ua)$ तथा β के विभिन्न मानों के बीच वक्र खींचते हैं। β के ये मान n_1k तथा n_2k के बीच नियमित अन्तराल पर लेते हैं। परिणामी वक्र **चित्र–3** द्वारा दिखाया गया है।

यह वक्र अक्ष को जिन बिन्दुओं पर काटता है वे बिन्दु कटआफ मान देते हैं। इस विधि से कटआफ मानों को शून्य कोटि मोड $\alpha = 0$ के लिये निकाला जाता है। उच्च कोटि मोड के लिये नई कटआफ समीकरण $\alpha \neq 0$ ज्ञात करना आवश्यक है।

चर्चा एवं निष्कर्ष– चित्र–3 में $\Delta(ua)$ तथा $V(u)$ के बीच वक्र खींचा गया है। विभिन्न मोड के कट ऑफ V मान $V \approx 4.511$, $V \approx 7.648$ प्राप्त होतें हैं। वक्र से यह ज्ञात होता है कि $V<10$ के लिये उपरोक्त काट के कोर की तरंगवर्तिका केवल दो मोड को ही संचारित करती हैं यहाँ **V** नार्मलाइज आवृत्ति है। यदि हम मानक वृत्तीय अनुप्रस्थ काट के फाइबर से प्रस्तुत तरंगवर्तिका की तुलना करते हैं तो आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त होता है कि प्रस्तुत तरंगवर्तिका $V<4.511$ पर एक भी मोड संचरित नहीं करती, जबकि वृत्तीय कोर फाइबर में $V=0$ पर भी मोड संचारित होता है। इसका कारण संभवतः वृत्तीय कोर फाइबर का केन्द्र अनुप्रस्थ काट के केन्द्र पर होना है जबकि प्रस्तुत शोध पत्र में तरंगवर्तिका का केन्द्र सीमा रेखा पर है एवं यह एक विलक्षण बिन्दु है। यदि चालक सीमा रेखा की त्रिफलक अनुप्रस्थ काट का तुलनात्मक अध्ययन परावैद्युत कोर एवं परावैद्युत क्लैडिंग[12] से करते है तब देखते है कि धात्विक सीमा रेखा के लिये कट ऑफ का मान के उच्च मान की ओर अग्रसर होता है। परावैद्युत क्लैडिंग में जहाँ हमे पर तीन मोड प्राप्त होते हैं वहीं प्रस्तुत तंरग वर्तिका में केवल दो ही मोड प्राप्त होते हैं। अतः हम इस निष्कर्ष पर पंहुचते हैं कि परावैद्युत क्लैडिंग तरंगवर्तिका के स्थान पर धात्विक सीमारेखा की तरंगवर्तिका लेने पर संचरित मोड की संख्या कम हो जाती है।

सन्दर्भ

1. घटक, ए0 के0; टिहंग, टी0 टी0 एवं शर्मा, ई0(1985) ज0 ऑप्ट0 कम्यूनिकेशन, खण्ड–6, मु0पृ0 147।
2. शर्मा, इ0; शर्मा, ए0 एवं गोयल, ई0 सी0(1982), आई0ईईई जे क्वांटम इलेक्ट्रॉन, क्यूई, खण्ड–18, मु0पृ0 1484।
3. यूगंर, एच0 जी0(1997) प्लेनर ऑप्टिकल वेवगाइड एंड फाइबर्स, क्लेरेन्डन प्रेस।
4. चौधरी, पी0 के0; खस्तगीर, पी0; ओझा, एस0 पी0 एवं सिंह, एल0 के0(1992) वीक गाइडेंस इन बेन्ट एंड अनबेन्ट फोर–लेयर प्लेनर वेवगाइड इन ए कम्पेरैटिव स्टड़ी ऑफ डिसपर्सन कर्वस, जापान ज0 अप्लाइड फिजिक्स, खण्ड–31, मु0पृ0 39–41।
5. डयोट, आर0बी0(1990) कट ऑफ आफ द फर्स्ट हाईपर आर्डर मोड्स इन इलिप्टिकल द डाइइलैक्ट्रिक वेव गाइड: एन एक्सपेरिमेंटल अप्रोच, इलेक्ट्रॉन लैटर्स, खण्ड–26, मु0पृ0 1721–1723।
6. मिश्रा, बी0; चौधरी, पी0 के0; खस्तगीर, पी0 एवं ओझा, एस0पी0(1995) मॉडल प्रोपेगेशन एनालिसिस आफ ए वेवगाइड विद ए रेगुलर पेन्टागोनल क्रास सेक्शन विद कन्डक्टिंग एंड नान कन्डक्टिंग बाउड्रीज, माइक्रोवेव0 ऑप्ट0 टेक्नो लैटर्स, खण्ड–8, मु0पृ0 280–282।
7. शर्मा, ए0(2011) माडल डिसपर्शन कर्वस आफ एन आप्टिकल वेवगाइड विद ए कोर क्रास सेक्शन पारशियली बाउंडेड बाय वन टर्न ऑफ एन इक्वीएनगुलर स्पाइरल अंडर वीक गाइडेंस एप्रोक्सीमेशन, ऑप्टिक, खण्ड–122, मु0पृ0 1535–1537।
8. मिश्रा, ए0 के0; पांडे, पी0सी0; कुमार, डी0; सिंह द्वितीय, ओ0 एन0(2013) एन एनालिटिकल स्टडी ऑफ मॉडल डिसपर्सन केरेक्टरस्टिक ऑफ हेलकली क्लैड क्रिस्टल कोर ऑप्टिकल फाइबर, ऑप्टिक इंटरनेशनल जर्नल ऑफ लाइट एंड इलेक्ट्रॉन ऑप्टिकल, खण्ड–124, अंक–17, मु0पृ0 2611–2667।
9. सिंह, बी0; प्रसाद, बी0 एवं ओझा, एस0 पी0(2000) वीक गाइडेंस मॉडल एनालिसिस एंड डिसपर्शन कर्वस आफ एन इनफ्रारेड लाइटगाइड हैविंग ए क्रास सेक्शन विद ए न्यू टाइप आफ एरिम्मेट्रिक लूप बाउड्री, ऑप्ट0 फाइबर, टेक्नो0, खण्ड–6, मु0पृ0 290–298।
10. कमीनाउ, आई0 पी0; मेमल, डब्लू0 एल0 एवं बेवर एच0 पी0(1974) मेटल क्लैड ऑप्टिकल वेवगाइड, एनालिसिस एंड एक्सपेरिमेंटल स्टडी, एप्ल0 ऑप्ट, खण्ड–12, मु0पृ0 396–399।
11. पोल्की, जे0 एन0; मिशेल, जी0 एल0(1974) मेटल–क्लैड प्लेनर डाइइलेक्ट्रिकल वेवगाइड फार इन्टीग्रेटिड ऑप्टिक्स, ज0 ऑप्ट0 सो0 अमेरिका, खण्ड–64, मु0पृ0 274–277।
12. शर्मा, ए0(2000) मॉडल डिपर्शन कर्वस आफ ए मेटल कोटेड ऑप्टिकल वेवगाइड विद ए गाइडिंग रीजन क्रास सेक्शन बाउंडेड बाय इक्वीएनगुलर स्पाइरलर्स , ऑप्टिक, खण्ड–111, अंक–9, मु0पृ0 381–384।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 35–38, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4374 शोध पत्र

चालकोन डेरिवेटिव 3-(4-chlorophenyl)-1-(pyridin-3-yl) prop-2-en-1-one के प्रथम व द्वितीय घातीय स्थिर अरेखिक प्रकाशकीय गुणों (NLO) का अध्ययन

राम कुमार तिवारी[1] एवं राकेश कुमार सिंह[2]
[1]भौतिक विज्ञान विभाग, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, चारबाग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
[2]भौतिक विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226007, उ0प्र0, भारत
rktshri@gmail.com

प्राप्त तिथि– 31.07.2016; स्वीकृत तिथि– 30.08.2016

सार– रासायनिक प्रमात्रा के द्वारा डेनसिटी फंकशनल थ्योरी की सहायता से चालकोन डेरिवेटिव 3-(4-chlorophenyl)-1-(pyridin-3-yl) prop-2-en-1-one का अध्ययन किया गया है। अणु का अरेखिक प्रकाशकीय अध्ययन गैस अवस्था में किया गया है। अध्ययन से पता चलता है कि अणु दृश्य प्रकाश में पारदर्शी है। अणु के क्रियाशील समूहों की स्थिति और आवेशों के प्रवाह के संबंधों को स्पष्ट किया गया है। अध्ययन दर्शाता है कि यह अणु अरेखिक प्रकाशकीय कार्यों के लिए उपयोगी हो सकता है।

बीज शब्द– अरेखिक प्रकाशकीय पदार्थ, डी एफ टी, क्वांटम केमिस्ट्री, फोटॉनिक्स, हाइपरपोलराईजेबिलिटी।

Study of 1st and 2nd order nonlinear optical(NLO) properties of chalcone derivative 3-(4-chlorophenyl)-1-(pyridin-3-yl) prop-2-en-1-one using quantum chemical techniques

Ram Kumar Tiwari[1] , Rakesh Kumar Singh[2]
[1]Department of Physics, B.S.N.V. P.G. College, Charbagh, Lucknow-226001, U.P., India
[2]Department of Physics, Lucknow University, Lucknow-226007, U.P., India
rktshri@gmail.com

Abstract- The chalcone derivative 3-(4-chlorophenyl)-1-(pyridin-3-yl) prop-2-en-1-one has been investigated by quantum chemical calculations carried out using density functional theory. The nonlinear optical properties of the molecule are studied in the gas phase. The study shows that the molecule is transparent in the entire visible range. The effect of position of functional groups on the mobility of charges in push-pull type of structure has been discussed. Nonlinear properties of the molecule show that the molecule has a potential candidature for organic NLO material.

Key words- 3-(4-chlorophenyl)-1-(pyridin-3-yl) prop-2-en-1-one, density functional theory, non-linear optical material, hyperpolarizability

1. **प्रस्तावना–** अरेखिक प्रकाशकीय पदार्थों का उपयोग ऑप्टोइलेक्ट्रॉनिक्स और फोटॉनिक्स में लगातार बढ़ता जा रहा है। अकार्बनिक एवं कार्बनिक पदार्थों में अरेखिक प्रकाशकीय गुण पाये जाते हैं।[1] कार्बनिक अरेखिक प्रकाशकीय पदार्थ आवृत्ति परिवर्तन, उच्च लेजर कार्यशीलता एवं तीव्र ऑप्टिकल रेस्पॉन्स टाईम के कारण अकार्बनिक अरेखिक प्रकाशकीय पदार्थों से बेहतर होते हैं। कार्बनिक अरेखिक प्रकाशकीय पदार्थों में पाई–संविन्यासी संरचना संभव होती है जिसके एरोमेटिक रिंग से जुड़ने के कारण दाता एवं ग्राही समूह का निर्माण हो जाता है।[2–6] यह युग्मन दाता और ग्राही के मध्य इलेक्ट्रॉन के प्रवाह को सरल बना देता है। अंतरआण्विक आवेशों के इस प्रवाह के कारण ऐसे पदार्थों में अरेखिक प्रकाशकीय गुणों के पाये जाने की प्रबल संभावना होती है।

2. **अभिकलनात्मक विवरण–** अणु के इलेक्ट्रॉनिक संरचना का ऑप्टमाईजेशन गॉसीयन 09 साफ्टवेयर के द्वारा डीएफटी विधि से किया गया। इसमें बेक के तीन प्राचल निर्देशांकों के साथ ली–यांग–पार के B3LYP कोरेलेसन फंक्शन का प्रयोग हुआ।[7] बेसिस सेट 6-311++G(d,p) जिसमें भारी परमाणु हेतु d ध्रुवीकृत फंक्शन तथा हाईड्रोजन परमाणु पर p ध्रुवीकृत फंक्शन एवं हल्के तथा भारी दोनों परमाणुओं पर डिफिउज्ड़ फंक्शन को लगाया गया है।[8–10] ऑप्टिमाईज संरचना पर गॉसीयन सॉफ्टवेयर में पोलर की–वर्ड लगाकर स्थिर अरेखिक प्रकाशकीय चलनों को अभिकलित किया गया। जिसकी एनालिसिस केमक्राफ्ट सॉफ्टवेयर द्वारा किया गया है[13]।

3. **संरचना का इष्टमीकरण**– चित्र–1 में CPP को निम्न ऊर्जा स्तर में प्रदर्शित किया गया है। प्रारंभिक संरचना क्रिस्टलोग्राफिक इन्फॉरमेशन फाईल से लिया गया है जिसे B3LYP/6-311++G(2d,p) थ्योरी स्तर पर बिना किसी रुकावट के ऑप्टिमाईज किया गया। इस प्रकार से प्राप्त अणु की संरचना को प्रयोगों से प्राप्त अणु की संरचना से मिलान कराया गया, जिसमें लिस्ट स्कायर एलगोरिथ्म का उपयोग किया गया है जो गैर हाइड्रोजन परमाणुओं के मध्य दूरियों को न्यूनतम करता है। ज्ञातब्य है कि थ्योरेटिकल मान तथा प्रायोगिक मानों में कुछ अंतर प्राप्त हो रहा है जो संभवतः अणुओं के मध्य अंतरआण्विक बलों के कारण हो सकता है। इस प्रकार प्राप्त ईष्टमीकृत संरचना तथा प्रायोगिक संरचना की साम्यता प्रदर्शित करने के लिए दोनों संरचनाओं को एक दूसरे पर अध्यारोपित किया गया है जिसे चित्र–2 में दिखाया गया है। एब एनिशियो ड़ीएफटी (बी3एलवाईपी) का ऊपयोग करके अणुओं की सापेक्षिक ऊर्जा को ज्ञात किया गया है। प्राकलित ऊर्जा का मान –1129.8904 एयू तथा प्राकलित द्विध्रुव आघुर्ण 0.3539 डिबाय है।

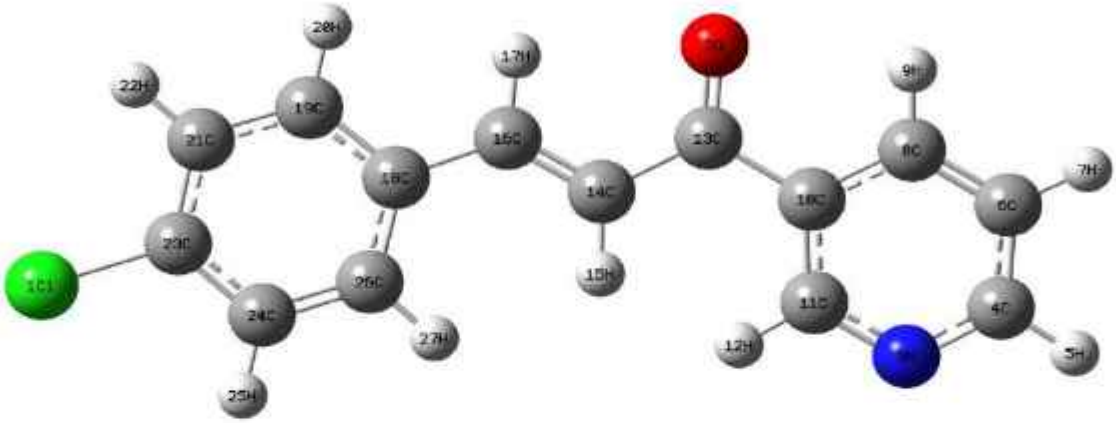

चित्र– 1

अभिष्ट संरचना दो रिंगों से निर्मित है जो एक ही समतल में है और जिनके मध्य ड़ाईहेड्रल कोण निम्नवत है– सी19–सी18–सी16–सी14 = –179.8309 तथा सी8–सी10–सी13–सी14 = –171.7165 । ऑक्सीजन का कार्बन के सापेक्ष अधिक इलेक्ट्रोनिगेटिव होने के कारण कार्बोनिल ग्रुप ध्रुवित हो जाता है और उसमें द्विध्रुव आघुर्ण उत्पन्न हो जाता है। रिंग 2 के सापेक्ष कार्बोनिल ग्रुप एक ही प्लेन में रहता है जिसका ड़ाईहेड्रल कोण ओ2–सी13–सी10–सी11 = –171.2671 है। इस समतलीय संरचना के कारण π कान्जुगेटेड़ अणुओं की इलेक्ट्रोनिगेटिविटी बढ़ती है जो अंततः अणु के अरेखिक प्रभाव को बढ़ाता है।

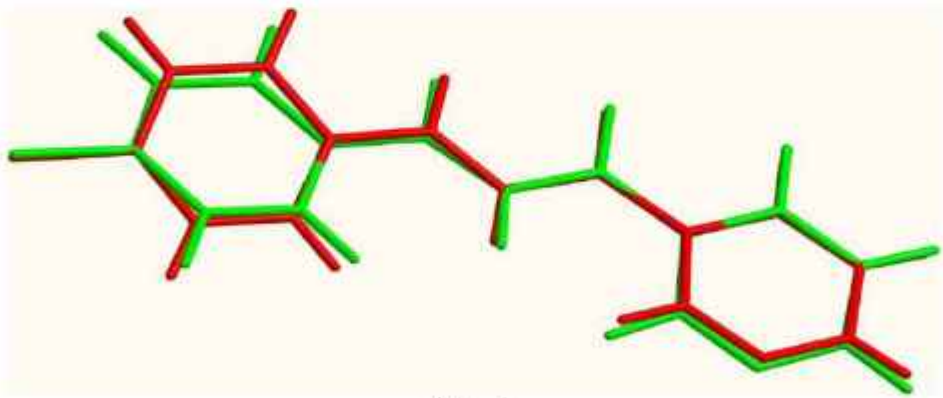

चित्र– 2

4. **अरेखिक गुण**– रासायनिक प्रामात्रा गणनायें अणुओं के अरेखिक प्रकाशिक गुणों के अध्ययन में अत्यंत उपयोगी हैं।[14–15] हाईपरपोलराईजेबिलिटी से आण्विक संरचना और अरेखिक प्रकाशिक गुणों के संबंधों को समझने में सहायता मिलती है। उक्त अणु के पोलराईजेबिलिटी और हाईपरपोलराईजेबिलिटी को प्राप्त करने के लिए गॉसियन 09 सॉफ्टवेयर से बी3एलवाईपी स्तर पर पोलर कीवर्ड़ के द्वारा सेमुलेट किया गया। हाईपरपोलराईजेबिलिटी के मान बेसिस सेट तथा थ्योरी के स्तर के चुनाव पर पूर्णतः निर्भर करता है। द्वितीय हाईपरपोलराईजेबिलिटी के सही प्राकलन हेतु एक्सटेंड़ेड़ बेसिस सेट की आवश्यकता होती है। साथ ही ध्रुवित एवं ड़िफ्यूज्ड़ फंक्शन के उपयोग से प्राकलन की शुद्धता बढ़ जाती है।[16] अतः अध्ययन में प्रयुक्त 311++g(d,p) बेसिस सेट संभवतः हाईपरपोलराईजेबिलिटी प्राकलन हेतु उपर्युक्त बेसिस सेट है।

द्वितीय स्थिर हाईपरपोलराईजेबिलिटी प्राकलित करने हेतु अणु के सेंटर ऑफ मास को मूल बिंदू पर लिया गया है। γ (0;0,0,0) तथा γ (−3ω;ω,ω,ω) क्रमशः ω=0 पर स्थिर द्वितीय हाईपरपोलराईजेबिलिटी तथा ω पर ड़ायनामिक हाईपरपोलराईजेबिलिटी या थर्ड़ हारमोनिक जेनेरेशन को प्रदर्शित करते हैं। टोटल स्टेटिक ड़ाईपोल मोमेंट (μ) , माध्य पोलेराईजेबिलिटी (α_0), एनिसोट्रापी ऑफ पोलेराईजेबिलिटी ($\Delta\alpha$) , माध्य प्रथम घातीय हाईपरपोलराईजेबिलिटी (β) तथा माध्य स्टेटिक द्विघातीय हाईपरपोलराईजेबिलिटी (γ) को निम्न समीकरणों से प्राप्त किया जा गया है।[17–18]

$$\mu = (\mu^2_x+\mu^2_y+\mu^2_z)^{1/2}$$

$$\alpha_0 = 1/3(\alpha_{xx}+\alpha_{yy}+\alpha_{zz})$$

$$\Delta\alpha=2^{-1/2}[(\alpha_{xx}-\alpha_{yy})^2+(\alpha_{yy}-\alpha_{zz})^2+(\alpha_{zz}-\alpha_{xx})^2]^{1/2}$$

$$\beta = [(\beta_{xxx}+\beta_{xyy}+\beta_{xzz})^2+(\beta_{yyy}+\beta_{yzz}+\beta_{yxx})^2+(\beta_{zzz}+\beta_{zxx}+\beta_{zyy})^2]^{1/2}$$

$$< \gamma >= \left(\frac{1}{5}\right)\left[\gamma_{xxxx}+\gamma_{yyyy}+\gamma_{zzzz}+2\left(\gamma_{xxyy}+\gamma_{xxzz}+\gamma_{yyzz}\right)\right]$$

5. **परिवर्तन तालिका**–

α हेतु 1 atomic unit (a.u.) = 0.1482×10^{-24} electrostatic unit (esu)

β हेतु 1 a.u. = 8.6393×10^{-33} esu तथा

γ हेतु 1 a.u. = 5.0367×10^{-40} esu

तालिका–1

टोटल स्टेटिक ड़ाईपोल मोमेंट (μ), माध्य पोलेराईजेबिलिटी(α_0), एनिसोट्रापी ऑफ पोलेराईजेबिलिटी ($\Delta\alpha$), माध्य प्रथम घातीय हाईपरपोलराईजेबिलिटी(β) तथा माध्य स्टेटिक द्विघातीय हाईपरपोलराईजेबिलिटी(γ)- CPP

Property	B3LYP/ 6-311++G(d,p)	Property	B3LYP/6-311++G(d,p)	Property	B3LYP/6-311++G(d,p)
μ_x	0.1107 Debye	β_{xxx}	152.7454 a.u.	γ_{xxxx}	-9190.6250 a.u.
μ_y	-0.1468 Debye	β_{xyy}	-56.9032 a.u.	γ_{yyyy}	-1034.7955 a.u.
μ_z	0.3024 Debye	β_{xzz}	-4.4709 a.u.	γ_{zzzz}	-131.3832 a.u.
μ	0.3539 Debye	β_{yyy}	6.7038 a.u.	γ_{xxyy}	-1857.4785 a.u.
α_{xx}	-98.2688 a.u.	β_{yzz}	1.4087 a.u	γ_{xxzz}	-1774.5175 a.u.
α_{yx}	-0.9638 a.u.	β_{yxx}	42.4480 a.u.	γ_{yyzz}	-193.2118 a.u.
α_{yy}	-109.447 a.u	β_{zzz}	-0.3633 a.u.	Static γ	$-1.814*10^{-36}$ e.s.u.
α_{zx}	2.1701 a.u.	β_{zxx}	10.0755 a.u.		
α_{zy}	-0.5458 a.u.	β_{zyy}	2.0688 a.u.		
α_{zz}	-110.1393 a.u.	β	105.0898 a.u.		
α_o	$-15.7021*10^{-24}$ esu	β	$9.079*10^{-31}$ esu		
Δα	$1.7103*10^{-24}$ esu				

6. **निष्कर्ष**– सीपीपी की उच्च एसएचजी रूपान्तरण क्षमता बी–अक्ष के सापेक्ष परमाणुओं की वक्राकार संरचना से उत्पन्न आण्विक द्विध्रुव के कारण है। दूसरे क्रम के अरेखिक गुणों पर क्रियाशील समूहों के प्रभाव की चर्चा की गयी है। क्लोरीन समूह पैरा स्थिती में संलग्न क्रिस्टल की गतिविधि को बढ़ाता है। इसके अलावा, पिरिडीन रिंग में नाइट्रोजन परमाणु की स्थिति चालकोन डेरिवेटिव सीपीपी के एनएलओ गुणों पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि उच्च दक्षता एसएचजी के कारण सीपीपी का एनएलओ अनुप्रयोगों में उपयोग किया जा सकता है।

संदर्भ

1. अहमद, ए0 बेन; एल्यूच, एन0; फेकी, एच0 एवं आबिद, वाई0(2011) एसपेक्ट्रोकेमिका एक्टा, खण्ड–ए 79, मु0पृ0 554–561।
2. नालवा, एच0 एस0 एवं मियाता, एस0(1996) नॉनलीनियर ऑप्टिक्स ऑफ ऑरगेनिक मॉलिक्यूल एण्ड पॉलिमर्स, सीआरएस प्रेस, न्यूयार्क।
3. जायस, जे0; निकाउड, जे0 एफ0 एवं कोक्यूलरी, एम0(1984) जरनल ऑफ केमिकल फिजिक्स, खण्ड–81, पृ0 416।
4. अग्रवाल, एम0 डी0; वांग, डब्लू0 एस0; भट्ट, के0 बी0; पेन्न, जी0 एवं फ्रेजियर, डी0 ओ0(2001) हेन्डबुक ऑफ एडवान्स इलेक्ट्रॉनिक मेटेरियल्स एंड डिवाईसेज, ऐकेडमिक प्रेस, सान डिएगो, केलिफोर्निया, खण्ड–9।

5. पेन्न, बी0 जी0; बेइटिज, एच0 सी0; मूरे, सी0 ई0; सिल्डस, डब्लू0 एवं फ्रेजियर, डी0 ओ0(1991) प्रोग्रेसिव क्रिस्टल ग्रोथ एंड केरेक्टेरिस्टिक्स, खण्ड–22, पृ0 19।
6. मेयर्स, फेबिने; मार्डर, सेठ आर0; पैरी, जोसेफ डब्लू0, इंटरान्टे, एल0 वी0; मार्क, जे हैम्पडन स्मिथ(1998) केमिस्ट्री ऑफ एडवांस मेटेरियल्स, विलि–वीएचसी आईएनसी, न्यूयार्क, पृ 207।
7. मार्टिन, जे0 एम0 एल0 एवं एसलिनाअ, सी0 वान, गार2पेड, एंटवर्न विश्वविद्यालय।
8. झुरको, जे0 ए0(2005) केमक्राफ्ट।
9. कैसिडा, एम0 ई0 एवं चौंग, डी0 पी0(1995) रिसेन्ट डेवलेपमेंट इन डेनसिटि फंक्शनल थ्योरी, वर्ल्ड साइंसटिफिक एडिसन, सिंगापुर, पृ0 155।
10. कैसिडा, एम0 ई0; कैसिडा, के0 सि0 एवं सालाहब, डी0 आर0(1998) इंटरनेशनल जरनल ऑफ क्वांटम केमिस्ट्री, खण्ड–70, पृ0 933।
11. स्ट्रेटमैन, आर0 ई0; स्क्यूसेरिया, जी0 ई0 एवं फ्रिश, एम0 जे0(1998) जरनल ऑफ केमिकल फिजिक्स, खण्ड– 109, पृ0 8218।
12. मिरस्स, एस0; स्क्रोक, ई0 एवं तोमासी, जे0(1981) केमिकल फिजिक्स, खण्ड–55, पृ0 117।
13. पोलित्जर, पी0 एवं थ्रूहलर, डी0 जी0(1981) केमिकल एप्लीकेशन ऑफ ऐटॉमिक एंड मॉलिक्यूलर इलेक्ट्रोस्टेटिक पोटेंशियल्स, न्यूयार्क।
14. बैलि, आर0 टी0; दिनेश, टी0 ज0 एवं टेडफोर्ड, एम0 सी0(2011) जरनल ऑफ मॉलिक्यूलर स्ट्रक्चर, खण्ड–992, अंक–1–3, मु0पृ0 52–58।
15. शुभाषिनी, ए0; कुमारवेल, आर0; लीला, एस0; इवान्स, एच0 एस0; सस्तीकुमार, डी0 एवं रामामूर्ति, के0(2011) स्पेक्ट्रोकेमिका एक्टा, खण्ड–ए 78, अंक–3, मु0पृ0 935–941।
16. ब्रेडास, जे0 एल0; एडेन्ट, सी0; टेक्स, पी0 एवं ए परसून्स(1994) केमिकल रिव्यू, खण्ड–94, पृ0 243।
17. गुनाय, एन0; पीर, एच0 एवं अटालाय, वाई(2013) जरनल ऑफ केमिस्ट्री, आर्टिकल आईडी 712130, पृ0 16।
18. शेलड्रिक, जी0 एम0(1997) सेलेकस –97, प्रोग्राम फॉर दी सॉल्यूशन ऑफ क्रिस्टल स्ट्रक्चर्स, गोटिंजन विश्वविद्यालय।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 39–41, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4375 शोध पत्र

फोनान–फोनान पारस्परिक प्रभाव के कारण नायोबियम ऑक्साइड(NbO) में अल्ट्रासोनिक क्षय

अरविन्द कुमार तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, भौतिक विज्ञान विभाग
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
tiwariarvind1@rediffmail.com

प्राप्त तिथि–31.07.2016; स्वीकृत तिथि– 18.09.2016

सार– NbO में <110> दिशा में तापीय परिसर 100–500के0 के बीच फोनान–फोनान पारस्परिक प्रभाव तथा तापीय तन्य क्रिया विधि(थर्मोइलास्टिक मैकेनिज्म) के कारण अल्ट्रासोनिक क्षय की गणना की गई है। अल्ट्रासोनिक क्षय तथा अन्य नियतांकों(इलास्टिक कॉन्सटेंट) की भी गणना की गयी है। इस पदार्थ में फोनान–फोनान पारस्परिक प्रभाव से प्राप्य अल्ट्रासोनिक क्षय तापीय तन्य हानि के ऊपर अधिक प्रभावी है। NbO के थर्मोइलास्टिक गुणों से सहसम्बद्ध परिणामों की चर्चा की गयी है।

बीज शब्द– तन्य नियतांक, अल्ट्रासोनिक वेग, तापीय चालकता, अल्ट्रासोनिक क्षय।

Ultrasonic attenuation in Niobium Oxide(NbO) due to phonon-phonon interaction

Arvind KumarTiwari
Assistant Professor, Department of Physics
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
tiwariarvind1@rediffmail.com

Abstract- Ultrasonic attenuation due to phonon-phonon interaction and thermo elastic mechanism have been evaluated in NbO along <110> direction in the temperature range 100-500K. The second and third order elastic constants are also evaluated for the evaluation of ultrasonic attenuation and other associated parameters. The ultrasonic attenuation due to phonon-phonon interaction is predominant over thermo elastic loss in this material. The results are discussed in correlation with thermo elastic properties of NbO.

Key words- Elastic constants, ultrasonic velocity, thermal conductivity, ultrasonic attenuation.

1. **प्रस्तावना**– अल्ट्रासोनिक्स की जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका है। सन् 1959 से डाईइलेक्ट्रिक्स, ठोस संरचनाओं में अल्ट्रासोनिक तरंगों के मापन में केन्द्र में रहा है। NbO(नायोबियम ऑक्साइड) सफेद क्रिस्टल या पाउडर सा दिखता है। इसका गलनांक 1520^{0}सी है। इसका मुख्य अनुप्रयोग इलेक्ट्रॉनिक्स में है। अल्ट्रासोनिक क्षय की गणना में द्वितीय तथा तृतीय अनुक्रम के तन्य नियतांकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। तन्य गुण विशिष्ट ताप, डिबॉय ताप, ध्वनि वेग से ऊष्म प्रवैगिकी से जुडे होते हैं। विभिन्न उच्च तापों पर द्वितीय एवं तृतीय तन्य नियतांकों की गणना की गयी है। अल्ट्रासोनिक क्षय की गणना हेतु औसत ग्रुनाइजे प्राचल, तापीय स्थिर समय, असंनादी प्राचल की भी गणना की गयी है। ये गुण पदार्थ के सूक्ष्म संरचनात्मक एवं यांत्रिक गुणों से जुड़े होते हैं।

2. **विधि**– कूलम्ब तथा वार्न–मेयर[3] विभव $\phi(r_0)=A\ \exp(-r_0/b)$ का प्रयोग करते हुए (जहाँ r_0 निकटतम पड़ोस दूरी तथा b वार्न–मेयर विभव है) तथा पारस्परिक प्रभाव द्वितीय निकटतम पड़ोस दूरी तक प्रभावी मानते हुए SOEC तथा TOEC परम शून्य ताप पर प्राप्त किया गया।[4] परम शून्य ताप के तन्य नियतांकों में प्रदोलनात्मक ऊर्जा योगदान को जोड़ते हुए SOEC तथा TOEC अभीष्ट ताप पर प्राप्त किया गया।

$$C_{IJK} = C^{0}_{IJK} + C^{Vib.}_{IJK}$$

जहाँ 0 तथा Vib., SOEC तथा TOEC के क्रमशः शून्य ताप तथा प्रदोलनात्मक योगदान को दर्शाता है।[5–6]

अल्ट्रासोनिक क्षय की गणना निम्न समीकरण से की जाती है।[1, 7]

$$\left(\frac{\alpha}{f^2}\right)_{Akh.} = \frac{4\pi^2\tau E_0\left(\frac{D}{3}\right)}{2\rho V^3}$$

इसमें V = औसत वेग, E_0 = तापीय ऊर्जा, ρ = घनत्व, τ = तापीय स्थिर समय दर्शाता है।

3. **परिणाम तथा निष्कर्ष**– NbO के द्वितीय एवं तृतीय अनुक्रम के तन्य नियतांकों का गणना किया हुआ मान तालिका–1 में दर्शाया गया है।[2] इन नियतांकों का प्रयोग मुनाइजे प्राचलों की गणना में उपयोग होता है। इन मानों का अनुक्रम अन्य NaCl प्रकार के डाईइलेक्ट्रिक पदार्थों जैसा है।

तालिका–1(10^{11} डाइन/सेमी^{2} में)

ताप(केल्विन)→ SOEC/TOEC↓	100K	200K	300K	400K	500K
C_{11}	7.206	7.338	7.526	7.732	7.838
C_{12}	5.582	5.494	5.404	5.314	5.269
C_{44}	5.701	5.716	5.736	5.756	5.567
C_{111}	-90.643	-96.629	-97.185	-97.874	-98.243
C_{112}	-22.696	-22.480	-22.244	-22.008	-21.892
C_{123}	7.961	7.616	7.274	6.933	6.762
C_{144}	8.349	8.394	8.442	8.489	8.514
C_{166}	-23.058	-23.099	-23.159	-23.227	-23.262
C_{456}	8.297	8.297	8.297	8.297	8.297

तालिका–2(10^{-17} Nps^2/cm में)

पदार्थ	ताप(K)	$(\alpha/f^2)_{th}$	$(\alpha/f^2)_{Akh.long}$	$(\alpha/f^2)^*_{Akh.shear}$	$(\alpha/f^2)^\#_{Akh.shear}$
NbO	100	0.041	0.030	0.003	0.004
	200	0.078	0.105	0.016	0.015
	300	0.088	0.176	0.039	0.032
	400	0.079	0.217	0.073	0.049
	500	0.062	0.219	0.115	0.059

* < 001 > दिशा में ध्रुवीकृत
\# < 1$\bar{1}$0 > दिशा में ध्रुवीकृत

फोनान–फोनान पारस्परिक प्रभाव के कारण ताप निर्भर अल्ट्रासोनिक क्षय को तालिका–2 में दर्शाया गया है। इस पदार्थ में तापीय चालकता का मान कम होने की वजह से तापीय तन्य हानि(थर्मोइलास्टिक लॉस) फोनान श्यानता हानि(फोनान विस्कॉसिटी लॉस) की तुलना में नगण्य है। तापीय तन्य हानि का मान 300के तक ताप बढ़ने पर बढ़ता है इसके पश्चात् स्थिर होकर घटना प्रारम्भ कर देता है। अल्ट्रासोनिक अवशोषण गुणांक आवृत्ति पर $\left(\frac{\alpha}{f^2}\right)_{Akh.}$ ताप बढ़ने के साथ बढ़ता है। उच्च ताप पर इसका मान स्थिर हो जाता है। यह व्यवहार तापीय चालकता के कारण होता है। ऐसा परिवर्तन पूर्व में अध्ययन किये पदार्थों में भी पाया जाता है।[8] यह स्पष्ट है कि तापीय चालकता अल्ट्रासोनिक क्षय की गणना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस अध्ययन को पदार्थों के बनने के दौरान तथा उत्पादन के पश्चात् उनके निरुपण में उपयोग किया जा सकता है।

संदर्भ

1. मेसॉन, डब्ल्यू0 पी0(1965) फिजिकल एकाउस्टिक्स, एकेडेमिक प्रेस, न्यूयॉर्क 3बी, पृ0 237।
2. वाइकॉफ, आर0 डब्ल्यू0 एफ0(1963) क्रिस्टल स्ट्रक्चर, इण्टर साइन्स पब्लिशर्स, न्यूयॉर्क, द्वितीय संस्करण।
3. वार्न, एम0 तथा मेयर, जे0 ई0(1932) जेड0 फिजिक्स, खण्ड–75, पृ0 1।
4. ब्रूगर, के0(1964) फिजिक्स रिव्यू ए, खण्ड–133, पृ0 1611।
5. मोरी, एस0 एवं हिकी वाई0(1978) कैलकुलेशन ऑफ थर्ड एण्ड फोर्थ ऑडर इलास्टिक कॉन्स्टेंट्स इन एल्कली हैलाइड क्रिस्टल्स, ज0 फिजिकल सोसा0 जापान, खण्ड–45, मु0पृ0 1449–1456।
6. ब्रूगर, ए0(1964) थर्मोडायनमिक डेफिनिशन ऑफ हाईयर ऑर्डर इलास्टिक कॉन्स्टेंट, फिजि0 रिव्यू, खण्ड–133, पृ0 1611।
7. एखीजर, ए0(1939) ऑन द एब्जार्वेशन ऑफ साउण्ड इन सॉलिड्स, ज0 फिजिक्स, यू0एस0एस0आर0, खण्ड–1, मु0पृ0 277।
8. सिंह, डी0 एवं यादव, आर0 आर0(2003) थर्मल कन्डक्टिविटी एण्ड अल्ट्रासोनिक एट्यूनिएशन इन डाईइलेक्ट्रिक क्रिस्टल्स, ज0 प्योर एप्लाइड अल्ट्रासोनिक्स(जे0पी0ए0यू0), खण्ड–25, पृ0 82।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 42–47, D.O.I. : 10.22445/avsp.v4i1.4376 शोध पत्र

अद्भुत अंटार्कटिका एवं यहाँ की पादप एवं जन्तु विविधताः एक संक्षिप्त परिचय

प्रतिभा गुप्ता
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पर्यावरण वन मंत्रालय एवं जलवायु परिवर्तन, भारत सरकार
आई0एस0आई0एम0, कोलकाता–700016, प0बं0, भारत
drpratibha2011@rediffmail.com

प्राप्त तिथि– 31.07.2016; स्वीकृत तिथि–11.09.2016

सार– अंटार्कटिका हिमाच्छादित, निर्जन, अद्भुत, अनोखा एवं विश्व का पाँचवा सबसे बड़ा महाद्वीप है। वास्तव में यह प्राकृतिक रूप में प्रकृति का अनुपम उपहार है। मुझे भारतीय वैज्ञानिक अभियान दल के साथ अंटार्कटिका के ''लार्सेमान हिल्स'' जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। लार्सेमान हिल्स 69°20' से 69°3' द0 अक्षांस, 75° 55° से 76°30' पू0 देशान्तर पर लगभग आधे रास्ते पर वेस्टफोरट हिल्स एवं आमरी आइस सेल्फ के मध्य अवस्थित है। यह तटीय, कम बर्फ वाला, विस्तृत भूदृश्य, सदृश्य क्षेत्र होने के कारण लार्सेमान हिल्स में मानवीय गतिविधियों को बढ़ावा मिला है एवं ऑस्ट्रेलियन रिसर्च बेस, चाईनीस रिसर्च स्टेशन(जॉनशन) एवं रशियन रिसर्च स्टेशन(प्रोगरेस) एक दूसरे स्टेशन से 3 किमी0 के अन्दर पूर्व ब्रोकनीस में स्थापित होने के कारण इन रिसर्च स्टेशन के स्थापित होने के पश्चात् आधारभूत सुविधाओं में तेजी से विकास हुआ एवं वैज्ञानिक अनुसंधान तथा पर्यटकों के भ्रमण के परिणाम स्वरूप लार्सेमान हिल्स के इस क्षेत्र में पर्यावरण में बदलाव हुआ है जिसने इस क्षेत्र की जैव विविधता को प्रभावित किया है। अन्य महाद्वीपों की तुलना में अंटार्कटिका का पर्यावरण मानवीय गतिविधियों के लिये बहुत संवेदनशील है। यहाँ के वातावरण में पुनः सामान्य स्थिति में आने की कम प्राकृतिक क्षमता होती है। यह बदलाव यहाँ के पर्यावरण एवं जीवों की वृद्धि को प्रभावित करते हैं। लार्सेमान हिल्स धुर दक्षिणी तटीय मरूद्यान क्षेत्र में विविध पादप समूह एवं जन्तु समूह पाये जाते हैं। यहाँ के पादप एवं जन्तु समूह के अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि यहाँ पादप में हरितोद्भिद्, शैवाक एवं शैवाल पाये जाते हैं। शैवाल में मुख्यतः कॉसमेरियम, डायटम, डायनोफ्लेजीलेट्स एवं सायनोजीवाणु प्रेक्षित हैं। जन्तु समूह में स्नोपीट्रएल, विलसन स्टोम, साउथ पोल स्कुआ, इत्यादि पाये गये। इसके अतिरिक्त सील, ऐडली पैंगुईन और एम्परर पैंगुईन कभी–कभी लार्सेमान हिल्स क्षेत्र में दिखाई देते हैं। झीलों एवं जल स्त्रोतों में प्रोटोजोआ, प्लेटीहेलीमेन्थीस, रोटीफर, टार्डीग्रेड्स, निमेटोड् आर्थोपोड्स, इत्यादि यहाँ से प्रतिवेदित हैं।

बीज शब्द– अंटार्कटिका, लार्सेमान हिल्स, पादप एवं जन्तु विविधता, जैव विविधता, स्वच्छ जलीय झीलें, पर्यावरण।

Amazing Antarctica and its plant and animal diversity: a brief introduction

Pratibha Gupta
Botanical Survey of India
Ministry of Environment Forests & Climate Change, Government of India
I.S.I.M. Kolkata–700 016, W.B., India
drpratibha2011@rediffmail.com

Abstract- Antarctica is the coldest, driest, amazing place and fifth largest continent of this world covered with ice. This is a gift of nature in natural form. I have got an opportunity to visit the Larsemann Hills, Antarctica during Indian Scientific Expedition to Antarctica. The Larsemann Hills (69°20'S to 69°30'S Latitude., 75°55'E to 76°30'E Longitude) is located approximately halfway between Vest fold Hills and Amery Ice Shelf on South-eastern coast of Prydz Bay. Human activities in Larsemann Hills is promoted due to its coastal location, ice free landscape, Australian summer research base (Law base), Chinese research station (Zhongshan) and Russian research stations(Progress) were established within the area of 3 km from each other on eastern broknes. After that there was rapid infrastructure development in the area and further scientific research and the potential for tourist visits resulted in notable localised alteration of the environment, ultimately affecting the biodiversity. The Antarctic environment / climate is highly susceptible to the impacts of human activities and has much less natural ability to recover from disturbance than the environment of other continents. These changes ultimately affect the environment and growth of organisms. Larsemann Hills represent the southernmost coastal oasis contains diverse flora and fauna. In flora -

Bryophytes, Lichens and Algae were observed. Among algae mainly Cosmarium, Diatoms, Dinoflagellates and Cyanobacterial mats were observed from different water bodies and terrestrial habitats. As for as fauna is concerned breeding sea bird like Snow petrels, Wilson's Storm Petrel, South polar Skuas was found. Besides this, Seals, Adelie Penguin and Emperor Penguin were occasionally observed in Larsemann Hills area. However, very little is known about the terrestrial micro fauna. In lakes and streams species of protozoans, platyhelminths, rotifers, tardigrades, nematodes, arthropods, etc. have been reported.

Key words- Antarctica, Larsemann Hills, Environment, Plant and Animal Diversity, Biodiversity, Freshwater Lakes.

1. **प्रस्तावना**– अंटार्कटिका हिमाच्छादित, अत्यन्त ठण्डा, सूखा एवं वातावरण में सूखापन आर्द्रता के बर्फ बनने के कारण होता है। विश्व का पाँचवा सबसे बड़ा महाद्वीप है। यह प्रकृति का सबसे बड़ा प्राकृतिक उपहार है। यह महाद्वीप वैज्ञानिकों को अध्ययन हेतु अपनी ओर आकर्षित करता है। यहाँ पर 1 दिसम्बर से 28 फरवरी तक गर्मी(गर्मी का अधिकतम तापमान 5–8^{0}से0 रहता है), 1 मार्च से 30 नवम्बर तक सर्दियों का मौसम रहता है यहाँ 6 महीने का दिन एवं 6 महीने की रात होती है। यहाँ पर कोई भी स्थायी रूप से नहीं रह सकता।

2. **लार्सेमान हिल्स**– लार्सेमान हिल्स दक्षिणी ध्रुव का कम हिमाच्छादित, दक्षिण पूर्वी क्षेत्र है। इसके दक्षिण–दक्षिण पूर्वी क्षेत्र हल्की, लहरदार, स्थलाकृति मिलकर बर्फ से ढक जाती है। यह तीनों ओर से समुद्र से घिरा हुआ है। लार्सेमान हिल्स में दो मुख्य प्रायद्वीप हैं– स्टोनीस एवं ब्रोकनीस साथ में अन्य प्रायद्वीप एवं फैले हुये दूर तटीय द्वीप समूह हैं। 40 कि0मी0 की परिधि में लार्सेमान हिल्स मुख्य चार कम हिमाच्छादित मरूद्यान में दूसरे स्थान पर है। लार्सेमान हिल्स में 150 से अधिक स्वच्छ जल की झीलें हैं।[1] जिसमें छोटे क्षणभंगुर तालाब से लेकर बड़े जलाशय जैसे प्रोगरेस झील आते हैं। गर्मी के महीनों में इनमें से कुछ जलाशयों में जलाशयों का कुछ भाग बर्फ रहित होता है या लगभग आधा जल, आधा बर्फ रहता है। गर्मी के महीने के अतिरिक्त लगभग 8–10 महीने में जलाशय 2 मी0 तक बर्फ से ढके रहते हैं। यहाँ की झीले बहुत महत्वपूर्ण हैं। यह सामान्य प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र और भौतिक, रासायनिक एवं जैविकी के लिये संवेदनशील होती हैं। इलीस–इवान्जस इत्यादि[2] ने बताया कि लार्सेमान हिल्स की झीलों में अधिक विविधता जीव विज्ञान संबंधी एवं भौतिकी के चिन्ह पाये गये जिससे पूर्व के पर्यावरण के बारे में जानकर कोई राय बनायी जा सके या किसी निष्कर्ष पर पहुँचा जा सके। पूर्व ब्रोकनीस प्रायद्वीप की कुछ झीलें एवं लार्सेमान हिल्स क्षेत्र की अन्य झीलों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्व है एवं गर्मी के मौसम में सूक्ष्म जलवायु की स्थिति एवं स्वच्छ जल की झीलें, जीवों के रहने योग्य वातावरण बनाते हैं। लार्सेमान हिल्स की जैव–विविधता पर दूसरे देशों के वैज्ञानिकों ने अध्ययन किया है लेकिन भारतवर्ष के वैज्ञानिकों द्वारा बहुत कम कार्य किया गया क्योंकि भारतीय रिसर्च स्टेशन **भारती** मार्च 2012 में ही बनकर तैयार हुआ है।

3. **पादप एवं जन्तु समूह विविधता**– लार्सेमान हिल्स के तटीय मरूद्यान में विविध पादप एवं जन्तु समूह पाये जाते हैं। पादप समूह में जैसे हरितोदभिद, शैवाक, शैवाल। शैवाल में मुख्यतः कॉसमेरियम, डायटम, डायनोफ्लेजिलेट एवं सायनोजीवाणु के जाल विभिन्न जलाशयों एवं स्थलीय प्राकृतिक वास स्थान से पाये गये। जन्तु समूह में प्रजनन समुद्री चिड़िया जैसे *पागोड्रमा नाइविआ*(स्ट्रोम पीट्रएल), *ऑसिएनाइट्स ऑसिएनिकस*(विलसनस्ट्रोम पीट्रएल), *काथारेक्टा मार्कोमिकी* (साउथ पोलर स्कुआ), पायी गयी। इसके अतिरिक्त *लेप्टोनयकॉट्स वीडडेली* (वीडेल सील), *पाइगास्कोलिस एडिली* (एडली पैंगुईन) एवं *एप्टीनोडायटिस फार्सटेरी*(इमपरर पैंगुईन) यदा–कदा ही लार्सेमान हिल्स क्षेत्र में देखने को मिलती हैं। यहाँ के स्थलीय सूक्ष्म जन्तु समूह के बारे में बहुत कम ज्ञात है फिर भी यहाँ की झीलों एवं जल स्त्रोतों से प्रोटोजोअन्स, प्लेटीहेलमिन्थस, रोटीफर्स, टार्डीग्राडेस, निमेटोड्स, आर्थोपोड्स, इत्यादि प्रतिवेदित हैं।

4. **हरितोदभिद**– लार्सेमान हिल्स से हरितोदभिद की 8 जातियां प्रतिवेदित हैं जिनमें 7 जातियां *ब्रयम ऐलगेन्स, ब्रयम अर्जेनटीयम, ब्रयम स्यूडोट्राइक्वेट्रम, सीराटोडॅन परपुरिअस, ग्रीमीआ अंटार्कटिकार्ड, ग्रीमीआ लावीआना, सार्कोनीयूरम ग्लासीअले* मास की हैं एवं 1 जाति–*सिफैलोजीएला एक्झलीफ्लोरा* लीवरवर्ट की पायी गयी।[3]

5. **शैवाक**– लार्सेमान हिल्स से शैवाक की 27 जातियां प्रतिवेदित हैं[4], जिनमें 20 जातियां– *एक्रोस्पोरा गवयनाई, आर्थोनिआ लेपिडीकोला, बुऐलिआ फ्रीजीडा, बुऐलिआ ग्रीमोरइ, क्लोप्लेका आथ्रेलीना, कालोप्लेका सिट्रीना, कालोप्लेका लुइस–स्मिथाई, कालोप्लेका सक्सीकोला, कानडेलेसीएला प्लावा, काब्रोनिआ वर्टीकोसा, ह्यूइआ कॉरालीगेरा, लीकानोरा एक्सपेक्टान्स, लीकानोरा जियोफीला, लीसीडिआ कानक्रीकॉर्मिस, लीसीडीला पाटावीना, लीसीडीला साइप्लीइ, राइजोप्लाका मीलानोकथालमा, राइनोडीना ऑलीवेरिआओब्रनीआ, राइनोडीना पिलोलीफ्रका, सर्कोगाइन प्रीविग्ना क्रसाटोस,* 05 जातियां–*फिससिआकेसिआ, फिससिआ डुबीआ, अमबीलीकारिआ डेक्यूसाटा, जेन्थोरिआ एलीगेन्स, जेन्थोरिआ मावउसोनाई फॉलीओस* एवं 02 जातियां–*स्यूडोफीबी माइनसकुला* एवं *उसनिआ अंटार्कटिका फ्रक्टोस* शैवाक की पायी गयी।

6. **शैवाल**– लार्सेमान हिल्स की झीलों से डायटम की 7 जातियां प्रतिवेदित हैं– *डायडेसमिस कॅस्टी, डायडेसमिस लांगीबेर्टालीटी, डायडेसमिस सबअंटार्कटिका, डायटोमेला बालफोउरीआना, सामोथीडीयम मार्जीनूलाटम, गोम्फोनीमा पार्वुलम, प्लेनोथीडीयम डेलीकेटुलम* ।[5-6] पादप प्लवक में यहाँ की झीलों में पाये जाने वाले प्रायः स्वपोषी नेनोफ्लेजीलेट्स डायनोफ्लेजीलेट्स, डेसमिड सम्मिलित हैं। यहाँ की छिछली झीलों का अध्ययन करने से यह ज्ञात हुआ है कि यहाँ स्वपोषी नेनोफ्लेजीलेट्स की तुलना में परपोषी नेनोफ्लेजीलेट्स ज्यादा हैं जो कम जाति विविधता को दर्शाते हैं। *परफाइसोमोनास* प्रायः छिछली झीलों में पाया जाता है। होलियोफयरा की जातियाँ यहाँ की बहुत सी झीलों में पायी जाती हैं। *कॉसिनोडिसकस, ईपीथीमिआ, निश्चिया, थालासीओसिरा, ॲसीलोटोरिआ* एवं *कीटोसीरोस* लार्सेमान हिल्स की झीलों से प्रतिवेदित हैं।

7. **समुद्री चिड़िया**– लार्सेमान हिल्स क्षेत्र समुद्री चिड़ियों के लिये सुरक्षित प्रजनन स्थल है। समुद्री चिड़िया जैसे स्नो पीट्रल *(पागेड्रॅमानाइविआ)*, विलसन स्ट्रोम पीट्रएल(*ऑसिएनाइटिस ऑसिएनिकस*) एवं वीडेल सील(*लेप्टोनयकॉट्स वीडडेली*) प्रजनन हेतु समुद्र के किनारे आ जाती हैं। ये तीनों समुद्री चिड़ियों की जातियां लार्सेमान हिल्स के पूर्व ब्रोकनीस प्रायद्वीप में प्रजनन करती हैं लेकिन इनका वितरण अन्य बचे हुए क्षेत्र में निश्चित नहीं है। इनके अतिरिक्त एडली पैंगुईन(*पाइगोस्सेलिस एडिली*) एवं इमपरर पैंगुईन(*एप्टीनोडायटिस फॉर्सटेरी*) कभी–कभी ही लार्सेमान हिल्स क्षेत्र में देखने को मिलती हैं क्योंकि इनकी प्रजनन बस्ती इस क्षेत्र में नहीं है।

8. **सील्स**–अवीडेल सील्स(*लेप्टोनयकॉट्स वीडडेली*) लार्सेमान हिल्स समुद्र तट पर बहुत है। कार्बिऐटर सील्स(*लोबोडॅन कार्सिनोफागस*) एवं लिओपार्ड सील्स(*ह्राडुर्गा लेप्टोनिक्स*) इस क्षेत्र में कभी–कभी देखे जाने वाले पर्यटक हैं।

9. **स्थलीय सूक्ष्म जन्तु समूह**– लार्सेमान हिल्स के स्थलीय सूक्ष्म जन्तु समूह पर अभी तक बहुत कम अध्ययन कार्य हुआ है। रोटीफर की जातियां(*मोनोगोनोन्टा* एवं *बीडीलॅइडिआ)*, टाडीग्राडेस, आर्थोपोड्स, प्रोटोजोन्स, प्लेटीहेलमिन्थस एवं निमेटोड्स प्रतिवेदित हैं।[7] रोटीफर्स छुटपुट रूप से यहाँ की बहुत सी झीलों में पाये जाते हैं। *क्लेडोसिरान डेफनीऑपसिस स्टूडेराई* यह स्वच्छ जलीय क्रसटेशियन में से एक है जो अंटार्कटिका महाद्वीप में पायी जाती हैं। लार्सेमान हिल्स की बहुत सी झीलों से इसको पहचाना गया है।

10. **प्रोटोजोआ**– प्रोटोजोआ की जातियां यहाँ से स्कैडेन्ट, डिस्कसन, सिबथोर्पी प्रोगरेस, राइड एवं चार बिना नाम की झीलों से प्रतिवेदित हैं। इन्हें स्वच्छ जल की झीलों की तलहटी में देखा गया है।

11. **प्लेटीहेलमिन्थस**– इसका अकेला नमूना स्वैनड्रेट एवं बिना नाम की झीलों के तलछट से प्राप्त किया गया।

12. **टार्डीग्राडा**– टार्डीग्राडा की दो जातियां यहाँ के स्वच्छ जल से प्रतिवेदित हैं। *हेफीलेसियम टार्डीग्राडम* को स्थलीय मास से स्कैनड्रेट झील के किनारे से प्राप्त किया गया है। स्थलीय टार्डीग्राडा के पांच वंश *ह्यसीबियस, मिनीबीऑटस, डाईफेस्कॅन, मिलनेसियम* एवं *स्यूडीसीनीसकस* वनस्पति से संबंध प्रतिवेदित हैं।

13. **रोटीफर्स**– लार्सेमान हिल्स की विभिन्न झीलों से रोटीफर्स की 17 जातियां– *सिफालोडेला स्टेरिआ, सिफालोडेला वेन्ट्रीपेस, कोलोथीकाओनाटे कर्नुटा, एनसेनट्रम मरटेला, ऐनसेन्ट्रम स्पाटीटियम, इपीफेनेस सेन्टा, लीपाडेला पाटेला, लीपाडेला एक्यूमिनाटे, नॅथोलका स्पी0, टायगुरा क्रिस्टालीन, रेस्टीकुला जीलीडा, एडीनेटा ग्रान्डिस, एडीनेटा स्पी0, हेब्रोट्रोका कॅनस्ट्रिक्टा, फीलोडीना ग्रीगारिआ* एवं *फीलोडिना* की दो जातियां प्रतिवेदित हैं।

14. **नीमेटोड्स**– लार्सेमान हिल्स में बर्फ की चट्टान के समीप किनारे से निमेटोड्स के प्रमुख वंश *टारचीलीनगिआ, अराइओलाइमस, एक्जनोलाइमस, क्रोमाडेरिना, डाप्टोनीमा, हालालीमस, परालीनहोमिअस, सबाटीएरिआ, स्टीफेनोलाइमस, स्फारोलाइमस,* एवं *थेरिस्टम* पाये गये।[8]

15. **आर्थोपोडा**– आर्थोपोडा की दो जातियां– क्लोसिरान *डाफनिऐपसिस, स्टूडेराई* एवं *कॉपीपीड एकेनथोसाइक्लोप्स मिर्नई* को स्वच्छ जलीय झील से सबसे बड़ी संख्या में प्रचुरता से प्राप्त किया गया। यह जातियां सामान्यतः उप अंटार्कटिक द्वीप के दक्षिणी इण्डियन ओशन से प्रतिवेदित है। *एकेनथोसाइक्लोप्स मिर्नई* को प्रथम बार बनगर हिल्स से प्राप्त किया गया।[9]

16. **निष्कर्ष**– भारत ने अंटार्कटिका में अपने नवीन शोध केन्द्र भारतीय रिसर्च स्टेशन "भारती" की स्थापना लार्सेमान हिल्स क्षेत्र में मार्च 2012 में की जहाँ लगभग विज्ञान की सभी विधाओं के अध्ययन सम्बन्धित विषय विशेषज्ञों द्वारा किये जा रहे हैं। पादप एवं जन्तु समूह के अध्ययन अभी अत्यन्त प्रारम्भिक अवस्था में हैं। यहाँ के पादप एवं जन्तु समूह के अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि यहाँ के पादप समूह में हरितोदभिद, शैवाक एवं शैवाल की विभिन्न जातियां पायी गयी। जन्तु समूह में अकशेरूकी में प्रोटोजोआ, प्लेटीहेलीमेन्थीस, रोटीफर, टार्डीग्रेड्स, निमेटोड, जलीय आर्थोपोड्स, इत्यादि की विभिन्न

जातियां एवं कशेरूकी में कुछ जातियां पक्षियों की एवं स्तनधारियों की पायी गयीं। अंटार्कटिका के लार्सेमान हिल्स क्षेत्र के पादप एवं जन्तु समूह का अध्ययन इसलिये भी बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि मानवजनित गतिविधियों के कारण यहाँ के पादप एवं जन्तु समूह में बदलाव उत्पन्न हो रहे हैं। मानवजनित गतिविधियों पर यदि प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया तो यहाँ की जैव विविधता गंभीर रूप से प्रभावित होगी।

आभार– मैं डॉ0 पी0 सिंह, निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता एवं निदेशक, एन0सी0ए0ओ0आर0, गोवा के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने मुझे अध्ययन हेतु भारतीय अभियान दल के साथ जाने की अनुमति एवं आवश्यक सुविधायें प्रदान की।

सन्दर्भ

1. गिलीसन, डी0, बर्गेसजस, एस0, स्पाटिआ तथा कॅक्रानेई(1990) एन एटलस ऑफ लेक्स ऑफ द लार्सेमान हिल्स, प्रिन्सेस ऐलीजाबेथ लैंड, अंटार्कटिका, अनारे रिसर्च नोट, नं0 74, 1–173।
2. इलीस–इवान्जस, सी0; लेयबॅमर्न–परजीर, वाई0 बी0; अयलीस्प तथा पेरीस, जे0(1998) फिजिकल, कैमिकल एवं माइक्रोबिअल कम्यूनिटी केरेक्टरस्टिक्स ऑफ लेक्स ऑफ द लार्सेमान हिल्स कॉनटीनेन्टल अंटार्कटिका आर्कीब फल हायड्रोबायोलोजी, खण्ड–141, मु0पृ0 209–230।
3. आस्मा(2007) मेनेजमेन्ट प्लान फॉर अंटार्कटिक स्पेशियली मैनेज्ड एरिआ नं0 6 लार्सेमान हिल्स, ईस्ट अंटार्कटिका। मेसर 2, ऐनेक्स बी0।
4. राय, एच0; खरे, आर0; नायक, एस0; उपरेती, डी0 के0 एवं गुप्ता, आर0 के0(2012) लाइकेन सायनुसिएइ इन ईस्ट अंटार्कटिका(शर्माकर ओऐसिस एण्ड लार्सेमान हिल्स): सबस्ट्रेटम एण्ड मार्फोलॉजिकल प्रिफरेन्सेस। चेज पोलर रिपोर्ट, खण्ड–1, अंक–2, मु0पृ0 65–77।
5. साबे, के0; वर्लेयन, ई0; हॅडगसन, डी0 ए0; वानहाउटी, के0 एवं वयवरमैन, डब्लू0(2003) बेन्थिक डायटम फ्लोरा ऑफ फ्रेशवाटर एण्ड सेलाइन लेक्स इन द लार्सेमान हिल्स एण्ड राउएर आइसलैंण्ड, ईस्ट अंटार्कटिका। अंटार्कटि0साइ0 खण्ड–15, मु0पृ0 227–248।
6. साराह, ए0 स्पाउलडिंग; बार्ट वान डी0 वूवर; डॅमिनिक ए0 हॅडगसन; डायनी एम0 मेकनाइट; इलई वर्लीमेन तथा ली स्टेनिश(2010) डायटम्स ऐज इन्टीकेटरर्म ऑफ इनवायर्मेन्टल चेन्ज इन अंटार्कटिक एण्ड सबअंटार्कटिक फ्रेशवाटर। इन द डायटम्स: एप्लीकेशन फॉर द इनवायर्मेन्टल एण्ड अर्थ साइंसेस, द्वितीय ऐडीशन, एडग। सोनॅल, जोन पी0 एण्ड स्ट्रोएर्मर, यूजीनी एफ0 केम्ब्रिज यूनीवर्सिटी प्रेस, खण्ड–14 मु0पृ0 267–283।
7. डार्टनाल हरबर्ट, जे0 सी0(1995) रोटीफर्स एण्ड अदर एक्वेटिक इनवर्टीब्रेट्स फ्राम द लार्सेमान हिल्स, अंटार्कटिका, पेपर्स एण्ड प्रोसीडिग्स ऑफ द रॉयल सोसाइटी ऑफ टासमानिआ, खण्ड–129, मु0पृ0 17–23।
8. इनगोल बी0 एवं सिंह, आर0(2010) बायोडायवर्सिटी एण्ड कम्यूनिटी स्ट्रक्चर ऑफ फ्री लिविंग मैरीन निमेटोण्ड् फ्राम द लार्सेमान आइस शेल्फ, ईस्ट अंटार्कटिका: करेन्ट साइंस, खण्ड–99, अंक–10, मु0पृ0 1413–1419।
9. कोरोटकेविच, वाई0 एस0(1959) नासालाईनीं वोकमोवॉजीसॅ वीं एस्टोचोनॅय अंटार्कटाइड, इनफ0 बुल0 सोव0 अंटार्कट0 इक्सपेड0, खण्ड–3, मु0पृ0 91–98(ट्रासलेटेड डन दू इंगलिश 1994 रूकनसर्निंग द पोपूलेशन ऑफ वाटर बॉडीस इन द ओएसिस ऑफ ईस्ट अंटार्कटिका,सोव0 अंटार्कट0 इक्सपेड0 इन फ0 बुल0, खण्ड–1, मु0पृ0 154–161।

इण्डियन रिसर्च स्टेशन–भारती, लार्सेमान हिल्स, अंटार्कटिका

लार्सेमान हिल्स, अंटार्कटिका में शैवाल

लार्सेमान हिल्स, अंटार्कटिका में हरितोद्भिद

लार्सेमान हिल्स, अंटार्कटिका में शैवाक

लार्सेमान हिल्स, अंटार्कटिका में झील से पादप प्लवक जाल की सहायतासे शैवाल का नमूना संग्रह करते हुये

काथारेक्टा मार्कोमिकी(साउथ पोलर स्कुआ)

पागोड्रैमानाइयिआ(स्नो पीट्रल)

ऑसिएनाइट्स ऑसिएनिकस (विलसन स्ट्रोम पीट्रएल)

लेप्टोनयकॉट्स वीडडेली (वीडेल सील)

पाइगास्केलिस एडिली (एडली पैंगुईन)

एप्टिनोडाइटिस फार्सटेरी (इम्परर पैंगुईन)

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 48–52, D.O.I. : 10.22445/avsp.v4i1.4377 समीक्षा एवं तकनीकी आलेख

डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम द्वारा डाटा का उचित प्रबंधन एवं सुरक्षा

[1]राकेश कुमार सिंह और [2]रंजन सिंह
[1]वैज्ञानिक–डी (सूचना प्रौद्योगिकी), गोविंद बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान,
कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा, उत्तराखंड, भारत
[2]एम.सी.ए. छात्रा, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत
rksingh@gbpihed.nic.in, ranjan418@yahoo.com

प्राप्त तिथि– 26.05.2016; स्वीकृत तिथि– 22.08.2016

सार– आजकल विभिन्न संस्थाओं में डाटा और सूचना को सुरक्षित स्टोर करना काफी महत्वपूर्ण हो गया है। सूचनाओं को लेकर हम सबकी यही अपेक्षा होती है कि माउस के एक क्लिक द्वारा ही सूचनाओं का भंडार हमारे सामने आ जाये। ऐसे में डाटाबेस हमारे लिये अति आवश्यक विधा है। तमाम सूचनाओं को एक जगह रखने में डाटाबेस की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम(डीबीएमएस) कम्प्यूटर प्रोग्राम्स का संग्रह है जो यूजर को डाटाबेस की रचना करने, मेनिप्यूलेट करने व उसका रख–रखाव करने की क्षमता प्रदान करता है।

बीज शब्द– डाटा, इन्फॉरमेशन, डाटाबेस, डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम, सापटवेयर, स्कीमॉस, डीडीएल, डीएमएल।

Efficient Management and Security of Data by Data Base Management System (DBMS)

[1]Rakesh Kumar Singh and [2]Ranjan Singh
[1]Scientist-D, Information Technology, Govind Ballabh Pant Himalaya Paryavaran & Development Institute, Kosi-Katarmal, Almora-263601, Uttarakhand, India
[2]M.C.A. Student, I.G.N.O.U., New Delhi, India
rksingh@gbpihed.nic.in, ranjan418@yahoo.com

Abstract

Nowadays, it is very important to securely store data and informatin in various institution. With respect to information, everyone wishes that by a click of the mouse, all the desired and stored information come to the front. Database is very important for us to work with the information. Database plays an important role in keeping all the information in one place. Database Management System (DBMS) is a collection of computer programs which provides the ability to the user to create, manipulate and maintain database.

Key word- Data, Information, Database, DBMS, Software, Schema, DDL, DML.

1. **डाटा और डाटाबेस का संक्षिप्त परिचय–** डाटा शब्द का शाब्दिक अर्थ है आंकड़े एकत्रित करना लेकिन कम्प्यूटर के क्षेत्र में यह विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है इसका अर्थ है कुछ तथ्य, अंक और सांख्यिकी का समूह जिस पर प्रक्रिया करने से अर्थपूर्ण सूचना प्राप्त होती है जैसे किसी स्थान के पूरे महीने के तापमान के आकड़े एक जगह रखें तो वह मासिक तापमान का आकड़ा होगा, यानि तापमान डाटा, कभी–कभी डाटा को रॉ डाटा भी कहा जाता है। इसका मतलब हुआ ऐसा डाटा जिस पर अभी कोई भी प्रक्रिया नहीं हुई है, लेकिन डाटा शब्द का उपयोग हमेशा गणितीय आंकड़ों के सन्दर्भ में ही हो यह कोई आवश्यक नहीं हैं अक्सर चित्र, वीडियो, फाइल, फोटो, डॉक्यूमेंट आदि भी डाटा कहे जाते है। डाटाबेस व्यवसाय, स्वास्थ्य, शिक्षा, सरकार और पुस्तकालय सहित सभी प्रकार के संगठनों में डाटा को स्टोर, मेनिप्यूलेट, तथा रिट्राइव करने के लिए प्रयुक्त होता है तथा कर्मचारी संगठन में डिरिट्रब्यूटेड एप्लिकेशन द्वारा डाटाबेस को एक्सेस करते हैं। कम्प्यूटर की भाषा में डाटाबेस का मतलब होता है संबंधित डाटा का संग्रह। उदाहरण के लिए विश्वविद्यालय अपने छात्रों से सम्बन्धित सभी सूचनाएं, जैसे नाम, रोल नंबर, पता, मार्क्स आदि अपने डाटाबेस में स्टोर रखता है। आजकल ऑनलाइन बैंकिंग, एटीएम, ऑनलाइन आरक्षण जैसी सुविधाओं में डाटाबेस का खास योगदान होता है। इनके तहत तमाम सूचनाएं डाटाबेस में स्टोर रहती है, जिन्हें अपनी सुविधानुसार एक्सेस किया जाता है। आपने देखा होगा कि भले ही आपका बैंक एकाउंट कहीं भी हो, आप कहीं से भी उसे एक्सेस कर आवश्यक सूचनाएं प्राप्त कर सकते हैं। डाटाबेस में ऑडियों, वीडियों, ग्राफिक्स, इमेज आदि सभी प्रकार की सूचनाएं संचित की जा सकती है।

2. **डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम(डीबीएमएस)–** डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम को आम तौर पर हम डीबीएमएस के नाम से भी जानते हैं। डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम(डीबीएमएस) एक ऐसा सॉफ्टवेयर है जो डाटाबेस को परिभाषित करता है, डाटा को

स्टोर करता है, क्वैरी भाषा को सपोर्ट करता है, रिपोर्ट बनाता है, और डाटा इन्ट्री स्क्रीन बनाता है। इसलिए डीबीएमएस एक जनरल पर्पस सॉफ्टवेयर सिस्टम है जो विभिन्न एप्लिकेशन्स के लिए डाटाबेस को बनाने की, मेनिप्यूलेट करने की व परिभाषित करने की प्रक्रिया को सरल व सुगम बनाता है। डीबीएमएस डाटा शेयरिंग और डाटा सिक्योरिटी को भी हैंडल करता है। रिलेशनल डाटाबेस में विभिन्न टेबलों का प्रयोग किया जाता है। इसके अंतर्गत डाटा को टेबल के रूप में स्टोर किया जाता है और विभिन्न तालिकाओं को आपस में जोड़ा जाता है। ओरेकल रिलेशन डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम का प्रमुख उदाहरण है। ऑब्जेक्ट ओरिएंटेड डाटाबेस में इन्फॉर्मेशन को ऑब्जेक्ट्स के रूप में एकत्रित किया जाता है। नॉलेज बेस भी एक विशेष प्रकार का डाटाबेस होता है, जिसका उपयोग नॉलेज मैनेजमेंट के लिए किया जाता है। आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस और एक्सपर्ट सिस्टम में इसका उपयोग होता है।

3. **डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम के प्रमुख भाग–** डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम(डीबीएमएस) कम्प्यूटर प्रोग्राम्स का संग्रह है जो यूजर को डाटाबेस की रचना करने व उसका रख–रखाव करने की क्षमता प्रदान करता है। डीबीएमएस के चार प्रमुख भाग होते हैं–

डाटा– तथ्य, अंक और सांख्यिकी का समूह जिस पर प्रक्रिया करने से अर्थपूर्ण सूचना प्राप्त होती है। डाटा के दो प्रमुख गुण होते हैं– इन्टीग्रेटेड तथा शेयर्ड। इन्टीग्रेटेड से आशय है कि डाटाबेस कई फाईलों का यूनिफिकेशन है, जो कि अलग–अलग है, और कोई भी समानताएं पूर्णतः या आंशिक रूप से मिटा दी जाती है। शेयरिंग का अर्थ है कि डाटा का व्यक्तिगत भाग जो विभिन्न यूजर्स द्वारा आपस में बाँटा जा सकता है, और यूजर्स एक ही डाटा को अलग–अलग कार्य के लिए एक ही समय पर प्रयोग कर सकते हैं।

हार्डवेयर– सेकेण्डरी स्टोरेज वाल्यूम जैसे मूविंग हेड, डिवाइस कंट्रोलर, इनपुट–आउटपुट चैनल्स, और मेग्नेटिक डिस्क, जो डाटा को एक साथ थामे रखने के उपयोग में आती है, आदि से मिलकर हार्डवेयर बनता है। प्रोसेसर और एसोसिएटेड मुख्य मेमोरी, जिनका प्रयोग डाटाबेस सिस्टम सॉफ्टवेयर के संपादन का सपोर्ट करने में होता है।

सॉफ्टवेयर– फिजिकल डाटाबेस और उसके यूजर के मध्य की एक परत होती है, जिसे डीबीएमएस कहा जाता है। यूजर्स द्वारा डाटाबेस को एक्सेस करने हेतु, किये गये सभी आग्रहों को डीबीएमएस हैंडल करता है।

यूजर– डाटाबेस डिजाइनर वे व्यक्ति हैं जो डाटाबेस में स्टोर किये जाने वाले डाटा को पहचानने में सक्षम है। डाटाबेस एडमिनिस्ट्रेटर वह व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह है, जो संगठन के डाटा संबंधी नीतिगत निर्णय लेता है, और इन निर्णयों को लागू करने हेतु आवश्यक तकनीकी समर्थन प्रदान करता है। इस प्रकार यह वह व्यक्ति है जिसका सिस्टम पर पूर्णतः नियंत्रण होता है। एप्लिकेशन प्रोग्रामर(सिस्टम एनेलिस्ट), अंतिम यूजर की आवश्यकताओं को तय करता है, और इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए निर्धारणों को विकसित करता है। एप्लिकेशन प्रोग्राम्स इन निर्धारणों को प्रोग्राम की तरह लागू करता है, और फिर इन ट्रांजेक्शन को टेस्ट, डिबग, डॉक्यूमेंट और मेन्टेन करता है। एन्ड यूजर, अंतिम यूजर है जो डाटाबेस का उपयोग क्वैरिंग, अपडेटिंग और रिपोर्ट जनरेटिंग के लिए करते हैं।

4. **डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम की भाषाएँ**

डाटा डेफिनेशन लेंग्वेज– इसका उपयोग डाटा स्ट्रक्चर, टेबल, व्यू और इन्डाइसिस को परिभाषित करने हेतु होता है। इसमें डाटा डिक्शनरी भी होती है।

डाटा मेनिप्यूलेशन लेंग्वेज(डीएमएल)– इसका प्रयोग डाटा के इन्जर्शन, डिलीशन, मॉडिफिकेशन के लिए, टेबल से जानकारी को रिट्रीव करने के लिए होता है। यह दो प्रकार की होती है–

प्रोसिजरल डीएमएल– इसमें यूजर व्यक्तिगत रिकॉर्ड्स प्राप्त करता है या ऑब्जेक्ट्स को डाटाबेस से प्राप्त करता है और उसे अलग से प्रोसेस करता है। यूजर यह निर्धारित करता है कि उसे किस प्रकार का डाटा चाहिए और कैसे।

नॉन–प्रोसीजरल डीएमएल– इसमें यूजर यह निर्धारित करता है कि उसे किस प्रकार का डाटा चाहिए, पर यह निर्धारित नहीं कर सकता कि वह डाटा कैसे प्राप्त किया जाए।

डाटा कंट्रोल लेंग्वेज– इसका उपयोग यूजर को डाटाबेस तक एक्सेस करने में नियंत्रित करने के लिए होता है। डाटाबेस को सभी सुरक्षाएं डाटा कंट्रोल लिंग्वेज द्वारा प्रदान की जाती हैं।

5. **डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम की संरचना**

आन्तरिक स्तर– इस स्तर में, यह डाटाबेस के भौतिक संग्रहण संरचना का वर्णन करता है। वह डाटा संग्रहण की पूर्ण जानकारी का और डाटाबेस के लिए एक्सेस पाथ का वर्णन करता है। वह यह भी निर्धारित करता है कि कौन सी इन्डेक्सेस मौजूद हैं, स्टोर किए गए रिकॉर्ड किस क्रम में हैं आदि।

बाहरी स्तर– इस स्तर में, डाटा व्यक्तिगत यूजर द्वारा उपयोग में लाया जाता है। यह डाटाबेस के उस भाग का वर्णन करता है जो यूजर के लिए उपयोगी होती हैं। यह डाटाबेस की सूची को यूजर से छिपाता है। यह स्तर अलग–अलग यूजर के लिए अलग–अलग होता है।

विचार संबंधी स्तर– इस स्तर में, पूर्ण डाटाबेस की संरचना का वर्णन होता है। इसमें बाहरी स्तर से विचार संबंधी स्तर तक की मैपिंग होती है, और विचार संबंधी स्तर से आन्तरिक स्तर तक की मैपिंग होती है। यह स्तरों के मध्य जानकारी के रूपान्तरण की प्रक्रिया है। यह विचार संबंधी आंतरिक मैपिंग, कॉन्सेप्चुअल व्यू और स्टोर किए जा चुके डाटाबेस के मध्य अनुकूलता को परिभाषित करता है तथा यह भी निर्धारित करता है कि कॉन्सेप्चुअल रिकॉर्ड्स और फील्ड्स आन्तरिक स्तर पर कैसे प्रदर्शित किए जा सकते हैं। अगर स्टोर किए जा चुके डाटाबेस की संरचना बदलती है या डाटाबेस में कोई परिवर्तन किया जाता है, तब इसके अनुसार ही कॉन्सेप्चुअल आन्तरिक मैपिंग को भी परिवर्तित किया जाता है, ताकि कॉन्सेप्चुअल स्कीम अनुकूल रहे।

स्कीमॉस और इंटेन्सेस– डाटाबेस का वर्णन डाटाबेस स्कीमा कहलाता है, जो डाटाबेस डिजाइन के दौरान निर्धारित किया जाता है, और जिसके अधिक आवृति से बदलने की आशंका नहीं होती। डिस्प्ले किये गये स्कीमा को स्कीमा डिजाइन कहा जाता है। एक स्कीमा चित्र स्कीमा के केवल कुछ ही पहलुओं को दर्शाता है जैसे रिकॉर्ड टाइप्स के नाम, डाटा आइटम्स, और कन्सट्रैन्ट्स के कुछ प्रकार। डाटाबेस का वास्तविक डाटा अधिक आवृत्ति से बदलता है क्योंकि हर समय नये रिकॉर्ड की आवश्यकता होती है। डाटाबेस में एक विशिष्ट समय बिन्दु पर रखे डाटा को डाटाबेस में इन्सटेन्स कहा जाता है। इसे डाटाबेस स्टेट या स्नैपशॉट भी कहा जाता है। हर समय जब हम रिकॉर्ड को इन्सर्ट या डिलीट करते हैं या रिकॉर्ड में डाटा आईटम की वेल्यू को बदलते हैं तो डाटाबेस की एक स्टेट को दूसरी स्टेट में बदलते हैं, जिसे डाटाबेस स्टेट कहते हैं।

स्वतंत्रता– नॉन–डीबीएमएस सिस्टम पर लागू किए गए एप्लीकेशन्स डाटा आश्रित होते हैं अर्थात् वह तरीका जिससे सेकेण्डरी स्टोरेज पर संगठित किया जाता है, और उसे एक्सेस करने की तकनीक, दोनों ही बातें विचाराधीन एप्लीकेशन की आवश्यकताओं द्वारा वर्णित की जाती हैं। स्टोरेज स्ट्रक्चर या एक्सेस तकनीक को एप्लीकेशन को प्रभावित किए बिना परिवर्तित करना असंभव है।

6. **डाटाबेस मॉडल–** एक डाटा बेस माडल में 1:1, 1:एम, या एमःएम तीनों संबंध डाटा बेस की डाटा प्रबंधन नीति समान नहीं होती है वह भिन्न–भिन्न हो सकती है। तीन प्रकार के डाटा माडल उपलब्ध है–

हाइरारिकल या श्रेणीवार मॉडल– इस मॉडल को वृक्ष मॉडल भी कहा जाता है क्योंकि यह लगभग पेड़ के समान ही मॉडल होता है इस डाटा मॉडल में प्रत्येक एन्टिटी का उसके स्तर से एक ऊपर के स्तर केवल एक ही एण्टिटी से संबंध होता है। सबसे ऊपर के स्तर की एन्टिटी रूट होती है जो कि अपने से निचले स्तर पर स्थिति एन्टिटी पालक कहलाती है। जिस तरह से एक आदमी के कई बच्चे हो सकते हैं उसी तरह से प्रत्येक पालक एन्टिटी की कई अन्य एन्टिटी हो सकती है।

नेटवर्क या संजाल मॉडल– एक संजाल माडल में 1:1, 1:एम, या एमःएम तीनों प्रकार के संबंध एन्टिटी के मध्य हो सकते हैं, संजाल मॉडल समझने के लिये एक उदाहरण लेते हैं, एक ऑटो के कलपुर्जे बेजने वाली दुकान, एक से अधिक कलपुर्जे बनाने वाले करखानों से समान ले सकती है। कलपुर्जे बनाने वाला एक कारखाना यदि सिर्फ एक ही दुकान को अपना समान देता है तो वहाँ 1.1 संबंध होता है यदि एक कारखाना एक से कई दुकानो को समान देता है तो वह 1:एम संबंध होता है। यदि कई कारखाने कई दुकानों को अपना सामान देते है तो एमःएम संबंध होगा, यही संजाल संरचना कहलाती है।

रिलेशनल या संबंधित माडल– संबंधित मॉडल के अंतर्गत व्यवस्थित किये गये समस्त डाटा व उनके मध्य के अन्तः संबंधों को एक सपाट द्विआयामी, टेबल में दर्शाया जाता है। इस प्रकार के डाटा माडल में फाइल की प्रत्येक पंक्ति एक रिकार्ड को प्रदर्शित करती है, इसी के साथ एक कॉलम के अंतर्गत समान प्रकार की प्रविष्टियां इस प्रकार के माडल में होती हैं। इसके अतिरिक्त कोई भी दो पंक्तियों में समान प्रकार की प्रविष्टियां नहीं हो सकती हैं। इसे आरडीबीएमएस के नाम से भी जाना जाता है।

7. **डाटाबेस डिजाइन और विशेषताएँ–** कुछ वर्ष पूर्व तक प्रत्येक संस्थान का डाटा बेस उनके कम्प्यूटरों के अनुसार अलग–अलग प्रकार से व्यवस्थित होता था। लेकिन आज डाटा बेस को प्रबंधकीय सूचना प्रणाली का मानक माना जाता है और यह छोटे से छोटे कम्प्यूटर से लेकर बड़े–बड़े कम्प्यूटरों तक के लिये भी उपलब्ध है। मानक डाटा बेस स्वरूप के

क्रियान्वयन से पूर्व प्रत्येक संस्थान अपने प्रोग्राम बनाकर उनका व्यवस्थितीकरण व प्रबंधन किया करते थे। मानक डाटा बेस के आने से एक ही डाटा, संस्थान में कई तरह के उपयोगकर्ताओं के लिये सुलभ हो गया। वह प्रोग्राम जो मानक डाटा बेस बनाने व प्रबंधन की सुविधा देता है डाटा बेस मैनेजमैंट सिस्टम कहलाता है। डाटाबेस डाटा का तर्कसंगत संग्रह है। डाटाबेस किसी भी आकार का और अस्थिर रूप से जटिल हो सकता है। डाटा बेस की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं:

- ***फाईलों पर कार्य करने की सुविधा:*** सिस्टम के यूजर को फाईलों पर कई प्रकार के कार्य करने की सुविधा दी जाती है जैसे डाटाबेस में नई फाईलें जोड़ना, पहले से उपस्थित फाईलों में नया डाटा डालना, मौजूद फाईलों से डाटा प्राप्त करना, मौजूद फाईलों में डाटा को अपडेट करना, फाईलों से डाटा को डिलीट करना तथा डाटाबेस से मौजूद फाईलों को हटाना।
- ***दोहराव का नियंत्रण:*** यदि किसी प्रणाली में संबधित कुछ डाटा का दोहराव किया जाय तो वह अधिक मेमोरी लेगा व उसका दोहराव वाला भाग अनुपयोगी होगा। इसलिये डाटा बेस में डाटा संग्रहण केवल एक बार करना होता है। और उसे भिन्न–भिन्न कार्यों के लिये प्रयुक्त किया जा सकता है।
- ***उपयोग में आसान:*** डाटा बेस उपयोगकर्ता को बड़ी आसानी से उपयोग की सुविधा प्रदान करता है क्योंकि यह सीखने में अत्यंत आसान होता है। डाटा बेस में सुधार कार्य बड़ी सरलता से किये जा सकते है।
- ***डाटा स्वतंत्रता:*** डाटा बेस की सबसे बड़ी विशेषता उसका हार्डवेयर व सॉफ्टवेयर से स्वतंत्र होना है अर्थात डाटा बेस को किसी भी प्रकार के हार्डवेयर या प्रोग्राम द्वारा उपयोग में लाया जा सकता है।
- ***कम लागत पर अधिक सूचना:*** डाटा बैस, सूचना को संग्रहित करने, उसको सुधारने व उपयोग करने की सुविधा अत्यन्त कम लागत पर प्रदान करता है।
- ***एकात्मकता:*** डाटा बेस द्वारा व्यवस्थित किये गये डाटा को जो कि भले ही अलग–अलग फाइलों में उपलब्ध हो, बड़ी सरलता से एकीकृत कर उसका उपयोग किया जा सकता है।
- ***स्टैण्डर्डस लागू किये जा सकते हैं:*** डाटाबेस केन्द्रीय नियंत्रण के साथ, डीबीए यह सुनिश्चित कर सकता है कि डाटा के रिप्रेजेन्टेशन को स्टैण्डराइज करना, विभिन्न सिस्टम्स के मध्य डाटा के इन्टरचेंज में उपयोगी होता है।
- ***बैकअप और रिकवरी प्रदान करना:*** डीबीएमएस का बैकअप और रिकवरी सबसिस्टम, रिकवरी के लिए जिम्मेदार होता है। साथ ही रिकवरी सबसिस्टम यह भी सुनिश्चित करता है कि प्रोग्राम उसी बिन्दु से दोबारा प्रारंभ हो जहाँ पर वह रूका था ताकि इसका पूरा प्रभाव डाटाबेस पर रिकॉर्ड हो जाए।
- ***एप्लीकेशन डेवलपमेंट टाईम को कम करना:*** एक बार जब डाटाबेस तैयार हो जाता है, तब वह नये डाटाबेस की डिजाइनिंग और इम्प्लीमेंटिंग की अपेक्षा कम समय लेता है।
- ***सरलता (फ्लेक्सिबिलिटी):*** डीबीएमएस स्टोर किये जा चुके डाटा या उपस्थित एप्लीकेशन प्रोग्राम को प्रभावित किये बिना डाटा के स्ट्रक्चर में कुछ बदलावों की आज्ञा देता है।
- ***डाटा माडल:*** यह उन विचारों का संग्रह है जो डाटाबेस के स्ट्रक्चर के वर्णन करने में किये जा सकते हैं अर्थात् इसका उपयोग डाटा का वर्णन करने, डाटा के मध्य संबंधों का वर्णन करने, इन्टरफेस, डाटा सिमेन्टिक्स और कन्सिस्टैन्सी कन्सट्रेन्ट्स का वर्णन करने के कार्य के लिए होता है।

8. **डाटा सुरक्षा–** डाटा को सुरक्षित रखने का अर्थ है कि डाटा हर प्रकार के दूषित आचरण से मुक्त और इस प्रकार से नियंत्रित हो कि केवल अधिकृत यूजर्स ही इस तक पहुँच सकते हैं। व्यक्तिगत बैंक विवरण की जानकारी डाटा में समाविष्ट है। इसलिए सभी को डाटा सुरक्षित रखने की आवश्यकता है ताकि यह अनधिकृत यूजर्स के हाथ न लग पाए। विभिन्न प्रकार के डाटा को सुरक्षित रखने की पद्धतियाँ नीचे दी गई हैं–

- ***शेयर्ड इन्फॉरमेशन:*** यह सुनिश्चित कर ले कि विभाजित सूचना/शेयर्ड इन्फॉर्मेशन अधिकृत यूजर्स के द्वारा ही एक्सेस की जा रही है और कौन सा डाटा जनता के साथ बाँटना है और कौन सा नहीं यह भी स्पष्ट कर दें। सुनिश्चित करें कि अधिकृत उपयोगकर्ता ही साझा जानकारी तक पहुँच प्राप्त कर सकें एवं वह डाटा निर्दिष्ट करें जो जनता के द्वारा साझा किया जाना चाहिए एवं डाटा जो साझा नहीं किया जाना चाहिए। कई लोग इंटरनेट पर अपनी निजी एवं गोपनीय जानकारी को साझा रूप में रखते हैं। इसलिए इन लोगों को अपनी जानकारी, अनधिकृत उपयोगकर्ताओं के साथ साझा न करने का प्रशिक्षण प्रदान करना चाहिए।
- ***संप्रेषण के दौरान डाटा सुरक्षित रखना:*** संप्रेषण के दौरान डाटा सुरक्षा मे एनक्रिप्शन और प्रमाणिकता का समावेश होता है और एंड–टू–एंड यूजर भी अधिकृत होते हैं। दो संगणकों के बीच वास्तविक संचार के आरंभ होने से पहले जो गोपनीय जानकारी विभाजित की जाती है वह प्रमाणिकता है। सार्वजनिक कुंजी एनक्रिप्शन प्रमाणिकता का एक और अर्थ है जो उन दो कुंजियों की मदद से जो किसी और स्वरूप में दोनों सिस्टम्स के पास है, केवल प्राप्तकर्ता की प्रमाणिकता देता है और भेजने वाले की नहीं। आधुनिक संगणक उपयोगकर्ताओं द्वारा जबरदस्त फोर्स अटैक के माध्यम से कुंजी के बिना डाटा को आसानी से एनक्रिप्ट किया जा सकता है। इसलिये एनक्रिप्टेड डाटा की सुरक्षा के लिए कुंजी की लम्बाई इतनी होनी चाहिए कि अनुमान लगाना कठिन हो जाए। डाटा को एनक्रिप्ट करने से किसी को भी डाटा पाये जाने पर समझ मे आने योग्य तरीके से उसे पढ़ पाना किसी के लिए संभव नही होता है।
- ***डाटा बैकअप:*** ओरिजिनल डाटा का बैकअप किसी अन्य डिस्क या टेप में लेना डाटा सुरक्षित करने की अन्य पद्धती है। हार्ड डिस्क के असफल होने पर यूजर्स को ओरिजिनल डाटा निकालने में इससे मदद मिलती है। हम

मुख्य रूप से अपनी महत्वपूर्ण फाइलें बैकअप करने के लिए सीडी एवं डीवीडी का उपयोग करते हैं। क्या होता है जब वह सीडी एवं डीवीडी भ्रष्ट हो जाती है? उन सभी फाइलों को पुनःप्राप्त करने का यह एक समाधान है। रिकवरी टूलबॉक्स, जो सम्भवतः आपके कुछ क्षतिग्रस्त डाटा को, जो आपने सोचा हो कि सदैव के लिए मिट जाएगा, पुनःप्राप्त करने में मदद कर सकता है।

- ***वेब ब्राउजर के माध्यम से सुरक्षित करना:*** वेब ब्राउजर एप्लिकेशन के उपयोग से भेजा जा रहा डाटा यूआरएल देख कर सुरक्षित है यह सुनिश्चित कर लें। इस बात की सुनिश्चिती कर लें कि यूआरएल में प्रमाणिकता के लिए यह एचटीटीपीएस के स्थान पर एचटीटीपी का प्रयोग तो नहीं कर रहा।
- ***ईमेल प्रोग्राम को सुरक्षित करें:*** ईमेल प्रोग्राम सुरक्षित करें, संदेश भेजने एवं प्राप्त करने के लिए सार्वजनिक कुंजी एन्क्रिप्शन का उपयोग करें। यह अनुकूल रूप से काम करता है जब दोनों उपयोगकर्ता सुरक्षित ईमेल प्रोग्राम का उपयोग कर रहे हों अन्यथा उपयोगकर्ता को चाहिए कि वह बिना सुरक्षित ईमेल प्रोग्राम का उपयोग किए ई–मेल भेजे।
- ***सुरक्षित शेल:*** पहले, कंप्यूटर उपयोगकर्ता दूरस्थ प्रणालियों से संबंध स्थापित करने के लिए टेलनेट अनुप्रयोग का प्रयोग किया करते थे। हालांकि टेलनेट स्पष्ट रूप में जानकारी स्थानान्तरण करता है। इस समस्या से बचने के लिए सुरक्षित शेल की शुरूआत की गई है, जो डाटा एन्क्रिप्टेड रूप में भेजता है। यह एन्क्रिप्शन के लिए सार्वजनिक कुंजी गूढ़लेखन(क्रिप्टोग्राफी) का उपयोग करता है एवं यह गोपनीयता एवं डाटा अखंडता को भी सुनिश्चित करता है।
- ***विन्यास द्वारा डाटा सुरक्षित करना:*** जब वह डाटा नष्ट हो जाता है जिसकी उपयोगकर्ता को आवश्यकता नहीं है, डाटा को मिटाते समय सावधानी बरतनी चाहिए, ताकि एक अनधिकृत व्यक्ति द्वारा डाटा का पुनर्निर्माण न किया जा सके। जानकारी मिटानी एवं स्वरूपण करना यह सुनिश्चित नहीं करता कि डाटा सुरक्षित रूप से नष्ट किया गया है। डाटा को स्थायी रूप से हटाने के लिए कुछ सॉफ्टवेयर टूल्स उपलब्ध हैं, जो डाटा को पुनर्निर्मित होने से रोकते हैं। कुछ ऑपरेटिंग प्रणालियाँ स्वरूपण कमांड की इस प्रकार अनुमति देती हैं कि वह न केवल स्वरूपण करता है बल्कि उस जगह पर शून्य भी लगा देता है। वाइपिंग कार्यक्रम का उपयोग करना, डाटा को हटाने का सबसे आसान तरीका है, जो न केवल डिस्क को क्रमादेश करता है, बल्कि इसमें कुछ निरर्थक डाटा भी जोड़ देता है।

9. **निष्कर्ष**– अतः उपरोक्त तथ्यों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम(डीबीएमएस) कम्प्यूटर एवं सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक ऐसी तकनीक अथवा सॉफ्टवेयर है जिसकी सहायता से डाटा के उचित प्रबन्धन में बहुत सहायता मिलती है। डीबीएमएस के द्वारा बहुत ही कम समय में डाटा को रिट्राइव किया जा सकता है तथा डाटा की अधिक मात्रा होने पर भी इसे बहुत ही सरलता एवं सुगमता से डीबीएमएस के द्वारा आसानी से संग्रहित किया जा सकता है।

सन्दर्भ

1. https://hi.wikipedia.org
2. https://en.wikipedia.org/wiki/Data
3. https://en.wikipedia.org/wiki/Database
4. http://www.webopedia.com/TERM/D/database.html
5. https://en.wikipedia.org/wiki/Relational_database_management_system
6. http://www.webopedia.com/TERM/D/database_management_system_DBMS.html
7. http://www.tutorialspoint.com/dbms/dbms_architecture.htm
8. http://jcsites.juniata.edu/faculty/rhodes/dbms/dbarch.htm
9. http://searchsqlserver.techtarget.com/definition/relational-database-management-system
10.http://www2.amk.fi/digma.fi/www.amk.fi/opintojaksot/0303011/1142845462205/1142847774995/1142849037295/1143037341377.html

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 53–55, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4378 समीक्षा एवं तकनीकी आलेख

मधुमेह में योग का प्रभाव

अंजली वर्मा, तृप्ति मिश्रा, शिप्रा शुक्ला, महेश पाल एवं दलीप कुमार उप्रेती
पादप रसायन विभाग
सी0 एस0 आई0 आर0– राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान
राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drmpal.nbri@rediffmail.com

प्राप्त तिथि– 30.06.2016; स्वीकृत तिथि– 08.09.2016

सार– मधुमेह एक वैश्विक महामारी है और दुनिया भर में सबसे गंभीर नैदानिक तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्याओं में से एक है। मधुमेह में गंभीर विभिन्न माध्यमिक रोग उदाहरण के लिए रेटिना, नर्व, किडनी और हृदय रोग, मुक्त कण(free radicals) उत्पादन प्रमुख है। योग एक प्राचीन विज्ञान तथा हमारी संस्कृति की एक समृद्ध विरासत है। कई प्राचीन पुस्तकों में कुछ बीमारियों के इलाज और सामान्य व्यक्तियों के स्वास्थ्य संरक्षण में योग की उपयोगिता का उल्लेख पाया गया है। योग मधुमेह में ऑक्सीडेटिव तनाव के साथ ही अन्य जटिल विकारों को कम करने में एक प्रभावी उपचार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। योग, ग्लाइसेमिक मापदंडों और बॉडी मास इंडेक्स में सुधार करने में उपयोगी है। योग एक ऐड–ऑन चिकित्सा के रूप में मानक जीवन शैली के रूप में भी देखा जा सकता है। योग का लाभकारी प्रभाव केवल भारत में ही नहीं अपितु अमेरिका, ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया में भी अच्छी तरह से देखा जा सकता है, तथा सामान्य जीवन में भी इसे शामिल करने की कोशिश की जा रही है।

बीज शब्द– मधुमेह, योग, विज्ञान।

Effect of Yoga in Diabetes

Anjali Verma, Tripti Misra, Shipra Shukla, Mahesh Pal and Daleep Kumar Upreti
Department of Phyto-chemistry, C.S.R.I.-N.B.R.I.
Rana Pratat Marg, Lucknow-226001, U.P., India
drmpal.nbri@rediffmail.com

Abstract

Diabetes is a global epidemic, most common endocrine disorder and represents one of the most serious clinical as well as public health problems worldwide. Diabetic complication leads to various cellular or vascular damage to retina, nerves, kidney and cardiovascular complication by the production of free radicals. The science of yoga is an ancient one. It is a rich heritage of our culture. Ancient books make a mention of the usefulness of yoga in the treatment of certain diseases and preservation of health in normal individuals. Yoga can be used as an effective therapy in reducing oxidative stress in diabetes as well as other complicated disorders. Yoga is also beneficial in improving glycemic parameters and Body Mass Index. Yoga can be administered as an add-on therapy to standard lifestyle interventions. Yoga is being tried for its beneficial effects not only in India but also in US, UK and Australia as well.

Key words- Diabetes, Yoga, Science.

1. **परिचय**– मधुमेह एक जटिल रोग है, तथा आम भाषा में इसे शर्करा भी कहते हैं, इस रोग के विषय में चरक और सुश्रुत ने भी तीन हजार साल पहले ग्रन्थों में विवरण है। आज भी इस रोग के सफल उपचार के लिए कई शोध कार्य चल रहे हैं। यह रोग आजकल वृद्धों के साथ–साथ युवाओं को भी प्रभावित कर रहा है, और दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसका एक कारण बदलता परिवेश, रहन–सहन तथा खान–पान पर नियंत्रण न होना भी है। परन्तु जीवन शैली में बदलाव खान–पान की आदतों में सुधार तथा नियमित व्यायाम के द्वारा इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। नियमित व्यायाम तथा योग

इसका एक अत्यन्त पुराना पर असरदार उपाय है। योग के आसनों को रोज करना जहाँ स्वस्थ रहने की कुँजी है, वहीं दूसरी ओर चिकित्सा विज्ञान ने भी इसके अभूतपूर्व लाभ की पुष्टि की है।

2. **मधुमेह के कारण और प्रकार–** हम जो भी खाते हैं हमारा पाचन तंत्र उसे अंततः ग्लूकोज में बदल कर रक्त में भेज देता है। जहाँ इन्सुलिन नामक हारमोन इसे हमारे शरीर की कोशिकाओं तक पहुँचाता है। परन्तु जब हमारा शरीर इन्सुलिन का पर्याप्त उत्पादन करने में सक्षम नहीं होता, तब रक्त शर्करा कोशिकाएं तक नहीं पहुँच पाती है और रक्त में स्तर ग्लूकोज का स्तर बढ़ जाता है और यह स्थित मधुमेह कहलाती है। यह मुख्यतः दो प्रकार की है–

टाइप–1 इसमें पैन्क्रियाज की बीटा कोशिका पूर्णतः नष्ट हो जाती हैं, जो कि इन्सुलिन बनाने का काम करती है। यह अनुवांशिक–इम्युनिटी अथवा किसी प्रकार के वायरल संक्रमण से भी हो जाता है।
टाइप–2 भारत में अधिकतर 98% टाइप–2 रोगी है। इसमें इन्सुलिन पर्याप्त नहीं बनता है। मोटापा और बदलता रहन–सहन खान–पान इसका प्रमुख कारण है।

3. **मधुमेह में योगाभ्यास–** मधुमेह जिन्दगी भर चलने वाला रोग है, परन्तु प्राकृतिक चिकित्सा की दृष्टि से यह पाचन संबंधित रोग माना जाता है। नियमित योग करने से मधुमेह कि स्थितियों को काफी हद तक नियंत्रण में लाया जा सकता है। कई अध्ययन व शोध से भी यह निष्कर्ष निकला है कि मधुमेह के नियंत्रण में योग सबसे लाभकारी है। मधुमेह के कारण पाचनतंत्र पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को भी योगाभ्यास से नियंत्रित किया जा सकता है। व्यायाम तथा योगाभ्यास के साथ–साथ रोगियों को अपने ब्लड शुगर की जाँच भी नियमित रूप से करवानी चाहिए तथा चिकित्सक के निर्देशानुसार ही योग का अभ्यास व दवाओं का सेवन करना चाहिए।

वर्ष 2011 में हेगडे और उनके सहयोगियों[4] ने टाइप–2 के 131 मधुमेह रोगियो(40–75 वर्ष आयु वर्ग) पर योगाभ्यास का अध्ययन किया और उन्होंने पाया कि नियमित योगाभ्यास से इन रोगियों(FBG & PPBG) पर उपवास तथा खाने के बाद रक्त शर्करा के स्तर के साथ–साथ ही बॉडी मॉस इन्डेक्स में भी महत्वपूर्ण सुधार हुआ तथा नियमित योग करने की वजह से तनाव के खिलाफ लड़ने के लिए बेहतर एन्टीऑक्सीडेट प्रणाली भी विकसित हुई। बी0 के सहाय[1] ने भी अपने शोध से इस बात की पुष्टि की है। उन्होने सामान्य तथा मधुमेह पीड़ित व्यक्तियों पर अध्ययन किया और पाया कि नियमित योगाभ्यास से काफी लम्बी अवधि तक बिना किसी दवाई के उपयोग के लगभग सामान्य ग्लाइसेमिक स्थित को बनाया जा सकता है। इसके साथ ही उन्होने यह भी पाया कि बिना किसी दवा के उपयोग के जटिल विकारों जैसे कि कीटोसिस तथा संक्रमण आदि का होना भी कम हो गया था। उन्होने अपनी शोध में प्राणायाम के बाद रक्त शर्करा का अध्ययन किया (सारिणी–1)

सारिणी–1
प्राणायाम के बाद मधुमेह के रोगियों में रक्त शर्करा का स्तर

	उपवास		खाने के बाद	
	योग से पहले	योग के बाद	योग से पहले	योग के बाद
सामान्य	89.05	55.23		
टाइप–1	254.75 ± 1179	128.25 ± 88.02	414.50 ± 175.78	275.00 ± 81.34
टाइप–2	148.19 ± 43.13	108.19 ± 121.05	278.50 ± 43.13	188.50 ± 79.37

P*< 0-001

विनोद कुमार तथा सहयोगियों[2] ने भी मधुमेह के प्रबंधन में योग की प्रभावकारिता को समझने के लिए मेगा विश्लेषण शोध किया जो कि इलेक्ट्रॉनिक डाटाबेस(eg. Pubmed medline, Proques) पर निर्भर थी। अन्त में उन्होंने भी यह निष्कर्ष निकाला कि नियमित योगाभ्यास से रक्त शर्करा स्तर पर नियंत्रण किया जा सकता है।

4. **मधुमेह मे उपयुक्त आसन**– जिसमें इन्होंने पाया की नियमित प्रणायाम और धनुरासन मधुमेह में लाभप्रद पाया गया है तथा नियमित योगाभ्यास से दवाइयों का उपयोग भी कम हो गया है। बहुत सारे योगासन मधुमेह में कारगर है। जिनमें से प्रमुख कटिचक्रासन, उर्ध्वहस्तोन्तासन, पादहस्तासन, भुजंगासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तासन, कोणासन, सर्वांगासन, मत्स्यासन, सूर्यनमस्कार आदि हैं। इन सभी आसनों में सूर्यनमस्कार, प्राणायाम और धनुरासन इस बीमारी में बहुत लाभ पहुँचाते हैं।[3] योगासन का अभ्यास सदैव योग प्रशिक्षक की देखरेख में ही करना चाहिए। प्राणायाम तथा सूर्यनमस्कार हमारे शरीर को सामान्य रूप से भी स्वस्थ रखता है

5. **सूर्यनमस्कार**– सूर्यनमस्कार पूरे शरीर का एक लयबद्व व्यायाम है। इसे नियमित रूप से करने से शरीर के सभी अंग सक्रिय और सशक्त हो जाते हैं। यह प्रमुख रूप से पाचन तथा अन्तःस्रावी प्रक्रिया को प्रभावित करता है जिसका प्रभाव इन्सुलिन स्रावित करने वाले अग्न्याशय ग्रन्थि पर पड़ता है।

6. **प्राणायाम**– प्राणायाम मधुमेह के रोगियों के लिए बहुत फायदेमंद हैं। खासतौर पर भ्रामरी और भ्रस्त्रिका प्राणायाम करने से मानसिक तनाव कम होता है तथा ऑक्सीजन की मात्रा भी कोशिकाओं में बढ़ती है। सुचारू रूप से इन आसनों का अभ्यास करने से मधुमेह के रोगियों में अन्य रोगो से तथा संक्रमण से लड़ने की क्षमता बढ़ती है तथा मानसिक शान्ति प्राप्त होती है।

7. **मधुमेह में योग की क्रियाविधि–** योग चिकित्सा मधुमेह में शामिल ग्रंथियों के कायाकल्प करने का काम करता है। जिसमें मुख्यतः अग्न्याशय से इंसुलिन स्राव कराना मुख्य रूप से शामिल है। तनाव मुख्य रूप से रक्तशर्करा को बढ़ाता है और योग तनाव के स्तर को कम करके रक्तशर्करा को सामान्य करता है। एस0 ए0 रमैय्या ने वाशिंगटन में आयोजित अपने अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला कि घूमना, ट्रेडमिल, स्थिर साइकिल चलाना, और विभिन्न योग आसन, सूर्य नमस्कार, धनुरासन मधुमेह को नियंत्रित करने में सार्थक है। योग चिकित्सा का मुख्य आशय कोशिकाओं का कायाकल्प है। योग कोशिकाओं को उचित ऑक्सीजन देता है और उच्च रक्त शर्करा से हुए नुकसान से उबरने में मदद करता है। मधुमेह योग चिकित्सा के विशिष्ट आसन अग्न्याशय कोशिकाओं में मोड़ और खिंचाव देता है, जिसकी वजह से रक्त परिसंचरण अग्न्याशयी कोशिकाओं में बढ़ जाता है और यह इंसुलिन स्रावित करने लगता है। सूर्य नमस्कार, वक्रासन, अर्धमत्स्येंद्रासन, धनुरासन अंगों में रक्त आपूर्ति बढ़ाते हैं तथा कोशिकाओं को सक्रिय करने और इंसुलिन स्राव में वृद्धि करते हैं।

हालांकि योग की क्रियाविधि तंत्र ठीक से ज्ञात नहीं है, लेकिन यह माना जाता है कि योग न केवल मधुमेह में बल्कि योग कई अन्य बीमारियों का निदान करने में सक्षम है।

निष्कर्ष– योगाभ्यास मधुमेह के रोगियों के साथ–साथ सामान्य मनुष्यों को भी प्रबल बनाता है। परन्तु मधुमेह की स्थिति में अन्य जटिल रोगों में भी इसका लाभ देखा गया है। यह रोगियों को संक्रमण से लड़ने की क्षमता प्रदान करते है, तथा मानसिक तनाव से भी मुक्ति देता है। नियमित योगाभ्यास करने से रक्त शर्करा के साथ ही साथ बॉडी मॉस इन्डेक्स में भी सुधार होता है। इस लेख में दिये गये तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राणायाम, सूर्यनमस्कार, तथा धनुरासन मधुमेह में लाभप्रद योगासन है।

संदर्भ

1. सहाय, वी0 के0(2007) रोल ऑफ योग इन डायबिटीज, जे0ऐ0वी0आई0, खण्ड–55, मु0पृ0 121–126।
2. आरती, विनोद कुमार; जगन्नाथन; मरियामा, फिलिप; अरूण, तुलसी; परवीन, अनगडी एवं नगारथना, रघुराय(2016) रोल ऑफ योगा फॉर पेशेन्ट्स विद टाइप टू डायबीटीज मिलाइटसः ए सिस्टमेटिक रिव्यु एण्ड मेटा–एनालिसिल कान्पलीमेंटरी थेरेपी रन मेडिसन, खण्ड–25, मु0पृ0 104–112।
3. ज्योत्सना, विवेक पी0(2014) प्रीडायबिटीज एण्ड टाइप–2 डायबटीज मिलाइटसः इवीडेन्स फॉर इफेक्ट ऑफ योग। इण्डियन जनरल ऑफ इण्डोक्राइनोलॉजी एण्ड मेटाबोलिज्म, खण्ड–18, अंक–6, मु0पृ0 745–749।
4. हेगड़े, लक्ष्मी वी0, वीना, जे0 पीन्टू, अधिकारी, प्रभा; सिडनी, डी0; सुना, शशीधर कोटियन एवं डीसूजा, विनियन(2011) इफेक्ट ऑफ 3 मन्थ योगा ऑन ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस इन टाइप–2 डायबिटीज विद एण्ड विदाऊट काम्पलीकेशन्स(ए कन्ट्रोल्ड क्लीनिकल ट्रायल)। डायबिटीज केयर, खण्ड–34, मु0पृ0 2208–2210।

आणविक अंकित बहुलक एवं कृषि विज्ञान में इसके अनुप्रयोग–एक समीक्षा

आर0 के0 प्रजापति[1] एवं एम0 ए0 अन्सारी[2]
[1]रसायन विभाग, डी0 जे0 कॉलेज, बडौत, बागपत–250611, उ0प्र0, भारत
[2]रसायन विज्ञान विभाग, बिपिन बिहारी कॉलेज, झाँसी–284001, उ0प्र0, भारत
rameshkrpr@yahoo.com, ayub67@rediffmail.com

प्राप्त तिथि– 19.07.2016; स्वीकृत तिथि–12.09.2016

सार– तृणनाशक के अत्याधिक उपयोग के कारण पर्यावरण के प्रदूषित होने की गम्भीर समस्या उत्पन्न हो रही है एवं इसका दुष्प्रभाव मिट्टी, पानी, हवा के साथ–साथ मानव के स्वास्थ्य के लिए गम्भीर समस्या बन चुका है। अतः इसकी जाँच के लिये आसान, शीघ्र एवं कम लागत की तकनीक का पता लगाने के लिए शोधकर्ताओं द्वारा कार्य प्रारम्भ किया जा चुका है। आणविक अंकित बहुलक, जो कि एक कृत्रिम सामग्री है, इन परिस्थितियों में तृणनाशक की जाँच के लिये बहुत उपयोगी है। यह तकनीक पर्यावरण वैज्ञानिकों, रसायनविदों, भेषजवैज्ञानी व कृषि–खाद्य उद्योग से जुड़े कर्मियों के लिये विभाजकों के विश्लेषण, परिमार्जन, पूर्णसांद्रण हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस समीक्षा पत्र में आणविक अंकित बहुलक को विशेष रूप से तृणनाशक की जाँच के लिये कैसे बनाया जा सके एवं कैसे उसका उपयोग किया जाये, के सन्दर्भ में उल्लेख किया गया है।

बीज शब्द– तृणनाशक आणविक अंकित बहुलक, संवेदक आइसोप्रोट्यूरान, एवं 2, 4–डी।

Molecular imprinted polymer and its applications in Agriculture Science: a review

R.K. Prajapati[1] and M.A. Ansari[2]
[1]Department of Chemistry, D. J. College, Baraut, Baghpat-250611, U.P., India
[2]Department of Chemistry, Bipin Bihari P.G. College, Jhansi-284001, U.P., India
rameshkrpr@yahoo.com, ayub67@rediffmail.com

Abstract- Contamination of environment due to indiscriminate use of herbicides poses severe risks to soil, water and air as well as human health. Therefore, need of easy, rapid and of low cost detection methods triggered the researcher to find out new technology. Molecularly imprinted polymers (MIPs), the synthetic materials are very useful in these circumstances. It offers several advantages to the environmental scientist, chemist, pharmaceutical, and agro food industry for analysis, sensoring, extraction, or preconcentration of analytes. The high toxicity of herbicides and their large use in modern agriculture practices has increased public concerns. In this review paper, imprinting and detection of herbicide, the recognition and transport properties of molecularly imprinted polymer (MIP) membranes prepared for herbicides such as Isoproturon and 2,4-D in particular have been discussed.

Key words- Herbicides, molecular imprinted polymers, biosenser, isoproturon, 2,4-D.

1. **परिचय**– आणविक अंकित बहुलक(एम0आई0पी0) एक विशेष प्रकार की कृत्रिम सामग्री होती है। जिनके पास विशेष लक्ष्य प्रजातियों को निश्चयात्मकता के साथ वाहय करने का गुण होता है। इस क्षमता के साथ एम0आई0पी0 के पास केवल लक्ष्य प्रजाति के साथ बन्ध बनाकर उन के विश्लेषण में उपयोग किया जा सकता है। इन विशेष लक्षणों के कारण एम0आई0पी0 के पास यह क्षमता होती है कि वह लक्ष्य अणुओं के साथ परस्पर क्रिया करके एवं इनके साथ बन्ध बनाकर, इनकी उपस्थिति की जाँच जटिल विलयन मैट्रिक्स जैसे कि जैविक तरल पदार्थ अपशिष्ट या अभिक्रिया मिश्रण से किया जा सकता है।[1] वैज्ञानिक साहित्य में एम0आई0पी0 का विस्तार से उनके प्रयोग का उल्लेख विभिन्न क्षेत्रों जैसे की प्रतिरोधक क्षमता[2], उत्प्रेरक[3–4], वर्णलेखन[5–6] एवं संवेदक उपकरणों[7–8] में किया गया है।

प्रायः तृणनाशक भोज्य पदार्थों, मिट्टी एवं पानी में बहुत कम सान्द्रता(नैनोग्राम/ग्राम) के स्तर पर अत्यधिक विभिन्न मध्यवर्ती, जटिल संरचना के रूप में पाये जाते हैं। इसलिये उनका तेजी से पता लगाने और निगरानी करने से प्रतिकूल प्रभाव नहीं हो सके, इसकी आवश्यकता है। तृणनाशक का पता लगाने में एम0आई0पी0 का प्रयोग प्रतिदीप्ति तकनीकी द्वारा भी किया गया है।[10] इनके द्वारा विभिन्न तृणनाशकों के संश्लेषण कर इनका जाँच किया गया है।[11–15] एम0आई0पी0 द्वारा पैराथियान के जाँच के लिये संवेदक का निर्माण किया गया है।[13–15] एम0आई0पी0 का उपयोग आइसोप्रोट्यूरॉन एवं 2,4–डी–जैसे तृणनाशक के तेजी से पता लगाने के लिये इलेक्ट्रो संवेदकों के रूप में एम0आई0पी0 का संश्लेषण करने की तकनीक का उपयोग करके किया गया है।[16–19]

2. सामग्री एवं विधि– एम0आई0पी0 तैयार करने की विधि

आणविक अंकित की प्रक्रिया को सहसंयोजक अंकण विधि(पूर्व संगठित दृष्टि कोण), गैर सहसंयोजक अंकण विधि(आत्म नियोजित दृष्टिकोण) और अर्ध सहसंयोजक अंकण विधियों द्वारा किया जाता है। एम0आई0पी0 बनाने के मूल सिद्धांतों का वर्णन चित्र सं0–1 में किया गया है।

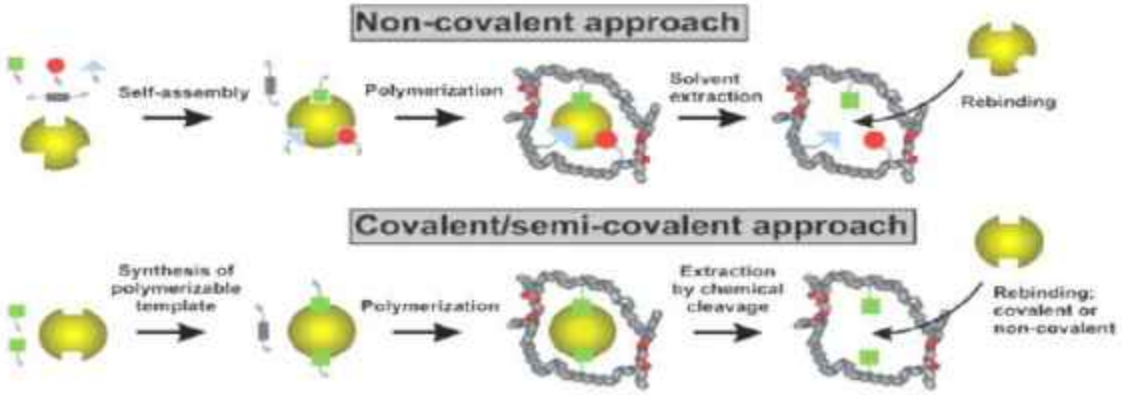

चित्र–1 एम0आई0पी0 के संश्लेषण में उपस्थित सिद्धातों का योजनाबद्ध चित्रण।

सहसंयोजक बन्ध(पूर्व संगठित दृष्टिकोण)– एम0आई0पी0 के सहसंयोजक दृष्टिकोण द्वारा संश्लेषण में पहले **टेम्पलेट्स** कार्यात्मक एवं मोनोमर के साथ अभिक्रिया कर क्रियात्मक मोनोमर एवं टेम्पलेट्स योगिक का निर्माण होता है।[21] इसके बाद इस यौगिक को विलायक में मिलाया जाता है। वर्तमान समय में इस विधि का उपयोग बोरोनेट एस्टर, शिफबेस, किटाल और एसिटॉल जैसे यौगिकों का निर्माण सघंनन अभिक्रिया द्वारा होता है।

अ–सहसंयोजक बन्ध– इस विधि के अर्न्तगत एम0आई0पी0 के निर्माण हेतु कॉम्पेल्क्सन टेम्पलेट, क्रियात्मक मोनोमर और क्रॉस लिंकर को उपयुक्त विलायक मैट्रिक्स में मिलाकर प्राप्त किया जाता है। जिसमें क्रियात्मक मोनोमर टेम्पलेट के साथ हाइड्रोजन बन्ध बनकर जुड़ता है। गैर सहसंयोजक बन्ध, सहसंयोजक बन्ध की तुलना में कमजोर होता है। लेकिन रासायनिक दृष्टि से गैर सहसंयोजक बन्ध द्वारा आणविक अंकण, सहसंयोजक बन्ध की तुलना में आसान होता है।[22]

शुष्क प्रवास्था इनवर्जन पद्धति– योशीकाबा व उनके सहयोगियों ने पाली स्टाइरिन रेजिन का उपयोग करके पेप्टाइड पहचान के साथ एम0आई0पी0का निर्माण किया।[23]

आर्द्र प्रवास्था इनवर्जन पद्धति[24]– आणविक मान्यता हेतु बंधीय किनारों की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।[25] सुप्रामॉल्युकुलर मेजवान। अतिथि रसायन शास्त्र में अविधि अणु मेजवान के संरचना में फिट बैठता है। अतः इसके अनुसार मेजवान में इस प्रकार की एक आन्तरिक गुहा बनाता है और टेम्पलेट मेजवान के गुहा में हाइड्रोजन बन्ध, बन्ध फिक्सेशन द्वारा फिट होता है। एम0आई0पी0 के निर्माण में– विलायक की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। विलायक, बहुलक के आकृति विज्ञान को तो प्रभावित करता ही है, इसके साथ–साथ विलायक एम0आई0पी0 की ताकत को भी प्रभावित करता है।[26]

3. **एम0आई0पी0 के उपयोग–** एम0आई0पी0 का उपयोग कीटनाशकों को निकालने, संवेदक के रूप, अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को नुकसान पहुँचाने वाले अणुओं की पहचान, रासायनिक अभिक्रिया में उत्प्रेरक, एवं क्रोमेटोग्राफी आदि में किया जाता है।
तृणनाशक का पता लगाने के लिये एम0आई0पी0 का प्रयोग प्रतिदीप्ति तकनीकी के द्वारा विभिन्न आर्गेनोफॉस्फेट कीटनाशकों को Eu(III)–पिरिडीन–2,6–डाईकार्बाक्सीलिक एसिड को प्रोब के रूप में उपयोग करके किया गया है। अलग–अलग

कीटनाशक जैसे– क्लोरोफेनबिन्फों, मैलाथियान, एनिन्फो और पैराक्ज्न ईथाइल का Eu(III)-पिरिडीन 2,6–डाई कार्बोक्सीलिक एसिड के साथ 1:2 के अनुपात में लेकर प्रतिदीप्ति की तीव्रता कीटनाशकों की सान्द्रता के बढ़ने से घटता है। इस विधि से ऑर्गेनो फॉस्फेट कीटनाशक जो कि जल, नदी, खनिज और अपशिष्ट में उपस्थित होते है की जाँच आसानी एवं कम लागत में किया जा सकता है।[13] आइसोप्रोट्यूरॉन एवं 2,4–डी तृणनाशक को पता लगाने के लिये एम0आई0पी0 का निर्माण किया गया है, और वैद्युत संवेदक द्वारा इनका पता लगाया गया है। इस तकनीकी के द्वारा इन तृणनाशक का 10^{-3} m से 10^{-6} m सान्द्रता तक जाँच किया गया है। जिसे चित्र सं0–2 एवं 3 में दर्शाया गया है।

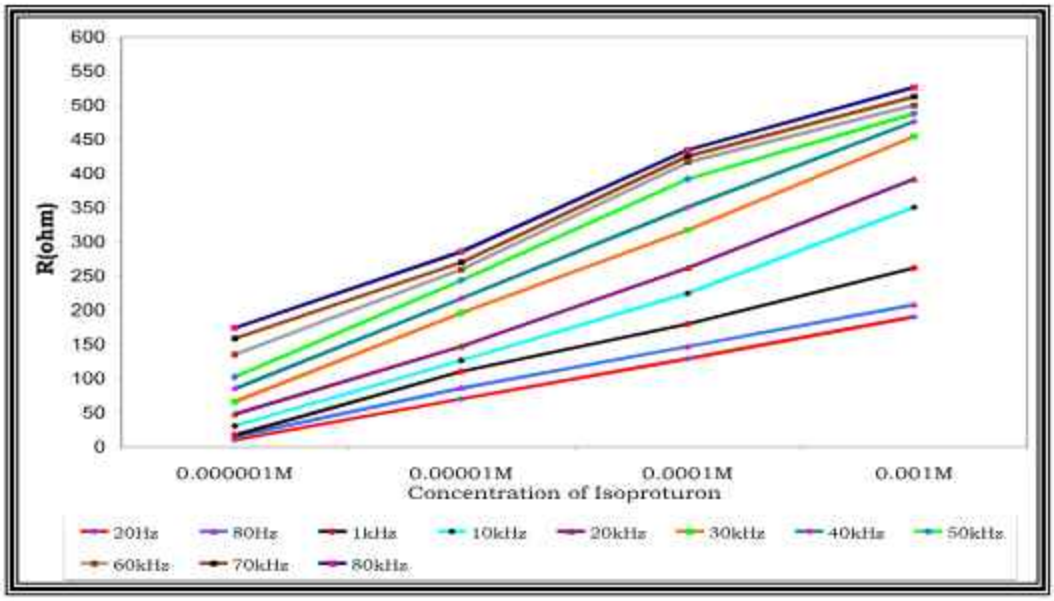

चित्र–2: आइसोप्रोट्यूरॉन अंकित आणविक बहुलक में संवेदक के ऊपर विद्युत आवृत्ति का प्रभाव।

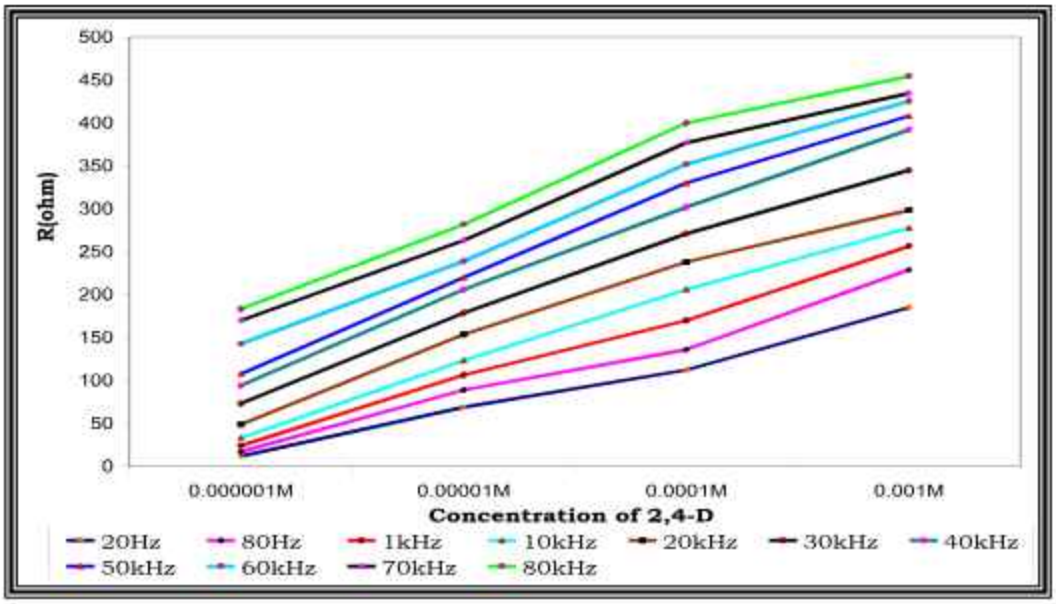

चित्र–3: 2,4–डी अंकित आणविक बहुलक में संवेदक के ऊपर विद्युत आवृत्ति का प्रभाव।

इसलिये उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि तृणनाशक की सान्द्रता को पता लगाने में एम0आई0पी0 का उपयोग बहुत ही लाभ दायक है।

निष्कर्ष

एम0आई0पी0 एक अलग प्रकार का बहुलक होता है जो विशिष्ट टेम्पलेट के साथ साथ बन्ध बनाकर चयनात्मक और सुदृढ़ भी होता है इसलिये इनका उपयोग अलग–अलग रसायनों की जाँच में उपयोग कर सकते हैं, जैसे– कृषि एवं खाद्य प्रौद्योगिकी। इस समीक्षा पत्र में तृणनाशक की जाँच हेतु एम0आई0पी0 के उपयोग द्वारा इनका सक्षेप में वर्णन किया गया है।

सन्दर्भ

1. सिंकदर, सी0 एवं एंडरसन, एच0 एस0(2006) जर्नल ऑफ मोल0 रिकोगनिट, खण्ड–19, मु0पृ0 106–180।
2. व्लाटाकिस, जी0 एवं एंडरसन, लाइट(1993) नेचर, खण्ड–36, मु0पृ0 645–647।
3. वुल्फ जी0 एवं वीटमीयर, जे0(1989) मैकरोमॉलीक्यूल केमिरस्ट्री, मु0पृ0 1717–1726।
4. रॉबिन्सन, डी0 के0 एवं मोसवाच, लाल कृष्ण(1989) जर्नल ऑफ कैमिकल कम्यूनिकेशन, खण्ड–14, मु0पृ0 969–970।
5. हगीनाका, जे0 एवं सम्विल, एच0(1999) क्रोमेटोग्राफी, खण्ड–857, मु0पृ0 117–125।
6. वर्गलुड, जे0 एवं निकोल्स, आइ0 ए0(1996) बायोऑरगेनिक मेड0 कैमिस्ट्री, खण्ड–6ए, मु0पृ0 2237–2242।
7. वुनटे, जी0(2007) केम0 ऐक्टा, खण्ड–591, मु0पृ0 49–56।
8. प्रसाद, लालकृष्ण(2007) ऐक्टयूऐटर्स, खण्ड–123, मु0पृ0 65–70।
9. सुईडी, आर0(2006) टालनटा, खण्ड–70, मु0पृ0 194–201।
10. हसन, ए0 ऐकब(2013) ऐनालिटिका कीमाका ऐक्टा, खण्ड–759, मु0पृ0 81–91।
11. हग, जिन(2012) सेपेरेशन साईंस, खण्ड–35, पृ0 3501।
12. वान, झांग(2012) ऐनालिस्ट, खण्ड–137, मु0पृ0 2629–2636।
13. जाग, यान(2012) अनुसंधान, खण्ड–518, मू0पृ0 1383–1386।
14. कांग, टी0 एफ0(2008) एन्वायरनमेटल साइंस चाईना, खण्ड–4, मु0पृ0 1072–1076।
15. गनजाली, एम0 आर0(2009) ऐनालिटिका केमिका ऐक्टा, खण्ड–638, मु0पृ0 154–161।
16. लाओ, एच0 एल0(2012) इलैक्ट्रोएनालिसिस, खण्ड–24, मु0पृ0 1664–1670।
17. सिंह, के0 पी0 एवं प्रजापति, आर0 के0(2010) आयोनिक्स, खण्ड–16, अंक–6, मु0पृ0 529–537।
18. सिंह, के0 पी0 एवं प्रजापति, आर0 के0(2013), बायोसेन्सर, खण्ड–2, अंक–1, मु0पृ0 28–28।
19. वुल्फ, जी0(1972) रसायन, खण्ड–11, मु0पृ0 341–344।
20. किलेआर्ड, डी0 एस0(2012) पी–एच0डी0 थीसिस एन्वायरनमेटल साइंस, न्यू केस्ले, ऑस्ट्रेलिया।
21. वुल्फ, जी0(1991) जर्नल ऑफ मॉलीक्यूलर ऑर्गेनाइजेशन, खण्ड–5, अंक–6, मु0पृ0 395–400।
22. डीनारियो, वाई0(2006) बायोइलेक्ट्रॉन, खण्ड–22, मु0पृ0 364–371।
23. ओसीकावा, एम0(1995) जर्नल ऑफ मैम्ब्रेन साइंस, खण्ड–108, मु0पृ0 171–175।
24. कोबायाशी, टी0 एवं फुजी, एन0(1995) कैमिकल साइंस, खण्ड–67, मु0पृ0 927–928।
25. बाग, एच0 एवं कोबायाशी, टी0(1997) कैमिकल टेक्नोलॉजी, खण्ड–70, मु0पृ0 355–362।
26. जनोट, एम0 एवं वाईस, आर0(2001) जर्नल ऑफ एन्वायरनमेन्टल कैमिस्ट्री, खण्ड–2, मु0पृ0 75–86।

जैन गणित

रमा जैन
एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग
महिला विद्यालय डिग्री कॉलेज, लखनऊ–226018, उ0प्र0, भारत
ramajain26@yahoo.com

प्राप्त तिथि– 28.07.2016; स्वीकृत तिथि– 17.08.2016

सार– प्रस्तुत लेख जैन धर्म की स्थापना के बाद लगभग आर्यभट्ट के समय अर्थात् 500 ईसा पूर्व के काल में जैन गणित की प्रगति पर केन्द्रित है। इस काल को लेने का कारण यह है कि अब से कुछ समय पहले तक यह अवधारणा थी कि भारत में इस काल में गणितीय कार्य बहुत कम था। इस काल को हम जैन गणित काल के नाम से सम्बोधित करेंगे। उनका धार्मिक साहित्य अनुयोग आदि चार वर्गों में वर्गीकृत किया गया है। जिसका अर्थ जैन धर्म के सिद्धांतों का सतहीकरण है। गणितानुयोग (गणित के सिद्धांतों का सतहीकरण) उनमें से एक है। ब्राह्मण ग्रंथों के समापन एवं सैद्धांतिक खगोल शास्त्र के प्रारम्भ (चौथी शताब्दी) के मध्य काल में जैन गणित ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

बीज शब्द– अनुयोग, गणितानुयोग, गणित सार संग्रह, प्रजनाप्ति।

Jain Mathematics

Rama Jain
Associate Professor, Department of Mathematics
Mahila Vidyalaya Degree College, Lucknow-226018, U.P., India
ramajain26@yahoo.com

Abstract- The present article will concentrate on the period after the advent of Jainism till the time of Aryabhata around 500 AD. The reason for selecting this time period is that, till recently, it was thought to be a time when there was very little mathematical activity in India. This period shall be referred to as Jain Mathematics period. Basically Jain religious literature is classified into four groups. "Anuyoga"(the exposition of the principles of Jainism) and "Ganitanuyoga"(the exposition of the principles of mathematics) were considered prominent among those. The Jain Mathematics played a significant role when the Brahamin granthas went behind the scenes and Saidhantic Astronomy started taking shape.

Key words- Anuyoga, Ganitanuyoga, Ganita saar sangrah, Prajnapti.

1. **जैन धर्म में गणित का महत्व–** जैनियों के अनुसार, विज्ञान एवं कला की बहत्तर शाखाओं में से एक बच्चे को सर्वप्रथम लिखना एवं उसके पश्चात् अंकगणित सिखाना चाहिये। जैन धर्मरत्नों के अनुसार जैनियों के प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ ने अपनी पुत्री ब्राह्मी को ब्राह्मी पढ़ाई एवं दूसरी पुत्री को गणित पढ़ाई। जैनियों का पवित्र साहित्य, सिद्धांत या अगम कहलाता है तथा बहुत प्राचीन है। जैनियों ने अपने स्वयं के सिद्धांत उन्नत किये और चिकित्सा विज्ञान, गणित, भौतिकी, खगोल विज्ञान, द्रव्य संरचना एवं ऊर्जा, जीवधारियों की मूलभूत संरचना इत्यादि में बहुत योगदान किया।

2. **उत्पत्ति –** जैन एवं बौद्ध धर्म की उत्पत्ति ईसा पूर्व प्रथम सदी के मध्य में मानी जाती है। जैन एवं बौद्ध दोनों ही पूर्ववर्ती ब्राह्मण धर्म की परम्पराओं एवं त्याग के विरोधी थे। जैन गणित को परिभाषित करना थोड़ा कठिन कार्य है। जैन प्रथा एक धर्म एवं दर्शन है जिसकी स्थापना भारत में लगभग छठी शताब्दी ईसा पूर्व में हुई थी। अब हम जैनियों द्वारा विकसित की गई गणित को जैन गणित के नाम से उद्धृत करेंगे जिसमें भारतीय उपमहाद्वीप में जैन धर्म की स्थापना से आधुनिक काल तक की गणित के भाग को उद्धृत करेंगे।

जैन धर्म के संस्थापक स्वामी महावीर जी स्वयं ही गणितज्ञ माने जाते हैं। ब्राह्मण ग्रंथों के ज्ञान से ही गणित की परम्पराओं के मुख्य उद्देश्य का पालन किया गया है। जैन गणित के मूलभूत कार्यों की सरल उपलब्धता न होने के कारण भारतीय विज्ञान का सबसे कम समझा जाने वाला अध्याय जैन गणित ही है। उदाहरणतः जैनों ने पाँच भिन्न प्रकार के अंक चिन्हित किये हैं। पराअनन्त की अवधारणा जो कि 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जैनियों द्वारा करने वाले जैन ही

थे। 2000 वर्ष पुराने जैन साहित्य में प्राकृतिक गणित के महत्वपूर्ण तथ्य निहित हैं। यह वह क्षेत्र है जहाँ आगे शोध फलदायी हो सकता है।

3. **उपलब्ध सूत्र–** दुर्भाग्य से जैन गणित की सूचना के स्रोत बहुत ही अल्प हैं। गणितीय महत्व के बहुत सारे साहित्य का अभी भी अध्ययन करना बाकी है। सूर्य प्रजनाप्ति, जम्बू द्वीप प्रजनाप्ति, स्थानंगा सूत्र, उत्तराध्याना सूत्र, भगवती सूत्र और अनुयोग द्वारा सूत्र सब पुराने साहित्य में से है। जैन शोधार्थी द्वारा अंक गणित पर वर्तमान में उपलब्ध एकमात्र ग्रन्थ महावीर (850 ई0पू0) का सार संग्रह है। उमास्वाति (150 ई0पू0) जो कि एक गणितज्ञ नहीं तत्वज्ञानी थे, उन्होंने गणित के कई सूत्रों का प्रतिपादन किया था। वाराहमिहिर द्वारा निर्दिष्ट किये गये सिद्धसेना एक अन्य जैन गणितज्ञ थे। वस्तुतः गणित के कुछ विशेष ग्रन्थों जैसे अर्धमागधी ग्रन्थों एवं धर्मनिरपेक्ष पुस्तकों से जैनों के गणित ज्ञान के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। पूर्वकालिक जैनियों के ज्ञान के संबंध में महत्वपूर्ण सूचना क्षेत्रसमासा (स्थानों का संग्रह) और करनमासा में मिलने की सम्भावना है। वृहत् क्षेत्रसमासा नामक इस वर्ग के दो ग्रन्थ जिन भद्र गनी ने 550 ई0पू0 में लिखे।

4. **गणित के विषय** – प्रथम शताब्दी ई0पू0 के स्थानंगा सूत्र के अनुसार, गणित की चर्चा के मुख्य विषय निम्न दस प्रकार के हैं –

1. परिकर्मा(मूलभूत ऑपरेशन)
2. व्यवहार(उपचार के विषय)
3. रज्जु(ज्यामिति)
4. रासी(ढेर, ठोस क्षेत्रमिति)
5. कलासवर्ना (भिन्न)
6. यावत–तावत (सरल समीकरण)
7. वरगा(द्विघात समीकरण)
8. घात (घन समीकरण)
9. वरगा – वरगा(द्वि–वर्ग समीकरण)
10. विकल्प(क्रमचय एवं संचय)

5. **कुछ क्षेत्रमिति** – उमास्वाति की त्तवर्थाधिगामा सूच भाष्मा में भी गुणन और विभाजन के दो तरीकों के लिए एक आकस्मिक संदर्भ हैं। ब्रह्मगुप्त ने गुणक से गुणा का उल्लेख किया है और श्रीधर के त्रिसमिका में गुणक से भागफल का उल्लेख मिलता है।

6. **गणित के स्कूल** – पाँचवी सदी के अंत तक गणित एवं खगोल शास्त्र का संस्कार बिहार के कुसुमपुरा में गणित के स्कूल में जीवित है। दो खगोलशास्त्रीय कार्यों सूर्य प्रजनाप्ति की टिप्पणी एवं भद्रबाही संस्था के लेखक प्रसिद्ध जैन संत भद्रबाहु कुसुमपुर में रहते थे। प्राचीन भारत में गणितीय अध्ययन के दो बहुत महत्वपूर्ण एवं नामचीन केन्द्र उज्जैन एवं मैसूर में हैं। उज्जैन स्कूल में महानतम् भारतीय खगोलविद् ब्रह्मगुप्त एवं गणितज्ञ भास्कराचार्य थे। जबकि मैसूर के दक्षिणी स्कूल में एक प्रतिनिधि महावीराचार्य थे।

7. **क्रमचय एवं संचय** – प्राचीन जैनियों को क्रमचय एवं संचय में बहुत रुचि थी। क्रमचय दिये गये कुछ या सभी वस्तुओ को एक विशेष प्रकार से क्रमित करता है। क्रमचय से भिन्न संचय, दिये हुये वस्तुओं से कुछ या सभी वस्तुयें छाँटना है जिसमें क्रम को भी देखते हैं। अतः वस्तु छाँटने के तरीकों की संख्या ही संचयों की संख्या है। जैनियों के अध्ययन में क्रमचय एवं संचय पर आधारित साधारण समस्यायें भगवती सूत्र में हैं। इनको दिये गये दार्शनिक वर्गीकरण द्वारा एक बार में एक, या एक बार में दो, या एक बार में तीन से प्राप्त किया जा सकता है। जैन टिप्पणीकार सिलांका ने क्रमचय एवं संचय से संबंधित तीन नियम प्रतिपादित किये हैं जिसमें दो संस्कृत के छंद हैं और अन्य अर्द्धमागधी छंद है।

8. **सूचकांकों का नियम** – सूचकांक के नियम का सूत्र भली प्रकार से नहीं ज्ञात किया जा सकता है। लेकिन इस बात के संकेत हैं कि जैन इन नियमों के अस्तित्व के जानकार थे।

9. **संख्या सिद्धांत** – वैदिक गणितज्ञों की तरह जैनियों की भी वृहद संख्याओं, जो कि समय एवं अंतरिक्ष से सम्बंद्ध है, में रुचि थी। जिनमें से प्रत्येक पुनः श्रेणी में विभक्त थी। जैनियों में संख्याओं को सम एवं विषम वर्गों में विभक्त किया था। जैनियों ने समय की बड़ी इकाइयों जैसे $756X10'' \times 8400000^{28}$ दिन का प्रयोग किया जिसे सिरसा प्रहेलिका कहते हैं।

10. **कुछ तकनीकी पद** – जैन साहित्य में उमास्वाति के लेख में आधुनिक ज्यामिति पद अर्द्धव्यास पाया जाता है। जिसको यह व्यासर्धा या विश्कम्भार्धा कहते हैं। वृत्त के भाग की रेखा को जीवा एवं चाप को धनुपृष्ठ का नाम बहुत से प्रारम्भिक कार्य में मिलता है। सांख्यिक चिन्ह दो रूपों में लिखे जाते हैं– अंकलिपि एवं गणितलिपि।

11. **ज्यामिति** – जैन सिद्धांतवादियों द्वारा रज्जु नामक पद दो भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता था। ब्रह्माण्ड विज्ञान में यह लगभग 3.4×10^{21} की लम्बाई के माप में बहुतायत से प्रयुक्त होता था। लेकिन आमतौर पर जैन यह पद ज्यामिति या क्षेत्रामिति के लिए प्रयोग करते थे। जिसमें वे वैदिक सुलभसूत्र अपनाते थे। उनको बहुत से ज्यामितीय पद ज्ञात थे जैसे– सम चक्रवला, वृत्त(Circle), जीवा(Arc), परिमण्डल(ellipse), घनवृत्त(Sphere) आदि। उन्होंने पाई का मान वर्गमूल 10 अनन्त दो दिशाओं में, अनन्त क्षेत्रफल में, सर्वव्यापी अनन्त और शाश्वत अनन्त। यह बहुत ही क्रान्तिकारी धारणा थी क्योंकि जैन ही प्रथम थे जिन्होंने सभी अनन्तों के समान होने के विचार को खारिज किया था, जो कि 19वीं शताब्दी तक नई अवधारणा से सम्बद्ध है जिसे प्रथम अंतरपरिमित(Transfinite) संख्या कहा जाता है। पुनः समुच्चय सिद्धांत में जैनों ने दो प्रकार के अंतरपरिमित(Transfinite) संख्याओं में भेद किया फिर असंख्याता और अनन्त को भौतिक आधार पर दृढ़तापूर्वक बल्द एवं हल्के में भेद किया गया।

12. **निष्कर्ष** – प्राचीन भारतीय जैनों का गणित के अध्ययन में बड़ा महत्व है। और यह विषय उनके धर्म का एक अभिन्न अंग माना जाता है। धार्मिक उत्सवों के लिए उपयुक्त समय एवं स्थान का निर्धारण अंकों के विज्ञान, खगोल विज्ञान एवं अंकगणित के ज्ञान के द्वारा किया जाता था। गणित को तटस्थ का रूप देने का श्रेय जैनियों को जाता है। जैन धर्म पर यह हल्की सी झलक दर्शाती है कि यह एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ बहुत शोध करने की आवश्यकता है। दो हजार वर्ष पुराने जैन गणित में गणित की नींव की प्रकृति के बहुत तथ्य निहित हो सकते हैं। इसी में इसकी महत्ता एवं चुनौती है।

संदर्भ

1. जोसेफ, जॉर्ज गेवर्गीज (1994) द क्रेस्ट ऑफ पीकॉक : नॉन यूरोपियन रूट्स ऑफ मैथेमैटिक्स, पेंगुइन बुक्स, लंदन।
2. सेन, एस. एन. (1971) मैथेमैटिक्स, इन ए कान्साइस हिस्ट्री ऑफ साइन्स इन इण्डिया, इण्डियन नेशनल साइंस एकेडमी, नई दिल्ली, पृ. सं. 136–212।

खण्ड –4, अंक – 1, वर्ष – 2016, मु0पृ0 63–66, D.O.I. :10.22445/avsp.v4i1.4381 समीक्षा एवं तकनीकी आलेख

कम्प्यूटर ग्राफिक्स में लीनियर अलजेबरा का प्रयोग तथा महत्व

प्रीति बाजपेई
प्रोफेसर, गणित विभाग एवं डीन, स्टूडेंट वेलफेयर
बी0आई0टी0एस पिलानी, यू0ए0ई0 परिसर, दुबई
dr.priti.bajpai@gmail.com

प्राप्त तिथि– 31.07.2016; स्वीकृत तिथि– 29.08.2016

सार– कम्प्यूटर ग्राफिक्स का प्रयोग आज खेल उद्योग, चलचित्र, क्लास रूम के लेक्चर, आर्किटेक्चर जैसे अनेक जगहों पर प्रचुर मात्रा में हो रहा है। जहाँ तक ग्राफिक्स की बात है उसका अस्तित्व लीनियर अलज़ेबरा के बगैर कुछ भी नहीं है। इस लेख में लीनियर अलज़ेबरा(रेखीय बीजगणित) किस प्रकार कम्प्यूटर ग्राफिक्स में सहयोगी सिद्ध होती है, को सरलता से समझाने का प्रयास किया गया है। कम्प्यूटर की स्क्रीन पर जो भी छवि हम देखते हैं उसे बनाने में, स्क्रीन पर लाने में और उसकी विभिन्न गतिविधियाँ अलग–अलग दिशाओं में दर्शाने के लिये लीनियर अलज़ेबरा का प्रयोग होता है। यह मैट्रसीज़ व लीनियर ट्रांसफॉरमेशन तथा कम्प्यूटर प्रोग्राम की मदद से सम्भव होता है।

बीज शब्द– कम्प्यूटर ग्राफिक्स, लीनियर अलजेब्रा, मैट्रसीज, लीनियर ट्रांसफॉरमेशन, कम्प्यूटर प्रोग्राम।

Application and importance of Linear Algebra in Computer Graphics

Priti Bajpai
Professor, Department of Mathematics
& Dean, Student Welfare, B.I.T.S. Pilani, U.A.E. Campus, Dubai
dr.priti.bajpai@gmail.com

Abstract- Today Computer Graphics is being used in many fields. Be it gaming industry, movies, architecture, in education sector for making class room teaching interesting or for making presentations for a business deal are some of them. It is interesting to know that Linear Algebra a branch of mathematics has made all this possible. In this paper we try to understand how images on the computer screen are scaled, translated and rotated using simple matrix transformations.

Key words- Computer Graphics, Linear Algebra, matrices, linear transformation, computer program.

कम्प्यूटर ग्राफिक्स में या तो वेक्टर या रैस्टर ग्राफिक्स का प्रयोग होता है। यहाँ हम वेक्टर ग्राफिक्स के विषय पर संक्षेप में चर्चा करेंगे। कोई भी छवि या तो द्वि–विमीय(2 डाईमेंशनल) या त्रि–विमीय(3 डाईमेंशनल) में बन सकती है। दोनों ही डाईमेंशन में छवि के कोनों के निर्देशांक एक मैट्रिक्स में रखे जाते हैं। उसकी वजह यह है कि कई संक्रियायें, मैट्रीसीज़ के प्रयोग से एक बार में ही हो जाती है, जो कि न ही कम्प्यूटर की स्टोरेज बचाता है बल्कि समय भी बचाता है। यहाँ हम किसी दिये आकार पर तीन प्रकार की क्रियाओं जिन्हें, स्केलिंग, ट्रांसलेशन व रोटेशन कहते हैं, को उदाहरण की सहायता से दोनों डाईमेंशन में समझाने का प्रयत्न करेंगे। अगर हम किसी ज्यामितीय आकार को लें तो उसे दर्शाने के लिये दो बातें आवश्यक हैं, कुछ बिंदु और उनके निर्देशांक व यह जानकारी कि बिंदु किस प्रकार जुड़े हैं। कितने बिंदु के निर्देशांक लेने हैं यह छवि के आकार पर निर्भर करता है। उदाहरण के तौर पर एक वर्ग लीजिये जिसके कोनों के निर्देशांक (0,0), (2,0), (2,2) व (0,2) हैं। ये निर्देशांक एक मैट्रिक्स में रखे जायेंगे और कम्प्यूटर में स्टोर होंगे। साथ में यह तथ्य कि कौन सा बिन्दु किससे जुड़ेगा, यानि प्रवाह क्या है, ये निर्देशांक मैट्रिक्स M_1 में नीचे दिये गये हैं–

$$M_1 = \begin{bmatrix} 0 & 2 & 2 & 0 \\ 0 & 0 & 2 & 2 \end{bmatrix}$$

अगर हम बहुभुज बनाना चाहते हैं तो उसके कोनों के निर्देशांक लेंगे। मान लीजिये हमें वर्ग के आकार को छोटा या बड़ा करना है, जिसे स्केलिंग कहा जाता है तो हम एक ट्रांसफारमेशन मैट्रिक्स

$$S_1 = \begin{bmatrix} S1 & 0 \\ 0 & S2 \end{bmatrix}$$ जहाँ S_1, S_2 चर राशि हैं को लेते हैं।

अगर $S_1 = S_2 = 3$ है तो

$$S_1M_1 = \begin{bmatrix} 3 & 0 \\ 0 & 3 \end{bmatrix}\begin{bmatrix} 0 & 2 & 2 & 0 \\ 0 & 0 & 2 & 2 \end{bmatrix} = \begin{bmatrix} 0 & 6 & 6 & 0 \\ 0 & 0 & 6 & 6 \end{bmatrix}$$

S_1M_1 हमें स्केल करे हुये वर्ग के निर्देशांक देता है। अब वर्ग का आकार 3 गुना हो गया है। पहले चित्र में मूल वर्ग तथा दूसरे में स्केल्ड वर्ग देखा जा सकता है। यहाँ ये जानना जरूरी है कि वर्ग के कोनों को ही ट्रांसफॉर्म किया जाता है न कि कोनों को जोड़ने वाली भुजा के हर बिन्दु को। क्योंकि कोनों को आसानी से बाद में रेखा से जोड़ा जा सकता है। वैसे भी भुजा के अनगिनत बिन्दुओं के निर्देशांकों को मैट्रिक्स में रखना असम्भव है। यदि हमें वृत्ताकार छवि बनाना है तो बिंदुओं को चाप से जोड़ा जायेगा जिसके लिए कलन विधि (Algorithm) का प्रयोग होता है। आकार को छोटा करने के लिये $S_i(i=1,2)$ के मान 0 से 1 के बीच का लेते हैं। यही स्केलिंग अगर 3D में करनी है तो वो भी इसी प्रकार होती है फर्क सिर्फ यह है कि स्केलिंग तीनों अक्षों (Axis) पर होगी। इसकी ट्रांसफॉरमेशन मैट्रिक्स S_2 होगी जिसका स्वरूप यह होगा–

$$S_2 = \begin{bmatrix} S1 & 0 & 0 \\ 0 & S2 & 0 \\ 0 & 0 & S3 \end{bmatrix}$$

मान लीजिये हम आकार को दायें, बायें या ऊपर, नीचे खिसकाना चाहते हैं तो इसे ट्रांसलेशन कहते हैं जो 2D और 3D दोनों में सम्भव है। 2D में यह मैट्रिसीज के गुणा करने से बड़ी सरलता से प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार ट्रांसफॉरमेशन मैट्रिक्स बनायी जाती है, जिसमें आखिरी संख्या 1 रहती है जिसे डमी कहा जाता है, उसका स्वरूप S_3 इस प्रकार होगा–

$$S_3 = \begin{bmatrix} 1 & 0 & a \\ 0 & 1 & b \\ 0 & 0 & 1 \end{bmatrix}$$

यहाँ जितना x, y एक्सिस पर खिसकाना है, उस प्रकार a ,b का मान लिया जाता है। लेकिन S_3 को M_1से गुणा करने के लिये उसका स्वरूप बदलना पड़ेगा जिसके लिये M_1 की आखिरी पंक्ति की हर संख्या 1 ली जायेगी। अगर उसे हम M_2 का नाम दे तो वह इस प्रकार होगी–

$$M_2 = \begin{bmatrix} 0 & 2 & 2 & 0 \\ 0 & 0 & 2 & 2 \\ 1 & 1 & 1 & 1 \end{bmatrix}$$

इन्हें सदृश निर्देशांक (Homogeneous Coordinates) भी कहते हैं। ऐसे ट्रांसलेशन को शियर ट्रांसलेशन भी कहते हैं। अगर हम वर्ग को 2 इकाई दायें और 2 इकाई ऊपर खिसकाना चाहते हैं तो नई जगह के निर्देशांक S_3M_2 से मिलेंगे। अगर $a = b = 2$

$$S_3M_2 = \begin{bmatrix} 1 & 0 & 2 \\ 0 & 1 & 2 \\ 0 & 0 & 1 \end{bmatrix}\begin{bmatrix} 0 & 2 & 2 & 0 \\ 0 & 0 & 2 & 2 \\ 1 & 1 & 1 & 1 \end{bmatrix} = \begin{bmatrix} 2 & 4 & 4 & 2 \\ 2 & 2 & 4 & 4 \\ 1 & 1 & 1 & 1 \end{bmatrix}$$

नये निर्देशांक (2, 2), (4, 2), (4, 4) और (2, 4) होंगे। नीचे दिया गया चित्र ट्रांसलेशन के पहले और बाद की छवि दर्शा रहा है।

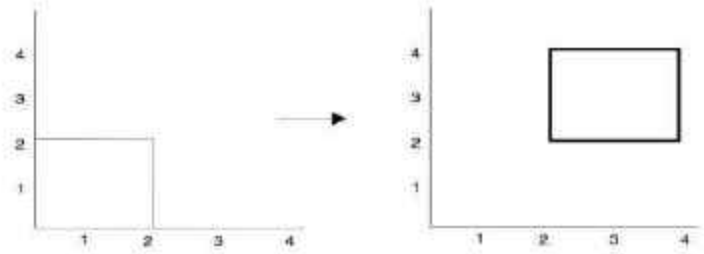

कम्प्यूटर ग्राफिक्स में विभिन्न सजीव या निर्जीव वस्तुओं को स्थानान्तरित होते या अपनी जगह से दूसरी जगह जाते दिखाया जाता है मान लीजिये एक पतंग को एक जगह से दूसरी जगह उड़ाना है या एक गेंद को एक जगह से दूसरी जगह फेंकना है तो आसानी से ट्रांसलेशन से यह दर्शाया जा सकता है, क्योंकि यहाँ पतंग या गेंद का आकार नहीं बदलता। नीचे दिये गये चित्रों से यह स्पष्ट है–

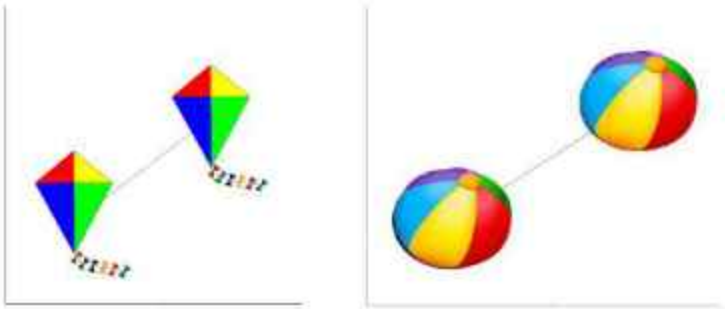

3D में भी ट्रांसलेशन इसी प्रकार होता है। यहाँ ट्रांसलेशन मैट्रिक्स

$$S_4=\begin{bmatrix}1 & 0 & 0 & a\\ 0 & 1 & 0 & b\\ 0 & 0 & 1 & c\\ 0 & 0 & 0 & 1\end{bmatrix}$$ होगी।

अब अगर किसी आकार को घुमाना है तो उसे रोटेशन कहते हैं। 2D में रोटेशन मैट्रिक्स S_5 होगी–

$$S_5=\begin{bmatrix}\cos\varphi & -sin\varphi & 0\\ sin\varphi & -\cos\varphi & 0\\ 0 & 0 & 1\end{bmatrix}$$

अगर हमें आकार को 45° घड़ी की विपरीत दिशा में घुमाना है तो

$$S_5=\begin{bmatrix}0.7 & -0.7 & 0\\ 0.7 & 0.7 & 0\\ 0 & 0 & 1\end{bmatrix}$$ होगी और नये निर्देशांक होंगे–

$$S_5M_2=\begin{bmatrix}0.7 & -0.7 & 0\\ 0.7 & 0.7 & 0\\ 0 & 0 & 1\end{bmatrix}\begin{bmatrix}0 & 2 & 2 & 0\\ 0 & 0 & 2 & 2\\ 1 & 1 & 1 & 1\end{bmatrix}=\begin{bmatrix}0 & 1.4 & 0 & -1.4\\ 0 & 1.4 & 2.8 & 1.4\\ 1 & 1 & 1 & 1\end{bmatrix}$$

नीचे दिये गये चित्र में यह दिखलाया गया है–

अगर वर्ग के केन्द्र(0.5, 0.5) पर दिए आकार को घुमाना है तो वर्ग के केन्द्र को(0, 0) पर लाना होगा फिर रोटेशन करके वापस ट्रांसलेशन करना होगा। यह इस प्रकार होगा–

$$(S_6^{-1}S_5S_6)\ M_2 = \begin{bmatrix}1 & 0 & 0.5\\ 0 & 1 & 0.5\\ 0 & 0 & 1\end{bmatrix}\begin{bmatrix}0.7 & -0.7 & 0\\ 0.7 & 0.7 & 0\\ 0 & 0 & 1\end{bmatrix}\begin{bmatrix}1 & 0 & -0.5\\ 0 & 1 & -0.5\\ 0 & 0 & 1\end{bmatrix}\begin{bmatrix}0 & 2 & 2 & 0\\ 0 & 0 & 2 & 2\\ 1 & 1 & 1 & 1\end{bmatrix} =$$

$$\begin{bmatrix}0.5 & 1.9 & 0.5 & -0.9\\ -0.2 & 1.2 & 2.6 & 1.2\\ 1 & 1 & 1 & 1\end{bmatrix}$$

(0.5,-0.2), (1.9,1.2), (0.5, 2.6),(-0.9,1.2) नये निर्देशांक होंगे। वर्ग का नया आकार चित्र में प्रदर्शित है।

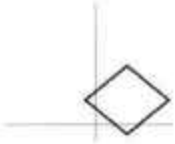

3D में रोटेशन तीनों अक्षों पर हो सकता है तो मैट्रिक्स ऑफ रोटेशन तीन होंगी–

$$S_7(X) = \begin{bmatrix}1 & 0 & 0\\ 0 & \cos\varphi & -\sin\varphi\\ 0 & \sin\varphi & \cos\varphi\end{bmatrix} \rightarrow \quad \text{x- अक्ष पर}$$

$$S_8(Y) = \begin{bmatrix}\cos\varphi & 0 & \sin\varphi\\ 0 & 1 & 0\\ -\sin\varphi & 0 & \cos\varphi\end{bmatrix} \rightarrow \quad \text{y- अक्ष पर}$$

$$S_9(Z) = \begin{bmatrix}\cos\varphi & -\sin\varphi & 0\\ \sin\varphi & \cos\varphi & 0\\ 0 & 0 & 1\end{bmatrix} \rightarrow \quad \text{z- अक्ष पर}$$

यहाँ ये जानना आवश्यक है कि बहुधा कॉमपोज़िट ट्रांसफॉरमेशन यानि ऊपर दिये ट्रांसफॉरमेशन को साथ में काम में लाया जाता है। आज वीडियो गेम्स हों या चलचित्र सभी में कम्प्यूटर ग्राफिक्स के प्रयोग से, दृश्य ही नही अपितु मानवीय आकृतियों को भी सजीव और वास्तविक दिखाया जा रहा है। विज्ञान के क्षेत्र में भी ये प्रयोग में लाया जा रहा है जैसे– बायोलॉजी में मॉलिक्यूलर मॉडलिंग आदि। विज्ञापनों के बनाने में भी यह बहुत सहायक है।

आभार– लेखिका भाविका व अरघासेन, सिद्धार्थ लाहोटी, अखिलेश तथा श्री टी0 एन0 मिश्र के सहयोग के लिये अत्यन्त आभारी है।

संदर्भ

1. डेविडसी, ले0(2003) लीनियर अलजेबरा एण्ड इट्स एप्लिकेशन्स, बोस्टन एडिसन वैसले।
2. www.math.washington.edu/nking/coursedir/m308901/prefects/m308901-pdf/zip.pdf
3. www.cs.brown.edu/courses/cs123/lectures/viewing3.pdf

दंत–क्षयः कारण व रोकथाम

अर्चना रानी[1] एवं जे0 पी0 गुप्ता[2]
[1]प्रोफेसर, शरीर रचना विभाग, किंग जार्ज चिकित्सा विश्वविद्यालय, लखनऊ–226003, उ0प्र0, भारत
[2]डेन्टल सर्जन, पी0एम0एच0एस0, यू0पी0, भारत
archana71gupta@yahoo.co.in

प्राप्त तिथि– 28.07.2016; स्वीकृत तिथि–18.09.2016

सार– दंत क्षय या दंत–क्षरण एक बीमारी है जिसमें जीवाण्विक प्रक्रियाएँ दाँतों को क्षतिग्रस्त कर देती हैं। इससे दाँत में दर्द और खाने में दिक्कत होती है। भोज्य पदार्थ जिनमें ग्लूकोज़ की अधिकता होती है, वो असुरक्षित होते हैं। दाँत की नियमित सफाई, कम शर्करायुक्त भोज्य पदार्थ एवं थोड़ी मात्रा में फ्लोराइड इसकी रोकथाम में सहायक हो सकता है। एक बार दंत–छिद्र बन जाने पर, दाँत की पुर्नस्थापना की आवश्यकता होती है। एन्डोडॉन्टिक उपचार की भी जरूरत दंत पुर्नस्थापना में पड़ सकती है। दाँत के बहुत अधिक नष्ट होने पर उच्छेदन की आवश्यकता पड़ सकती है।

बीज शब्दः दाँत, क्षय, छिद्र, शर्करा, पुर्नस्थापना।

Dental caries: causes and prevention

Archana Rani[1] and J. P. Gupta[2]
[1]Professor, Department of Anatomy
King George's Medical University-226003, U.P., India
[2]Dental Surgeon, Provincial Medical Health Services, U.P., India
archana71gupta@yahoo.co.in

Abstract- Dental caries or tooth decay is a damage of tooth due to activities of bacteria. There is pain and difficulty with eating. A diet high in simple sugar is a risk factor. Regular cleaning of the teeth, a diet low in sugar, and small amounts of fluoride can prevent this condition. Once a lesion has cavitated, a dental restoration in indicated. Endodontic therapy may be required for the restoration of a tooth. Extraction may be required if the tooth is destroyed too far.

Keywords: Tooth, Caries, Cavity, Sugar, Restoration.

1. **भूमिका**– दंत क्षय, जिसे दंत छिद्र(कैविटीज़) भी कहा जाता है, जिसमें विभिन्न प्रकार के जीवाणु दाँत के ऊतकों को नष्ट कर देते हैं। इसके कारण ऊतक टूटने लगते हैं और दाँतों में छिद्र उत्पन्न हो जाते हैं। यह मुख्य रूप से दो जीवाणुओं के कारण होता हैः स्ट्रेप्टोकॉकस म्युटान्स(*Streptococcus mutans*) और लैक्टोबेसिलस (*Lactobacillus*)। इसका सही समय पर इलाज न करने से दाँतों में दर्द, संक्रमण, मवाद व खून आना तथा दाँतों का गिरना हो सकता है। जीवाणु दाँत की सख्त संरचना(दन्तवल्क, दन्त–ऊतक और दंतमूल) को जीवाण्विक प्रक्रियाओं द्वारा क्षतिग्रस्त कर देते हैं। यह जीवाणु मूल रूप से दाँतों की सतह पर लगे किण्वन–योग्य कार्बोहाइड्रेट्स जैसे सुक्रोज, फ्रक्टोज और ग्लूकोज की उपस्थिति में दाँतों को क्षति पहुँचाते हैं।[1,2,3] दाँतों की अखनीजीकरण(diminералization) और पुनर्खनिजीकरण(remineralization) की सतत् प्रक्रिया चलती रहती है। जब दाँत की सतह पर पीएच(pH) 5.5 से नीचे चला जाता है, तो पुनर्खनिजीकरण अधिक तेजी से होने लगता है जिसके कारण दाँत का क्षरण होता है। भोज्य पदार्थ जिनमें ग्लूकोज की मात्रा अधिक होती है, वो दाँतों के लिए हानिकारक है। मधुमेह से ग्रस्त लोगों में भी दंत क्षय होने की सम्भावना अधिक होती है।

2. **वर्गीकरण**– दंत क्षय का वर्गीकरण, प्रभावित ऊतकों के आधार पर किया जा सकता है।[4] यह दाँतों की किसी विशिष्ट सतह पर होने वाले क्षय को उनकी स्थिति के द्वारा भी वर्णित किया जा सकता है। दाँत की जो सतह गालों या होठों से निकट होती है, उन पर होने वाले क्षरण को "आननमुख क्षरण"(facial caries) कहा जाता है और जीभ की ओर स्थित सतह पर होने वाला क्षरण, "जिह्वीय क्षरण"(lingual caries) कहलाता है। क्षरण यदि दाँत की ग्रीवा के पास हो तो उसे "ग्रैव क्षरण"(cervival caries) कहते हैं। दंत क्षय का वर्णन अन्य प्रकार से भी किया जा सकता है। "शिशु बोतल क्षरण" या "प्रारम्भिक शैशव क्षरण", अस्थायी दाँतों में पाया

जाने वाला एक पैटर्न है। इसमें अग्र भाग पर स्थित दाँतों पर सबसे ज्यादा प्रभाव पड़ता है। अत्यधिक फैलने वाला क्षरण मुँह सूखने की बीमारी(xerostomia) से ग्रस्त, मुँह के स्वास्थ्य का ध्यान न रखने वाले, उत्तेजक पदार्थों के प्रयोग अथवा चीनी का अधिक सेवन करने वाले व्यक्तियों में देखा जा सकता है।

3. **प्रगति की दर**– तीव्र गति से विकसित होने वाले दंत क्षय को "तीव्र(Acute)" जबकि लम्बे समय के अन्तराल के बाद होने वाले क्षय को "दीर्घकालिक(Chronic)" कहा जाता है।

4. **संकेत व लक्षण**– क्षरणग्रस्त घाव का सबसे पहला संकेत, दाँत की सतह पर एक खड़ियामय सफेद धब्बे के रूप में मिलता है। यह उस क्षेत्र में दन्तवल्क के अखनिजीकरण को प्रदर्शित करता है। तत्पश्चात यह भूरे रंग में बदल सकता है, और अंततः एक कोटख(छिद्र) में बदल जाता है। छूने पर यह क्षेत्र मुलायम महसूस होते हैं। जब यह क्षरण, दंतबल्क से होकर गुजर जाता है तो दाँतों की नलिकाएँ, जिनमें दाँत की नसों तक जाने का मार्ग होता है, उजागर हो जाती हैं, जिससे दाँत में दर्द होने लगता है। गर्म, ठंडे या मीठे भोजन पेय के सम्पर्क में आने पर यह दर्द और अधिक बढ़ सकता है। इसके कारण सांसों में बदबू और विकृत स्वाद जैसी समस्याएँ भी हो सकती हैं।

5. **कारण**– दंत क्षरण के निर्माण के लिए चार मुख्य मापदण्डों की आवश्यकता होती है– दाँत की सतह, क्षरण उत्पन्न करने वाले जीवाणु, किण्वन योग्य कार्बोहाइड्रेट(जैसे सुक्रोज) और समय।[5] अमेलोजेनेसिस इम्पर्फेक्टा, जो 718–14000 व्यक्तियों में से एक व्यक्ति को होता है। इसमें दन्तबल्क या तो निर्मित ही नहीं होता या अपर्याप्त मात्रा में निर्मित होता है और दाँतों से गिर सकता है।[6] कुछ मौखिक जीवाणु जिनमें *स्ट्रेप्टोकॉकस म्युटान्स* और *लैक्टोबैसिली* दंत क्षय के लिए उत्तरदायी है।

दाँतों और मसूड़ों के आस–पास जीवाणु एक विपचिपे, मलाई जैसे रंग के पदार्थ में जमा हो जाते हैं, जिसे प्लाक कहा जाता है। मुँह में उपस्थित जीवाणु आमतौर पर सुक्रोज को ग्लाइकोलिटिक प्रक्रिया द्वारा लैक्टिक अम्ल में परिवर्तित कर देते हैं। दाँतों के सम्पर्क में आने पर ये अम्ल अखनिजीकरण का कारण बनते हैं। फ्लोराइड युक्त टूथपेस्ट अथवा दंत वार्निश पुनर्खनिजीकरण में सहायक हो सकते हैं।[7]

कुछ बीमारियों में लार की मात्रा में कमी होने से भी दंत क्षरण होने की सम्भावना होती है। जैसे स्जोग्रेन सिण्ड्रोम(Sjogen's syndrome), मधुमेह(diabetes) तथा सार्काइडॉसिस(Sarcoidosis) शामिल है। एण्टीहिस्टामीन(Antihistamines) और अवसादरोधी (antidepressants) दवाएँ भी लार के प्रवाह को खण्डित कर सकती हैं। भाँग के पौधे में पाया जाने वाला रासायनिक पदार्थ, टेट्राडाइड्रोकैनाविनॉल भी लार के प्रवाह को पूरी तरह रोक देता है और इसे "कॉटन माउथ" कहते हैं। अत्यधिक शर्करायुक्त पेय तथा अपौष्टिक खाद्य पदार्थ(junk food) का सेवन भी दंत क्षय का मुख्य कारण है। तम्बाकू का प्रयोग भी एक जोखिम कारक है जो मसूड़ों को पीछे धकेल देता है। इसके कारण मसूड़ों का दाँतों से जुड़ाव शिथिल हो जाता है।

6. **निदान एवं उपचार**– दंत रेडियोग्राफ (एक्स–रे) की सहायता से छोटे घावों को आसानी से देखा जा सकता है। छोटे घावों के लिये, फ्लोराइड का प्रयोग पुनर्खनिजीकरण को प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है। बड़े घावों के लिए, दंत क्षय की प्रगति को उपचार के द्वारा रोका जा सकता है। क्षतिग्रस्त पदार्थ के बड़े भाग को दाँत से निकालने के लिए एक दंत हैण्डपीस(ड्रिल) का प्रयोग किया जाता है। दंत पुनर्स्थापना में दंत सम्मिश्रण, मिश्रित राल, चीनी मिट्टी और स्वर्ण पदार्थों की आवश्यकता होती है।

कुछ विशिष्ट स्थितियों में दाँत की पुनर्स्थापना के लिए एन्डोडॉन्टिक उपचार करना आवश्यक हो सकता है। इसे "रूट कनाल" उपचार भी कहा जाता है। उच्छेदन भी दांतों के क्षरण का एक उपचार हो सकता है। क्षतिग्रस्त दाँत को हटाने का निर्णय तब लिया जाता है, जब दाँत इतना अधिक नष्ट हो चुका हो कि उसे प्रभावी रूप से पुनर्स्थापित न किया जा सकता हो।

7. **रोकथाम**

मौखिक स्वच्छता– प्रतिदिन ठीक से दाँत साफ करना(brushing) और मुलायम धागे से सफाई करना(flossing) आवश्यक है। इसका उद्देश्य प्लाक को हटाना और उसका निर्माण रोकना होता है। अन्य सहायक विधियों में अंतर्दंत ब्रश, वॉटर पिक और माउथवॉश शामिल हैं।

आहारीय संशोधन– शर्करा युक्त भोजन व पेय पदार्थों के सेवन की आवृत्ति को कम करना चाहिए। भोजन के बाद ब्रश से दाँतों की सफाई करनी चाहिए। भोजन के बाद च्युइंग गम चबाना लार के प्रवाह को बढ़ाता है, जो अम्लीय पीएच वातावरण को प्राकृतिक रूप से कम करती है और पुनर्खनिजीकरण को प्रोत्साहित करती है।

8. **निष्कर्ष**– वर्तमान में दाँत क्षय पूरे विश्व में सबसे आम बीमारी बना हुआ है। दाँत को पुनः उपयुक्त स्वरूप, कार्य व सौन्दर्य में वापस लाने के लिए विभिन्न उपचार किये जा सकते हैं, लेकिन दांत की संरचना की पूर्ण पुनर्प्राप्ति के लिए कोई ज्ञात विधि नहीं है। अतः नियमित मौखिक स्वच्छता और आहार में परिवर्तन करके इससे बचा सकता है।

सन्दर्भ

1. हार्डी जे0 एम0(1982) द माइक्रोबायोलोजी ऑफ डेन्टल केरीज़, डेन्टल अपडेट, खण्ड–9, अंक 4, मु0प्र0 199–200, 202–204, 206–208।
2. हौलोवे पी0 जी0 एवं मूरे डब्लू.जे.(1983) द रोल ऑफ शुगर इन द इटियोलोजी ऑफ डेन्टल केरीज़, जर्नल ऑफ डेन्टिस्ट्री, खण्ड–11, अंक–3, मु0पृ0 189–213।
3. रॉजर्स ए0 एच0(2008) मॉलिकुलर ओरल माइक्रोबायोलोजी, केस्टर एकेडेमिक प्रेस।
4. सोनिस, स्टीफेन टी0(2003) डेन्टल सीक्रेट्स। तृतीय संस्करण, फिलाडेल्फियाः हेनले और वेलफस, मु0पृ0 130।
5. साउथेम, जे0 सी0 एवं सोएम्स जे0 वी0(1993) डेन्टल केरीज़, ओरल पैथालोजी, द्वितीय संस्करण, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड, यू0के0।
6. नेविल बी0 डब्ल्य; डगलस, डैम; कार्ल एलन एवं जैरी, बौघोट(2002) ओरल एण्ड मैक्सिलोफेशियल पैथोलॉजी, द्वितीय संसकरण, मु0पृ0 89।
7. सिल्वरस्टोन, एल0 एम0(1983) रीमिनरलाइजेशन एण्ड इनामेल केरीज़ः न्यू कॉन्सेप्ट्स। डेन्टल अपडेट, खण्ड–10, अंक–4, मु0पृ0 261–273।

विधि रसायनशास्त्री की अपराध अन्वेषण में भूमिका

देवेन्द्र कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drdgupta65@gmail.com

प्राप्त तिथि– 31.07.2016; स्वीकृत तिथि– 25.08.2016

सार– इडमुंड लोकार्ड, विधि रसायनशास्त्र के जनक हैं। फोरेंसिक का तात्पर्य वैज्ञानिक प्रयोग या विधि द्वारा अपराध का परीक्षण करना है। एक विधि चिकित्सक प्रायः कानूनी मामलों में प्रयुक्त बहुत से पदार्थों का विश्लेषण करता है। विधि रसायनशास्त्री अपराध स्थल पर पाये गये संदिग्ध पदार्थों की पहचान करता है। विधि रसायनशास्त्री जी.सी–एम.एस.(गैस वर्णलेखन–द्रव्यमान स्पेक्ट्रोस्कोपी) विश्लेषण, ए0ए0एस(परमाणुक अवशोषण स्पेक्ट्रोस्कोपी), एफ.टी.आई.आर.एस.(फोरियर ट्रांसफॉर्म अवरक्त स्पेक्ट्रोस्कोपी), टी.एल.सी.(थिन लेयर वर्ण लेखन) का उपयोग करता है। पदार्थों के पहचान में ए0ए0एस विनाशात्मक तथा एफ0टी0आई0आर0 अविनाशात्मक विधि है।

बीज शब्द– इडमुंड लोकार्ड, गैस वर्णलेखन–द्रव्यमान स्पेक्ट्रोस्कोपी, परमाणुक अवशोषण स्पेक्ट्रोस्कोपी, फोरियर ट्रांसफॉर्म अवरक्त स्पेक्ट्रोस्कोपी।

Role of Forensic Chemist in crime investigation

Devendra Kumar
Assistant Professor, Department of Chemistry
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P, India
drdgupta65@gmail.com

Abstract- Edmund Locard is the father of Forensic Chemistry. Forensic means scientific test or techniques used in connection with detection of crime. A Forensic Physician analyzes a variety of suspected substances, most often for law enforcement purposes. A Forensic Chemist can assist in the identification of unknown material found at a crime scene. Forensic Chemist uses G.C.-M.S.(Gas Chromatography- Mass Spectroscopy) analysis, A.A.S.(Atomic Absorption Spectroscopy), F.T.I.R.S.(Fourier Transform Infrared Spectroscopy), T.L.C.(Thin Layer Chromatography). A.A.S. is destructive and F.T.I.R.S is a non-destructive process to identify a substance.

Key words- Edmund Locard, Gas Chromatography–Mass Spectroscopy, Atomic Absorption Spectroscopy, Fourier Transform Infrared Spectroscopy.

1. **प्रस्तावना**– फोरेंसिक शब्द[1], लैटिन भाषा के फोरेंसिस शब्द से लिया गया है जिसका तात्पर्य है– "अदालत के पहले या अदालत का"। विधि रसायनशास्त्र प्रतिबंधित दवायें, बारूद तथा विस्फोटकों के अवशेषों का विश्लेषण एवं पहचान करता है। विधि चिकित्सा विज्ञान एक लीगल सेंटिग(विधि साँठ–गाँठ) है। विधि चिकित्सा शास्त्री अपराध स्थल पर पाये जाने वाले संदिग्ध वस्तुओं का परीक्षण करता है[2]। इस परीक्षण में गैस वर्णलेखन–द्रव्यमान स्पेक्ट्रोस्कोपी(जी.सी.–एम.एस.), फोरियर ट्रांसफॉर्म अवरक्त किरण(एफ.टी.आई.आर.), स्पेक्ट्रोमीटर इत्यादि मुख्य हैं। जी.सी.–एम.एस. विधि को फ्रेड मैक लैफर्टी एवं रोलैण्ड गोहलके ने सन् 1955 में दिया था। इस विधि को स्वर्ण मानक माना जाता है क्योंकि इस विधि में संदिग्ध पदार्थ की सूक्ष्म मात्रा प्रयोग में लायी जाती है तथा यह संवेदनशील विधि है[3]। विधि रसायनशास्त्र मे रसायन विज्ञान का बहुत ही योगदान है। डी0एन0ए0 अपने आप में एक अणु है। अपराध स्थल पर पाये जाने वाले डी0एन0ए0 अणु के अध्ययन में अपराधी के कुछ आनुवंशिक लक्षणों का पता लगाया जा सकता है। एक विधि चिकित्साशास्त्री को प्रयोगशाला में कुछ कठिन विधियों का अनुपालन करना होता है, इन्हें घंटों बैठकर या खड़े होकर एक ही पदार्थ का कई बार परीक्षण करना पड़ता है। इन

परीक्षणों में एक्स–किरणें, पराबैंगनी किरणें, गैस वर्णलेखन, सूक्ष्मदर्शी इत्यादि का उपयोग होता है। साथ ही पाये गये प्रत्येक परीक्षण के परिणामों को सूचीबद्ध करना होता है तथा अदालतों में इसे ठोस साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करना पड़ता है।

2. **प्रयोग विधि**– एक विधि रसायनशास्त्री अपराध स्थल पर पाये जाने वाले संदिग्ध पदार्थों का पहचान विनाशात्मक एवं अविनाशात्मक विधि से करता है। जहाँ तक सम्भव हो, अविनाशात्मक विधि का प्रयोग पहले किया जाता है जिससे कि संदिग्ध वस्तु का परीक्षण भविष्य में पुनः भी किया जा सके[4]। संदिग्ध पदार्थों की जाँच में प्रायः दो मुख्य स्पेक्ट्रोस्कोपी का उपयोग होता है– एफ.टी.आई.आर.(फोरियर ट्रांसफॉर्म अवरक्त किरण), स्पेक्ट्रोस्कोपी तथा ए.ए.एस.(परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रोस्कोपी)। एफ.टी.आई.आर. एक अविनाशात्मक विधि है, इसमें अवरक्त किरणों का उपयोग पदार्थों के पहचानने में किया जाता है। पहले अवरक्त किरण स्पेक्ट्रोस्कोपी में पदार्थ का सीधे परीक्षण नहीं किया जाता था लेकिन अब एटैन्यूटेड(कमजोर करना) टोटल रैफलैक्टिंग सैंपलिंग टेकनीक में संदिग्ध पदार्थ का सीधे परीक्षण किया जाता है[5]। ए.ए.एस. एक विनाशानात्मक विधि है। इसके द्वारा संदिग्ध पदार्थ में पाये जाने वाले भारी तत्वों जैसे– आर्सेनिक, लेड, मरकरी, कैडमियम आदि का विश्लेषण किया जाता है। संदिग्ध पदार्थ में तत्व का सांद्रण, अवशोषित प्रकाश के अनुक्रमानुपाती होता है[6]। भारी तत्वों जैसे– आर्सेनिक, लेड, मरकरी, कैडमियम इत्यादि का परीक्षण उत्सर्जित स्पेक्ट्रोस्कोपी, एक्स–किरण विवर्तन विधि तथा रिंज टेस्ट द्वारा किया जाता है।

3. **नमूनीकरण**– मानव शरीर में एक रसायन निगलने के पश्चात उसका अपना वास्तविक अवस्था में रहना बहुत ही मुश्किल होता है क्योंकि शरीर की जैव रसायनिक अभिक्रियाएं उसे दूसरे यौगिकों मे परिवर्तित कर देती हैं। जैसे शरीर मे हेरोईन तुरन्त ही कुछ जैवरसायनिक अभिक्रियाओं के दौरान मॉर्फीन में बदल जाती है। संदिग्ध पदार्थ का, शरीर में परीक्षण के लिये निम्नलिखित नमूना लिया जाता है–

(अ) **रूधिर नमूना**– लगभग 10 मिली रूधिर लेकर परीक्षण किया जाता है। रूधिर में एल्कोहल की मात्रा का भी परीक्षण किया जाता है जिससे पता लग सके कि वाहन चालक में एल्कोहल की कितनी मात्रा थी?
(ब) **मूत्र नमूना**– पोस्ट मार्टेम(शव–परीक्षण) के दौरान मृत व्यक्ति के मूत्राशय से मूत्र निकाल करके परीक्षण किया जाता है। मूत्र एच.आई.वी. या हेपेटाइटिस बी के विषाणु के द्वारा रक्त के संक्रमित होने की तुलना में कम संक्रमित होता है[7]। बहुत से मादक पदार्थों व विष की मूत्र में सान्द्रता रूधिर की तुलना में अधिक होती है तथा बहुत समय तक रहती है।
(स) **केश नमूना**– केश अपने Follicle(कोश) के अन्दर ड्रग की मात्रा को अधिक दिनों तक संग्रहित कर सकता है। रूधिर के द्वारा ड्रग, केश के Follicle(कोश) में पहुँचता है। सिर के बाल लगभग एक महीने में एक से 1.5 सेमी. तक बढ़ते हैं, इसलिये बाल के अनुप्रस्थ काट से यह पता लग सकता है कि ड्रग कब दिया गया होगा।
(द) आमाशयी रस
(य) लार
(र) नेत्र काचाभं द्रव
(ल) मस्तिष्क
(व) यकृत
(श) पित्ताशय इत्यादि।

4. **व्याख्या**– अग्निकांड के दौरान विधि रसायनशास्त्री अग्नि स्थल पर पाये गये पदार्थों विश्लेषण के आधार पर यह निर्धारित करता है कि यह अग्नि कैसे लगी, यदि अग्नि स्थल पर पाये गये पदार्थों में गैसोलीन या केरोसीन तेल का प्रयोग हुआ हो तो यह अग्निकांड किसी के द्वारा किया गया होगा[8]। अपराध स्थल पर कौन से विस्फोटकों का प्रयोग हुआ है, के आधार पर विधि रसायनशास्त्री यह जानकारी देता है कि इस विस्फोट में सेना के द्वारा प्रयुक्त होने वाला विस्फोटक पदार्थ का प्रयोग हुआ है कि विध्वंसक संगठन के द्वारा प्रयुक्त होने वाला विस्फोटक उपयोग में लाया गया है। विस्फोटक स्थल पर यदि विस्फोटक आर.डी.एक्स. का उपयोग हुआ है तो सैनिकों द्वारा उपयोग में लाया जाने वाला विस्फोटक पदार्थ का उपयोग हुआ है परन्तु विस्फोट स्थल पर यदि विस्फोटक टी.एन.टी. है तो संदेह सेना तथा विध्वंसक संगठन पर जाता है[9]।

जहरखुरानी के दौरान मृत्यु होने पर विधि रसायनशास्त्री, शरीर में आर्सेनिक, स्ट्राइचिनिन, हेमलॉक, क्यूरेयर इत्यादि का परीक्षण करता है[10]। जेम्स मार्श ने आर्सेनिक परीक्षण के लिये मार्श परीक्षण दिया है जिसका उपयोग मर्डर ट्रायल के लिये किया जाता है[11]। जीन स्टॉस ने मानव ऊतक में पाये जाने वाले जहरीले पदार्थ जैसे–कैफीन, क्वीनीन, मॉर्फीन, स्ट्राइचिन, एट्रोपिन, ओपियम इत्यादि की परीक्षण की विधि दी[12]।

आभार– लेखक बी0एस0एन0वी0पी0जी कॉलेज के प्राचार्य श्री राकेश चन्द्रा, रसायन विज्ञान के अध्यक्ष डॉ0 एन0 के0 अवस्थी तथा अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका) के संपादक डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव का आभारी है, जिन्होंने लेख प्रस्तुत करने में मदद की।

संदर्भ

1. शार्टर ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी(छठा संस्करण), ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, वर्ष–2007, आई.एस.बी.एन. 978–0–19–920687–2।
2. ए सिम्पलीफाइड गाइड को फोरेंसिक ड्रग केमेस्ट्री, सितम्बर 24, 2015।
3. कपूर, बी0 एम0(1993) ''ड्रग–टेस्टिंग मेथड्स एण्ड क्लीनिकल इंटरप्रिटेशन ऑफ टेस्ट रिजल्ट'' बुलेटिन ऑन नार्कोटिक्स, खण्ड–45, अंक–2, मु0पृ0 115–154, रिट्राइव्ड सितम्बर 27, 2015।
4. ''फोरेंसिक साइंस कम्यूनिकेशन'', फेडरल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टीगेशन, अप्रैल 2006, रिट्राइव्ड सितम्बर 24, 2015।
5. एनजीलास, सैनफोर्ड एवं गैरी, माइक(2011, 5 अगस्त), ''सिज्ड ड्रग एनालिसिस यूजिंग एफ.टी–आई.आर. एण्ड मिक्सचर सर्चिंग फॉर मोर इफेक्टिव आइडेंटीफिकेशन'', फोरेंसिक मैगजीन, रिट्राइव्ड अक्टूबर 6, 2015।
6. ''एटॉमिक एब्जार्पशन स्पेक्ट्रोस्कोपी(ए.ए.एस.)'', इजी केमेस्ट्री, रिट्राइव्ड 7 अक्टूबर, 2015।
7. डेनिस–ओलिवेश, आर0 एवं मगलहेश, टी0 टी0(2010).''कलेक्शन ऑफ बायोलॉजिकल सैम्पल्स इन फोरेंसिक टॉक्सिकोलॉजी'', ''टॉक्सिकोलॉजी मेकेनिज्म एण्ड मेथड, खण्ड–20, अंक–7, मु0पृ0 363–414।
8. स्टर्न, वाल(2015) ''माडर्न मेथड्स ऑफ इक्सीलरेंट एनालिसिस'', टी.सी., फोरेंसिक, रिट्राइव्ड 28 अक्टूबर, 2015।
9. ''कॉमन एक्सप्लोसिव'' द नेशनल काउंटर टेररिज्म सेन्टर, रिट्राइव्ड 28 अक्टूबर, 2015।
10. सिलेनिया, मिस(3 नवम्बर 2009) ''5 क्लासिक प्वाइजनस एण्ड द पीपुल यूज्ड देम'' मेंटल फ्लॉज, रिट्राइव्ड सितम्बर 24, 2015।
11. वॉटसन, स्टेफनि(9 जून, 2008) ''हाऊ फोरेंसिक लैब टेकनिक वर्क'', हाऊ स्टाफ वर्क्स, रिट्राइव्ड सितम्बर 24, 2015।
12. ''टेक्नोलॉजीज'', नेशनल लाइब्रेरी ऑफ मेडिसिन(2014, 5 जून), रिट्राइव्ड सितम्बर 25, 2015।

पादप परजीवी सूत्रकृमि(निमेटोड्स)

मोहित कुमार तिवारी[1] एवं प्रतिभा गुप्ता[2]
[1]जीव विज्ञान विभाग, लखनऊ क्रिश्चियन कॉलेज, लखनऊ–226018 उ0प्र0, भारत
[2]भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार
आई0एस0आईएम0 कोलकता–700016, प0बं0, भारत
drmohit2008@gmail.com, drpratibha2011@rediffmail.com

प्राप्त तिथि–31.07.2016; स्वीकृत तिथि– 02.09.2016

सार– सूत्रकृमि(निमेटोड्स) की लगभग 15% प्रजातियां पादप परजीवी होती हैं, जो भारत सहित विश्व के अधिकांश देशों में विभिन्न फसलों को गम्भीर हानि पहुँचाती हैं और पूरे विश्व को पादप परजीवी सूत्र कृमियों के कारण लगभग 4500 करोड़ रूपयों की हानि होती है। ये चीड़, साइट्रस पेड़ों, नारियल, धान, मकई, मूँगफली, सोयाबीन, शकरकंद, चुकन्दर, आलू, केला इत्यादि को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं। सूत्र कृमि मृदा से पौधों की जड़ों में प्रवेश कर पौधों की जड़ तने, पत्ती, फूल व बीज को संक्रमित करते हैं। पौधों में इनका संक्रमण सूत्रकृमि की द्वितीय डिम्भक अवस्था द्वारा होता है। सूत्रकृमि एक स्थान से दूसरे स्थान तक संक्रमित मृदा लगे खेती के औजारों, हल, जूतों, पानी के प्रवाह, संक्रमित पौधों व कृषि उत्पादों के द्वारा फैलता है। इनका नियंत्रण मृदा के धूम्रिकरण, रसायनों व सूत्रकृमि परभक्षियों द्वारा किया जा सकता है।

बीज शब्द– सूत्रकृमि, द्वितीय डिम्मक अवस्था, पादप परजीवी सूत्रकृमि, मूल ग्रंथि, बीज ग्रंथि, धूम्रिकरण।

Plant Parasitic Thread Worms (Nematodes)

Mohit Kumar Tiwari[1] and Pratibha Gupta[2]
[1]Deptt. of Biological Sciences, Lucknow Christian College, Lucknow-226018, U.P., India
[2]Botanical Survey of India, Ministry of MOEFCC, Govt. of India
I.S.I.M. Kolkata-700016, W.B., India
drmohit2008@gmail.com , drpratibha2011@rediffmail.com

Abstract- About 15% species of these parasites are plant parasitic causing severe threat to various crops all over the world including India. Plant parasitic nematodes are responsible for loss of about 45 billion rupees all over the world. Plant nematodes can infect Pine, Citrus plants, Coconut, Rice crop, Maize ,Peanut, Soya bean, Banana, Potato, Sweet potato, Beat etc. causing infection of root, stem leaf, flower and seed etc. Source of infection is contaminated soil containing eggs or larvae of infective plant nematode which enter in host plant through root in 2nd juvenile larval stage. This infection spreads from one place to other with contaminated soil, farmers instruments, shoes, flow of water and with infected plants and plant product. Plant nematodes are controlled by fumigation, chemicals and plant nematode predators.

Key words- Nematode, 2nd juvenile stage, plant parasitic nematodes, root knot, seed knot, fumigation.

1. **प्रस्तावना**– निमेटोड्स अर्थात् सूत्रकृमियों का विकास उद्भव लगभग 1 अरब वर्ष पूर्व हुआ था, उनके जीवाश्म 12 से 13 करोड़ वर्ष पुराने हैं, यह एक अत्यन्त प्राचीन एवं विविधता से परिपूर्ण संघ है, लगभग 1 अरब वर्ष पूर्व विकसित हुये थे, ये जीव स्वतंत्रजीवी तथा जन्तु एवं पादप परजीवी होते हैं। मानव परजीवी सूत्र/गोल कृमियों ने ही हमारा ध्यान इन परजीवीयों की ओर आकृष्ट किया। इनका पोषण सूक्ष्म जीवाणुओं अथवा पौधों एवं जन्तुओं से होता है[1, 2]. इनके विकास की प्रमाणिकता इनकी तुलनात्मक वाह्य व आन्तरिक आकार की पोषण विधियों व डी0एन0ए0 क्रमबद्धता से स्थापित की गयी है।[3–5] इन अध्ययनों से इस तथ्य की पुष्टि भी हुयी कि विकास क्रम में ही इन जीवों ने जन्तुओं और पादपों पर परजीविता

के लिये अपने आपको अनुकूलित किया। अधिकांश सूत्रकृमि(लगभग 40%) स्वतंत्रजीवी होते है, और इनका पोषण जीवाणुओं, कवकों, प्रोटोजोआ तथा अन्य निमेटोड्स से होता है। लगभग 45% प्रजातियां अकशेरूकियों व कशेरूकियों पर परजीवी के रूप में पायी जाती है और लगभग 15% प्रजातियां पादप परजीवी होती हैं। सूत्रकृमियों के अध्ययन का इतिहास मनुष्य तथा अन्य बड़े कशेरूकियों में इनकी रोगजनक परजीविता से प्रारम्भ हुआ, विशेष रूप से मनुष्य, घोड़े, गाय, भैंस, मुर्गी, सुअर, इत्यादि में पायी जाने वाली इनकी रोग जनक परजीवी प्रजातियों ने मनुष्य का ध्यान इनके विस्तृत अध्ययन के लिये आकृष्ट किया, इनका प्राचीन अध्ययन भारत में सुश्रुत संहिता व चीन के प्राचीन ग्रंथों में लगभग 2700 ई0 पू0 पुराना है। पौधों पर पाये जाने वाले पादप सूत्रकृमियों के अध्ययन का इतिहास 235 ई0 पू0 में सोयाबीन के पौधों की जड़ों में पाये गये कृमियों से प्रारम्भ होता है। इनका पहला विस्तृत अध्ययन विवरण गेंहू की बाली में नीडम[6] द्वारा किया गया, इसके पश्चात खीरे की जड़ पर गाठों के रूप में बर्कले[7] द्वारा, चुकन्दर में साचेट[8] द्वारा किया गया, उसके बाद धीरे–धीरे सन् 1900 तक पादप सूत्रकृमि विज्ञान, परजीवी विज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा के रूप में स्थापित हो गया। पादप परजीवी सूत्र कृमि कृषि को हानि पहुँचाने वाले एक महत्वपूर्ण परजीवी हैं। भारत सहित पूरे विश्व में प्रति वर्ष 4500 करोड़ रूपयों के लगभग कृषि उत्पादन को हानि पहुँचाता है।

भारत में असोम, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश व पश्चिम बंगाल में इनका विस्तृत अध्ययन किया जा रहा है। अगले चरण में त्रिपुरा, मेघालय, मणिपुर, अरूणाचल प्रदेश, नागालैण्ड, बिहार, झारखण्ड, आंध्र प्रदेश, जम्मू कश्मीर, पंजाब, गोवा, दिल्ली, उत्तराखण्ड में किया जाना है।

2. **संरचना**– निमोटोड्स/सूत्रकृमि त्रिस्तरीय, कूट देह गुहा वाले लम्बे धागेनुमा, स्वतन्त्रजीवी तथा जन्तु व पादप परजीवी होते हैं, अधिकांश सूत्रकृमि पारदर्शी होते हैं, जिसके कारण इनके अन्तरांग बाहर से ही देखे जा सकते है। पादप परजीवी सूत्रकृमि विभिन्न आकार और माप के होते हैं, ये समान्यतः लम्बे सूत्राकार कृमि जैसे होते हैं। परन्तु कुछ पादप सूत्रकृमि फूल कर थैली जैसे हो जाते हैं और देखने में सूत्र जैसे नही लगते हैं। पादप सूत्रकृमि 250 μm से 12 mm तक लम्बे और 15 μm से 1 mm तक मोटे होते हैं। इनमें कीटों की भाँति निर्मोचन की प्रवृति होती है, ये पूरे जीवन काल में 4 बार निर्मोचन करते हैं और वयस्क अवस्था 5 वीं अवस्था होती है। इनमें कोशिकाओं की संख्या निश्चित होती है, प्रचलन सर्पिल गति से होता है, श्वसन व परिसंचारी तन्त्र नहीं होता है[9], इन परजीवी की जो प्रजातियां भ्रमणशील होती हैं वे पूरे जीवन काल में मृदा में एक मीटर से ज्यादा दूरी तय नहीं कर पाती हैं। अधिकांश परजीवी निमेटोड्स में मुखांग चूषकांग के रूप में विशेष रचना वाले होते हैं, पादप परजीवियों में मुख के अग्रभाग पर एक विशेष कंटिका जैसी रचना होती है जो पादप कोशिका में प्रवेश करके कोशिका का द्रव चूसने में सहायक होती है। पादप परजीवी निमेटोड्स/सूत्रकृमि अपनी सुरक्षा के लिये और अपने भक्षकों से बचने के लिये पोषक पौधों के ऊतकों के अन्दर ही रहते हैं और न्यूनतम प्रचलन करते हैं, परन्तु इससे उनके पोषक पौधों के नष्ट होने की सम्भावना उत्पन्न हो जाती है और यदि पोषक पौधा सूख जायेगा तो ये भी नष्ट हो जायेंगे, दूसरी ओर कुछ सूत्रकृमि पोषक पौधे के नष्ट होने पर उस पौधे को छोड़ कर दूसरे पौधे पर चले जाते हैं। एक पौधे से दूसरे पौधे पर जाने के लिये इन्हें काफी प्रचलन करना पड़ता है जिससे इन्हें भक्षकों का सामना करना पड़ता है, साथ ही साथ मृदा के अजीवी कारक(जैसे जल, वायु, ताप, मृदा के रसायनिक संगठन एवं अम्लीयता इत्यादि) का प्रभाव भी पड़ता है, अधिकांश परजीवी निमेटोड्स ने अपने आपको अजीवी कारकों के लिये अनुकूलित कर लिया है इस क्रिया को क्रिप्टोबायोसिस कहते हैं।

3. **पादप परजीवी निमेटोडस/सूत्रकृमियों का प्रकीर्णन**– पादप परजीवी सूत्रकृमि हल, खेती के औजारों, वाहनों के पहियों, जूते–चप्पल में लगी मिट्टी–कीचड़, पानी के बहाव, वायु, संक्रमित खेती के उत्पाद जैसे बीज, कन्दमूल, प्रकन्द, इत्यादि के द्वारा एक खेत से दूसरे खेत तक फैलते जाते हैं तथा इनका संक्रमण नवीन स्थानों पर नवीन पौधों में फैलता जाता है।

पौधे के संक्रमित भाग– अधिकांश पादप परजीवी निमेटोड्स मृदा के माध्यम से पौधे की जड़ों को प्रभावित करता है, कुछ सूत्रकृमियों की प्रजातियां जड़ों से प्रवेश कर पौधे के तने को संक्रमित करती हैं और कुछ प्रजातियां जड़, तने से होकर पौधे की पत्तियों, पुष्पों, फल एवं बीज को प्रभावित करती हैं।

4. **पादप सूत्रकृमि परजीवी के प्रकार**

वाहय परजीवी– कुछ पादप निमेटोड्स की प्रजातियां पौधे की जड़ों की वाहय सतह पर कोशिकाओं का भक्षण करती हैं और आवश्यकता पड़ने पर एक पोषक पौधे से दूसरे पर आसानी से चले जाते हैं। इन परजीवी निमेटोड्स में चूषक कंटिकायें बहुत लम्बी होती हैं, जिसे ये पौधे की जडों में गहराई तक धंसा कर पोषण प्राप्त करते हैं, कुछ सूत्रकृमियों की प्रजातियां पौधे की जड़ों को इस प्रकार उत्तेजित करती हैं कि पौधे की जड़ों की कोशिका में असामान्य वृद्धि होती है, जिससे परजीवी काफी समय तक भोजन प्राप्त कर सकता है। उदाहरण– अंजीर की जड़ों में पाया जाने वाला सूत्रकृमि

परजीवी *जीफीनिमा,* पादप वाहय परजीवी की एक प्रजाति *इनोप्लिआ* पादप विषाणु का वाहक भी है जो पौधे में अपने संक्रमण के साथ विषाणु का संक्रमण भी फैला देता है।[10]

आंशिक वाहय परजीवी – इस प्रकार के सूत्रकृमि अपने पोषक पौधे की जड़ों पर वाहय परजीवी के रूप में आकर अपने मुखाग्र को जड़ के अन्दर प्रवेश करा देते है, तत्पश्चात जड़ के अन्दर एक कोशिका को स्थाई रूप से पोषक कोशिका के रूप में उपयेाग करते हैं और वहां से अन्तः परिजीवी के रूप में अपना पोषण प्राप्त करते है तथा आकार में फूलते जाते है, परिणाम स्वरूप जड की सतह पर एक अर्ध पारदर्शी गांठ के रूप में प्रतीत होते हैं ये एक बार अपने आपको वाहय अन्तः परजीवी के रूप में स्थापित करने के बाद जीवन पर्यन्त गमन अथवा प्रचलन नही करते है। परन्तु इससे इनके जीवन को संकट भी बढ़ जाता है, क्योंकि यदि इनका पोषक पौधा नष्ट होगा तो उसके साथ इनकी मृत्यु भी निश्चित है। उदाहरण–*रोटीलेन्चेस रेनीफार्मिस, टायलेन्चेलस सेमीपेनीट्रेन्स, हेलीकाटीलेन्चस*

भ्रमणशील अन्तः परजीवी निमेटोड्स– ये परजीवी अन्तः परजीवी के रूप में अपने जीवन का अधिकांश समय पौधे के अन्दर तीव्र गति से कोशिकाओं का भक्षण करते हुये पौधे के एक भाग से दूसरे भाग की ओर गमन करते रहते हैं, ये अपनी कंटिका को कोशिका में प्रवेश कराके उसके जीव द्रव उपयोग करके उसे नष्ट कर देते हैं और फिर दूसरी, तीसरी, चौथी कोशिका को नष्ट करते हुये आगे बढ़ते जाते है।[11] ये पादप कोशिका के अन्दर ही प्रजनन करते हैं और इनके अंडे के परिवक्व होने पर उनसे निकले डिम्भक निर्मोचन के पश्चात दूसरी डिम्भक अवस्था में पादप कोशिका का भक्षण प्रारम्भ कर देते हैं, इस प्रकार इस परजीवी का विकास, पोषण, प्रजनन निर्मोचन अन्तः परजीवी के रूप में कोशिका के अन्दर ही होता है। उदाहरण– *पारटीलेन्चस*(व्रण निमेटोड), *राडोफोलस* (बिल/सुरंग निमेटोड), *हिरस्चमैनेल्ला* (धान की जड़ का निमेटोडस)

अभ्रमणशील अन्तः परजीवी सूत्रकृमि – ये निमेटोड्स पौधे को सर्वाधिक क्षति पहुचाते हैं, ये अभ्रमणशील होते हैं और जीवन पर्यन्त एक ही स्थान पर रहते हैं। इनकी द्वितीय डिम्भक अवस्था पौधे की जड़ के अग्रभाग से प्रवेश प्रवेश करती है और जड़ के अन्दर नवजात विकसित होते हैं जो संवहन ऊतक के अन्दर स्थापित हो जाते हैं वहाँ एक विशेष रसायन कोशिका में प्रविष्ट करा देते हैं जिससे वह कोशिका फूल कर बहुत बड़ी हो जाती है और इसे पोषक कोशिका कहा जाता है और परजीवी को इसी कोशिका से जीवन पर्यन्त पोषण मिलता रहता है। उदाहरण– *हेटरोडेरा ग्लोबोडेरा*।

कन्द व स्तम्भ परजीवी– पेड़ों पर पाये जाने वाले स्तम्भ निमेटोड का जीवन–चक्र अत्यन्त विशिष्ट होता है। इस निमेटोड की प्रतिरोधी अवस्था वृक्ष की छाल का भक्षण करने वाले कीट के द्वारा एक स्थान से दूसरे चीड़ के वृक्ष पर पहुचती है और कीट से निकल कर सूत्रकृमि चीड़ के वृक्ष के अन्दर प्रवेश कर जाता है, अन्दर पहुँच कर ये पौधे के संवहन उतक और राल वाहिका की कोशिकाओं का तीव्र भक्षण करता है, जिसके परिणाम स्वरूप संवहन ऊतक में अवरोध उत्पन्न हो जाता है और चीड़ का वृक्ष मुरझा कर नष्ट हो जाता है। ये सूत्रकृमि बहुत तीव्र गति से आस–पास के चीड़ के पौधों पर फैल कर उन्हें भी नष्ट करता है। उदाहरण–*बरसाफेलेन्चस जइलोफिलस*।

बीज संक्रामक सूत्रकृमि– सन् 1773 में सबसे पहले इन्हीं पादप निमेटोड्स का वैज्ञानिक अध्ययन किया गया था, इसकी प्रमुख प्रजाति *एन्गुविना* परजीवी की डिम्भक अवस्था जल की पतली पर्त के साथ प्रवजन करके पत्तियों तक पहुचती है और वहाँ वाहय परजीवी के रूप में नवजात पत्तियों का भक्षण प्रारम्भ कर देते हैं तथा जब पुष्पन प्रारम्भ होता है तो ये पुष्प का भक्षण करते–करते नवजात बीज में प्रवेश कर उसे नष्ट कर देते हैं और बीज के स्थान पर एक काली गांठ बन जाती है जो लगभग 30 वर्षों तक सुरक्षित रह सकती है और नवीन पौधे को सूत्रकृमि से संक्रमित कर सकती है।

पर्णक परजीवी सूत्रकृमि– *एफलेनक्वाइडिस* नामक पर्ण निमेटोड जल के पतले स्तर में प्रवजन कर मृदा से तने पर होते हुए पत्तियों तक पहुँच कर रन्ध्रों से होकर पत्ती के अन्दर प्रवेश करके क्लोरोसिस उत्पन्न कर देता है और धीरे–धीरे पत्ती नष्ट हो जाती है, ये संक्रमण एक पत्ती से दूसरी पत्ती तक फैलता जाता है और वायु के साथ एक पौधे से दूसरे पौधे तक फैलता जाता है।

5. मुख्य पौधों की सूत्रकृमि समस्या

1. नीबू कुल/साइट्रस पौधों पर कई प्रकार के सूत्रकृमि पाये जाते हैं जो सन्तरे, मोसम्मी, चकोतरे, नींबू इत्यादि की फसलों को गम्भीर हानि पहुचाते हैं, उदाहरण– *टाइलेन्चलस सेमीपेनीट्रेन्स,* साइट्रस फलों का उत्पादन करने वाले विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में पाया जाता है जिसके कारण साइट्रस फलों की फसलों को 50–90 प्रतिशत तक हानि पहुचाती हैं, एक अन्य प्रजाति *रोडोफोलस सिमिलिस* भी जड़ों से तनों तक सुरंग बनाकर अन्तः परजीवी के रूप में नीबू कुल के पौधों को नष्ट कर देता है।

2. नारियल के पेड़ों को *राडिनाफिलेन्चस कोकोफिलस* नाम सूत्रकृमि जो सुरंग जैसी नालिकावत् रचना बना कर जड़ों व स्तम्भ को अन्तः परजीवी के रूप में संक्रमित करता है, ये *रहेन्कोफोरस पाल्मरम* नामक कीट द्वारा एक से दूसरे वृक्ष तक फैलता है।
3. मक्के की फसलों को नुकसान पहुचाने वाले सूत्रकृमि *हैटरोडेरा जेई* भारत, पाकिस्तान, मिस्त्र, मेरीलैण्ड व अमरीका में बहुतायत से पाया जाता है।
4. कपास के पौधों में ग्रंथिलमूल रोग, तथा वृक्काकार रोग महत्पूर्ण रोग है जो *प्राटिलेनचस ब्रकिपूरस* तथा *रोटीलेन्चलस रेनिफार्मिस* से होता है।
5. फलीदार पौधों विशेष रूप से मटर, अरहर, मूंग, मसूर, आदि में *हैटरोडेरा गोइटिनगिआना* का संक्रमण इन फसलों को गम्भीर हानि पहुँचाता है।
6. मूँगफली के फली व जड़ों को संक्रमित करने वाल मुख्य सूत्रकृमि *मेलियोडागाइन एरिनेरिया, मेलियोडोगाइन जवानिका, मेलियोडोगाइन हेप्ला* इत्यादि।
7. आलू की फसल को मुख्य रूप से *ग्लोबोडेरा रोस्टोसिनेसिस, ग्लोबोडेरा पलिडा* नामक सूत्रकृमि से हानि पहुँचती है ये संक्रमण भारत सहित विश्व के अधिकांश आलू उत्पादक देशों में फैला हुआ है और आलू की फसल को गम्भीर हानि पहुँचाता है।
8. धान की फसल को *एफेलेनक्वाइडिस बेसेई, डाइटिलेन्चस एग्सटस, हैटरोडेरा ओराइजी* इत्यादि से गम्भीर हानि पहुँचती है जो धान के पौधों की जड़ों, तने, पत्तियों व बालियों को संक्रमित कर उन्हें नष्ट करती है।
9. सोयाबीन की 75 प्रतिशत फसल अमरीका में उत्पन्न होती है जहाँ सूत्रकृमि की विभिन्न प्रजातियां संक्रमण फैलाती है।
10. चुकन्दर, शकरकन्द, गाजर, मूली, तम्बाकू , सब्जियों, गेहूँ तथा अन्य अनाज की फसलों को सूत्रकृमियों की विभिन्न प्रजातियों से गम्भीर हानि पहुँचती है।

6. **पादप निमेटोडस का नियन्त्रण व उपचार**– पादप परजीवी निमेटोडस को नियन्त्रण करने की कई विधियां है जो मुख्यतः तीन प्रकार की हैं[12]– 1.जैविक विधि 2. सूत्रकृमि भक्षक संवर्धन विधि 3. रसायनिक विधि

1. **जैविक विधि–** नियन्त्रण विधियों से सरल विधि है सूत्रकृमि प्रतिरोधी प्रजातियों की खेती करना, मगर सूत्रकृमि प्रतिरोधी प्रजातियों को चिन्हित करने में बहुत समय जाता है अतः ये विधि अधिक उपयोगी नहीं है। एक अन्य विधि फसल परिवर्तन है, यदि खेतों में फसल बदल कर ऐसी फसल उगाई जाये जो सूत्रकृमियों के लिये पोषक के रूप में उपयोगी न हो तो सूत्रकृमियों को पोषण न मिलने के कारण मृत्यु हो जायेगी, इस प्रकार सूत्रकृमियों पर नियन्त्रण किया जा सकता है।

2. **सूत्रकृमि भक्षक संवर्धन विधि**– जैविक नियन्त्रण की एक अन्य विधि सूत्रकृमि परजीवी परभक्षी संवर्धन भी अपनायी जा सकती है, जिसमें सूत्रकृमि परभक्षी जीवों या सूत्रकृमि रोगजनकों का प्रयोग करके सूत्रकृमियों का नाश किया जा सकता है। ऐसा देखा गया है कि कुछ जीवाणु, माइकोप्लाज्मा, कवक, प्रोटोजोआ, सूत्रकृमि, कीट इत्यादि पादप परजीवी सूत्रकृमियों के रोगजनक या भक्षक होते हैं जिनसे उनपर नियंत्रण किया जा सकता है। जीवाणु *पास्चयुरिका पेनेट्रेंस* सूत्रकृमि संक्रमित कर नष्ट कर देता है। *आर्थोबोट्रिस डक्टिलाइडिस* नामक कवक पादप परजीवी सूत्रकृमियों को संक्रमित करके उसके चारों ओर कवक तन्तुओं का जाल बना देते हैं जिसमें फंस कर सूत्रकृमियों की मृत्यु हो जाती है फिर कवक अपने चूषकों की सहायता से पूर्णतया समाप्त कर देता है। कुछ सूत्रकृमि जैसे *मोनोन्कस* तथा *ओडोन्टोफेरेक्स* पादप परजीवी सूत्रकृमियों का भक्षण कर लेते हैं, ये विधियां प्रयोगिक स्तर पर सफल रहीं हैं परन्तु व्यवसायिक स्तर पर परभक्षियों का संर्वधन करना अत्यन्त खर्चीला होता है। इसलिये अभी इस विधि का प्रयोग व्यवसायिक स्तर पर नही किया जा रहा है।

3. **रसायनिक विधि**– रसायनिक विधियों से भी सूत्रकृमियों का नाश किया जा सकता है। यह विधि कम खर्चीली है और अधिक प्रभावी है। पिछले 50 वर्षों से इस विधि का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है, ये उपचार मुख्यतः दो प्रकार से होता है, प्रथम मृदा धूनी/धूम्र/गैस उपचार इस विधि में 1,3 डाई क्लोरो प्रोपीन (टिलोन–2), क्लोरोपिक्सीन(आँसू गैस) डाजोमेट(बासामिड), मिथाईल ब्रोमाइड को गैस रूप में प्रभावित क्षेत्र में मृदा के अन्दर डाला जाता है, परन्तु वायु प्रदूषणकारी प्रभाव के कारण इनका उपयोग सीमित एवं नियंत्रित रूप में अति आवश्यक स्थित में ही किया जाता है दूसरी श्रेणी में तरल या ठोस सूत्रकृमि नाशक आते हैं। जैसे– फेनामिफोस(नेमाकर) तथा एल्डीकार्ब(टेमिक) जिन्हें तरल या दानेदार रूप संक्रमित मृदा में डाला जाता है परन्तु इनका प्रभाव प्रथम प्रकार के सूत्रकृमि नाशकों की तुलना में कम प्रभावी है उसके साथ ही ये रसायन मृदा में उपस्थित बहुत से उपयोगी कीटों, मृदा कृमियों(केचुओं) के लिए तंत्रिका विष के रूप में कार्य कर उन्हें मार देते हैं एवं उपयोगी जीवाणु को भी नष्ट कर देते हैं और मृदा में गंभीर प्रदूषण उत्पन्न करते हैं जिससे मृदा की उर्वकरता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

निष्कर्ष– पादप परजीवी सूत्रकृमि हमारे कृषि एवं वन आच्छादित क्षेत्रों में बहुत हानि पहुचाते हैं, विभिन्न रसायनों व रसायनिक खादों के उपयोग ने इन्हें रसायन प्रतिरोधी भी बना दिया है जिसके कारण इनके द्वारा संक्रमण फैलने पर

उपचार करना कठिन होता है और इनकी भरपूर जानकारी भी न होने के कारण किसान समय रहते इन पर नियन्त्रण नहीं कर पाते हैं, आज आवश्यकता इस बात की है कि इनके संक्रमण के लक्षण, रोग की पहचान और समय रहते सही उपचार किया जाये क्योंकि समस्या एक किसान के खेत की नहीं वरन् देश की अर्थ व्यवस्था की भी है।

आभार– सूत्रकृमियों के चित्रों के लिये अन्तर जाल(इन्टरनेट) का।

सन्दर्भ

1. पायनर, जी0 ओ0 एवं अन्य(1994) अरलियस्ट फॉसिल निमेटोड, फन्डामेन्टल एण्ड एप्लाइड निमेटोलाजी, खण्ड–17, मु0पृ0 475–477।
2. मैनम, एस0 वी0 एवं अन्य(1994) ए निमेटोड प्रिजिर्वड् इन सिलिअल कोकून वाल फ्राम द अरली क्रिटेशिअस, जूलोजिक स्क्रिप्टा, खण्ड–23, मु0पृ0 27–31।
3. थामस, के0 डब्ल्यू एवं अन्य(1997) डी.एन.ए.सीक्वेंस फ्राम फॉर्मेलीन फिक्सड् निमेटोड, जनरल ऑफ निमेटोलाजी, खण्ड–29, मु0पृ0 250–254।
4. पॉवर, टी0 ओ0 एवं अन्य(1997) माइटोकॉन्ड्रियल डी.एन.ए. सीक्वेन्स डाइवरजेन्स अमंग मेलोडीगाइन, जनरल ऑफ निमेटोलाजी, खण्ड–25, मु0पृ0 564–572।
5. ब्लॉक्सटर, एम0 एल0 एवं अन्य(1998) ए मॉलीक्यूलर इवोल्यूशनरी फ्रेम वर्क फॉर फाईलम निमेटोडा, नेचर, खण्ड–392, मु0पृ0 71–75।
6. नीडम, जे0 टी0(1743) कन्सर्निंग सर्टेन चाल्की कान्सेन्ट्रेशन काल्ड माल्म, विद सेम माइक्रोस्कोपिक आब्जर्वेशन ऑन फेरिना ऑफ रेड लिली, फिलॉसफिकल ट्रांजेक्शन ऑफ रॉयल सोसाईटी लंदन, खण्ड–42, पृ0 634।
7. बर्कले, एम0 जे0(1855) द गारडेनिया रूट डिसीज़, गारडेनर क्रॉनिकल, खण्ड–1, मु0पृ0 488–489।
8. साचेट, एच0(1859) उवेर एनिगे फेइन्डे उंड कारखेन्टन दर जूकेरव जेइटस्र वर रुवेन जुकेर इण्ड जूलवर, खण्ड–9, पृ0 390।
9. सासर, जे0 एन0 एवं फ्रेंकमेन, डी0 डब्ल्यू0(1987) द वर्ल्ड प्रॉस्पेक्टिव ऑन निमेटोलोजी, पृ0 7–14, सोसाइटी ऑफ निमेटोलॉजिस्ट, इन्क हयाटसबिले, एम0 डी0 फिशर, जे0 एम0 एवं रॉक्सी डी0 जे0(1967) प्रोसीडिंग्स आफ द हैल्मेन्थालॉजिकल सोसाइटी ऑफ वाशिंगटन, खण्ड–34, मु0पृ0 68–72।
10. फिशर, जे0 एम0 एवं रॉक्सी, डी0 जे0(1967) प्रोसीडिंग्स ऑफ द हैल्मेन्थालॉजिकल सोसाइटी ऑफ वाशिंगटन खण्ड–34, मु0पृ0 68–72।
11. जूंके, यू0(1991) ऑब्जर्वेशन ऑन द इनवैजन एण्ड एण्डोपैरासाईटिक बिहेवियर ऑफ द रूट लीसन निमेटोड, *पारटीलेंनचस पेनेट्रेंस*, जरनल ऑफ निमेटोलाजी, खण्ड–22, मु0पृ0 309–320।
12. व्हाइटहेड, ए0 जी0(1998) प्लांट निमेटोड कंट्रोल, काबी, न्यूयार्क।

पादप परजीवी सूत्रकृमि(निमेटोड्स)

1–2 *ग्लोबोडेरा पेलिडा– आलू का संक्रमण,* 3. जड़ का वाहय् परजीवी सूत्रकृमि, 4. संवहन ऊतक का सूत्रकृमि– *प्रेटीलिन्कस,* 5. पर्ण सूत्रकृमि, *6. खीरे की जड़ का संक्रमण,* 7. *हेटरोडेरा ग्लासिन्स,* 8. *आंशिक अत:परजीवी,* 9. *प्रेटीलिन्कस,* 10. सूत्रकृमि *संक्रमण के कारण दाने के स्थान पर भूरी गांठ,* 11. जड़ का सूत्रकृमि।

जैव–विविधताः महत्व, क्षरण एवं संरक्षण

अरविन्द सिंह
वनस्पति विज्ञान विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी–221005, उ0प्र0, भारत
arvindsingh_bhu@hotmail.com; dr.arvindsingh@gmail.com

प्राप्त तिथि– 01.05.2016; स्वीकृत तिथि– 02.09.2016

सार– दुनिया में कुल कितनी प्रजातियां हैं यह ज्ञात से परे है, लेकिन एक अनुमान के अनुसार इनकी संख्या 30 लाख से 10 करोड़ के बीच है। विश्व में 1,435,662 प्रजातियों की पहचान की गयी है। यद्यपि बहुत सी प्रजातियों की पहचान अभी भी होना बाकी है। पहचानी गई मुख्य प्रजातियों में 7,51,000 प्रजातियां कीटों की, 2,48,000 पौधों की, 2,81,000 जन्तुओं की, 68,000 कवकों की, 26,000 शैवालों की, 4,800 जीवाणुओं की तथा 1,000 विषाणुओं की हैं। पारितंत्रों के क्षय के कारण लगभग 27,000 प्रजातियां प्रतिवर्ष विलुप्त हो रही हैं। इनमें से ज्यादातर ऊष्णकटिबंधीय छोटे जीव हैं। अगर जैव–विविधता क्षरण की वर्तमान दर कायम रही तो विश्व की एक–चौथाई प्रजातियों का अस्तित्व सन् 2050 तक समाप्त हो जायेगा।

बीज शब्द– वनविनाश, बहिःस्थल संरक्षण, आनुवंशिक क्षरण, यथास्थल संरक्षण, जोखिमग्रस्त प्रजातियां।

Bio-diversity: importance, loss and conservation

Arvind Singh
Department of Botany, B.H.U., Varanasi-221005, U.P., India
arvindsingh_bhu@hotmail.com; dr.arvindsingh@gmail.com

Abstract- Exactly how many species of life exists is not known to anybody. Estimate ranges from 3 million to 100 million. There are 1,435,662 identified species all over the world, however, a large number of species are still unidentified. They include 7,51,000 species of insects, 2,48,000 of flowering plants, 2,81,000 of animals, 68,000 of fungi, 26,000 of algae, 4,800 of bacteria and 1,000 of viruses. Approximately 27,000 species become extinct every year due to loss of ecosystems. Majority of them are small tropical organisms. If this trend of bio-diversity depletion continues, 25 per cent of the world's species may vanish by the year 2050.

Key words - Deforestation, ex-situ conservation, genetic erosion, in-situ conservation, threatened species.

1. **परिचय**– जैव–विविधता(जैविक–विविधता) जीवों के बीच पायी जाने वाली विभिन्नता है जो कि प्रजातियों में, प्रजातियों के बीच और उनकी पारितंत्रों की विविधता को भी समाहित करती है। जैव–विविधता शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम वाल्टर जी0 रासन ने 1985 में किया था।[1] जैव–विविधता तीन प्रकार की होती हैं। (i) *आनुवंशिक विविधता,* (ii) *प्रजातीय विविधता;* तथा (iii) *पारितंत्र विविधता*। प्रजातियों में पायी जाने वाली आनुवंशिक विभिन्नता को आनुवंशिक विविधता के नाम से जाना जाता है। यह आनुवंशिक विविधता जीवों के विभिन्न आवासों में विभिन्न प्रकार के अनुकूलन का परिणाम होती है। प्रजातियों में पायी जाने वाली विभिन्नता को प्रजातीय विविधता के नाम से जाना जाता है। किसी भी विशेष समुदाय अथवा पारितंत्र(इकोसिस्टम) के उचित कार्य के लिए प्रजातीय विविधता का होना अनिवार्य होता है। पारितंत्र विविधता पृथ्वी पर पायी जाने वाली पारितंत्रों में उस विभिन्नता को कहते हैं जिसमें प्रजातियों का निवास होता है। पारितंत्र विविधता विविध जैव–भौगोलिक क्षेत्रों जैसे झील, मरूस्थल, ज्वारनदमुख आदि में प्रतिबिम्बित होती है।

2. **जैव–विविधता का महत्व**– जैव–विविधता का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। जैव–विविधता के बिना पृथ्वी पर मानव जीवन असंभव है। जैव–विविधता के विभिन्न लाभ निम्नलिखित हैं–

1. जैव–विविधता भोजन, कपड़ा, लकड़ी, ईंधन तथा चारा की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। विभिन्न प्रकार की फसलें जैसे *गेहूँ(ट्रिटिकम एस्टिवम), धान(ओराइजा सेटाइवा), जौ(हारडियम वलगेयर), मक्का(जिया मेज), ज्वार(सोरघम वलगेयर), बाजरा (पेनिसिटम टाईफ़ाइडिस), रागी(इल्यूसिन कोरकेना), अरहर(कैजनस कैजान), चना(साइसर एरियन्टिनम), मसूर*

(लेन्स कुलिनेरिस) आदि से हमारी भोजन की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है जबकि *कपास(गासिपियम हरसुटम)* जैसी फसल हमारे कपड़े की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। *सागवान(टैक्टोना ग्रान्डिस), साल(शोरिया रोबस्टा), शीशम (डेलवर्जिया सिसू)* आदि जैसे वृक्षों की प्रजातियाँ निर्माण कार्यों हेतु लकड़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं। *बबूल(अकेसिया नाइलोटिका), शिरीष(एल्बिजिया लिबेक), सफेद शिरीष(एल्बिजिया प्रोसेरा), जामुन(साइजिजियम क्यूमिनाई), खेजरी(प्रोसोपिस सिनेरेरिया), हल्दू(हेल्डिना कार्डिफोलिया), करंज(पानगैमिया पिन्नेटा)* आदि वृक्षों की प्रजातियों से हमारी ईंधन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है जबकि *शिरीष(एल्बिजिया लिबेक), घमार(मेलाइना आरबोरिया), सहजन(मोरिंगा ओलिफेरा), शहतूत(मोरस अल्बा), बेर(जिजिफस जुजुबा), बबूल(अकेसिया नाइलोटिका), करंज(पानगैमिया पिन्नेटा), नीम(एजाडिराक्टा इण्डिका)* आदि वृक्षों की प्रजातियों से पशुओं के लिए चारा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

2. जैव–विविधता कृषि पैदावार बढ़ाने के साथ–साथ रोगरोधी तथा कीटरोधी फसलों की किस्मों के विकास में सहायक होती हैं। हरित क्रान्ति के लिए उत्तरदायी *गेहूं* की बौनी किस्मों का विकास जापान में पाये जाने वाली *नारीन–10* नामक *गेहूँ* की प्रजाति की मदद से किया गया था। इसी प्रकार धान की बौनी किस्मों का विकास ताइवान में पाये जाने वाली *डी–जिओ–ऊ–जेन* नामक धान की प्रजाति से किया गया था। सन् 1970 के प्रारम्भिक वर्षों में विषाणु के संक्रमण से होने वाली धान की ग्रासी स्टन्ट नामक बीमारी के कारण एशिया महाद्वीप में 160,000 हेक्टेयर से भी ज्यादा फसल को नुकसान पहुँचाया था। *धान* की जातियों में इस बीमारी के प्रति प्रतिरोधी क्षमता विकसित करने हेतु मध्य भारत में पायी जाने वाली जंगली *धान* की प्रजाति *ओराइजा निभरा* का उपयोग किया गया था। *आई आर 36* नामक विश्व प्रसिद्ध धान की जाति के भी विकास में *ओराइजा निभरा* का उपयोग किया गया है।

3. वानस्पतिक जैव–विविधता औषधीय आवश्यकताओं की पूर्ति भी करती है। एक अनुमान के अनुसार आज लगभग 30 प्रतिशत उपलब्ध औषधियों को उष्णकटिबंधीय वनस्पतियों से प्राप्त किया जाता है। उष्णकटिबंधीय शाकीय वनस्पति *सदाबहार(कैथरेन्थस रोसियस) विनक्रिस्टीन* तथा *विनब्लास्टीन* नामक क्षारों का स्रोत होता है जिनका उपयोग रक्त कैंसर के उपचार में होता है। *सर्पगंधा(राओल्फिया सरपेन्टीना)* पादप *रेसर्पीन* नामक महत्वपूर्ण क्षार का स्रोत होता है जिसका उपयोग उच्च–रक्तचाप के उपचार में किया जाता है। *गुग्ल(कामीफेरा बिटाई)* नामक पौधे से प्राप्त गोंद का उपयोग गठिया के इलाज में किया जाता है। *सिनकोना(सिनकोना कैलिसिया)* वृक्ष की छाल से प्राप्त *कुनैन* नामक क्षार का उपयोग मलेरिया ज्वर के उपचार में किया जाता है। इसी प्रकार *आर्टिमिसिया एनुआ* नामक पौधे से प्राप्त *आर्टिमिसिनीन* नामक रसायन का उपयोग मस्तिष्क मलेरिया के उपचार में होता है। *जंगली रतालू(डायसकोरिया डेल्टाइडिस)* से प्राप्त *डायसजेनीन* नामक रसायन का उपयोग स्त्री गर्भनिरोधक के रूप में होता है।

4. जैव–विविधता पर्यावरण प्रदूषण के निस्तारण में सहायक होती है। प्रदूषकों का विघटन तथा उनका अवशोषण कुछ पौधों की विशेषता होती है। *सदाबहार(कैथरेन्थस रोसियस)* नामक पौधे में *ट्राइनाइट्रोटालुइन* जैसे घातक विस्फोटक को विघटित करने की क्षमता होती है। सूक्ष्म–जीवों की विभिन्न प्रजातियाँ जहरीले बेकार पदार्थों के साफ–सफाई में सहायक होती हैं। सूक्ष्म–जीवों की *स्यूडोमोनास प्यूटिडा* तथा *आर्थोबैक्टर विस्कोसा* में औद्योगिक अपशिष्ट से विभिन्न प्रकार के भारी धातुओं को हटाने की क्षमता होती है। पौधों की कुछ प्रजातियों में मृदा से भरी धातुओं जैसे कापर, कैडमियम, मरकरी, क्रोमियम के अवशोषण तथा संचयन की क्षमता पायी जाती है। इन पौधों का उपयोग भारी धातुओं के निस्तारण में किया जा सकता है। *भारतीय सरसों(ब्रैसिका जूनसिया)* में मृदा से क्रोमियम तथा कैडमियम के अवशोषण की क्षमता पायी जाती है। जलीय पौधे जैसे *जलकुम्भी(आइकार्निया कैसपीज), लैम्ना, साल्विनिया* तथा *एजोला* का उपयोग जल में मौजूद भारी धातुओं(कॉपर, कैडमियम, आइरन एवं मरकरी) के निस्तारण में होता है।

5. जैव–विविधता में संपन्न वन पारितंत्र कार्बन डाईऑक्साइड के प्रमुख अवशोषक होते हैं। कार्बन डाईऑक्साइड हरित गृह गैस है जो वैश्विक तपन के लिए उत्तरदायी है। उष्णकटिबंधीय वनविनाश के कारण आज वैश्विक तापमान में निरंतर वृद्धि हो रही है जिसके कारण भविष्य में वैश्विक जलवायु के अव्यवस्थित होने का खतरा दिनोंदिन बढ़ रहा है।

6. जैव–विविधता मृदा निर्माण के साथ–साथ उसके संरक्षण में भी सहायक होती है। जैव–विविधता मृदा संरचना को सुधारती है, जल–धारण क्षमता एवं पोषक तत्वों की मात्रा को बढ़ाती है। जैव–विविधता जल संरक्षण में भी सहायक होती है क्योंकि यह जलीय चक्र को गतिमान रखती है। वानस्पतिक जैव–विविधता, भूमि में जल रिसाव को बढ़ावा देती है जिससे भूमिगत जलस्तर बना रहता है।

7. जैव–विविधता पोषक चक्र को गतिमान रखने में सहायक होती है। वह पोषक तत्त्वों की मुख्य अवशोषक तथा स्रोत होती है। मृदा की सूक्ष्मजीवी विविधता पौधों के मृत भाग तथा मृत जन्तुओं को विघटित कर पोषक तत्वों को मृदा में मुक्त कर देती है जिससे यह पोषक तत्व पुनः पौधों को प्राप्त होते हैं।

8. जैव–विविधता पारितंत्र को स्थिरता प्रदान कर पारिस्थितिक संतुलन को बरकरार रखती है। पौधे तथा जन्तु एक दूसरे से खाद्य श्रृंखला तथा खाद्य जाल द्वारा जुड़े होते हैं। एक प्रजाति की विलुप्ति दूसरे के जीवन को प्रभावित करती है। इस प्रकार पारितंत्र कमजोर हो जाता है।

9. पौधे शाकभक्षी जानवरों के भोजन के स्रोत होते हैं जबकि जानवरों का मांस मनुष्य के लिए प्रोटीन का महत्वपूर्ण स्रोत होता है।

10. समुद्र के किनारे खड़ी जैव–विविधता संपन्न ज्वारीय वन(मैन्ग्रुव वन) प्राकृतिक आपदाओं जैसे समुद्री तूफान तथा सुनामी के खिलाफ ढ़ाल का काम करते हैं।

11. जैव–विविधता के विभिन्न सामाजिक लाभ भी हैं। प्रकृति, अध्ययन के लिए सबसे उत्तम प्रयोगशाला है। शोध, शिक्षा तथा प्रसार कार्यों का विकास, प्रकृति एवं उसकी जैव–विविधता की मदद से ही संभव है। इस बात को साबित करने के लिए तमाम साक्ष्य हैं कि मानव संस्कृति तथा पर्यावरण का विकास साथ–साथ हुआ है। अतः सांस्कृतिक पहचान के लिए जैव–विविधता का होना अति आवश्यक है।

12. जैविक रूप से संपन्न वन पारितंत्र, वन्य–जीवों तथा आदिवासियों का घर होता है। आदिवासियों की संपूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति वनों द्वारा होती है। वनों के क्षय से न सिर्फ आदिवासी संस्कृति प्रभावित होगी अपितु वन्य–जीवन भी प्रभावित होगा।

3. **जैव–विविधता का क्षरण**– पृथ्वी पर जैविक संसाधनों के क्षय को जैव–विविधता क्षरण के नाम से जाना जाता है। पृथ्वी का जैविक धन जैव–विविधता लगभग 400 करोड़ वर्षों के विकास का परिणाम है। इस जैविक धन के निरंतर क्षय ने मनुष्य के अस्तित्व के लिए गम्भीर खतरा पैदा कर दिया है। दुनिया के विकासशील देशों में जैव–विविधता क्षरण चिन्ता का विषय है। एशिया, मध्य अमेरिका, दक्षिण अमेरिका तथा अफ्रीका के देश जैव–विविधता संपन्न हैं जहाँ तमाम प्रकार के पौधों तथा जन्तुओं की प्रजातियां पायी जाती हैं।[2] विडम्बना यह है कि अशिक्षा, गरीबी, वैज्ञानिक विकास का अभाव, जनसंख्या विस्फोट आदि ऐसे कारण हैं जो इन देशों में जैव–विविधता क्षरण के लिए जिम्मेदार हैं। दुनिया में कुल कितनी प्रजातियां हैं यह ज्ञात से परे है लेकिन एक अनुमान के अनुसार इनकी संख्या 30 लाख से 10 करोड़ के बीच है। दुनिया में 1,435,662 प्रजातियों की पहचान की गयी है।[3] हालांकि बहुत सी प्रजातियों की पहचान अभी भी होना बाकी है। पहचानी गई मुख्य प्रजातियों में 7,51,000 प्रजातियां कीटों की, 2,48,000 पौधों की, 2,81,000 जन्तुओं की, 68,000 कवकों की 26,000 शैवालों की, 4,800 जीवाणुओं की तथा 1,000 विषाणुओं की हैं। पारितंत्रों के क्षय के कारण लगभग 27,000 प्रजातियां प्रतिवर्ष विलुप्त हो रही हैं। इनमें से ज्यादातर उष्णकटिबंधीय छोटे जीव हैं। अगर जैव–विविधता क्षरण की वर्तमान दर कायम रही तो विश्व की एक–चौथाई प्रजातियों का अस्तित्व सन् 2050 तक समाप्त हो जायेगा।

पृथ्वी के पूर्व के 50 करोड़ वर्ष के इतिहास में छः बड़ी विलुप्ति लहरों ने पहले ही दुनिया की बहुत सी प्रजातियों को समाप्त कर दिया जिनमें छिपकली परिवार के विशालकाय डायनोसोर भी शामिल हैं। विलुप्ति लहरों के क्रमवार काल में पहला आर्डोविसियन काल(50 करोड़ वर्ष पूर्व), दूसरा डेवोनियन काल(40 करोड़ वर्ष पूर्व), तीसरा परमियन काल(25 करोड़ वर्ष पूर्व), चौथा ट्रायसिक काल(18 करोड़ वर्ष पूर्व) है। पांचवां क्रिटेसियस काल(6.5 करोड़ वर्ष पूर्व), छठवां प्लाइस्टोसीन काल(10 लाख वर्ष पूर्व) था। जुरासिक काल में पृथ्वी पर राज करने वाले विशाल जीव डायनोसोर क्रिटेसियस काल में ही इस पृथ्वी से विलुप्त हो गये। विलुप्ति की छठवीं लहर में विशाल स्तनधारियों एवं पक्षियों की बहुत सी प्रजातियों का पृथ्वी से पतन हो गया। उक्त सभी छः विलुप्ति लहरों का प्रमुख कारण प्राकृतिक था जबकि सातवीं विलुप्ति का वर्तमान दौर मानव की विध्वंसक गतिविधियाँ हैं। उष्णकटिबंधीय वर्षा वन, जैव–विविधता संपन्न होते हैं जिन्हें पृथ्वी का फेफड़ा कहा जाता है क्योंकि ये आक्सीजन के प्रमुख उत्सर्जक तथा कार्बन डाईऑक्साइड के अवशोषक होते हैं। इनका विस्तार पृथ्वी की कुल 7 प्रतिशत भौगोलिक भूमि पर है। दुनिया की कुल 50 प्रतिशत पहचानी गई प्रजातियां इन्हीं वनों में पायी जाती है। चूंकि ज्यादातर वर्षा वन दुनिया के विकासशील देशों में पाये जाते हैं इसलिए जनसंख्या विस्फोट इन वनों के विनाश का प्रमुख कारण है। समय रहते अगर संरक्षण को नही अपनाया गया तो बहुत जल्द इनमें 90 प्रतिशत आवासों का विनाश होगा परिणामस्वरूप 15,000 से 50,000 प्रजातियों की क्षति प्रतिवर्ष होगी। उष्णकटिबंधीय वनविनाश आने वाले अगले 50 वर्षों में जैव–विविधता क्षरण का प्रमुख कारण होगा।

संपूर्ण विश्व में पौधों की लगभग 60,000 प्रजातियां तथा जन्तुओं की 2,000 प्रजातियां विलुप्ति के कगार पर खड़ी हैं। यद्यपि इसमें से ज्यादातर प्रजातियां पौधों की हैं पर इसमें कुछ प्रजातियां जन्तुओं की भी हैं। इनमें मछलियाँ (343), जलथलचारी(50), सरीसृप(170), अकशेरूकी(1,355), पक्षियाँ(1,037) तथा स्तनपायी (497) शामिल हैं।

जीन कोष से जीन के क्षति को आनुवंशिक क्षरण कहते हैं जिससे पृथ्वी के आनुवंशिक संसाधनों में कमी होती है। पिछली सदी, फसलों में 75 प्रतिशत आनुवंशिक विविधता की क्षति की गवाह रही है। पिछली सदी के अंत तक अधिक पैदावार देने वाली किस्मों ने *गेहूँ* तथा *धान* की खेती वाले क्षेत्रों के 50 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। आनुवंशिक क्षरण के निम्नलिखित दो प्रमुख कारण हैं–

1. **फसल संख्या**– पूर्व में अधिक संख्या में पौधों का उपयोग विभिन्न कार्यों हेतु होता था लेकिन धीरे–धीरे इन पौधों की संख्या में गिरावट आयी। उदाहरण के लए 3,000 भोजन पौधों की प्रजातियों में केवल 150 का वाणिज्यीकरण हुआ। कृषि में 12 प्रजातियों का प्रभुत्व है जिनमें 4 चार फसलों की प्रजातियां कुल पैदावार का 50 प्रतिशत पैदा करती हैं(*धान, गेहूँ मक्का* एवं *आलू*)।

2. **फसलों के प्रकार**– आज एक ही प्रकार की फसल में ज्यादा से ज्यादा अच्छे गुणों को समावेश करने का चलन है। जैसे ही नई प्रकार की फसल विकसित होती है उसका बड़े पैमाने पर उपयोग होता है परिणामस्वरूप स्थानीय देसी किस्मों का प्रयोग बन्द हो जाता है जिससे स्थानीय प्रजातियां विलुप्त हो जाती है। आनुवंशिक क्षरण गंभीर चिन्ता का विषय है क्योंकि यह भविष्य में फसलों के सुधार कार्यक्रम को प्रभावित करेगा। फसलों की स्थानीय तथा पारंपरिक प्रजातियों में उपयोगी गुण होते हैं जिनका उपयोग फसलों की वर्तमान प्रजातियों के विकास में किया जा सकता है। इसलिए फसलों की विविधता को बनाये रखना अति आवश्यक है। आनुवंशिक क्षरण गंभीर चिन्ता का विषय है क्योंकि इसका प्रत्यक्ष प्रभाव फसल प्रजनन कार्यक्रम पर पड़ेगा। फसलों की पारंपरिक किस्में तथा उनकी जंगली प्रजातियों में बहुत से उपयोगी जींस होते हैं जिनका उपयोग फसलों की वर्तमान किस्मों के सुधार में किया जा सकता है।

4. **जैव–विविधता क्षरण के कारण**– जैव–विविधता क्षरण के विभिन्न कारण हैं जिनमें आवास विनाश, आवास विखण्डन, पर्यावरण प्रदूषण, विदेशी मूल के पौधों का आक्रमण, अति–शोषण, वन्य–जीवों का शिकार, वनविनाश, अति–चराई, बीमारी,

चिड़ियाघर तथा शोध हेतु प्रजातियों का उपयोग नाशीजीवों तथा परभक्षियों का नियंत्रण, प्रतियोगी अथवा परभक्षी प्रजातियों का प्रवेश प्रमुख है–

1. **आवास विनाश**– मानव जनसंख्या वृद्धि एवं मानव गतिविधियाँ आवास विनाश का प्रमुख कारण हैं। आवास की क्षति वर्तमान में अकशेरूकी जीवों के विलुप्ति का एक प्रमुख कारण है। बहुत से देशों में विशेषकर द्वीपों पर जब मानव जनसंख्या घनत्व में वृद्धि होती है तो अधिकतर प्राकृतिक आवास नष्ट हो जाते हैं। दुनिया के 61 में से 41 प्राचीन विश्व उष्णकटिबंधीय देशों में 50 प्रतिशत से ज्यादा वन्य–जीवों के आवास नष्ट हो चुके हैं। ज्यादातर स्थितियों में आवास विनाश के प्रमुख कारक औद्योगिक तथा वाणिज्यिक गतिविधियाँ है जिनका संबंध वैश्विक अर्थव्यवस्था जैसे–खनन, पशु पालन, कृषि, वानिकी, बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं की स्थापना आदि से है। वर्षा वन, उष्णकटिबंधीय शुष्क वन, नमभूमियाँ, ज्वारीय वन तथा घास के मैदान जोखिमग्रस्त आवास हैं।[4]

2. **आवास विखण्डन**– आवास विखण्डन वह प्रक्रिया है जिसमें एक विशाल क्षेत्र का आवास क्षेत्रफल कम हो जाता है और प्रायः दो या अधिक टुकड़ों में बंट जाता है। जब आवास नष्ट हो जाता है तो टुकड़े बहुधा एक दूसरे से अलग–अलग क्षरित अवस्था में प्रकट होते हैं। आवास विखण्डन प्रजातियों के विस्तार तथा स्थापना को सीमित कर देता है, जिससे जैव–विविधता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

3. **पर्यावरण प्रदूषण**– बढ़ता पर्यावरण प्रदूषण जैव–विविधता क्षरण का एक प्रमुख कारण बनता जा रहा है। नाशिजीवनाशक(पेस्टीसाइड), औद्योगिक रसायन तथा अपशिष्ट आदि पर्यावरण प्रदूषण के लिए मुख्यतः उत्तरदायी हैं। नाशिजीवनाशक प्रदूषण के परिणामस्वरूप मृदा के सूक्ष्मजीवी वनस्पतियों तथा जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है। इसके अतिरिक्त जल वर्षा के बहाव से जब नाशिजीवनाशक जल स्रोतों में पहुंचते हैं तो वहाँ भी सूक्ष्मजीवी वनस्पतियों तथा जंतुओं को मार देते हैं। परिणामस्वरूप जैव–विविधता का क्षय होता है। नाशिजीवनाशक डी0डी0टी0(डाईक्लोरो डाईफिनाइल ट्राईक्लोरोइथेन) पक्षियों की गिरती आबादी का एक प्रमुख कारण हैं। डी0डी0टी0 खाद्य श्रृंखला के माध्यम से पक्षियों के शरीर में पहुँचता है जहाँ वह इस्ट्रोजेन नामक हार्मोन की गतिविधि को प्रभावित करता है जिससे अण्डे की खोल कमजोर हो जाती है, परिणामस्वरूप अण्डा समय से पहले फूट जाता है जिससे भ्रूण की मृत्यु हो जाती है। अम्ल वर्षा के कारण नदियों तथा झीलों का अम्लीकरण जलीय जीवों के लिए एक प्रमुख खतरा बनता जा रहा है।

4. **विदेशी मूल की वनस्पतियों का आक्रमण**– विदेशी मूल की वनस्पतियों के आक्रमण के परिणामस्वरूप जैव–विविधता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है इसलिए इन्हें 'जैविक प्रदूषक' की संज्ञा दी जाती है। सफल विदेशी मूल की वनस्पति की प्रजाति देसी प्रजातियों को विस्थापित कर उन्हें विलुप्ति के स्तर तक पहुँचा देती है। इसके अतिरिक्त वह आवास पर विपरीत प्रभाव डालकर देसी प्रजाति के अस्तित्व के लिए खतरा पैदा कर देती है। भारत में बहुत से विदेशी मूल की वनस्पतियां जैसे *गाजर घास(पार्थिनियम हिट्रोफोरस), कुर्री (लैंटाना कमरा), काबुली कीकर (प्रोसोपिस जूलिफ्लोरा)* आदि जैव–विविधता क्षरण के प्रमुख कारण साबित हो रहे हैं।

5. **अतिशोषण**– बढ़ती मानव जनसंख्या के कारण जैविक संसाधनों का दोहन भी बढ़ा है। संसाधनों का उपयोग तब ज्यादा बढ़ जाता है जब पूर्व में उपयोग नहीं हुई अथवा स्थानीय उपयोग वाली प्रजाति के लिए वाणिज्यिक बाजार विकसित हो जाता है। अतिशोषण दुनिया के लगभग एक–तिहाई लुप्तप्राय कशेरूकी जीवों के लिए प्रमुख खतरा है। बढ़ती ग्रामीण बेरोजगारी, उन्नत शोषण विधियों का विकास तथा अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण ने बहुत सी प्रजातियों को विलुप्ति के शीर्ष पर पहुचा दिया है।[5] अगर प्रजाति पूरी तरह से समाप्त नहीं होती है तो भी उसकी जनसंख्या उस स्तर तक घट जाती है जहाँ से वह अपना पुनरुत्थान करने में अक्षम होती है।

6. **शिकार**– जन्तुओं का शिकार आमतौर से दाँत, सींग, खाल, कस्तूरी आदि के लिए किया जाता है। अंधाधुंध शिकार के कारण जानवरों की बहुत सी प्रजातियां लुप्तप्राय जन्तुओं की श्रेणी में पहुँच चुकी हैं। असम राज्य में एक सींग वाले गैण्डे की जनसंख्या में अभूतपूर्व गिरावट दर्ज की गयी है क्योंकि इसका शिकार इसकी सींग के लिए किया जाता है जिसका उपयोग कामोत्तेजक दवाओं के निर्माण में होता है। इसी प्रकार पूर्वोत्तर राज्यों विशेषकर मणिपुर में *चीरू* नामक जानवर का शिकार उसकी खाल के लिए किया जाता है जिससे *शाहतूस* शाल का निर्माण होता है। *बाघ, तेन्दुआ, चिंकारा, अजगर, कृष्ण मृग* तथा *मगरमच्छ* का शिकार भी खाल के लिए किया जाता है। *हाथियों* का शिकार दाँत के लिए किया जाता है जबकि *बारहसिंगा* का शिकार सींग के लिए किया जाता है। *कस्तूरी मृग* का शिकार कस्तूरी के लिए किया जाता है।

7. **वन विनाश**– विकास कार्यों तथा कृषि के विस्तार के कारण उष्णकटिबंधीय देशों में जंगलों को बड़े पैमाने पर नष्ट किया गया है जिसके परिणामस्वरूप उष्णकटिबंधीय वनों में जैव–विविधता का क्षरण हुआ है। उष्णकटिबंधीय देशों में आदिवासियों द्वारा की जाने वाली झूम कृषि(स्थानान्तरी कृषि) भी जैव–विविधता क्षरण का एक प्रमुख कारण रही है। भारत के आदिवासी बहुल पूर्वोत्तर राज्यों में झूम कृषि के कारण वनों के क्षेत्रफल में अभूतपूर्व गिरावट दर्ज की गयी है।

8. **अति–चराई**– शुष्क तथा अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में चराई जैव–विविधता क्षरण का एक प्रमुख कारण है। भेड़ों, बकरियों तथा अन्य शाकभक्षी पशुओं द्वारा चराई के कारण पौधों की प्रजातियों को नुकसान पहुंचता है। अति–चराई के कारण पौधों का प्रकाश–संश्लेषण वाला भाग नष्ट हो जाता है जिससे पौधों की मृत्यु हो जाती है। बहुत सी कमजोर प्रजातियां शाकभक्षी पशुओं द्वारा कुचल दी जाती हैं। भारी चराई, प्रजाति को समुदाय से नष्ट कर देती है।

9. **बीमारी**– मानव गतिविधियाँ वन्य–जीवों की प्रजातियों में बीमारियों को बढ़ावा देती हैं। जब कोई जानवर एक प्राकृतिक संरक्षित क्षेत्र तक सीमित होता है तब उसमें बीमारी के प्रकोप की संभावना ज्यादा होती है। दबाव में जानवर बीमारी के प्रति काफी संवेदनशील होते हैं। ठीक इसी प्रकार मनुष्य की कैद में वन्य–जीव बीमारियों के प्रति अत्यन्त ही संवेदनशील होते हैं।

10. **चिड़ियाघर तथा शोध हेतु प्रजातियों का उपयोग**– चिकित्सा शोध, वैज्ञानिक शोध तथा चिड़ियाघर के लिए कुछ विशिष्ट जानवरों को प्राकृतिक वास से पकड़ना प्रजाति के लिए खतरनाक साबित होता है क्योंकि इससे इनकी जनसंख्या में गिरावट होने की संभावना रहती है जिससे ये जानवर विलुप्ति के कगार पर पहुँच सकते हैं। चिकित्सा शोध महत्वपूर्ण क्रिया है लेकिन यह संकटग्रस्त जंगली प्राइमेट्स जैसे *गुरिल्ला, चिम्पांजी* तथा *ओरांगुटान* के लिए खतरनाक है।
11. **नाशीजीवों तथा परभक्षियों का नियन्त्रण**– फसलों तथा पशुओं को नाशीजीवों तथा परभक्षियों से सुरक्षा ने भी बहुत से प्रजातियों को विलुप्ति के कगार पर पहुँचा दिया है। विष के प्रयोग से एक विशेष प्रजाति को नष्ट करने के प्रयास में कभी–कभी उस प्रजाति के परभक्षी भी विष के शिकार हो जाते हैं जिससे पारितंत्र में खाद्य श्रृंखला अव्यवस्थित हो जाती है और नियंत्रित प्रजाति नाशीजीव(पेस्ट) का रूप धारण कर जैव–विविधता को क्षति पहुँचाती है।
12. **प्रतियोगी अथवा परभक्षी प्रजातियों का प्रवेश**– प्रवेश कराई गयी प्रजाति दूसरी प्रजातियों को उनके शिकार, भोजन के लिए प्रतियोगिता, आवास को नष्टकर अथवा पारिस्थितिक संतुलन को अव्यवस्थित कर उन्हें प्रभावित कर सकती है। उदाहरणस्वरुप हवाई द्वीप में वर्ष 1883 में गन्ने की फसल को बर्बाद कर रहे चूहों के नियंत्रण हेतु नेवलों को जानबूझकर प्रवेश कराया गया था जिसके फलस्वरुप बहुत सी अन्य स्थानीय प्रजातियां भी प्रभावित हुई थी।

5. **जैव–विविधता का संरक्षण**– जैव–विविधता संरक्षण का आशय जैविक संसाधनों के प्रबंधन से है जिससे उनके व्यापक उपयोग के साथ–साथ उनकी गुणवत्ता भी बनी रहे। चूँकि जैव–विविधता मानव सभ्यता के विकास की स्तम्भ है इसलिए इसका संरक्षण अति आवश्यक है। जैव–विविधता हमारे भोजन, कपड़ा, औषधीय, ईंधन आदि की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। जैव–विविधता पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखने में सहायक होती है। इसके अतिरिक्त यह प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा आदि से राहत प्रदान करती है। वास्तव में जैव–विविधता प्रकृति की स्वभाविक संपत्ति है और इसका क्षय एक प्रकार से प्रकृति का क्षय है। अतः प्रकृति को नष्ट होने से बचाने के लिए जैव–विविधता को संरक्षण प्रदान करना समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

6. **जोखिमग्रस्त प्रजातियां**– मेस तथा स्टुअट[6] एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधन संघ(आई0यू0सी0एन01994 डी)[7] ने वनस्पतियों एवं जन्तुओं की कम होती प्रजातियों को संरक्षण हेतु निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटा है–

1. **असहाय प्रजाति**– वे प्रजातियां जो कि संकटग्रस्त प्रजातियां बन सकती है अगर वर्तमान कारक का प्रकोप जारी रहा जो इनकी जनसंख्या के गिरावट के लिए जिम्मेदार है। भारत में भालू(स्लाथ बीयर) इसका उदाहरण है।
2. **दुर्लभ प्रजाति**– यह वे प्रजातियां होती हैं जिनकी संख्या कम होने के कारण उनकी विलुप्ति का खतरा बना रहता है। भारत में *शेर*(एशियाटिक लायन) इसका उदाहरण है।
3. **अनिश्चित प्रजाति**– वे प्रजातियां जिनकी विलुप्ति का खतरा है लेकिन कारण अज्ञात हैं। *मेक्सिकन प्रेरी कुत्ता* इसका उदाहरण है।
4. **संकटग्रस्त प्रजाति**– वे प्रजातियां जिनके विलुप्ति का निकट भविष्य में खतरा है। इन प्रजातियों की जनसंख्या गम्भीर स्तर तक घट चुकी है तथा इनके प्राकृतिक आवास भी बुरी तरह घट चुके हैं। गंगा डॉल्फिन तथा *नीला ह्वेल* इसके प्रमुख उदाहरण हैं।
5 **गंभीर संकटग्रस्त प्रजाति**– वे प्रजातियां जो निकट भविष्य में जंगली अवस्था में विलुप्त होने के खतरे का सामना कर रही हों। भारत में *ग्रेट इण्डियन बस्टर्ड(सोहन चिड़िया)* तथा *गंगा शार्क* इसके उदाहरण हैं।
6 **विलुप्त प्राजाति**– वे प्रजातियां जिनका अस्तित्व पृथ्वी से समाप्त हो चुका है। *डाइनासोर* तथा *डोडो* इसके प्रमुख उदाहरण हैं।
7 **अपर्याप्त रूप से ज्ञात प्रजाति**– वे प्रजातियां जो संभवतः किसी एक संरक्षण श्रेणी से संबद्ध होती हैं लेकिन अपर्याप्त जानकारी के अभाव में उन्हें किसी विशेष प्रजातीय श्रेणी में रखा गया है।
8 **जंगली अवस्था में विलुप्त प्रजाति**– वे प्रजातियां जो वर्तमान में खेती अथवा कैद में होने के कारण ही जीवित हैं। ये प्रजातियां अपने पूर्व के प्राकृतिक आवास से विलुप्त हो चुकी हैं।
9 **संरक्षण आधारित प्रजाति**– ये वे प्रजातियां होती हैं जो आवास आधारित संरक्षण कार्यक्रम पर निर्भर होती हैं। अगर संरक्षण कार्यक्रम रुक जाता है तो ये प्रजातियां पाँच वर्ष के भीतर किसी भी जोखिमग्रस्त श्रेणी के अंतर्गत आ सकती हैं।
10 **लगभग जोखिमग्रस्त प्रजाति**– ये वे प्रजातियां हैं जो दुर्लभ श्रेणी में पहुँचने के करीब होती हैं।
11 **कम महत्व वाली प्रजाति**– वे प्रजातियां, जो न तो गम्भीर संकटग्रस्त, संकटग्रस्त अथवा असहाय होती हैं न तो वह संरक्षण आधारित अथवा लगभग संकटग्रस्त के योग्य होती हैं।
12 **आंकड़ों की अभाव वाली प्रजाति**– वे प्रजातियां जिनके विषय में पर्याप्त आंकड़ों के अभाव के कारण इनको किसी श्रेणी में नहीं रखा जा सकता।
13 **अमूल्यांकित प्रजाति**– वे प्रजातियां जिनका आंकलन किसी भी मापदण्ड के अनुसार नहीं किया गया है।

विश्व संरक्षण रणनीति ने जैव–विविधता संरक्षण के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं–

1. उन प्रजातियों के संरक्षण का प्रयास होना चाहिए जो कि संकटग्रस्त हैं।
2. विलुप्ति पर रोक के लिए उचित योजना तथा प्रबंधन की आवश्यकता।
3. खाद्य फसलों, चारा पौधों, मवेशियों, जानवरों तथा उनके जंगली रिश्तेदारों को संरक्षित किया जाना चाहिए।

4. प्रत्येक देश की वन्य प्रजातियों के आवास को चिंहित कर उनकी सुरक्षा को सुनिश्चित करना चाहिए।
5. उन आवासों को सुरक्षा प्रदान करना चाहिए जहाँ प्रजातियां भोजन, प्रजनन तथा बच्चों का पालन–पोषण करती हैं।
6. जंगली पौधों तथा जन्तुओं के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर नियंत्रण होना चाहिए।

वनस्पतियों एवं जन्तुओं की प्रजातियों तथा उनके आवास को बचाने के लिए समयबद्ध कार्यक्रम को लागू करने की आवश्यकता है जिससे जैव–विविधता संरक्षण को बढ़ावा मिल सके। अतः संरक्षण की कार्ययोजना आवश्यक रूप से निम्नलिखित दिशा में होनी चाहिए–

1. द्वीपों सहित देश के विभिन्न क्षेत्रों में पाये जाने वाले जैविक संसाधनों को सूचीबद्ध करना।
2. संरक्षित क्षेत्र के जाल जैसे राष्ट्रीय पार्क, जैवमण्डल रिजर्व, अभयारण्य, जीन कोष आदि के माध्यम से जैव–विविधता का संरक्षण।
3. क्षरित आवास का प्राकृतिक अवस्था में पुनरुत्थान।
4. प्रजाति को किसी दूसरी जगह उगाकर उसे मानव दबाव से बचाना।
5. संरक्षित क्षेत्र बनने से विस्थापित आदिवासियों का पुर्नवास।
6. जैव–प्रौद्योगिकी तथा ऊतक सवर्धन की आधुनिक तकनीकों से लुप्तप्राय प्रजातियों का गुणन।
7. देसी आनुवंशिक विविधता संरक्षण हेतु घरेलू पौधों तथा जन्तुओं की प्रजातियों की सुरक्षा।
8. जोखिमग्रस्त प्रजातियों का पुनरुत्थान।
9. बिना विस्तृत जाँच के विदेशी मूल के पौधों के प्रवेश पर रोक।
10. एक ही प्रकार की प्रजाति का विस्तृत क्षेत्र पर रोपण को हतोत्साहन।
11. उचित कानून के जरिए प्रजातियों के अतिशोषण पर लगाम।
12. प्रजाति व्यापार संविदा के अंतर्गत अतिशोषण पर नियन्त्रण।
13. आनुवंशिक संसाधनों के संपोषित उपयोग तथा उचित कानून के द्वारा सुरक्षा।
14. संरक्षण में सहायक पारंपरिक ज्ञान तथा कौशल को प्रोत्साहन।

6. **जैव–विविधता संरक्षण की विधियां**– जैव–विविधता संरक्षण की मुख्यतः दो विधियां होती हैं जिन्हें *यथास्थल संरक्षण* तथा *बहिःस्थल संरक्षण* के नाम से जाना जाता है। जो कि निम्नवत हैं–

1. ***यथास्थल संरक्षण***– इस विधि के अन्तर्गत प्रजाति का संरक्षण उसके प्राकृतिक आवास अथवा मानव द्वारा निर्मित पारितंत्र में किया जाता है जहाँ वह पायी जाती है। इस विधि में विभिन्न श्रेणियों के सुरक्षित क्षेत्रों का प्रबंधन विभिन्न उद्देश्यों से समाज के लाभ हेतु किया जाता है। सुरक्षित क्षेत्रों में राष्ट्रीय पार्क, अभयारण्य तथा जैवमण्डल रिजर्व आदि प्रमुख हैं। राष्ट्रीय पार्क की स्थापना का मुख्य उद्देश्य वन्य–जीवन को संरक्षण प्रदान करना होता है जबकि अभयारण्य की स्थापना का उद्देश्य किसी विशेष वन्य–जीव की प्रजाति को संरक्षण प्रदान करना होता है। जैवमण्डल रिजर्व बहुउपयोगी संरक्षित क्षेत्र होता है जिसमें आनुवंशिक विविधता को उसके प्रतिनिधि पारितंत्र में वन्य–जीवन जनसंख्या, आदिवासियों की पारंपरिक जीवन शैली आदि को सुरक्षा प्रदान कर संरक्षित किया जाता है। भारत ने यथास्थल संरक्षण में उल्लेखनीय कार्य किया है। देश में कुल 89 राष्ट्रीय पार्क हैं जो 41 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल पर फैले हैं। जबकि देश में कुल 500 अभयारण्य हैं जो कि लगभग 120 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल पर फैलें हैं। देश में कुल 17 जैवमण्डल रिजर्व हैं। नीलगिरि जैवमण्डल रिजर्व भारत का पहला जैवमण्डल रिजर्व था जिसकी स्थापना सन् 1986 में की गयी थी। यूनेस्को ने भारत के सुन्दरवन रिजर्व, मन्नार की खाड़ी रिजर्व तथा अगस्थमलय जैवमण्डल रिजर्व को विश्व जैवमण्डल रिजर्व का दर्जा दिया है।

2. ***बहिःस्थल संरक्षण***– यह संरक्षण कि वह विधि है जिसमें प्रजातियों का संरक्षण उनके प्राकृतिक आवास के बाहर जैसे वानस्पतिक वाटिकाओं, जन्तुशालाओं, आनुवंशिक संसाधन केन्द्रों, संवर्धन संग्रह आदि स्थानों पर किया जाता है। इस विधि द्वारा पौधों का संरक्षण सुगमता से किया जा सकता है। इस विधि में बीज बैंक, वानस्पतिक वाटिका, ऊतक संवर्धन तथा आनुवंशिक अभियान्त्रिकी की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जहाँ तक फसल आनुवंशिक संसाधन का संबंध है भारत ने बहिःस्थल संरक्षण में भी प्रसंशनीय कार्य किया है। जीन कोष में 34,000 से ज्यादा धान्य फसलों *(गेहूँ, धान, मक्का, जौ* एवं *जई)* तथा 22,000 दलहनी फसलों का संग्रह किया गया है जिन्हें भारत में उगाया जाता है। इसी तरह का कार्य पशुधन, कुक्कुट पालन तथा मत्स्य पालन के भी क्षेत्र में किया गया है।

7. **निष्कर्ष**– मानव सभ्यता के विकास की धुरी जैव–विविधता मुख्यतः आवास विनाश, आवास विखण्डन, पर्यावरण प्रदूषण, विदेशी मूल के वनस्पतियों के आक्रमण, अतिशोषण, वन्य–जीवों का शिकार, वनविनाश, अति–चराई, बीमारी आदि के कारण खतरे में है। अतः पारिस्थितिक संतुलन, मनुष्य की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति एवं प्राकृतिक आपदाओं(बाढ़, सूखा, भू–स्खलन आदि) से मुक्ति के लिए जैव–विविधता का संरक्षण आज समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

सन्दर्भ

1. विल्सन, ई0 ओ0 एवं पिटर्स, एफ0 एम0(1988) *बायोडाइवर्सिटी*(संपादित), नेशनल एकेडेमी प्रेस, वाशिंगटन डी0सी0।
2. हेवुड, वी0 एच0 एवं वाटसन, आर0 टी0(1995) *ग्लोबल बायोडाइवर्सिटी असेसमेन्ट*(संपादित), यूनाइटेड नेशन इनवायरन्मेण्ट प्रोग्राम, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रीज, यू0के0।
3. भरूचा, ई0(2005) *टेक्स्टबुक ऑफ इनवायरन्मेन्टल स्टडीज*, यूनिवर्सिटी प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, इण्डिया।
4. शर्मा, पी0 डी0(2004) *इकोलॉजी एण्ड इनवायरन्मेन्ट*, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, इण्डिया।
5. सिह, ए0(2007) *वोरहेविया डिफ्यूजा* : एन ओवर–ऐक्सप्लॉयटेड प्लाण्ट ऑफ मेडिसिनल इमपॉरटेन्स इन रूरल एरियाज ऑफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, *करेण्ट साइन्स*, खण्ड–93, अंक–4, पृ0 446।
6. मेस, जी0 एम0 तथा स्टुअर्ट, एस0(1994), ड्राफ्ट आई यू सी एन् रेड लिस्ट कटेगरीज, वरजन 2.2 स्पीसीज 21/22 : मु0पृ0 13–14।
7. आई यू सी एन्(1994 डी) आई यू सी एन् रेड लिस्ट कटेगरीज, आई यू सी एन्, इंग्लैण्ड।

जीका वायरस–मानव जाति के लिए खतरा

डी0 के0 अवस्थी एवं सरिता चौहान
एसोसिएट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
श्री जय नारायण स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
dkawasthi5@gmail.com

प्राप्त तिथि–13.04.2016; स्वीकृत तिथि–14.09.2016

सार– यूगांडा के जीका जंगल में पाये जाने वाले बंदरों में जीका वायरस पाया गया है। जीका तथा इबोला वायरस दोनों ही घातक हैं। जीका वायरस, एडीज मच्छर द्वारा फैलता है। जीका वायरस को विश्व स्वास्थ्य संगठन ने आपातकालीन जन स्वास्थ्य घोषित कर दिया है। जीका वायरस को सर्वप्रथम 1947 में पृथक किया गया था। जीका वायरस के कारण बुखार और दर्द को दूर करने क लिये एसिटामिनोफेन दवा दी जाती है। जीका वायरस से माइक्रोसेफैली रोग हो जाता है।

बीज शब्द– जीका वायरस, इबोला वायरस, विश्व स्वास्थ्य संगठन, एडीज, एसिटामिनोफेन।

Zika virus- threat to human race

D. K. Awasthi and Sarita Chauhan
Associate Professor, Department of Chemistry
S.J.N. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
dkawasthi5@gmail.com

Abstract- Zika virus was found in monkey of Zika forest of Uganda. Zika and Ebola viruses are fatal. Zika virus is spread through Aedes mosquitoes. The World Health Organization(WHO) has declared a public health emergency for Zika virus. Zika virus was first of all isolated in 1947. Fever and pain caused by Zika virus is cured by Acetaminophane medicine. Zika virus causes microcephali disease.

Key words- Zika virus, Ebola virus, World Health Organization(WHO), Aedes, Acetaminophane.

जीका वायरस धीरे–धीरे पूरी दुनिया में इस प्रकार फैल रहा है कि आने वाले समय में मानव जाति का अस्तित्व खतरे में होगा। अगर इस पर रोकथाम न की गई तो गम्भीर परिणाम भुगतने होंगे। इबोला वायरस के बाद यह वायरस अपनी तबाही अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका में मचा रहा है। इस बीमारी को देखते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन के डायरेक्टर जनरल मार्गेटचान ने 02 फरवरी 2016 की शुरूआत में वैश्विक आपात स्थिति घोषित कर दिया है। डब्ल्यू0एच0ओ0 ने अनुमान लगाया है कि अगले साल अमेरिका में जीका वायरस सम्बन्धित लगभग 50 लाख लोग प्रभावित होंगे। यह मच्छर से फैलने वाला वायरस बहुत खतरनाक है और ब्राजील, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका के साथ–साथ लगभग 25 देशों में फैल चुका है। ब्राजील में अब तक करीब 6 हजार बच्चे और युवा इस खतरनाक वायरस का शिकार हो चुके हैं।

पश्चिमी अफ्रीका में इस वायरस के कारण लगभग 11435 से ज्यादा लोगों की जीवनलीला समाप्त हो गई है। ब्राजील में मई 2015 से जीका वायरस बहुत तेजी से पैर पसार रहा है। डब्ल्यू0एच0ओ0 का अनुमान है कि यह वायरस इस वर्ष के अंत तक संपूर्ण विश्व को अपने आगोश में ले लेगा। इसके लिए पूरी मानव जाति को सचेत रहने की आवश्यकता है। भारत वर्ष में अब तक लगभग 50 से अधिक लोगों की मृत्यु इस वायरस के कारण हो चुकी हैं। जीका वायरस की पहचान सबसे पहले अफ्रीका के युगांडा में सन् 1947 में की गई थी। अफ्रीका के जीका जंगल में पाये जाने वाले *रीसस मकाक* बंदरों में इसके लक्षण देखे गये थे। इसलिए इस वायरस का नाम **जीका** रख दिया गया। इस वायरस के लक्षण 1952 में युगांडा और तंजानिया के देशों के लोगों में भी पाये गये।

जीका वायरस से बचने के लिए विश्व में अब तक किसी भी प्रकार की दवा व टीका विकसित नहीं हो पाया है। जीका वायरस *एडीज एजिप्टी* मच्छर द्वारा फैलता है। इसका संक्रमण जीका वायरस से ग्रसित व्यक्ति को अगर यह मच्छर काटता है और वही मच्छर किसी स्वस्थ व्यक्ति को काटता है तो उस व्यक्ति में जीका वायरस होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। जीका वायरस का अधिकतम खतरा गर्भवती महिलाओं को होता है। इस वायरस के कारण बच्चे छोटे सिर के साथ पैदा होते हैं। इस प्रकार की विकृति को माइक्रोसेफैली के नाम से जाना जाता है जो एक न्युरोलॉजिकल बीमारी है इसमें बच्चे का दिमाग पूरी तरह विकसित नहीं होने पाता है। अक्टूबर 2015 से अब तक 3546 से ज्यादा छोटे सिर और अधिकतर अविकसित दिमाग वाले बच्चों का जन्म हुआ है।

जीका वायरस से उत्पन्न होने वाले लक्षण निम्न प्रकार के होते हैं। पीलिया(पीला बुखार), जोड़ों का दर्द, लाल आँखें और शरीर पर लाल चकत्ते उत्पन्न होते हैं। वर्ष 2007 में माइक्रोनेशिया के द्वीप याप में इस वायरस ने बड़ी तेजी से पैर पसारे और फिर यह वायरस कैरीबियाई देशों और लैटिन अमेरिका के देशों में फैल गया। हाल ही में अल–सेलवाडोर, कोलंबिया और इक्वाडोर जैसे देशों ने अपने देश की महिलाओं को साल 2018 तक गर्भवती होने से परहेज करने की सलाह दी है। यह विश्व के जानलेवा वायरसों में से एक है।

विश्व के प्रमुख जानलेवा वायरस निम्न हैं–

वायरस	देश	खोज
डेंगू	चीन	265–420
एच.आई.वी.	कांगो गणराज्य	1959
मरबर्ग	जर्मनी	1967
इबोला	कांगो गणराज्य	1976
बर्ड फ्लू	चीन	1996
स्वाइन फ्लू	मैक्सिको	2008

पश्चिमी अफ्रीका में फैले वायरस(इबोला) से 11 हजार से ज्यादा लोगों की जान गई थी। डब्ल्यू0एच0ओ0 के अनुसार इस वर्ष के अंत तक जीका वायरस पूरी दुनिया में फैल सकता है। इसके लिए विश्व के सभी लोगों को इस वायरस की जानकारी तथा सचेत रहने के लिए प्रयासरत रहना चाहिए।

गिलैने बारे सिंड्रोम– यह जीका वायरस के द्वारा होने वाला एक रोग है इसमें इस प्रकार की विकृति उत्पन्न होती है जिसमें शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली तंत्रिका तंत्र के कुछ भाग पर विपरीत प्रभाव उत्पन्न हो जाता है इस विकृति में कम या ज्यादा कमजोरी, पैरों में झुनझुनाहट इन लक्षणों की तीव्रता शनैः–शनैः बढते–बढ़ते व्यक्ति की मांसपेशियां कमजोर हो जाती हैं। इस दृष्टि से वह गम्भीर हालत का शिकार हो जाता है। प्रायः इसके लक्षण संक्रमित मरीज में कुछ सप्ताह के बाद दिखाई पड़ते हैं। इसके लिए **इम्यूनोग्लोब्यूलिन** की खुराक दी जाती है। अमेरिका के बहुत से देशों में गिलैने बारे सिन्ड्रोम के मामले धीरे–धीरे बढ़ते जा रहे हैं। दिसम्बर 2015 तक इसके 76 मरीज सामने आये इसमें 48 मरीज जीका द्वारा ग्रसित पाये गये। वेनेजुएला में जनवरी 2016 तक 257 मामले सामने आये फ्रांस व न्यूजीलैन्ड देशों में जीका वायरस ने अपना प्रकोप फैलाया। जीका वायरस का संक्रमण यौन संबन्धों के द्वारा भी होता है। अमेरिका के एक प्रमुख स्वास्थ्य अधिकारी ने टेक्सास में यौन सम्बन्धों के कारण संक्रमण की पुष्टि की है। अमेरिका रेडक्रास ने जीका प्रभावित देशों से लौटे लोगों को 28 दिनों तक रक्त दान न करने की सलाह दी है। जीका में स्पष्ट तौर पर 25600 से अधिक कोलंबियाई नागरिकों को प्रभावित किया है। डॉक्टरों के अनुसार इस जीका वायरस के कारण उत्पन्न बुखार और दर्द दूर करने के लिए **एसिटामिनोफेन** दवा लेने की सलाह दी जाती है। जीका की जांच के लिए व्यक्ति के सीरम द्वारा वायरल न्यूक्लिक अम्ल या एन्टीबॉडी आईजीएम तथा निष्क्रिय एन्टीबॉडी की जाँच की जाती है। जीका के लक्षणों के प्रकट होने के बाद 5 से 7 दिनों के बीच में आण्विक जाँच (RT-PCR) होनी आवश्यक है। यह जाँच केवल जीका वायरस के लिए ही होती है। वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में एक प्रकार के जी. एम. मच्छर तैयार किये हैं। ब्राजील के पिरसियाकाबा में स्थित एक कम्पनी ने इसकी तैयारी की थी जहाँ इस प्रकार के लाखों मच्छर तैयार किये गये। और नेशनल बायोसेफ्टी कमेटी से अनुमति लेकर वर्ष 2012 में विभिन्न शहरों और देशों में छोड़ा गया। कम्पनी के अनुसार इससे एडीज मच्छरों की संख्या में 90 प्रतिशत तक कमी हो जाती है। इस नर मच्छर का नाम 513 रखा गया। यह मच्छर सुनिश्चित करेगा कि संतार व्यस्क(2–5 दिन) होने से पहले खत्म हो जाए। इस प्रकार मच्छरों की बढ़ती संख्या पर रोक लगाई जा सकती है।

अब भारत में जी. एम. मच्छरों को तैयार करने का कार्य चल रहा है। महाराष्ट्र की एक कम्पनी नर जी. एम. मच्छरों पर कार्य भी कर रही है।

संदर्भ

1. विज्ञान प्रगति(मार्च 2016) मु0पृ0 8–13।
2. अमर उजाला(17 फरवरी 2016) उडान, पृ0 11।
3. चीन राष्ट्रीय स्वास्थ एवं परिवार नियोजन आयोग रिपोर्ट, जनवरी 2016।
4. विश्व स्वास्थ संगठन रिपोर्ट, दिसम्बर 2015।
5. राष्ट्रीय रोग नियन्त्रण केन्द्र रिपोर्ट, जनवरी 2016।
6. राष्ट्रीय विषाणु विज्ञान संस्थान रिपोर्ट, 2015।
7. आई.सी.एम.आर. रिपोर्ट–2015, जनवरी 2016।

कैन्सर

एस0 सी0 शुक्ल
अ0प्र0 विभागाध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
पता: ए–1104, इन्दिरा नगर, लखनऊ–226016, उ0प्र0, भारत

प्राप्त तिथि– 01.05.2016; स्वीकृत तिथि– 25.08.2016

सार– कैन्सर, रोगों का एक वर्ग है जिसमें कोशिकाओं की अनियंत्रित वृद्धि के साथ ही शरीर के दूसरे अंगों में भी फैलने और विनाश करने की क्षमता होती है। अधिकतर(90–95%) कैन्सर का कारण वातावरण होता है। शेष(5–10%) आनुवंशिकी से निर्धारित होते हैं। ज्यादातर कैन्सर को प्रारम्भिक अवस्था में ही उसके चिन्ह एवं लक्षण या स्क्रीनिंग द्वारा पहचाना जा सकता है। चिकित्सीय परीक्षण जैसे रक्त जाँच, एक्स–रे, सी0टी0 स्कैन, एण्डोस्कोपी तथा बायोप्सी प्रमुख हैं। कुछ कैन्सर की रोकथाम उसको उत्पन्न करने वाले जोखिम कारकों जैसे तम्बाकू चबाना, मोटापा, शारीरिक निष्क्रियता, मदिरापान, यौन सम्बन्धित रोगों आदि से बचाव करके किया जा सकता है।

बीज शब्द– अर्बुद(ट्यूमर), गांठ(लम्प), जोखिम कारक, रोकथाम।

Cancer

S. C. Shukla
Former Head, Department of Zoology
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
Address: A-1104, Indira Nagar, Lucknow-226016, U.P., India

Abstract- A group of diseases involving abnormal cell growth with the potential to invade or spread to other parts of the body, is known as cancer. Majority (90-95%) of cancers are due to environmental factors. Remaining (5-10%) is due to inherited factors. Most of the cancers can be recognized at early stage due to the appearance of signs and symptoms or through screening. Investigations include blood tests, X-rays, CT scans, endoscopy and biopsy. Some cancers can be prevented by avoiding risk factors as tobacco chewing, obesity, physical inactivity, alcohol intake and sexually transmitted diseases etc.

Key words- Tumour, lump, risk factors, prevention.

एक अर्बुद(ट्यूमर) का अर्थ है कोशिकाओं की असामान्य वृद्धि जिससे एक परावर्तित(ट्रांसफॉर्मड्) कोशिकाओं का समूह बन जाता है जिसे गांठ(लम्प) कहा जाता है। इसके बनने के प्रमुख कारण होते हैं– कोशिका विभाजन को नियंत्रित करने वाली प्रक्रिया का समापन तथा उसके अन्दर उपस्थित जीन्स(आनुवंशिकता की इकाई) में किन्हीं लक्षणों के प्रति जीनी उत्परिवर्तन(जीनिक म्यूटेशन)।

सामान्यतः अर्बुद दो प्रकार के होते हैं– सुयम अर्बुद(बिनाइन) जो अधिकतर परिसम्पुटित(इनकेप्स्लेटेड) होते हैं व एक ही स्थान तक सीमित रहते हैं। दूसरे अर्बुद, दुर्दम अर्बुद(मैलिगनेन्ट) कहलाते हैं जिनमें कोशिकायें परिसम्पुटित न होने के कारण रक्त परिवहन के साथ–साथ शरीर के दूसरे भागों में जाकर स्थापित हो जाती हैं(इस प्रक्रिया को स्थलान्तरण या मेटास्टैसिस कहा जाता है)। दुर्दम कोशिकायें(कैन्सरस सेल्स) अपनी सतह पर लगे हुए पदार्थों के कारण विशेष गुणों से युक्त होती हैं साथ ही इनमें एक विशेष घटक(रिसेप्टर) भी होता है जो किसी भी औषधि या हार्मोन के साथ संयुक्त होकर कोशिका की कार्यिकी को बदल देता है। इस कारणवश इन कोशिकाओं में स्वतःस्रावी कारक(ऑटोक्राइन फैक्टर्स) पैदा हो जाते हैं जो उनको विशेष प्रतिजनीय गुण(एण्टीजीनिक प्रॉपर्टी) से युक्त कर देते हैं। हमारे शरीर के प्रतिरोध क्षमता तंत्र(इम्यून सिस्टम) द्वारा इस प्रतिरोधी उद्दीपनों के संदर्भ में दुर्दम कोशिकाओं के प्रतिजनों के लिए प्रतिकाय(एण्टीबॉडीज) तो बनाये जाते हैं परन्तु वे इनकी प्रक्रिया को नजरअन्दाज(भेदकर) करते हुए खूब वृद्धि करने में सक्षम होती हैं जो उनकी सतह पर पाये जाने वाले प्रतिजनों में निरन्तर/सतत् परिवर्तनों के होते रहने के कारण हुआ करता है। इस प्रकार दुर्दम कोशिकायें शरीर की प्रतिरोध क्षमता वाली कोशिकाओं को भ्रमित करके उन्हें अपना कार्य नहीं करने देती हैं। मनुष्य के शरीर की सभी कोशिकायें अपनी प्रकृति के आधार पर सदैव अपनी–अपनी प्रकार की एक जैसी

ही दिखती हैं तथा उनमें अभ्रंशीय(डीजेनेरेटिव) व प्रतिक्रमणीय(रीग्रेसिव) परिवर्तन बहुत कम दिखाई देते हैं। इसके साथ–साथ इन कोशिकाओं में विक्षेपण/स्थलान्तरण(मेटास्टैसिस) की प्रवृत्ति भी नहीं दिखाई देती हैं।

कैन्सर शरीर के किसी भाग के ऊतक में उत्पन्न हो सकता है। ऊतकों की प्रकृति के आधार पर इनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है–

1. **उपकलार्बुद(कार्सिनोमा)**– इस प्रकार के दुर्दम अर्बुद उपकलाकी कोशिकाओं में बनते हैं।
2. **ग्रन्थिलार्बुद(एडीनो कार्सिनोमा)**– ये अधिकतर दुर्दम होते हैं तथा ग्रन्थिल ऊतकों में उपस्थित कोशिकाओं में बनते हैं।
3. **लसिकार्बुद(लिम्फोमा)**– शरीर में लसीकाम ऊतक से बने हुए कैन्सर जैसे– हॉजकिन्स डिजीज।
4. **लसिका सार्कोमा(लिम्फो सार्कोमा)**– अधिकांश दुर्दम अर्बुद जो लसिकाम ऊतक में बनते हैं जैसे– लिम्फोसर्कोमा ऑफ इन्टेस्टाइन।
5. **सार्काबुद(सार्कोमा)**– संयोजी ऊतक(कनेक्टिव टिश्यू) जैसे– पेशियों, हड्डियों आदि में बनने वाले अधिकांश दुर्दम अर्बुद जो मूत्राशय, वृक्कों, यकृत, प्लीहा, फेफड़ों आदि को प्रभावित कर सकते हैं।
6. **हरितार्बुद/तीव्रश्वेत रक्तता(ल्यूकीमिया)**– अस्थिमज्जा व रक्त में उत्पन्न लसिकाभ(लिम्फवाइड) या रक्तोत्पादक(हीमैप्वाइटिक) ऊतक में पाया जाने वाला दुर्दम अर्बुद।
7. **हिमैन्जियोसार्कोमा**– रक्त वाहिनियों का दुर्दम अर्बुद जो अन्तः कला(इन्डोथीलियम) एवं तन्तुप्रस्(फाइब्रोब्लास्ट) ऊतक का बना होता है।
8. **एमीलोब्लास्टोमा**– जबड़े विशेषकर निचले जबड़े का अर्बुद जो दुर्दम भी हो सकता है तथा इसमें इनेमेल की विशिष्टता होती है।
9. **यकृतार्बुद(हिपैटोमा)**– यकृत में पाया जाने वाला एक दुद्रम अर्बुद।
10. **हीमैन्जियोब्लास्टोमा(रक्त वाहिका प्रस् अर्बुद)**– मस्तिष्क का एक कोशिका– रक्त वाहिका अर्बुद जो अधिकतर अनुमस्तिष्क में होता है।

कैन्सर के प्रारम्भिक लक्षण(प्रोग्नोस्टिक सिम्पटम्स)– चिकित्सा विज्ञानियों के अनुसार शरीर में उत्पन्न कोई परिवर्तन/अपसामान्यता जो छः सप्ताह से ज्यादा अवधि की हो गई हो तथा इस दौरान उसमें गिरावट की स्थिति नहीं दिखाई पड़ती हो तो उसकी तुरन्त जाँच करवाना आवश्यक है। कैन्सर की जाँच व उपचार जितना ही जल्दी आरम्भ हो जाये, परिणाम उतने ही अच्छे होने की संभावना है। इस बीमारी के पूर्वानुमान/प्राग्यान से सम्बद्ध सहायक लक्षण निम्नलिखित हो सकते हैं:–

1. कोई गाँठ या उभार जो शरीर में अचानक ही दिखाई पड़ने लगे।
2. घाव/जख्म विशेषकर ऐसा जिसके किनारे उठे हों तथा बाहर की ओर उल्टे हों जिससे जख्म का रूप गोभी के फल जैसा दिखता हो।
3. बिना किसी विकृति के शरीर से रक्तस्राव या तरल पदार्थ का निकलना।
4. त्वचा में कोई भी परिवर्तन का दिखाई देना।
5. खाँसी आना तथा गले की आवाज का कर्कश होना(हारस्नेस ऑफ वॉयस)
6. मल के स्वरूप व प्रकृति में परिवर्तन जैसे गोल–गोल पिण्डों के रूप में या उसका रंग सामान्य से लाल कालापन लिए होना।
7. बिना कारण या विकृति के अचानक वजन का कम होने लगना(लगभग 7–8% तक एक माह में)।
8. अकारण या बिना किसी विकृति के सिर में दर्द होना।

विश्व स्वास्थ्य संगठन(डब्ल्यू0एच0ओ0) की वर्ष 2014 में जारी की गई रिपोर्ट के अनुसार भारत के महानगरों में कैन्सर के 1,00,000 नये रोगी प्रति वर्ष निदान के दौरान आते देखे गये हैं तथा इसके अनुसार वर्ष 2015 तक यह संख्या बढ़कर 11,48,692 तक पहुँच जायेगी जो 5,48,844 पुरूषों तथा 5,79,847 के नये रोगियों की संख्या तक जा सकती है। भारतीय चिकित्सा व अनुसंधान परिषद की जनसंख्या आधारित कैन्सर पंजीकरण की वर्ष 2013 की रिपोर्ट के अनुसार महानगरों में प्रमुख तीन प्रकार के कैन्सर से संबंधित पुरुषों व स्त्रियों की संख्या इस प्रकार है–

पुरुष	स्त्री
मुँह का कैन्सर–45,669	स्तन का कैन्सर–94288 (जिसमें स्टेज वन 90%, स्टेज टू 80%, तथा स्टेज थ्री 40–50% की अनुजीवन दर देखी गई है)
फेफड़ों का कैन्सर–52,685	सर्वाइकल कैन्सर–92,731
पौरुष ग्रन्थि(प्रॉस्टेट) का कैन्सर–35,029	अण्डाशयी कैन्सर–36,423

कैन्सर शोधकर्ताओं का यह भी मत है कि 70% ज्ञात कैन्सर रोगियों के रोग का कारण उनकी जीवन शैली है। अतः इसको सुचारु रूप से ठीक रखकर कम से कम एक बड़ी प्रतिशत की संख्या कैन्सर रोग से बहुत हद तक छुटकारा पा सकती है। भारत में पाये जाने वाले कुछ प्रमुख कैन्सर निम्नलिखित हो सकते हैं–

1. **फेफड़ों का कैन्सर**– धूम्रपान(किसी भी रूप में) इसका प्रमुख कारक हो सकता है। यह आवश्यक नहीं आप स्वयं धूम्रपान नहीं करते परन्तु फिर भी दूसरों के धूम्रपान से निकले धुँये को सांस में ले जाने के कारण(पैसिव स्मोकर्स) आपको अधिक खतरा हो सकता है। अतः तम्बाकू के धुँये से बचाव द्वारा इसके खतरे को बहुत हद तक कम किया जा सकता है। इस दिशा में मीडिया द्वारा "तम्बाकू से कैन्सर हो सकता है जो जानलेवा है" जैसे विज्ञापनों का निरन्तर दिखाया जाना हो सकता है। जनचेतना को विकसित करने में सहायक सिद्ध हो सके ऐसा विश्वास किया जा सकता है। इसके प्रमुख लक्षण खाँसी, बलगम(रक्त की धारियों में रंजित), आवाज में कर्कशता(हार्शनेस) वजन का गिरना, सीने में दर्द आदि हो सकते हैं। यहाँ यह नितान्त आवश्यक है कि निदानकर्ता को तपेदिक व कैन्सर में विभेद का अच्छा ज्ञान हो क्योंकि ये लक्षण तपेदिक में भी दिखाई देते हैं तथा उसका उपचार यदि जल्दबाजी में शुरु हो गया हो तो दिक्कत आ सकती है। अतः उसके निदान हेतु एक्स–रे, सी.टी. स्कैन व जीवोति परीक्षण(बायोप्सी) का प्रयोग होता है।

2. **मुँह का कैन्सर**– भारत वर्ष में इसके रोगियों की संख्या अधिकतम देखी गई है, इनमें से 70% को तब ज्ञात होता है जब वे स्टेज थ्री व स्टेज फोर तक पहुँच जाते हैं। मुँह का कैन्सर जीवन शैली से सम्बद्ध होता है तथा इसका प्रमुख कारण तम्बाकू का सेवन है। इसके अतिरिक्त नियमित व अत्यधिक मद्यपान भी इसका कारक हो सकता है। कभी–कभी दाँतों की धार अधिक पैनी हो जाती है जिससे मुँह में घाव आदि हो जाने से भी यह रोग हो सकता है। इसके प्रमुख लक्षण मुँह में घाव/जख्म का होना(जो 3 सप्ताह से ऊपर का हो गया हो) मुँह में लाल या श्वेत रंग दाग/धब्बा/पैच दिखना, मुँह खोलने में तकनीफ होना तथा गर्दन में दर्द आदि होते हैं।

3. **पौरुष ग्रन्थि(प्रौस्टेट ग्लैंड) कैन्सर**– अधिकतर यह 60 वर्ष के ऊपर के पुरुषों में होता है पर कभी–कभी 50 वर्ष व बहुत कम 40–50 वर्ष के पुरुषों में भी देखा गया है। इसके रोगियों में तेजी से पेशाब लगना, पेशाब तुरन्त ही करने की आवश्यकता(ऐसा न करने पर निकल जाने का भय हो सकता या निकल भी सकती है), पेशाब के साथ दर्द का अनुभव, पेशाब की धार का धीमा रहना तथा बूंद–बूंद बहुत समय तक होते रहना(टपकना) जिससे मूत्राशय पूरी तरह खाली नहीं हो पाता(कम्प्लीट वॉयडिंग) आदि प्रमुख लक्षण देखे जाते हैं। निदान हेतु पी0एस0ए0 टेस्ट(प्रॉस्टेट सिक्रिटिंग एन्टीजेन टेस्ट) के साथ एम0आर0आई0(मैगनेटिक रेजोनेन्स इमेजिंग) व जीवोति परीक्षण(बायोप्सी) का प्रयोग प्रचलित है।

4. **स्तन कैन्सर**– टाटा मेमोरियल सेन्टर, मुंबई के आंकड़ों के अनुसार शहरीय भारत में 22 में से 1 महिला को उसके जीवन में स्तन कैन्सर हो सकता है। इसका शिकार सबसे अधिक 43–46 वर्ष की महिलायें होती देखी गई हैं परन्तु, विशेषज्ञों ने 20–30 वर्ष की महिलाओं में भी इसे होते देखा है। इसके लिए आवश्यक है स्वतः स्तन परीक्षण(वी0एस0ई0/ब्रेस्ट सेल्फ इग्जामिनेशन) जो महिलाओं को 20 वर्ष की आयु के पश्चात् नियमित रूप से करना चाहिये जिससे उनमें होने वाले परिवर्तनों जैसे लाली, गाँठ, तरल पदार्थ निकलना आदि को ध्यान से देखना चाहिये। स्वतः परीक्षण के बाद 40 वर्ष की आयु तक नियमित समय पर किसी स्त्री–रोग विशेषज्ञ(गाइनोकोलॉजिस्ट) से परीक्षण करवाना चाहिये। निदान के लिये अल्ट्रासाउन्ड(स्तन व गाँठ विशेषकर), एक्स–रे परीक्षण(मैमोग्राफी) के साथ–साथ एम0आर0आई0 कराना चाहिये तथा आवश्यक हो तो एफ.एन.ए.सी. विधि द्वारा विकृति विज्ञानी जाँच के साथ मिलाकर सारी चीजों के संदर्भ में देखना चाहिये। यहाँ यह भी आवश्यक बताया जाता है कि जाँच करने की आवश्यकता है कि इस गाँठ की कोशिकायें इस्ट्रोजेन के प्रति संवेदी तो नहीं है(क्योंकि इससे हार्मोन चिकित्सा कारगर हो सकती है)। अतः कुछ नये टेस्ट जैसे इस्ट्रोजेन रिसेप्टर ऐसे, प्रोजेस्ट्रॉन रिसेप्टर ऐसे, एच0ई0आर0 2(ह्यूमन इपीडर्मल ग्रोथ फैक्टर रिसेप्टर 2, जो कैन्सर की कोशिकाओं की वृद्धि को प्रोत्साहित करता है) भी निदान व पुष्टि हेतु उपयोग में लाये जा रहे हैं।

5. **गर्भाशय–ग्रीवा(सर्विक्स) का कैन्सर(सर्वाइकल कैन्सर)**– यह कैन्सर धीरे–धीरे बढ़ने वाला होता है जो कई वर्षों(15–20) में विकसित होता गया है। इस कैन्सर का कारक ह्यूमन पैपीलोमा वायरस(एच0पी0वी0) जो संक्रमण द्वारा संसर्ग के दौरान या फिर अन्य कारकों जैसे पति–पत्नी दोनों ही द्वारा अपने जननांगों को ठीक से स्वच्छ न रखना। इसका सबसे अधिक संक्रमण अक्सर 15 वर्ष या कम आयु में प्रथम लैंगिक संसर्ग, एक से अधिक लोगों से संसर्ग(जो गर्भाशय–ग्रीवा को क्षति पहुँचाकर उसे संक्रमण हेतु अधिक सुग्राह/गृहणशील/ससेप्टिबिल बना देता है)। इसके अतिरिक्त एच0आई0वी0 संक्रमण, हर्पीज सिम्पलेक्स, क्लेमाइडिया व गोनोरिया भी इसके कारक हो सकते हैं। इसका निदान लिक्विड बेस्ड पैप टेस्ट(उचित होगा यदि एच0आई0वी0 के टेस्ट के साथ किया जाय) द्वारा किया जाता है जिसे जीवोति परीक्षण(बायोप्सी) द्वारा सुनिश्चित भी कर लेना आवश्यक है। प्रारम्भिक अवस्था में इस कैन्सर के रोगी में कोई स्पष्ट लक्षण दिखाई नहीं देते, परन्तु बाद की अवस्था में संसर्ग के दौरान पीड़ा होना, रक्तस्राव, अनावश्यक तरल स्राव योनि मार्ग से होना, तथा लम्बे समय से चला आ रहा/जीर्ण(क्रॉनिक) कमर दर्द आदि लक्षण देखे जा सकते हैं।

6. **अण्डाशयी कैन्सर(ओवरियन कैन्सर)**– महिलाओं में अण्डाशयों की स्थिति बहुत अन्दर होने के कारण उनका भौतिक परीक्षण सरलता से नहीं किया जा सकता अतः इस कैन्सर का पता काफी अग्रिम(एड्वान्स्ड) अवस्था में ही चल पाता है। दसियों वर्षों के अनुसंधानों के बाद आज भी यह जानकारी भलीभाँति उपलब्ध नहीं हो सकी है कि अण्डाशयी कैन्सर क्यों

होते हैं? इसके प्रमुख लक्षण पेट फूलना, बार–बार पेशाब लगना, उदरशूल, रजोनिवृत्ति के बाद रक्तस्राव, भूख का न लगना, मूत्राशय से रक्तस्राव तथा पेट में गैस भर जाना आदि देखे गये हैं। श्रोणीय भाग का परीक्षण, ट्रान्सवेजाइनल सोनोग्राफी तथा सी ए–125 के लिए रक्त परीक्षण द्वारा इसका निदान किया जा सकता है(विशेषकर उन महिलाओं में जिनके परिवार में इसका पूर्व इतिहास रहा हो)

7. **कैन्सर की चिकित्सा/इलाज**– आमतौर पर कैन्सर की चिकित्सा हेतु इन तीन प्रकार की विधियों का सहारा लिया जाता है–

1. **शल्य चिकित्सा**– इस विधि द्वारा कैन्सर से प्रभावित भाग को काटकर शरीर से अलग करके निकाल दिया जाता है। इसका प्रयोग स्तन, बृहदांत्र, मलाशय, फेफड़ों, आमाशय तथा गर्भाशय आदि के कैन्सर हेतु किया जाता है। अर्बुद निकालने के साथ–साथ प्रभावित अंग का संधान/क्षतिपूर्ति भी की जाती है। कभी–कभी अर्बुद के साथ–साथ स्वस्थ ऊतक को भी निकाला जा सकता है जैसे स्तन अपनयनी शल्य(मैस्टेकटॉमी)।

2. **विकिरण चिकित्सा**– इस विधि में कैन्सर को जलाने के लिए एक्स–रे या अन्य रेडियोधर्मी पदार्थ जैसे कोबाल्ट^{60}, रेडियम आदि की विकिरणों का उपयोग किया जाता है। इस विधि का प्रयोग सामान्यतः मूत्राशय, गर्भाशय–ग्रीवा, त्वचा, ग्रीवा व सिर आदि के कैन्सर की चिकित्सा हेतु किया जाता है परन्तु यह न समझा जाय कि अन्य प्रकार के कैन्सर का इलाज में इसका उपयोग नहीं होता। विकिरण के प्रभाव से प्रभावित ऊतक के साथ–साथ सामान्य ऊतक की कोशिकाएं भी मर जाती है। अतः इसके प्रयोगकर्ताओं को विशेषज्ञ, अनुभवी तथा अत्याधिक सतर्क होना अति आवश्यक है। आधुनिक संयत्र जैसे सुपरवोल्टेज एक्स–रे, कोबाल्ट बम, लीनियर एक्सीलिरेटर तथा साइक्लोट्रॉन आदि कारगर सिद्ध हुए हैं जिनका उपयोग सिर, ग्रीवा, स्तन, ग्रसनी, फेफड़ों, गर्भाशय ग्रीवा, फेफड़ों तथा पौरुष ग्रन्थि के कैन्सर की चिकित्सा हेतु किया जाता है।

3. **औषधियों द्वारा**– इसे रासायनिक साधन चिकित्सा(कीमोथिरेपी) भी कहा जाता है। लगभग 50 से ऊपर औषधियों का प्रयोग तीव्रश्वेत रक्तता(ल्यूकीमिया), लसीकार्बुद, वृषण कैन्सर आदि की चिकित्सा हेतु किया जा रहा है। इन औषधियों का निर्माण इस बात को ध्यान में रखकर किया जाता है कि वे कैन्सर कोशिकाओं को तो अधिक परन्तु सामान्य कोशिकाओं को कम से कम प्रभावित करें। ये सारी औषधियाँ अत्यधिक विषैली होती हैं तथा इनके अनेक प्रकार के अनुषंगी प्रभाव(साइड इफेक्ट्स) जैसे उल्टी आना, बालों का गिर जाना, संक्रमणों के प्रति अधिक सुग्राह्यता। आजकल कई औषधियों को मिलाकर प्रयोग किया जाता है जिससे अनुषंगी प्रभावों को कम किया जा सके। कैन्सर चिकित्सा में औषधियों के संदर्भ में अत्याधुनिक अनुसंधान निम्नलिखित दिशा में किये जा रहे हैं–

अ. **बायो रेसपॉन्स मॉडीफायर थिरेपी**– ये वे पदार्थ हैं जो शरीर के प्रतिरोधी क्षमता तंत्र को उत्तेजित करके कैन्सर कोशिकाओं को नष्ट करने की दिशा में कार्य करते हैं। इनका निर्माण प्रयोगशालाओं में जैवप्रौद्योगिकी(बायोटेक्नोलॉजी), आणविक जीव विज्ञान(मॉलिक्यूलर बायोलॉजी) की विधियों द्वारा किया जाता है। उदाहरणार्थ– इन्टरफेरॉन, इन्टरल्यूकीन–2 तथा मोनो क्लोनल प्रतिकाय(मोनोक्लोनल एण्टीबॉडीज)। जी. एम.–सी.डी.एफ. प्रोटीन बनाई गई है जो श्वेत कणिकाओं(डब्ल्यू0बी0सी0) की संख्या में वृद्धि करती है तथा उन रोगियों के लिए लाभदायक है जिन्हें श्वेत कणिकाओं को नष्ट करने वाली औषधियाँ दी जाती हैं।

ब. **डिफरेन्शियेटिंग एजेन्ट्स**– ये एक नई श्रेणी की औषधियाँ बनाई जाती हैं जो कैन्सर वाली कोशिकाओं को सामान्य कोशिकाओं में परिवर्तित कर देती हैं। रीटिनॉयड्स नामक इस प्रकार की औषधि का प्रयोग तीव्रश्वेत रक्तता, गर्भाशय ग्रीवा, त्वचा आदि के कैन्सर के उपचार हेतु किया जा रहा है।

स. **रोगक्षमता विज्ञान(इम्यूनोलॉजी)**– शोध द्वारा पता लगाया गया है कि अनेक कैन्सर कोशिकाओं में कुछ ऐसे पदार्थ होते हैं जो शरीर की प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ा देते हैं जिससे कैन्सर से बचाव संभव हो सकता है।

द. **पोषण**– विटामिन ए व सी की भारी मात्रा प्रयोगशाला में जन्तुओं में कैन्सर को रोकती हुई(अध्ययनों के दौरान) देखी गयी है। कुछ भोज्य पदार्थ जैसे– गोभी, बंधा, पालक, गाजर, फल, आटे की ब्रेड, अनाज, सी–फूड कैन्सर को रोकने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। कम वसा का सेवन भी कैन्सर को रोकता देखा गया है।(इससे अधिक औषधियों पर चर्चा लेखक के चिकित्साशास्त्री न होने के कारण अधिकार क्षेत्र के बाहर है)।

8. **कैन्सर से कैसे बचें?** – यद्यपि यह बहुत ही कठिन बात है कि कैन्सर की रोकथाम के बारे में कुछ कहा जा सके फिर भी कई प्रयास इस दिशा में किये जा रहे हैं। मोटे तौर पर निम्नलिखित निर्देश इसके खतरे से बचाव में संभवतः सहायक सिद्ध हो सकते हैं, ऐसा अनेक वैज्ञानिकों का मत है–

1. नियमित रूप से शारीरिक व्यायाम, जिस रूप में आप कर सकें, अवश्य करें।
2. वसायुक्त भोजन जैसे मक्खन, डेरी उत्पाद कम मात्रा में ही लें।
3. अपने को यथा संभव पराबैंगनी किरणों(अल्ट्रावायलेट रेज) से बचा कर रखें।

4. धूम्रपान संभव हो तो न करें, यदि करते भी हों तो कृपया ऐसे स्थान पर करें जिससे दूसरों की साँस में उसका धुँआ न जाये।
5. मद्यपान में संभव कटौती करें, यदि मद्यपान न करें तो बेहतर होगा।
6. स्त्रियाँ 50 वर्ष की उम्र के पश्चात् गर्भाशय–ग्रीवा का नियमित परीक्षण किसी स्त्री रोग विशेषज्ञ से 3–5 वर्ष में अवश्य करायें।
7. स्वतः स्तन परीक्षण नियमित रूप से करें तथा गाँठ, स्राव आदि की स्थिति देखते ही स्त्रीरोग विशेषज्ञ से सलाह लें।
8. स्वस्थ भोज्य पदार्थ जैसे फल, सब्जियाँ आदि प्रचुर मात्रा में प्रयोग करें।
9. स्त्रियाँ सर्वाइकल, स्तन तथा अंडाशयी कैन्सर से बचाव हेतु कम से कम दो वर्ष तक स्तनपान अवश्य करायें, क्योंकि अध्ययनों से पता चलता है कि जो महिलाएं अपने बच्चों को दो वर्षों तक स्तनपान कराती हैं उनमें स्तन कैन्सर की संभावना 50 प्रतिशत तक कम हो जाती है। साथ ही 30 वर्ष की उम्र के पूर्व बच्चे पैदा कर लेने पर भी स्तन कैन्सर का खतरा कम हो सकता है।
10. अधिक पानी पिया करें जिससे मूत्राशय के कैन्सर की संभावना कम हो जाती है। कम से कम 2 लीटर पानी रोज पीना आवश्यक है।
11. मोटापे को न आने दें तो ज्यादा बेहतर होगा अतः अपने भोजन, क्रियाकलापों, व्यायाम आदि द्वारा यह प्रयास करें कि आपका बेसल मेटाबोलिक इन्डेक्स(बी.एम.आई.) 18.5–25 किलोग्राम/मीटर^2 के बीच रहे।
12. ऐसा भी अनुसंधानकर्ताओं का कहना है कि सेलफोन को कम समय तक ही प्रयोग किया करें जिससे सिर के कैन्सर से बचा जा सके। या फिर उसे स्पीकर मोड पर अथवा ईयरफोन पर रखकर सिर से थोड़ी दूर रखें।

अवलोकित संदर्भ

1. शुक्ला, एस0 सी0(2005) कैन्सर, विवेक(संयुक्तांक), बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, 2004–2005, मु0पृ0 123–130।
2. दास गुप्ता, के0, नेवर गेट प्रिवेंशन, खण्ड–7, अंक–11, मु0पृ0 56–65।

रामराज्य और पर्यावरण

महेन्द्र प्रताप सिंह
उप वन संरक्षक, कार्यालय प्रमुख वन संरक्षक,
17, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
mahendrapratapsingh1960@gmail.com

प्राप्त तिथि– 26.05.2016; स्वीकृत तिथि–22.09.2016

सार– राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने स्वतंत्रता के उपरान्त देश में रामराज्य स्थापित करने का सपना देखा था। गाँधी जी के इस विचार को गंभीरता से नहीं लिया गया। रामराज्य की अवधारणा वाल्मीकीय रामायण एवं तुलसीदास कृत रामचरितमानस में है। इस लेख में रामराज्य के पर्यावरण सम्बन्धी विशेषताओं का उल्लेख किया गया है। यह अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि वानिकी के जिन नवीन सिद्धांतों जैसे– "प्रिन्सिपल ऑफ सस्टेंड यील्ड" आदि को विदेशी विद्वानों द्वारा प्रतिपादित किया गया बताया जाता है वे सिद्धान्त रामचरित मानस में पहले से ही मौजूद हैं। रामराज्य की अवधारणा किसी धार्मिक संकीर्णता का द्योतक नही है बल्कि यह जनहित कारी अवधारणा है। इस पर गंभीर मनन एवं चिंतन की आवश्यकता है।

बीज शब्द– रामराज्य, पर्यावरण, रामायण, रामचरितमानस।

Ram-Rajya and Environment

Mahendra Pratap Singh
Deputy Forest Ranger, Office of Principal Forest Ranger
17, Rana Pratap Marg, Lucknow-226001, U.P., India
mahendrapratapsingh1960@gmail.com

Abstract- It was the dream of the Father of the Nation Mahatama Gandhi to establish Ram–Rajya in Independent India. Ram Rajya was not a new concept of Mahatama Gandhi. The concept of Ram–Rajya is very clear in Valmiki Ramayan of Maharishi Valmiki & Ram Charit Manas of Tulsidas ji. In this article the environmental aspect of Ram Rajya is described. The latest concept of Environmental Science and Forestry, for example "The Theory of Sustained Yield", Road side plantations are described in Ram Charit Manas.

Key words- Ram-Rajya, Environment, Ramayana, Ramcharitmanasa.

प्रकृति के सानिध्य के बिना प्रगति की परिकल्पना मरुस्थल में हरियाली के सदृश दिवा स्वप्न है। कंक्रीट के जंगलों से होकर हम भौतिक समृद्धि के कितने ही सोपान पार कर लें, वास्तविक विकास हेतु भावनाओं की जल–धार से ही शुष्क मरुस्थल में हरियाली लाई जा सकती है और तभी चतुर्मुखी विकास सम्भव है। आज हम तथाकथित विकास के एक ऐसे दौर में पहुँच चुके हैं, जहाँ लगातार बढ़ रहा पर्यावरण प्रदूषण हमारे अस्तित्व को अनवरत चुनौती दे रहा है। प्रकृति से दूर रहकर किए गए एकांगी विकास का कुपरिणाम हम सब ने भलीभाँति देख लिया है। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, रेडियोएक्टिव प्रदूषण, ओजोन परत में छेद एवं अम्लीय वर्षा का अत्यन्त विनाशकारी स्वरूप बुद्धिजीवी एवं विवेकशील व्यक्तियों की चिन्ता का कारण बने हुए हैं। केदारनाथ की भीषण प्राकृतिक आपदा ने मानव समाज को झकझोर दिया है। लम्बे समय तक भौतिक विकास के विनाशकारी मद में मदोन्मत्त लोगों की सुप्त पर्यावरण चेतना अब धीरे–धीरे जागृत हो रही है तथा अब वे भी प्रगति के साथ प्रकृति की बात करने लगे हैं।

प्रकृति का सानिध्य, प्रगति का विरोधी नहीं है। प्रकृति और प्रगति के बीच संघर्ष की नहीं, सामन्जस्य की आवश्यकता है। महात्मा गाँधी ने कहा था कि प्रकृति के सहारे हम केवल अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं, विलासिता की नहीं। विलासिता की वृत्ति किसी भी राष्ट्र अथवा समाज को धीरे–धीरे ऊर्जाहीन कर उसे समाप्त प्राय कर देती है। प्रकृति का सानिध्य भारतीय संस्कृति की मूल विशेषता है। महर्षि वाल्मीकि एवं तुलसीदास जी ने इस रहस्य को भलीभाँति समझा है। जिस रामराज्य की परिकल्पना महात्मा गाँधी ने की थी उसकी वैचारिक आधारशिला बहुत पहले महर्षि वाल्मीकि एवं तुलसीदास जी द्वारा रखी जा चुकी थी।

जब हम अपने किसी मित्र या सम्बन्धी से मिलते हैं तो सभी का हालचाल पूंछते हैं। किसी से मिलकर हम उसके बच्चों, परिवार आदि की ही कुशलक्षेम पूंछते हैं। हम सबने कभी सोचा ही नहीं कि किसी का हालचाल पूंछते समय उस क्षेत्र के वनों, नदियों, तालाबों या वन्यजीवों का समाचार जानने की चेष्टा करें। ऐसा इसलिए है कि अब हम वनों, नदियों, तालाबों या वन्यजीवों को परिवार का अंग मानते ही नहीं। पहले ऐसा नहीं था। उस समय लोग एक दूसरे का समाचार पूंछते समय वनों, बागों, जलस्रोतों आदि की भी कुशलता जानना चाहते थे। इसका कारण यह था कि उस समय लोग प्रकृति के विभिन्न अवयवों को परिवार की सीमा के अन्तर्गत ही मानते थे। इस सम्बन्ध में एक उदाहरण चित्रकूट में राम भरत मिलन के समय मिलता है। श्री राम अपने दुखी भाई भरत से पूछते हैं कि उनके दुखी होने का क्या कारण है? क्या उनके राज्य में वन क्षेत्र सुरक्षित हैं? अर्थात् वन क्षेत्रों के सुरक्षित न रहने पर पहले लोग दुखी एवं व्याकुल हो जाया करते थे। वाल्मीकि रामायण में वर्णित उदाहरण निम्न प्रकार है–

कच्चिन्नागवनं गुप्तं कच्चित् ते सन्ति धेनुकाः।
कच्चिन्न गणिकाश्वानां कुन्जराणां च तृप्यसि।।(2/100/50)

जहाँ हाथी उत्पन्न होते हैं, वे जंगल तुम्हारे द्वारा सुरक्षित हैं न? तुम्हारे पास दूध देने वाली गाएँ तो अधिक संख्या में हैं न? (अथवा हाथियों को फँसाने वाली हथिनियों की तो तुम्हारे पास कमी नहीं है?) तुम्हें हथिनियों, घोड़ों और हाथियों के संग्रह से कभी तृप्ति तो नहीं होती? अनेक स्थानों पर वाल्मीकि जी ने पर्यावरण संरक्षण के प्रति संवेदनशीलता को रेखांकित किया है। श्री भरत जी अपनी सेना एवं अयोध्यावासियों को छोड़कर मुनि के आश्रम में इसलिये अकेले जाते हैं कि आस–पास के पर्यावरण को कोई क्षति न पहुँचे–

ते वृक्षानुदकं भूमिमाश्रमेषूटजांस्तथा। न हिंस्युरिति तेवाहमेक एवागतस्ततः।। (2/91/09)

वे आश्रम के वृक्ष, जल, भूमि और पर्णशालाओं को हानि न पहुँचाये, इसलिये मैं यहाँ अकेला ही आया हूँ। पर्यावरण की संवदेनशीलता का यह एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

रामराज्य पर्यावरण की दृष्टि से अत्यन्त सम्पन्न था। मजबूत जड़ों वाले फल तथा फूलों से लदे वृक्ष पूरे क्षेत्र में फैले हुये थे–

नित्यमूला नित्यफलास्तरवस्तत्र पुष्पिताः। कामवर्षी च पर्जन्यः सुखस्पर्शो मरुतः।। (6/128/13)

श्रीराम के राज्य में वृक्षों की जड़ें सदा मजबूत रहती थीं। वे वृक्ष सदा फूलों और फलों से लदे रहते थे। मेघ प्रजा की इच्छा और आवश्यकता के अनुसार ही वर्षा करते थे। वायु मन्द गति से चलती थी, जिससे उसका स्पर्श सुखद जान पड़ता था।

तुलसीदास जी ने वर्णन किया है कि उस समय में पर्यावरण प्रदूषण की कोई समस्या नहीं थी। काफी बड़े भू–भाग पर वन क्षेत्र विद्यमान थे। वन क्षेत्रों में ही ऋषियों एवं मुनियों के आश्रम थे, जो उस समय ज्ञान–विज्ञान का केन्द्र थे। समाज में इन ऋषि–मुनियों का बड़ा सम्मान था। बड़े–बड़े राजा महाराजा भी इन मनीषियों के सम्मान में नत मस्तक हो जाते थे। श्री राम को वनवास मिलने के उपरान्त सर्वाधिक प्रसन्नता इसी बात की हुई कि वन क्षेत्र में ऋषियों का सत्संग का लाभ प्राप्त होगा–

मुनिगन मिलन विशेष वन, सबहिं भाँति हित मोर।

प्राचीन काल में ज्ञान विज्ञान एवं शिक्षा के केन्द्र आबादी से दूर होते थे। प्रकृति की गोद में स्थित इन केन्द्रों से ही हमारी सभ्यता का प्रचार एवं प्रसार हुआ। विभिन्न सामाजिक बुराइयों से ये केन्द्र सर्वथा दूर थे। यहाँ का वातावरण अत्यन्त स्वच्छ एवं निर्मल था। वन एवं वन्य जीवों के प्रति प्रेम यहाँ स्वतः उत्पन्न हो जाता था। ऋषियों एवं मुनियों के प्रत्येक कृत्य से सृष्टि के प्रति प्रेम का सन्देश गूँजता था। मानसिक शान्ति एवं आत्मिक प्रसन्नता यहाँ भरपूर मात्रा में विद्यमान थी तथा विद्याध्ययन करने वाले बच्चों के संस्कार का निर्माण इसी परिवेश में होता था। श्रीराम को आने वाले समय में रामराज्य की स्थापना करनी थी, जिसमें सभी सुखी हो सकें इसलिये स्वाभाविक ही था कि उन्होंने लम्बे समय तक ऋषि–मुनियों के सानिध्य में रहने का निर्णय लिया। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में अनेक स्थानों पर वन क्षेत्रों का सजीव वर्णन किया है। वन क्षेत्र घनी आबादी से दूर स्थित होते थे तथा इन क्षेत्रों में भोली–भाली आदिवासी जनता रहती थी। श्रीराम ने इन भोले–भाले लोगों से प्रगाढ़ मित्रता स्थापित की और जीवन पर्यन्त उसका निर्वहन किया। निषादराज केवट, वानरराज सुग्रीव एवं गिद्धराज जटायु इसका स्पष्ट उदाहरण हैं। वनवासी बन्दरों से राम की मित्रता जगत प्रसिद्ध है। इन्हीं बन्दर–भालुओं की सहायता से उन्होंने लंका पर विजय प्राप्त की। उपेक्षित गिद्ध जटायु को श्रीराम ने अत्यधिक सम्मान दिया। श्रीराम के सानिध्य से अंगद, हनुमान, जामवन्त, नल, नील, सुग्रीव, द्विविद, आदि भालू कपि तथा जटायु जैसे गिद्ध सदा के लिये अमर हो गये। पूरे रामचरित मानस में हम पाते हैं कि विभिन्न प्राकृतिक अवयवों को उपभोग मात्र की वस्तु नहीं माना गया है बल्कि सभी जीवों एवं वनस्पतियों से प्रेम का सम्बन्ध स्थापित किया गया है। प्रकृति के अवयवों का उपभोग निषिद्ध नहीं है। उनके प्रति कृतज्ञ होकर हम आवश्यकतानुसार उस सीमा तक उपयोग कर सकते हैं जब तक किसी अवयव के अस्तित्व पर संकट न आए। कोई भी प्रजाति किसी भी दशा में लुप्तप्राय नहीं

होनी चाहिये। रामराज्य में प्रकृति के उपहार स्वतः प्राप्त थे। तुलसीदास जी ने रामराज्य में वनों की छटा एवं उनसे मिलने वाले उपहारों का चित्रण दर्शनीय है–

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन। रहहिं एक सँग गज पंचानन।।
खग मृग सहज बयरु बिसराई। सबन्हि परसपर प्रीति बढ़ाई।।
कूजहिं खग मृग नाना बृंदा। अभय चरहिं बन करहिं अनंदा।।
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गुंजत अलि लै चलि मकरंदा।।
लता बिटप माँगे मधु चवहीं। मनभावतो धेनु पय स्रवहीं।।
ससि संपन्न सदा रह धरनी। त्रेता भइ कृतयुग कै करनी।।
प्रगटीं गिरिन्ह बिबिध मनि खानी। जगदातमा भूप जग जानी।।
सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वाद सुखकारी।।
सागर निज मरजादा रहहीं। डारहिं रत्न तटन्हि नर लहहीं।।
सरसिज संकुल सकल तड़ागा। अति प्रसन्न दस दिसा बिभागा।।
बिधु महि पूर मयूखन्हि रबि जप जेतनेहिं काज।।
मागें बारिद देहिं जल रामचंद्र के काज। (7/23)

उक्त वर्णन में हम पाते हैं कि प्रकृति रामराज्य में स्वतः उपहार देती थी। वास्तव में प्रकृति हमें सब कुछ देती है हमें केवल धैर्य एवं विवेक से रहना है। प्रकृति का सीमित विदोहन ही सुखमय भविष्य की गारंटी है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त वस्तु का उपभोग हमें प्रकृति से छेड़छाड़ किये बिना करना चाहिये। गणितीय भाषा में यदि हम केवल ब्याज का उपभोग करें, तो मूलधन सदा बना रहेगा एवं हम ब्याज का सदैव उपभोग करते रहेंगे। विदोहन का यही नियम कल्याणकारी है। रामराज्य में प्रकृति का विदोहन निषिद्ध है। प्रकृति का असीमित विदोहन अपराध है। स्वाभाविक रूप से प्रकृति प्रदत्त उपहारों का उपभोग ही रामराज्य का आदर्श है। आधुनिक वानिकी का निरन्तर उत्पादन का सिद्धान्त(Principle of Sustained Yield) भी इसी प्रकार का है–

The principle of sustained yield envisages that a forest should be so exploited that the annual or periodic fellings do not exceed the annual or periodic growth, as the case may be.

रामराज्य में उक्त परिकल्पना से भी सुन्दर स्थिति की कल्पना की गयी है। प्रकृति द्वारा स्वतः एवं स्वाभाविक रूप से प्रदत्त उपहारों का प्रकृति के प्रति आत्मीयता या कृतज्ञता रखते हुये उपभोग करना ही रामराज्य का आदर्श है। आधुनिक वानिकी के सततता के सिद्धान्त का यही तात्पर्य है कि हम वानिकी उत्पादों का उपभोग इस प्रकार करें कि मूल सम्पत्ति को कोई क्षति न पहुँचे। हमारे पूर्वजों की सोच इससे भी कहीं आगे थी। वन क्षेत्रों को क्षति न पहुँचे, इतना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि वन क्षेत्रों में सतत् वृद्धि का प्रयास किया जाना चाहिये। इसीलिये पर्यावरण प्रदूषण की समस्या न होते हुये भी दशरथ, राम, सीता एवं लक्ष्मण द्वारा समय–समय पर पौध रोपण कार्य किया गया है। सृष्टि का प्रत्येक अवयव, जिसका निर्माण कृत्रिम विधियों से नहीं किया जा सकता, हमारे लिये अमूल्य है। प्रकृति के किसी भी अंग की उपेक्षा करके हम सुखी नहीं रह सकते। स्वस्थ एवं समृद्ध पर्यावरण के बिना रामराज्य की स्थापना सम्भव नहीं है। जीवन की प्रथम आवश्यकता है–शुद्ध वायु। रामराज्य में वायु पूर्णतः शुद्ध थी–

सीतल सुरभि पवन बह मंदा।

प्रदूषित वायु धरती पर जीवन के अस्तित्व को समाप्त कर सकती है, धीरे–धीरे यह तथ्य अब प्रबुद्ध लोगों के समझ में आ रहा है। रामराज्य वन क्षेत्रों से भरा था। सभी वृक्ष हरे–भरे पुष्प तथा फल सम्पन्न थे। समृद्ध वन में वन्यजन्तु स्वाभाविक रूप से रहा करते थे। सभी वन्यजीव ऐसे वन क्षेत्र में प्रफुल्लित थे। शेर, हाथी, विविध प्रकार के रंग–बिरंगे पक्षी तथा विभिन्न प्रजातियों के हिरण आदि जीवन को जीवन्त बनाया करते थे। रामराज्य में सभी जीव–जन्तु प्रसन्न मन से अपना स्वाभाविक जीवन जीते थे। प्रकृति के किसी भी अवयव से किसी प्रकार की छेड़छाड़ नहीं की जाती थी। वन क्षेत्रों की कमी से ईंधन एवं चारा की विकट समस्या उत्पन्न होती है। ग्रामीण क्षेत्र ईंधन एवं चारा की कमी से बुरी तरह से प्रभावित होते हैं। चारे की कमी से दूध–दही का उत्पादन घटता है जो मानव जीवन के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। रामराज्य में ईंधन एवं चारा की कमी नहीं थी इसलिये गाय पर्याप्त मात्रा में दूध देती थी–

मनभावतो धेनु स्रवहीं।

यही कारण है कि रामराज्य में सभी स्वस्थ एवं निरोग थे। जीवन की द्वितीय मूल आवश्यकता है–शुद्ध पेयजल। रामराज्य में सभी नदियाँ शुद्ध, शीतल, निर्मल एवं स्वादिष्ट जल से परिपूर्ण थीं–

सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वाद सुखकारी।।

सभी तालाब गहरे जल से भरे थे जिसमें कमल के पुष्प खिले रहते थे। शुद्ध वायु एवं पेयजल की उपलब्धता किसी भी सभ्यता के विकास का केन्द्र बिन्दु है। इसके बिना विकास की कोई भी अवधारणा दिवास्वप्न है। वायु एवं पेयजल के प्रदूषण से हम आज जूझ रहे हैं। हमने सभी नदियों को लगातार प्रदूषित किया है। यदि हम रामराज्य के अभिलाषी हैं तो गोस्वामी तुलसीदास जी की अवधारणा के अनुरूप शुद्ध पेयजल एवं शुद्ध वायु की उपलब्धता सुनिश्चित करना ही होगा। ऐसा कोई भी कार्य हमें प्रत्येक दशा में बन्द करना होगा जो वायु एवं जल को प्रदूषित करता हो चाहे उससे कितना भी भौतिक लाभ मिलता हो। पर्यावरण प्रदूषण का मूल कारण है, हमारी लिप्सा। धरती मानव की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सक्षम है। किन्तु लगातार अनियन्त्रित रूप से बढ़ रही भोगवृत्ति स्वयं धरती को बरबाद करती है। खनिज, धातु पेट्रोल, डीजल आदि सभी हमें धरती माँ की कोख से प्राप्त होते हैं। मानव द्वारा किये जा रहे असीमित विदोहन से धरती लगातार ऊसर एवं बंजर होती जा रही है। हम यह भी नहीं सोच पा रहे हैं कि असीमित विदोहन जारी रहने से मानव की आने वाली सन्तति का भविष्य क्या होगा? रामराज्य में विदोहन की वृत्ति नहीं थी। मानव की आवश्कताओं की पूर्ति स्वाभाविक रूप से पर्वतीय क्षेत्रों एवं समुद्री क्षेत्र से हो जाया करती थी। धरती हरी भरी थी। पर्याप्त वन क्षेत्र विद्यमान थे। कृषक सम्पन्न थे। किसानों की सम्पन्नता से राज्य समृद्ध था। अभाव का नामोनिशान न था।

आवश्यकता से अधिक पर्यावरण प्रदूषण मौसम को परिवर्तित कर देता है। समय पर वर्षा न होना, अत्यधिक वर्षा का होना, अम्लीय वर्षा आदि का कुप्रभाव आज हम देख रहे हैं। कृषि प्रधान देश के लिये यह स्थिति विनाशकारी है। रामराज्य में बादलों से आवश्यकतानुसार ही वर्षा होती थी। कुछ लोगों को यह अतिशयोक्ति लग सकता है। किन्तु स्वस्थ पर्यावरण में सर्दी, गर्मी और वर्षा नियमित रहती है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। तुलसीदास जी अत्यन्त दूरदर्शी थे। आज जिन समुद्री तूफानों का कुपरिणाम हमें अभिशप्त कर रहा है, उसकी कल्पना उन्हें थी। सुनामी का कहर अनेक परिवारों को समाप्त कर चुका है। यह सब पर्यावरण प्रदूषण का ही कुप्रभाव है। रामराज्य में समुद्र अपनी मर्यादा में रहते थे। ऐसा तभी सम्भव है जब पूरा मानव समाज पर्यावरण संरक्षण के प्रति पर्याप्त संवेदनशील हो।

पर्यावरण संरक्षण को महत्व देते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी का मानना है कि वृक्ष से फल तोड़कर खाना तो उचित है किन्तु वृक्ष को काटना अपराध की श्रेणी में आता है–

रीझि खीझि गुरुदेव सिख सखा सुसाहित साधु। तोरि खाहु फल होइ भलु तरु काटे अपराध।।

रामराज्य धरती पर अनायास ही नहीं स्थापित हो जाता है। इसके लिये परिश्रम, समर्पण एवं सतत् प्रयास आवश्यक है। तुलसीदास जी ने इस ओर स्थान–स्थान पर संकेत किया है। आज पूरा मानव समाज इस बात पर एकमत है कि सभी प्रकार के प्रदूषणों को दूर करने का एकमात्र प्रभावी उपाय है–पौधारोपण एवं उसकी सुरक्षा। जिस समाज का प्रत्येक व्यक्ति पौधरोपण एवं उसकी सुरक्षा के प्रति प्रतिबद्ध हो, वहाँ प्रदूषण टिक ही नहीं सकता। वृक्षारोपण कार्य जैसे महान लक्ष्य की पूर्ति हेतु केवल राजकीय प्रयास ही पर्याप्त नहीं हैं। सभी को इस कार्य से जोड़ना होगा। आजकल वृहद वृक्षारोपण का कार्य व्यापक रूप से चलाया जा रहा है, जिसका उद्देश्य जन सामान्य को वृक्षारोपण हेतु प्रेरित करना है। यदि हम रामचरित मानस का अध्ययन करें तो पाते हैं कि जन साधारण को वृक्षारोपण हेतु प्रेरित करने का कार्य तुलसीदास जी आज से बहुत पहले ही प्रारम्भ कर चुके थे। सबसे प्रेरणास्पद बात यह है कि वृक्षारोपण हेतु प्रेरित करने का कार्य अत्यन्त सहजता से किया गया है, जैसे कि वह हमारी दिनचर्या का ही एक अंग हो। वृक्षारोपण कार्य को उपदेशात्मकता से दूर रखकर एक स्वाभाविक कृत्य बना देना गोस्वामी जी की दूरदर्शिता का परिचायक है। यदि हम किसी भी शुभ अवसर जैसे बच्चा पैदा होने, विवाह आदि के समय वृक्षारोपण की परम्परा डाल लें, तो यह एक अनुकरणीय कार्य होगा। ऐसे वृक्षों से लोगों का भावनात्मक सम्बन्ध रहेगा तथा वे इसे हर कीमत पर सुरक्षित रखने का प्रयास करेंगे। तुलसीदास जी ने ऐसी परम्परा को प्रारम्भ करने की चेष्टा की। रामचन्द्र जी के विवाह के उपरान्त जब बारात लौट कर आती है तब अयोध्या नगरी में विविध वृक्षों का रोपण किया जाता है–

सफल पूगफल कदलि रसाला। रोपे बकुल कदम्ब तमाला।।

गोस्वामी जी द्वारा वृक्षारोपण को एक स्वाभाविक कार्य बताया गया है। हर व्यक्ति को स्वप्रेरणा से ही, जहाँ भी जैसे भी सम्भव हो, वृक्षारोपण कार्य करते रहना चाहिये। अपने वन–प्रवास के दिनों में सीताजी एवं लक्ष्मण जी द्वारा विस्तृत रोपण किया गया–

तुलसी तरूवर बिबिध सुहाए। कहुँ कहुँ सियँ, कहुँ लखन लगाए।।

शुभ अवसर पर वृक्षारोपण की परम्परा एवं स्वाभाविक रूप से वृक्षारोपण की प्रवृत्ति को आज का युगधर्म माना जाय तो अनुचित न होगा। इस युगधर्म के निर्वाह से हमें प्रदूषण से मुक्ति मिल सकती है।

पथ वृक्षारोपण आधुनिक युग में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सड़क, रेलवे लाइन एवं नहर की पटरियों के किनारे खाली पड़ी जमीन पर युद्धस्तर पर पूरे देश में वृक्षारोपण किया गया है। रामचन्द्र जी के विवाह के उपरान्त राज्याभिषेक की तैयारी के अवसर पर गुरू वसिष्ठ आदेश देते हैं–

सफल रसाल पूगफल केरा। रोपहु बीथिन्ह पुर चहुँ फेरा।।

रेलवे लाईन एवं नहरें उस समय नहीं थीं किन्तु मार्ग के किनारे उस समय भी रोपण किया जाता था जो उपर्युक्त उदाहरण से पूर्णतः स्पष्ट है। मार्ग के किनारे मुख्यतः फलदार वृक्षों का रोपण किया जाता था। यहाँ पर एक स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि शहरी क्षेत्र के लोग वनीकरण के युगधर्म के निर्वाह में किस प्रकार अपना योगदान दें। यह प्रश्न तब भी था और अब भी है। इसका बड़ा ही सुन्दर समाधान गोस्वामी जी ने प्रस्तुत किया है। शहरी क्षेत्र में वन के स्थान पर वाटिका लगाई जा सकती है। इसके लिये विशेष यत्न करना होगा जैसे गमले में फूल लगाना, लताएं लगाना, छोटी पौध का रोपण आदि। आजकल बोनसाई की तकनीक भी आ गई है। इसमें विशेष प्रयास अपेक्षित है। अयोध्या नगरी में सभी ने सुमन वाटिकाएं, लताएं आदि लगाई हैं। नीचे के उदाहरण में सबहिं शब्द विशेष महत्त्व का है अर्थात् रोपण सभी को करना है उसका आकार, प्रकार जैसा भी हो। रामराज्य के चित्रण में इसका वर्णन आता है–

सुमन वाटिका सबहिं लगाईं। बिबिध भाँति करि जतन बनाईं।।
लता ललित बहु जाति सुहाईं। फूलहिं सदा बसन्त की नाईं।।

कुछ समय पूर्व उत्तर प्रदेश शासन द्वारा नगर वन विकसित करने पर बल दिया गया। इसे शहर के फेफड़ों के रूप में विकसित किया जाना था। इसके अन्तर्गत शहरी क्षेत्रों के आस–पास वन क्षेत्रों की स्थापना किया जाना था। गोस्वामी जी के नगर वन की अवधारणा इससे कहीं अधिक व्यापक है। इस अवधारणा में वनों के साथ उपवन, तालाब, पशु–पक्षी सभी को सम्मिलित किया गया है। नगर वन नगर में, नगर के किनारे या आस–पास हो सकते हैं। इससे प्राकृतिक प्रदूषण दूर होने के साथ–साथ मनोवृत्ति के सुधार में भी सहायता मिलती है। अयोध्या नगरी का चित्रण दर्शनीय है–

पुर सोभा कछु बरनि न जाई। बाहेर नगर परम रुचिराई।।
देखत पुरी अखिल अघ भागा। बन उपबन बाटिका तड़ागा।।

इस प्रकार पौधरोपण, वनों की रक्षा, वन्य जीवों के प्रति प्रेम आदि को गोस्वामी जी ने मानव के स्वाभाविक कर्म के रूप में इस प्रकार चित्रित किया है जैसे वह उनकी दिनचर्या का अंग हो। यही वृत्ति प्रदूषण रहित धरती और सम्यक विकास की आधारशिला है और यही वृत्ति अनुकरणीय एवं कल्याणकारी है। जिस रामराज्य की अवधारणा गोस्वामी जी ने प्रस्तुत की थी तथा महात्मा गाँधी जी ने जिसका सपना देखा था उस रामराज्य को इसी पथ पर चलकर हम धरती पर पुनः स्थापित कर सकते हैं।

संदर्भ

1. वाल्मीकीय रामायण भाग–1 एवं 2–महर्षि वाल्मीकि, प्रकाशक– गीता प्रेस, गोरखपुर, उ0प्र0।
2. गोस्वामी तुलसीदास, रामचरितमानस, प्रकाशक– गीता प्रेस, गोरखपुर, उ0प्र0।
3. सिंह, महेन्द्र प्रताप, वाल्मीकि की पर्यावरण चेतना भाग–1(वनस्पतियाँ), प्रकाशक– अभ्युदय प्रकाशन, लखनऊ।
4. सिंह, महेन्द्र प्रताप, मानस में प्रकृति विषयक, प्रकाशक– पर्यावरण ज्ञान यज्ञ समिति, लखनऊ।
5. सिंह, महेन्द्र प्रताप, तुलसी की अन्तर्दृष्टि, प्रकाशक– उद्योग नगर प्रकाशन, गाजियाबाद।

व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में कौशल शिक्षा की उपादेयता

गीता रानी
एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा शास्त्र विभाग
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
geeta.ranilko@gmail.com

प्राप्त तिथि– 27.05.2016; स्वीकृत तिथि– 02.09.2016

सार– प्राचीन समय में व्यक्तित्व का अर्थ लैटिन भाषा के शब्द "परसोना" से लगाया जाता था। जिसका अर्थ है "मुखौटा"। ग्रीक अभिनेता इस मुखौटे का प्रयोग अभिनय करते समय अपनी पहचान छिपाने के लिए किया करते थे। मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व को आंतरिक तथा वाह्य क्रियाओं का संगठित रूप कहा है। व्यक्तित्व के वाह्य गुणों में अभिक्षमताओं व योग्यताओं को शामिल किया जाता रहा है। प्रायः देखा गया है कि व्यक्ति अपने व्यक्तित्व से ही अन्य लोगों को प्रभावित करता है। सामान्य रूप से एक प्रभावशाली व्यक्तित्व में कुछ कौशलों का विकास शिक्षा द्वारा करना चाहिए जैसे शारीरिक क्रियाएं, स्वयं साधन(सेल्फ रियलाइजेशन), समूह कार्य, मानवीय मूल्य इत्यादि।

बीज शब्द– व्यक्तित्व, कौशल, शिक्षा।

Importance of skill based education for the development of personality

Geeta Rani
Associate Professor, Department of Education
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
geeta.ranilko@gmail.com

Abstract- The term personality is derived from Latin word 'persona' which means 'mask' in olden days. The Greek actors used a mask to hide their identity. The personality is the organization of the internal and external activities. It includes the external appearances, qualities, aptitude and capacities etc. One individual effects other individual through his personality. Generally, some skills should be developed for effective personality through education as – physical activities, self realization, team work, human values etc.

Key words- Personality, skills, education.

किसी भी बच्चे का विकास उसके शैशवावस्था से प्रारम्भ हो जाता है, जैसे–जैसे उसका विकास होता है वैसे–वैसे ही उसके व्यवहार में व्यक्तित्व के लक्षण दिखायी देने लगते हैं। बच्चे के विकास का उत्तरदायित्व उसके माता–पिता व परिवार के अन्य सदस्य एवं गुरूजनों पर होता है। इसी कारण बालक के विकास के सभी पक्षों की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा का स्वरूप निर्धारित करना अति आवश्यक है। व्यक्तित्व के संतुलित एवं सर्वांगीण विकास हेतु उपयुक्त साधन उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। बच्चे के व्यक्तित्व विकास पर उसके परिवार एवं विद्यालय का विशेष प्रभाव पड़ता है। बच्चे के सर्वांगीण विकास यथा– शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक चारित्रिक तथा सामाजिक पक्षों को विकसित करने हेतु शिक्षा के स्वरूप से सम्बन्धित तथ्यों का वर्णन प्रायः होता रहा है। व्यक्तित्व की जाँच व परख द्वारा व्यक्तिगत भिन्नताओं को दृष्टिगत रखते हुए पाठ्यक्रम, पाठ्यविधि एवं परीक्षण विधि इत्यादि की व्यवस्था करनी चाहिए। शिक्षण द्वारा व्यक्तित्व सम्बन्धी परीक्षणों के आधार पर बच्चे की विभिन्न समस्याओं का समाधान किया जा सकता है जो कि उसके व्यक्तित्व–निर्माण में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। व्यक्तित्व के कौशलों की चर्चा करने से पूर्व 'व्यक्तित्व' क्या है? इसे जानना अति आवश्यक है। 'व्यक्तित्व' शब्द Personality का हिन्दी रूपान्तर हैं। जो कि लैटिन भाषा के परसोना से बना है जिसका अर्थ मुखौटा है जिसे मंच पर अभिनय करते समय व्यक्ति अपनी पहचान छिपाकर एक नवीन रूप को प्रस्तुत करता था। सामान्यतया

व्यक्ति के संगठित व्यवहार के सम्पूर्ण चित्र को 'व्यक्तित्व' कहा गया तो वहीं दार्शनिक दृष्टि में 'व्यक्तित्व आत्मज्ञान' है, परन्तु मनोवैज्ञानिक रूप से व्याख्या करने से ज्ञात होता है कि व्यक्ति में आन्तरिक और वाह्य रूप से जो विशेषताएँ, योग्यताएँ और विलक्षणताएँ होती है, उन सबका समन्वित रूप ही 'व्यक्तित्व' है। बीसर्न्ज और बीसर्न्ज, मन तथा ड्रेवर इत्यादि मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व को मानव की आदतों, दृष्टिकोणों, क्षमताओं, योग्यताओं, अभिरूचियों व व्यवहार के तरीकों का विशिष्ट संगठन कहा है। इन विचारकों से अलग अलपोर्ट का कहना था कि ''व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतर उन मनोशारीरिक गुणों का गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण के साथ उसका अद्वितीय समायोजन निर्धारित करता है।''

अलपोर्ट की परिभाषा अन्य की अपेक्षा अधिक उपयुक्त समझी गयी क्योंकि उन्होंने 'व्यक्तित्व' में शारीरिक व मानसिक दोनों गुणों को शामिल किया है और 'गत्यात्मक संगठन' इसलिए क्योंकि इसमें व्यक्ति के जीवन को प्रभावित करने की शक्तियाँ विद्यमान हैं दूसरा तथ्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व के मानसिक व शारीरिक गुण स्थिर नहीं रहते हैं, परिस्थिति अनुसार उनमें परिवर्तन होते रहते हैं। तीसरा तथ्य यह कि व्यक्तियों की मनोशारीरिक अवस्थायें एक समान नहीं रहती हैं, अर्थात् व्यक्तित्व सम्बन्धी समायोजन वैयक्तिक भिन्नताओं से प्रभावित होता है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व के सम्बन्ध में कुछ कार्य किये है, जो कि निम्नवत है–

ऑलपोर्ट(1897-1967) एक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिकों में से एक हैं। सन् 1919 में हार्वर्ड विश्वविद्यालय से ग्रेजुएशन के बाद उन्होंने टर्की के रॉबर्ट कॉलेज में लगभग दो वर्ष तक अध्यापन कार्य किया, उन्होंने 'व्यक्तित्व' पर कई पुस्तकें लिखी, जिनमें पर्सनालिटी(1937), द नेचर ऑफ प्रीज्यूडिसिस(1954) प्रमुख हैं। आपने 1937–1947 तक जर्नल ऑफ एबनॉर्मल एण्ड सोशल साइकोलॉजी, पर सम्पादक का कार्य किया। रेमण्ड बी0 कैटल(1905-1998) का जन्म 1905 में इंग्लैण्ड में हुआ, उन्होंने लंदन विश्वविद्यालय से एम0ए0, पी–एच0डी0, एण्ड डी0एस–सी0 की डिग्री ग्रहण की। 1932–37 तक चाइल्ड गाइडेन्स क्लीनिक के निदेशक बने, उन्होंने थोर्नडाइक व स्टैनले के साथ जेनेटिक साइकोलॉजी पर कार्य किया। कैटल को अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि 16 पर्सनालिटी फैक्टर्स क्वेश्चनायर से प्राप्त हुयी। उनके द्वारा व्यक्तित्व सिद्धान्त पर हुये शोधकार्य के निष्कर्षों को अमेरिका, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, जापान, भारत व अफ्रीका के जर्नल में प्रकाशित किया गया। कार्ल जुंग(1775–1861) एक स्विस मनोविश्लेषण कहे जाते थे उन्होंने 1902 में मेडिकल डिग्री लेने के पश्चात् उन्होंने ज्यूरिख व अन्य स्थानों में 'मानसिक रोगों' पर अध्ययन किया। जुंग ने 'व्यक्तित्व' को 'अन्तर्मुखी(Introvert) एवं वर्हिमुखी(Extrovert) दो भागों में विभाजित किया। उनका मानना था कि स्वयं पर केन्द्रित रूचि वाले व्यक्ति अन्तर्मुखी तथा जिनकी रूचि भौतिक एवं सामाजिक वातावरण की ओर रहती है वे बर्हिमुखी हैं। अन्तर्मुखी व बर्हिमुखी व्यक्तित्व की दो चरम सीमाओं के मध्य जो व्यक्ति आते हैं, वे 'उभय मुखी'(Ambivert) की श्रेणी में आते हैं। एच0 ए0 मैसलो(1908–70) एक अमेरिकी मनोवैज्ञानिक थे। उन्होंने सैल्फ एक्च्युलाइजेशन(1954), मोटीवेशन एण्ड पर्सनालिटी(1962), टुवर्ड एण्ड साइकोलॉजी ऑफ बीन्ग, पर कार्य किया। उनका मानना था कि 'मानव प्रेरक' एक क्रम में व्यवस्थित होते हैं जिन्हें पाँच भागों में विभाजित किया यथा– मनोदैहिक प्रेरक, सुरक्षा प्रेरक, प्रेम व लगाव, आत्मसम्मान प्रेरक तथा आत्मानुभूति प्रेरक इत्यादि।

किसी भी व्यक्तित्व में सम्मिलित गुण या व्यवहार देश, काल और परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। किसी समय विशेष या परिस्थितियों में व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को समझना कठिन है, परन्तु असम्भव नहीं। यदि व्यक्ति में मनोशारीरिक गुणों का संगठन अव्यवस्थित है तो व्यक्ति को वातावरण से सामंजस्य करने में कठिनाई अनुभव होती है और समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ प्रकट होने लगती हैं। वातावरण से समुचित समायोजन तभी संभव हो सकता है जबकि व्यक्ति संगठित हो, अर्थात् व्यक्तित्व के अन्तर्गत व्यक्ति की बौद्धिक क्षमताएँ, संवेग, इच्छाएँ, संकल्पशक्ति इत्यादि मानसिक क्रियाएँ व्यवस्थित और संगठित रूप से कार्य करती रहें। सामान्यतया व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु कुछ कौशल विकसित करने की आवश्यकता है जो कि निम्नांकित हैं :–

1. शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य उत्तम स्तर का हो, इस हेतु परिवार व विद्यालय में व्यायाम, योगाभ्यास जैसी कक्षाएँ आवश्यक विषयों के रूप में पढ़ायीं जाएं।
2. आत्मचेतना को ध्यान के माध्यम से दृढ़ संकल्प करने की शिक्षा दी जाये तभी आत्म चेतना कर्त्तव्यपालन के लिए बच्चे को सजग रख सकती है।
3. सामाजिकता की भावना विकसित करने हेतु सहृदयी, सहयोगी, दया करूणा प्रदर्शित करने वाले बच्चों की प्रशंसा करनी चाहिए।

4. शिक्षक को सभी परिस्थितियों का सफलतापूर्वक सामना करने के लिए मित्रवत व्यवहार करना चाहिए इस हेतु कक्षा में समूह बनाकर प्रोजेक्ट वर्क/टीम वर्क देना चाहिए।
5. शिक्षक को दृढ़ संकल्प शक्ति को विकसित करने हेतु निरन्तर प्रयत्नशील व सजग रहकर सहयोग करना चाहिए।
6. बच्चों में उच्च स्तर महत्वाकांक्षा और उद्देश्यपूर्णता विकसित हो सके इस हेतु उसके लक्ष्यों की चर्चा कर उन्हें दिशा–निर्देश देकर प्रेरित करना चाहिए।
7. बच्चों को तकनीक व प्रौद्योगिक उपकरणों जैसे– मोबाईल, टी0वी0, रेडियो इत्यादि का उत्तम प्रयोग करने की शिक्षा दी जाये तथा व्यक्तित्व पर दुष्प्रभाव डालने वाले कार्यक्रमों का प्रसारण बंद किया जाये।
8. बच्चों द्वारा अभिव्यक्ति देते समय उनकी भाव–भंगिमाओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। अर्थात् उनके बॉडी लैंग्वेज पर विशेष ध्यान दिया जाये और उन्हें इसकी सही शिक्षा दी जाये।
9. भाषा दोष एवं उच्चारण सम्बन्धी त्रुटियों का तुरन्त निराकरण होना चाहिए।
10. व्यक्तित्व से सम्बन्धित उत्तम श्रेणी के दृश्य–श्रव्य सामग्री का प्रयोग कर बच्चों को शिक्षित किया जाये।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि व्यक्तित्व को उच्च स्तरीय बनाने हेतु सतत् रूप से सजग व सक्रिय रहने की आवश्यकता है। वर्तमान समय की चुनौतियों को श्रेष्ठ व्यक्तित्व ही समाप्त करने में सक्षम हो सकते हैं न कि साधारण व्यक्तित्व। आधुनिकता की दौड़ में माता–पिता अपने बच्चों पर पूर्णतया ध्यान नहीं दे पाते हैं ऐसी स्थिति में उन्हें छुट्टियों में शैक्षिक यात्राएँ अवश्य करवा सकते हैं जिससे वे बच्चों के व्यक्तित्व में विकृति को आने से रोक सके। आवश्यकता इस बात की है कि कुछ श्रेष्ठ व्यक्तित्व यथा– गाँधी, नेहरू, कलाम, सुभाष चन्द्र बोस, अम्बेडकर, चन्द्रशेखर आजाद, तुलसी, कबीर, इत्यादि ऐसे कई ज्ञानी विद्वान भारत के रत्न के समान हैं जिन्होंने सभी क्षेत्रों यथा कला, विज्ञान, स्वास्थ्य, साहित्य, राजनीति आदि में अपने योगदान से लोगों को आश्चर्य चकित किया है परन्तु अफसोस इस बात का है कि जितनी अधिक सुविधाएँ वर्तमान समय में लोगों को प्राप्त है, उतने श्रेष्ठ गुणों को विकसित करने में हम समर्थ नहीं है। कारण, उत्साह व उल्लास की लालसाएँ हैं जिससे हम भोगवादी प्रवृत्ति के शिकार बन गये हैं परिणाम स्वरूप हम श्रेष्ठता को खोकर चकाचौंध में उलझ गये हैं। ऐसे में सभी को अपने–अपने स्तर से लोगों में मानवीय मूल्य विकसित करने की आवश्यकता हैं जो कि प्रत्येक के लिए सहनशीलता की परीक्षा होगी क्योंकि तभी वे परिवार व समाज का सहयोग कर श्रेष्ठ व्यक्तित्व का परिचय दे सकते हैं।

अवलोकित संदर्भ

1. शर्मा, मुकुल कुमार(2008) शिक्षा मनोविज्ञान, तुशार प्रकाशन, डिब्रूगढ़, आसाम।
2. सारस्वत, मालती(2012) शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. बाला, बाजपेयी एवं शुक्ला, सावित्री(2000) शिक्षा के आधारभूत तत्व, आलोक प्रकाशन, इलाहाबाद।
4. शुक्ल, ओ0पी0(2009) शिक्षा मनोविज्ञान, भारत बुक सेंटर, अशोक मार्ग, लखनऊ।
5. गुप्ता, एस0 पी0 एवं गुप्ता, अल्का(2003) उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
6. मंगल, एस0 के0(2011) शिक्षा मनोविज्ञान, पी0एच0आई0, नई दिल्ली।

प्रोटीन

ए0 के0 चतुर्वेदी
भूतपूर्व उपाचार्य, रसायन विज्ञान विभाग
डी0 एस0 डिग्री कॉलेज, अलीगढ–२०२००१
पता–२६, कावेरी एन्क्लेव फेज–दो, निकट स्वर्ण जयन्ती नगर
रामघाट रोड, अलीगढ़, उ0प्र0–२०२००१, उ0प्र0, भारत

प्राप्त तिथि– 01.05.2016; स्वीकृत तिथि– 17.08.2016

सार– मानव भोजन का मुख्य अवयव प्रोटीन है। 24 अमीनो अम्ल कई तरह के प्रोटीन का निर्माण करते हैं। वनस्पति तथा जन्तु प्रोटीन के स्त्रोत हैं। सभी इन्जाइम(विकर) प्रोटीन हैं तथा विकर जैव–उत्प्रेरक हैं। प्रोटीन शारीरिक सौष्ठव में तथा मानव में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने का कार्य करता है। आवश्यकता से अधिक प्रोटीन उच्च रक्तचाप, मोटापा, गठिया रोग, वृक्क रोग उत्पन्न करता है। शरीर में प्रोटीन की कमी से बौनापन, बाल का झड़ना, वजन में कमी, मांसपेशिया कमजोर हो जाती हैं। प्रोटीन धागे वाली, गोलाकार, साधारण तथा मिश्रित होती है।

बीज शब्द– प्रोटीन, एमीनो एसिड, इन्जाइम(विकर), हेयरफॉल, वजन की कमी(वेट लॉस)।

Protein

A. K. Chaturvedi
Former Reader, Department of Chemistry
D.S. Degree College, Aligarh-202001, U.P., India
Add: 26, Kaveri Enclave Phase-2, Near Swarn Jayanti Nagar
Ramghat Road, Aligarh-202001, U.P., India

Abstract- Protein is the constituent of human food. There are 24 amino acid which form different proteins. Source of protein is vegetables and animal. All enzymes are proteins and enzymes are bio-catalyst. Protein builds up body and increases immune power in human beings. Excess protein causes high blood pressure, obesity, arthritis, kidney disease. Lack of protein causes dwarfness, hair fall, weight loss, muscles weakness etc. Proteins are fibrous, globular, simple, mixed.

Key words- Protein, amino acid, enzymes, hair fall, weight loss.

प्रोटीन शब्द ग्रीक भाषा के शब्द प्रोटियस से लिया गया है, इसका अर्थ सर्वप्रथम या आवश्यक होता है। प्रोटीन शरीर का आधार है जो शरीर की कोशिकाओं, ऊतक, हड्डियों, रक्त, हार्मोन आदि में पाया जाता है। शरीर की रचना तथा विकास के लिए प्रोटीन अति आवश्यक है। प्रोटीन में कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन और नाइट्रोजन तत्व पाये जाते हैं। कुछ प्रोटीन में इनके साथ सल्फर, फॉस्फोरस, आयोडीन, लौह, तांबा आदि भी पाया जाता है। प्रोटीन की इकाई एमीनो अम्ल है। शरीर में विभिन्न प्रकार की प्रोटीन उपस्थित होती हैं जो कि एमीनो अम्ल से बनती हैं। एमीनो अम्ल संख्या में २४ होते हैं। आठ एमीनो अम्ल का निर्माण शरीर में नहीं होता है, जिनको अनिवार्य एमीनो अम्ल कहा जाता है तथा यह भोजन से प्राप्त किये जाते हैं। कुछ एमीनो अम्ल का निर्माण शरीर में होता रहता है और इन्हें अनावश्यक एमीनो अम्ल कहा जाता है।

भोजन में अपेक्षित मात्रा में प्रोटीन की उपस्थिति आवश्यक है। यदि किसी प्रोटीन में सभी आवश्यक एमीनो अम्ल उपस्थित हों तो इस प्रोटीन को आदर्श या सम्पूर्ण प्रोटीन कहते हैं। जानवरों से प्राप्त प्रोटीन जैसे मांस, मछली, मुर्गा, अण्डा, दूध आदि इस श्रेणी में आते हैं। यदि प्रोटीन में आवश्यक एमीनो अम्ल नहीं पाये जायें, तो इस प्रोटीन को असम्पूर्ण प्रोटीन कहते हैं। वनस्पतियों से प्राप्त प्रोटीन जैसे अनाज, दालें, फल, सब्जियां आदि इस श्रेणी में आते हैं। वनस्पति स्रोतों से प्राप्त प्रोटीन, जानवरों से प्राप्त प्रोटीन की तुलना में सस्ती और सरलता से उपलब्ध होती है। वैज्ञानिकों का मानना है कि ३ कि0ग्रा0 वनस्पति प्रोटीन के सेवन करने से ५00 ग्राम प्रोटीन का निर्माण होता है। अनाजों में लाइसिन और थ्रियोनिन एमीनो अम्ल कम होते हैं, जबकि दालों में मिथियोनिन की कमी होती है। मिश्रित भोजन के सेवन करने से अनुपस्थित एमीनो अम्लों की पूर्ति हो जाती है। दाल, चावल, रोटी, खिचड़ी, इडली, डोसा के सेवन करने से सम्पूर्ण प्रोटीन प्राप्त होती है। शाकाहारी मनुष्य प्रोटीन की आवश्यकता को भोजन, दूध आदि से प्राप्त करता है। भोजन में

दाल, चावल, रोटी, सब्जियां आदि होते हैं जिससे शरीर को पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन प्राप्त हो जाता है। विभिन्न पदार्थों में प्रोटीन की मात्रा भिन्न होती है, जिसका विवरण प्रतिशत में निम्नवत है–

१. सोयाबीन–४३.३, २. पनीर–४०.३, ३. अंकुरित गेहूँ–२६.२, ४. मूंगफली–२५.2, ५. उड़द दाल–२४, ६. राजमा–२२.६, ७. अरहर दाल–२२.६, ८. काजू–२१.२, ९. बादाम–२०.८, १०. चने की दाल–१७.१, ११. मक्का–११.६, १२. गेहूँ–११.८, १३. चावल–६.८, १४. दूध(भैंस)–६.५, दूध(गाय)–४.१, १५. चिकेन–२५.६, १६. बकरे का गोस्त–२०, १७. मछली–१६.५, १८. अण्डा–१३.३

प्रोटीन कई प्रकार की होती है, जिसका वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जा सकता है। एक वर्गीकरण आकृति के आधार पर भी किया जाता है। इसके अनुसार प्रोटीन दो प्रकार की होती है–

१. **धागे वाली प्रोटीन(फायब्रस प्रोटीन)**– जब प्रोटीन की आकृति धागे के समान लम्बी तथा पतली हो। यह पानी में अघुलनशील होती है। इस प्रकार की प्रोटीन में पोलीपेप्टाइड श्रृंखला सिंप्रंग(कॉयल) के रूप में नहीं होती है। जैसे– केराटिन– यह बालों, नाखूनों, त्वचा में उपस्थित होती है। मायोसिन– यह मांसपेशियों में, कोलाजन कार्टीलेज, हड्डियों में उपस्थित होती है।

२. **ग्लोब्यूलर प्रोटीन**– इस प्रकार की प्रोटीन गोलाकार आकार में होती है। इस प्रकार की प्रोटीन में पोलीपेपटाइड चेन(कॉयल) गोलाकार रूप में होती है। कॉयल में आपस में अणु हाइड्रोजन बन्ध से जुड़े रहते हैं। यह प्रोटीन जल में घुलनशील होती है। जैसे–

१. एन्जाइम– पेप्सिन– आमाशय में पाचन क्रिया में सहायक है।
२. हार्मोन– इन्सुलिन– पेनक्रियाज से निकलती है तथा रक्त में ग्लूकोज की मात्रा को नियंत्रित रखती है।
३. हीमोग्लोबिन– रक्त में उपस्थित ऑक्सीजन को फेफड़ों से ऊतकों तक पहुंचाती है।
४. एन्टीबॉडीज– गामा ग्लोब्यूलिन– रक्त में उपस्थित– प्रतिरक्षा को बढ़ती है तथा बाहरी संक्रमण से रक्षा करती है।

दूसरा वर्गीकरण संरचना के आधार पर किया जाता है। इस आधार पर प्रोटीन दो प्रकार की होती है–

१. साधारण प्रोटीन– वह प्रोटीन जो जल अपघटन पर केवल एमीनो अम्ल देती है, साधारण प्रोटीन कहलाती है। जैसे– एलब्यूमिन, सीरम एलब्यूमिन, ग्लोब्यूलिन–ऊतक ग्लोब्यूलिन।
२. मिश्रित प्रोटीन(कॉन्जूगेटेड प्रोटीन)– जो प्रोटीन जल अपघटन पर एमीनो अम्ल और नॉन पेप्टाइड भाग देते हैं, वह मिश्रित प्रोटीन कहलाते हैं। नॉन पेप्टाइड भाग को प्रोस्थेटिक समूह कहते हैं। जैसे–

ग्लाइको प्रोटीन– थूक में म्यूसिन– प्रोस्थेटिक समूह– कार्बोहाइड्रेट
फॉस्फो प्रोटीन– दूध में केसीन– प्रोस्थेटिक समूह– फॉस्फोरिक अम्ल

प्रोटीन शरीर में ऊतकों व कोशिकाओं का निर्माण करती है। प्रोटीन शरीर की वृद्धि व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। ऊतकों व कोशिकाओं के निर्माण और मरम्मत के लिए प्रोटीन आवश्यक है। प्रोटीन शरीर में होने वाली उपापचय क्रिया को नियंत्रित करती है। यह नियंत्रण एन्जाइम और हार्मोन के द्वारा किया जाता है। प्रोटीन रक्त के द्वारा ऑक्सीजन तथा आवश्यक तत्वों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाती है। रक्त में उपस्थित प्रोटीन के कारण रक्त ऊतकों के मध्य द्रवों का आवागमन होता है। प्रोटीन प्रतिरक्षी के रूप में शरीर को रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करता है। शरीर के विकास और नये शरीर को बनने के लिए नई कोशिकाओं और ऊतकों की आवश्यकता पड़ती है जिसकी पूर्ति प्रोटीन के द्वारा की जाती है। कोशिकाओं और ऊतकों के टूटने से रोग ग्रस्त होने, ऑपरेशन होने पर भी कोशिकाओं और ऊतकों में टूटन होती है जिसको भरने हेतु प्रोटीन की आवश्यकता पड़ती है। प्रोटीन की आवश्यकता विभिन्न अवस्थाओं, परिस्थितियों में भिन्न होती है। यह लिंग, मानसिक व शारीरिक रोग, संक्रमण, तनाव, शरीर के भार पर निर्भर करती है।

प्रोटीन की सर्वाधिक आवश्यकता शिशुओं, बच्चों व किशोरों, महिलाओं को गर्भावस्था एवं स्तनपान कराते समय होती है। भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान परिषद ने पुरुषों के लिए ६० ग्राम और महिलाओं के लिए ५० ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन सेवन की संस्तुति की है। गर्भावस्था में महिलाओं को प्रोटीन की अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि नये ऊतक तथा कोशिकाओं का निर्माण होता है। अतः गर्भवती महिलाओं को ७५ ग्राम प्रोटीन के सेवन की संस्तुति की गई है। प्रोटीन दूध निर्माण के लिए आवश्यक है। बच्चों, किशोरों को प्रोटीन की अधिक आवश्यकता होती है। किसी भी रोग के होने पर, ऑपरेशन के बाद, फ्रैक्चर होने पर प्रोटीन की आवश्यकता होती है। वृद्धावस्था में भी ऊतकों को प्रोटीन की आवश्यकता होती है। गुर्दे के रोग होने पर मूत्र के साथ प्रोटीन शरीर के बाहर चली जाती है जिससे प्रोटीन की आवश्यकता शरीर में बढ़ जाती है। शरीर को प्रोटीन की आपूर्ति मिश्रित प्रोटीन से करनी चाहिए, जिससे आवश्यक एमीनो अम्ल की कमी न होने पाये। शाकाहारियों को प्रतिदिन २००–३०० मिली दूध का सेवन अवश्य ही करना चाहिए। रक्त में एल्ब्यूमिन, ट्रांसफेरिन प्रोटीन के स्तर को मापकर, शरीर में कुल नाइट्रोजन की मात्रा के माप से भी प्रोटीन की कमी का पता

लगाया जाता है। रक्त में एलब्यूमिन का स्तर ३.५ ग्राम प्रति 100मि0ली0 से कम हो तो प्रोटीन की कमी होगी। प्रोटीन की आवश्यक मात्रा उम्र, लिंग, काम करने की स्थिति पर निर्भर करती है। भिन्न परिस्थितियों में प्रोटीन की आवश्यकता भिन्न होगी।

परिस्थिति	प्रोटीन की मात्रा/किलो	परिस्थिति	प्रोटीन की मात्रा/किलो
शिशु		**किशोर**	
१ दिन से ३ माह	२.३ ग्राम	९–१२ वर्ष, लड़का	५४ ग्राम
३–६ माह	१.८ ग्राम	लड़की	५० ग्राम
६–९ माह	१.६५ ग्राम	१२–१५ वर्ष, लड़का	७० ग्राम
९–12 माह	१.५ ग्राम	लड़की	६५ ग्राम
१–३ वर्ष	२२ ग्राम	१५–१८ वर्ष, युवक	७८ ग्राम
३–६ वर्ष	३० ग्राम	युवती	६८ ग्राम
६–९ वर्ष	४१ ग्राम		

शरीर में प्रोटीन की कमी कई कारणों से होती है, सामान्यतया जब भोजन में प्रोटीन पर्याप्त मात्रा में उपस्थित न हो। भोजन में कैलोरी की मात्रा कम होने पर भी प्रोटीन की कमी होती है। यदि आँतों में प्रोटीन का पाचन और अवशोषण कम हो या न हो तो प्रोटीन की मात्रा कम हो जाती है। दस्त, पेचिश और आँतों में संक्रमण होने से प्रोटीन की कमी हो जाती है। यकृत के रोगों के कारण प्रोटीन का निर्माण नहीं हो पाता है। गुर्दे के रोगों के कारण शरीर से प्रोटीन का निष्कासन होता है। दोनों ही स्थिति में प्रोटीन की कमी हो जाती है। प्रोटीन की कमी विशेषकर बच्चों में दृष्टिगोचर होती है। कभी–कभी प्रोटीन की कमी गम्भीर समस्या बन जाती है। प्रोटीन की कमी के स्पष्ट लक्षण होते हैं जो बच्चों में दृष्टिगोचर होते हैं। प्रोटीन की कमी से रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। इस कारण संक्रामक रोग सरलता से हो जाते हैं। बच्चों में प्रोटीन की कमी से उनके विकास की गति मन्द हो जाती है तथा उनकी लम्बाई बढ़ना रुक जाती है। इतना ही नहीं बच्चों की सक्रियता भी कम हो जाती है और वह हमेशा सुस्त–सुस्त सा रहता है। बच्चों में प्रोटीन की कमी से सूखा रोग हो जाता है तथा वजन भी कम होने लगता है। प्रोटीन की अधिक कमी से क्वाशियोकोर रोग हो जाता है। इस कारण त्वचा पर धब्बे पड़ जाते हैं तथा संक्रमण भी सरलता और शीघ्र हो जाता है।

गर्भावस्था में प्रोटीन की कमी से अपरिपक्व, कम वजन, समय से पूर्व शिशु का जन्म होता है। जिसके चलते माँ के प्रसव के बाद शिशु के लिए पर्याप्त दूध नहीं बन पाता। महिला और शिशु में अल्प रक्तता हो जाती है तथा वह कमजोरी के चलते उसका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। वयस्कों में प्रोटीन की कमी होने पर मांसपेशियां पतली हो जाती हैं, बाल झड़ने लगते हैं, थकान महसूस होती है, नाखून, त्वचा कांतिहीन हो जाती हैं तथा कार्य करने की क्षमता भी कम हो जाती है। कुछ लोगों की श्वांस भी फूलने लगती है। प्रोटीन की कमी होने पर बुद्धि विकास की गति मन्द पड़ जाती है।
सामान्यतया आवश्यकता से अधिक मात्रा में प्रोटीन का सेवन करना लाभकारी नहीं होता है। आवश्यकता से अधिक प्रोटीन शरीर में संचित नहीं होती है तथा शरीर से बाहर निकल जाती है। इस क्रिया में गुर्दो को अधिक कार्य करना पड़ता है। इससे गुर्दे के खराब होने की सम्भावना बढ़ जाती है। अधिक प्रोटीन के शरीर में उपस्थित होने पर वह वसा में परिवर्तित होकर चर्बी के रूप में जमा हो जाती है। जिससे मोटापा बढ़ जाता है जो अत्यन्त कष्टकारी होता है। अधिक प्रोटीन के सेवन से उच्च रक्तचाप, जोड़ों के रोग, गठिया रोग हो जाते हैं। जो बढ़ती उम्र के साथ–साथ परेशानी का कारण बन जाते हैं। प्रोटीन का समुचित मात्रा में नियमित रूप से सेवन करने से ही लाभ मिलता है। संतुलित भोजन करने से प्रोटीन की आवश्यकता पूर्ण होती है। शरीर ह्रिष्ट–पुष्ट होता है। साथ ही रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है तथा स्वास्थ्य भी अच्छा बना रहता है। अच्छे स्वास्थ्य से शारीरिक, मानसिक विकास और वृद्धि होती है एवं आकर्षण बना रहता है। अच्छा स्वास्थ्य ही जीवन में उल्लास, उत्साह, उमंग बढ़ाता है। प्रोटीन की कमी होने पर शरीर रोगी हो जाता है। जीवन नीरस एवं अभिशाप बन जाता है।

अवलोकित संदर्भ

1. धवन, एस0 एन0(२०००) कार्बनिक रसायन, प्रदीप प्रकाशन, जालन्धर, पंजाब।
2. मॉरीसन, आर0 टी0 एण्ड बॉयड, आर0 एन0(२०१०) कार्बनिक रसायन, पियरसन एजुकेशन, संस्करण–७, नई दिल्ली।
3. चटवाल, गुरदीप आर0(२००६) प्राकृतिक प्रोडक्ट्स का कार्बनिक रसायन, भाग–१, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
4. अग्रवाल, ओ0 पी0(२०१३) प्राकृतिक प्रोडक्ट्स का कार्बनिक रसायन, भाग–१, संस्करण–४, कृष्णा पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
5. फिनार, आई0 एल0(२००२) कार्बनिक रसायन, पियरसन एजुकेशन, संस्करण–६, नई दिल्ली।

वैदिक गणित का पुर्नअनुसंधान

जितेन्द्र अवस्थी
असिस्टेंट प्रोफेसर, गणित विभाग
एस0 जे0 एन0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drjitendraawasthi@gmail.com

प्राप्त तिथि– 20.06.2016; स्वीकृत तिथि– 17.08.2016

सार – प्राचीन काल से ही भारत में गणित का बहुत महत्व था। भारतीय गणित के स्वर्णिम काल में आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, महावीर आदि विद्वानों द्वारा महत्वपूर्ण योगदान दिया गया। बाद में स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ जी ने प्राचीन भारतीय गणित, वैदिक गणित को एक नये रूप में पुनर्अनुसंधानित किया।

बीज शब्द– वैदिक गणित, सूत्र, उप–सूत्र।

The rediscovery of Vedic Ganita

Jitendra Awasthi
Assistant Professor, Department of Mathematics
S.J.N. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
drjitendraawasthi@gmail.com

Abstract- From ancient times Mathematics has great importance in India. In the classical period of Indian Mathematics, important contributions were made by scholars like Aryabhatt, Brahmgupta, Mahaveera etc. Later on Shri Bharti Krishna Teert rediscovered the old Mathematics in a new form known as Vedic Ganita.

Key words- Vedic Ganita, sutra, sub-sutra.

प्राचीन भारतीय गणित अर्थात वैदिक गणित के सूत्र, 1891 से 1918 के बीच स्वामी भारतीय कृष्ण तीर्थ द्वारा पुर्नअनुसंधानित किए गए। 20वीं शताब्दी के आरम्भ में, जब यूरोप में संस्कृत के प्रति गहरी रूचि थी, भारती कृष्ण तीर्थ ने कुछ विद्यार्थियों को गणित सूत्र, जिनका तात्पर्य गणित है, का उपहास करते हुए पाया। वो विद्यार्थी, उन सूत्रों के रूपान्तरण में गणित को न समझ पाए और उन्होंने उसे व्यर्थ कह कर त्याग दिया। भारती कृष्ण तीर्थ जी ने, जो स्वयं संस्कृत, गणित, इतिहास और दर्शन के विद्वान थे, इन सूत्रों का अध्ययन किया तथा अथक प्रयास के पश्चात् वेदों की गणित को पुनःस्थापित किया उनके अनुसंधान के अनुसाार सभी प्रकार की अंकगणितीय संक्रियायें 16 सूत्रों या वाक्य नियमों पर आधारित है जो इस प्रकार है–

1–एकाधिकेन पूर्वेण(पहले से एक अधिक के द्वारा)
2–निखिलं नवतश्चरम् दशतः(सभी नौ में से परन्तु अन्तिम दस में से)
3–उर्ध्व तिर्यग्म्याम्(सीधे और तिरछे दोनो प्रकार से)
4–परावर्त्य योजयेत्(पक्षान्तर कर उपयोग में लेना)
5–शून्यसाम्य समुच्चये(समुच्चय समान होने पर शून्य होता है)
6–आनुरूप्ये शून्यं अन्यत्(अनुरुपता होने पर शून्य होता है)
7–संकलन व्यवकलानाभ्याम्(जोड़कर और घटाकर)
8–पूर्णापूर्णाभ्याम्(अपूर्ण को पूर्ण करके)
9– चलन कलनाभ्याम्(चलन कलन के द्वारा)
10–यावदूनम(जितना कम हो अर्थात विचलन)
11–व्यष्टि समष्टिः(एक को पूर्ण तथा पूर्ण को एक मानते हुए)
12–शेषाण्यंकेन चरमेण(अन्तिम अंक से अवशेष को)
13–सोपान्त्यद्वयमंत्यम्(अन्तिम और उपान्तिम का दुगुना)

14–एकन्यूनेन पूर्वेण (पहले से एक कम के द्वारा)
15– गुणितसमुच्चयः (गुणितों का समुच्चय)
16–गुणकसमुच्चयः (गुणको का समुच्चय)

इन सूत्रों के 14 उपसूत्र होते है जो इस प्रकार हैं :–
1. आनुरुप्येण (अनुपातों से)
2. शिष्यते शेषसंज्ञः (एक विशिष्ट अनुपात में भाजक के बढ़ने पर भजन फल उसी अनुपात में कम होता है तथा शेषफल अपरिवर्तित रहता है।)
3. आदयमादयेन अन्त्यमन्त्येन (प्रथम को प्रथम के द्वारा तथा अन्तिम को अन्तिम के द्वारा)
4. केवलैः सप्तकं गुण्यात (7 के लिए गुणक 143)
5. वेष्टनम्(आश्लेषणकरके)
6. यावदूंन तावदूनम् (विचलन घटाके)
7. यावदूंन तावदूनीकृत्य वर्ग च योजयेत् (संख्या की आधार से जितनी भी न्यूनता हो उतनी न्यूनता और करके उसी न्यूनता का वर्ग भी रखें)
8. अन्त्ययोर्दशकेऽपि (अन्तिम अंको का योग 10 वाली संख्याओं हेतु)
9. अन्त्ययोरेव (अन्तिम पद से ही)
10. समुच्चयगुणितः (गुणनफल की गुणन संख्याओं का योग)
11. लोपनस्थापनाभ्याम् (विलोपन तथा स्थापना से)
12. विलोकनं (देखकर)
13. गुणितसमुच्चयः समुच्चयगुणितः (गुणनखण्डों की गुणन संख्याओं के योग का गुणनफल, गुणनफल की गुणन संख्याओं के योग के समान होता है)
14. ध्वजांक (ध्वज लगाकर)

स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ ने वैदिक निकायों के 16 खण्डों को प्रतिपादित किया, किन्तु दुर्भाग्यवश वो सभी नष्ट हो गए। अंत में उन्होंने वैदिक गणित पर एकमेव पुस्तक लिखी जो उनकी मृत्यु के पाँच वर्ष पश्चात् 1965 में प्रकाशित हुई। प्रकाशित होने के कुछ वर्षों पश्चात् लंदन में कुछ अंग्रेज़ गणितज्ञों(केनेथ विलियम्स, एंड्रू निकोलस, जेर्मी पिक्लेस आदि) ने इस पुस्तक का अध्ययन किया। उन्होंने इस पुस्तक पर आरंभिक व्याख्यान विषय पर एक पुस्तक प्रकाशित की। 1981 से 1987 के बीच एंड्रू निकोलस ने वैदिक गणित में हो रही प्रगति को जानने के लिए चार बार भारत की यात्रा की । इन यात्राओं के फलस्वरूप भारतीय शिक्षकों और विद्यार्थियों में वैदिक गणित के प्रति गहरी रूचि उत्पन्न हुई उन्होंने देखा कि जब पश्चिम के लोग वैदिक गणित में इतनी रूचि ले रहे हैं ते इसमें अवश्य कुछ विशेष होगा। उस समय लंदन के सेंट जेम्स स्कूल और अन्य स्कूलों ने वैदिक गणित का सफलतापूर्वक अध्ययन अध्यापन प्रारम्भ किया। आज वैदिक गणित का भारत और विदेश के कई विद्यालयों में व्यापक रूप से अध्ययन और शोधकार्य किया जा रहा है। वर्ष 1964, जो कि भारती कृष्ण तीर्थ जी का जन्म शताब्दी वर्ष था, भारतीय शोध समूह ने वैदिक गणित पर तीन पुस्तकों का प्रकाशन किया। वर्ष 1998 में वैदिक गणित पर प्रथम वेवसाइट और समाचार पत्र का प्रारम्भ हुआ।

वैदिक गणित नाम की पुस्तक मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के कई विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में शामिल की गई है। कुछ हिन्दूवादी समूहों द्वारा भारत और विदेशों में संचालित विद्यालयों और संस्थाओं ने भी भारती कृष्ण तीर्थ जी की विधियों को अपने पाठ्यक्रम में शामिल किया है। कुछ गणितज्ञों और विद्वानों ने वैदिक गणित का यह कहकर विरोध किया कि यह कोई गणित नहीं है, अपितु कुछ गणितीय पद्धतियाँ हैं। परन्तु अधिकतर लोग इस बात से सहमत है कि वैदिक गणित एक गणितीय पद्धति न होकर वास्तव में गणितीय संक्रियायें करने की एक आसान विधा है।

संदर्भ

1. एस्क्रिपचर ई.डब्लू (1891) अमेरिकन जर्नल ऑफ साईकोलोजी खण्ड 4, मु0पृ0 1–59।
2. मिशेल, एफ0 डी0(1907) अमेरिकन जर्नल ऑफ साईकोलॉजी, खण्ड 18, मु0पृ0 61–143।
3. स्वामी भारती कृष्ण तीर्थ(1965) वैदिक गणित, मोतीलाल बनारसीदास प्रा0 लि0(ISBN9788120421743)

सूर्य–प्रतिमायें

अनुराधा विनायक
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग
बी0एस0एन0वी0पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत

प्राप्त तिथि– 07.07.2016; स्वीकृत तिथि– 29.08.2016

सार

भारत की प्राचीनतम ज्ञात सभ्यता सैन्धव काल से मूर्ति पूजन के साक्ष्य प्राप्त होने लगते हैं। ऋग्वेद में सूर्य के प्राकृतिक स्वरूप की स्तुति दस सूक्तों में की गई है। सूर्य की प्रतिमाओं का निर्माण दूसरी शताब्दी ई0 से होने लगा था जिनका वास्तविक विकास गुप्त काल में देखने को मिलता है। देश के विभिन्न भागों में निर्मित 68 सूर्य मन्दिरों का उल्लेख स्कन्दपुराण में हुआ है। सूर्य प्रतिमाओं के रूप के आधार पर विभिन्न भागों में विभक्त सूर्य मूर्तियाँ उपलब्ध हुई हैं। सभी मूर्तियों की अपनी विशेषतायें हैं।

बीज शब्द– सूर्य, सर्वोच्च आत्मा, सप्ताश्व रथ, अरुण, स्थानक, आसनमूर्ति।

Sun-icons

Anuradha Vinayak
Associate Professor and Head
Department of Ancient History and Archaeology
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India

Abstract

The evidence of icon worship is found in the ancient oldest known civilization of Indus valley. In India, prayers in natures form of Surya in ten Suktas in Rig-Veda. Sculptures of Surya started in second century A.D. and developed significantly in Gupta Period. Skanda-Puran has mentioned about 68 Temples of Sun in different parts of country. On the basis of architecture Sun Icon found in different parts of the country. All Icons have special significance.

Key words- Surya, Sarvoch Atama(Super soul), Saptashva Rath(chariot), Arun, sthanak(standing), Asan(seated icon).

मूलतः धर्म प्रधान देश भारत में मूर्ति पूजन के प्राचीनतम साक्ष्य सैंधवकाल से ही प्राप्त होने लगते है। सम्पूर्ण विश्व की स्थिति एवं सुरक्षा के संचालक सूर्य है।[1] समस्त लोक को प्रकाशवान करने वाले सूर्य है। सूर्य शब्द की व्युत्पत्ति है– "सुवति प्रेरयति कर्मणि लोकम्" अर्थात जो समस्त लोक को कर्म में संलग्न करे वह सूर्य है। सूर्य के रूप के विषय में ऋग्वेद के समय से वर्णन प्राप्त होता है। जिसमें सूर्य को दिव्य सुपर्ण गरूत्मान कहा गया है। ऋग्वेद में सूर्य के प्राकृतिक स्वरूप की स्तुति दस सूक्तों में की गई है। सूर्य को जगत के समस्त जीवों की आत्मा कहा गया है। अथर्ववेद में सूर्य को अदिति का पुत्र बताया गया है।[2] सूर्य को प्रकाश के देवता, बुराइयों से दूर रखने वाला समस्त देवताओं की आत्मा बताया गया है।[3] पुरातात्विक प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सूर्य की आकृति एक गोल चक्र के रूप में सैन्धव सभ्यता के समय में प्राप्त होती है। आहत सिक्कों तथा जनपद और गणराज्यों के सिक्कों पर भी चक्र आकार की आकृति प्राप्त होती है।[4]

वेदोत्तर काल में सूर्य पूजन के विकास का ज्ञान प्राप्त होता है। महाभारत में सूर्य के आदित्य रूप में व्याख्या का विस्तृत विवेचन देखने को मिलता है। इसमें सूर्य के द्वादशादित्यों के नामों का उल्लेख मिलता है–

धाता, मित्र, अर्यमन्, इन्द्र, वरूण, अंश भग, विवस्वान, पूजा, सविता, त्वष्टा, विष्णु।[5]
सूर्य को सर्वोच्च आत्मा और विश्व के सृष्टा के रूप में वर्णित किया गया है।[6]

सूर्य की प्रतिमाओं का निर्माण दूसरी शताब्दी ई0पू0 से होने लगा था जिनका वास्तविक विकास गुप्तकाल में देखने को मिलता है। देश के विभिन्न भागों में निर्मित 68 सूर्य मन्दिरों का उल्लेख स्कन्द पुराण में हुआ है। मध्य युग में सूर्य के प्रतिमा लक्षणों का निर्धारण किया जा चुका था। मध्ययुगीन अभिलेखों में भी सूर्य मन्दिर सम्बन्धी सन्दर्भ उल्लिखित हैं। अपराजितपृच्छा के अनुसार सूर्य की प्रतिमा द्विभुजी, एकमुखी तथा हाथों में श्वेत पद्म धारण किये हैं। उनका वर्ण लाल है तथा लाल वस्त्र धारण किये हो।[7] सूर्य का वाहन सप्ताश्व रथ है। विभिन्न पुराणों में भी सूर्य की विभिन्न विशेषताओं का उल्लेख मिलता है। अरूण सारथी है। दोनों ओर क्रमशः पिंगला तथा दण्डी हैं। बाद में ऊषा और प्रत्यूषा भी विराजमान दिखाई गई है। शास्त्रीय ग्रन्थों में सूर्य प्रतिमाओं के दो रूप मिलते हैं– (1) पारिवारिक, (2) स्थारूढ/डा0 वासुदेव उपाध्याय ने सूर्य प्रतिमाओं के रूप के अधार पर निम्न भागों में विभक्त किया है–

1. स्थानक मूर्तियाँ(खड़ी हुई मूर्तियाँ)
2. आसन मूर्तियाँ(बैठी हुई मूर्तियाँ)
3. बहुभुजी प्रतिमायें
4. दक्षिण भारतीय शैली के आधार पर निर्मित मूर्तियाँ।
5. नवग्रह मूर्तियाँ।
6. प्रतिहार मूर्तियाँ।

1. **स्थानक प्रतिमायें**– इस प्रकार की सूर्य मूर्ति दोहरे कमलासन पर खड़ी है। सिर पर किरीट मुकुट है वनमाला धारण किये है कमरबन्ध इत्यादि विभिन्न आभूषण धारण किये हुये है। सूर्य के अनुचर दंडी पिंगला, ऊषा, प्रत्यूषा अंकित हैं। इस प्रकार की प्रतिमायें मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बंगाल तथा बिहार से प्राप्त हुई हैं। लखनऊ के राज्य संग्रहालय की 9वीं–10वीं शती ई0 की मूर्ति विशेष उल्लेखनीय है। इस मूर्ति में द्विभुजी सूर्य, अरूण सहित सप्ताश्व रथ पर खड़े हैं। उनके हाथों में पूर्ण विकसित कमल तथा जानु से नीचे के पैर रथ में छिपे हुये हैं। वे किरीट मुकुट, कुंडल, हार, यज्ञोपवीत, केयूर, कंकण, मेखला धारण किये हुये हैं, दोनों और हवा में लहराते उत्तरीय का अंकन है। सूर्य के दायीं ओर लेखनी एवं मसिपात्र ग्रहण किये हुये पिंगल की तथा बांयी ओर दण्ड धारी दण्ड की स्थानक आकृति बनी हुई है।(चित्र–1) बर्दवान विश्वविद्यालय के संग्रहालय में संरक्षित मूर्ति बांग्ला देश के दीनाजपुर जिले से प्राप्त हुई है। इसमें भी सूर्य सभी आभूषणों से अलंकृत हैं। उनके चरणों के आगे देवी महाश्वेता खड़ी हैं तथा इनके आगे सारथी अरूण की क्षतिग्रस्त आकृति है।[8] ऊषा, प्रत्यूषा की आसन तथा चार सूर्य पत्नियाँ क्षतिग्रस्त अवस्था में बनी है।(चित्र–2) इसी प्रकार से खजुराहो से प्राप्त खड़ी प्रतिमायें उल्लेखनीय हैं जहाँ सूर्य घाता रूप में निर्मित है। ये मूर्तियाँ खजुराहो के चित्रगुप्त मन्दिर में उत्कीर्ण हैं। इसमें सूर्य त्रिभंग मुद्रा में खड़े हैं।(चित्र–3) उनके ऊपर के हाथों में कमलनाल के रूप में चित्रित पदम है तथा दायाँ वरद मुद्रा में तथा बायाँ हाथ मण्डल से युक्त है। मस्तक पर जटामुकुट प्रदर्शित किया गया है।(चित्र–4) खजुराहो की दोनो मूर्तियाँ उत्तर भारतीय परम्परा में निर्मित हैं। स्थानक मूर्तियों में सूर्य अन्य देवताओं के साथ सम्मलित रूप में दिखाई पड़ता है। इनमें इन्दौर संग्रहालय झालावाड़ संग्रहालय में तथा बिडला संग्रहालय भोपाल में मूर्ति दर्शनीय है।(चित्र–5)

2. **आसन (बैठी हुई) प्रतिमायें**– आसन सूर्य प्रतिमाओं में प्रायः सूर्य अपने घुटने पर बैठे हुये दिखाये गये हैं। आभूषण धारण किये हुये हैं। उनके पीछे प्रभावली बनी हुई है। वे नोकदार मुकुट पहने हुये है। उनकी पत्नियों का भी अंकन साथ में किया गया है। विश्वकर्मशास्त्र में चुतुर्भुजी मूर्ति का उल्लेख है। बैठी हुई मूर्तियाँ बंगाल और सारनाथ से भी प्राप्त हुई हैं।

3. **बहुभुजी प्रतिमायें**– विष्णुधर्मोत्तर पुराण में सूर्य की चार भुजाओं वाली मूर्तियों का उल्लेख प्राप्त होता है। सूर्य के द्वादश रूपों में एक, मित्र को त्रिनेत्र कहा गया है। जिसकी आदित्य मूर्ति चतुर्भुजी है इसमें तीन हैं– पदम, शूल, साम धारण किये हुये बनाये गये हैं।(चित्र–6) इसी प्रकार आदित्य जी की चतुर्भुजी मूर्ति का उल्लेख है जिसमें दो हाथों में पदम एवं अन्य दो हाथों में चक्र और कौमुदी है। इस प्रकार की मूर्तियाँ मध्यप्रदेश और राजस्थान में प्राप्त हुई हैं। विवस्वान् मूर्ति के दो हाथ पदम से युक्त तथा बायां हाथ माला से एवं दाया हाथ त्रिशूल से युक्त बताया गया है। एक–एक उदाहरण नागदी इन्दौर संग्रहालय और अमेरिका के लास एंजिल्स संग्रहालय में उपलब्ध है।

4. **दक्षिण भारतीय शैली में निर्मित प्रतिमायें**– दक्षिण भारत में बनी हुयी मूर्तियों के अंग स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं। यहाँ पर सारथी अरुण नहीं हैं। सिर पर प्रभामण्डल अवश्य है एवं यज्ञोपवीत भी दो हाथों में अर्ध पल्लवित कमल पुष्प है जो कंधों तक उठे हुये हैं।

5. **नवग्रह**– नवग्रह के सामूहिक चित्रण में सूर्य का प्रदर्शन दृष्टव्य है। इसमें सूर्य द्विभुज, पदमहस्त, किरीट मुकुट धारी, सप्ताश्व रथ पर आसीन है।[9] सूर्य प्रतिमायें तोरण द्वारों विभिन्न पट्टों पर देखने को मिलती है।(चित्र–7) चित्तौड़गढ़, अजमेर, खजुराहों, इलाहाबाद, वाराणसी, दिल्ली, कोलकाता आदि के संग्रहालयों में है।(चित्र–8) इस पर अंकित सूर्य प्रतिमायें अन्य ग्यारह आदित्यों के साथ ही बनी हैं। अग्निपुराण में सूर्य नवग्रह मंडल के प्रमुख देव माने जाते हैं–

सूर्यः सोमो मंडलश्च बुद्धश्चाथ बृहस्पतिः।
शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चेत गुहा स्मृता।।

अपराजितपृच्छा और रूपमण्डल में सूर्य की प्रधान मूर्ति का उल्लेख है। जिसमें वे किरीट मुकुट माला, रत्नकुण्डल, केयूर, हार पहने हैं।[10]

6. **प्रतिहार मूर्तियाँ**– सूर्य के अष्ट प्रतिहारों का विवेचन विभिन्न शास्त्रों में मिलता है। प्रतिहार निम्न है– दण्डी, पिंगल, आनन्द, अन्तक, चित्त, विचित्र किरणाक्ष एवं सुलोचन।[11] मूर्तिकला में सूर्य प्रतिहारों के बारह चित्रण खजुराहों के सूर्य मन्दिर चित्रगुप्त मन्दिर में उपलब्ध है। दण्डी एवं पिंगल का अंकन भरतपुर स्थित सत्वास के सूर्य मन्दिर में भी दर्शनीय है।

संदर्भ

1. ऋग्वेद(सायण–भाष्य सहित) सम्पादित वैदिक संशोधन मण्डल(वैदिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट), पूना, 1993, 07/60/2, विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपा।
2. अथर्ववेद 13/2/9, 13/2/37
3. तैत्तरीय संहिता 4/1/7, 1.1.11
4. मार्शल, जे0, मोहनजोदाडो एण्ड द इंडस सिविलाईजेशन, ए.एस.आई.ए.आर., खण्ड–1, पृ0 87।
5. महाभारत, 3.134.19।
6. डी.एच.आई., खजुराहो की देव प्रतिमाएं, पृ0 163, द डेवेलपमेंट ऑफ हिन्दू आइकेनोग्राफी, पृ0 430।
7. अपराजित पृच्छा, 214,17, 19।
8. व्रतखंड अ. पृ0 133– यस्था दक्षिणागतशूलं वामहस्ते सुदर्शनं। भगमूत्ति स्समाख्याता पद्म हस्ता शुभा जयः।।
9. संकालिया, एच0 डी0(1965–66) आरकेयोलॉजी ऑफ गुजरात, पृ0 158–159।
10. अपराजित पृच्छा– पृ0 214, 19
11. अपराजित पृच्छा– पृ0 133–14–15।

चित्रों के विवरण– 1. सूर्य राज्य संग्रहालय लखनऊ, 9वीं–10वी श0ई0।
2. सूर्य दीनाजपुर– बर्दवान विश्वविद्यालय संग्रहालय, बर्दवान–10वीं श0ई0।
3. सूर्य धाता–खजुराहो–मध्ययुग।
4. धातृ सूर्य–खजुराहो–मध्ययुग
5. सूर्य नारायण(सविता) झालरापाटन, झालावाड़ संग्रहालय, 10वीं श0ई0।
6. हरिहर सूर्य–आशापुरी राज्य संग्रहालय, आशापुरी 10–11वीं श0ई0।
7. नवग्रह पट्ट–राजकीय संग्रहालय, कोटा, 10वीं श0ई0
9. नवग्रह पट्ट–सुन्दरवन आशुतोष संग्रहालय कोलकाता–मध्ययुग

चित्र संकलन– डॉ0 पंकजलता श्रीवास्तव(1990) "हिन्दू, जैन तथा बौद्ध प्रतिमा विज्ञान" पुस्तक से।

चित्र– 2 सूर्य, राज्य संग्रहालय, लखनऊ, 9वीं–10वीं श. ई.।

चित्र– 2. सूर्य, दीनाजपुर, वर्द्धमान विश्वविद्यालय संग्रहालय, वर्द्धमान, 10वीं श. ई.।

चित्र–3 धातु–सूर्य (धाता), खजुराहो, मध्ययुग।

चित्र– 4 धातु–सूर्य (धाता), खजुराहो, मध्ययुग।

चित्र– 5 सूर्य–नारायण (सविता), झालरापाटन, झालावाड़ संग्रहालय, 9वीं–10वीं श. ई.।

चित्र– 6 द्वादशादित्य–समूह से युक्त तोरण–द्वार, वन्थली, जूनागढ़ संग्रहालय, 14वीं श. ई.।

चित्र–7 नवग्रह–पट्ट, राजकीय संग्रहालय, कोटा, 10वीं श. ई.।

चित्र– 8 नवग्रह–पट्ट, सुन्दरवन, आशुतोष संग्रहालय, कोलकाता, मध्ययुग।

हल्दीः प्रकृति का अमूल्य औषधीय वरदान

पल्लवी दीक्षित
असिस्टेंट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग
महिला विद्यालय डिग्री कॉलेज, लखनऊ–226018, उ0प्र0, भारत
drpallavidixit80@gmail.com

प्राप्त तिथि– 30.06.2016; स्वीकृत तिथि– 27.09.2016

सार– हल्दी प्रकृति का एक अमूल्य औषधीय वरदान है। अपने अत्यन्त विशिष्ट गुणों के कारण हल्दी को भारत में न केवल मसाले एवं औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है, वरन् धार्मिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। विभिन्न जटिल रोगों के उपचार में हल्दी का प्रयोग किया जाता है। अभी इसके औषधीय गुणों पर और शोध व अध्ययनों की आवश्यकता है, जिससे इसके अन्य नवीन औषधीय गुणों की खोज की जा सके तथा उनका प्रयोग विभिन्न रोगों के उपचार में किया जा सके।

बीज शब्द– हल्दी, औषधीय गुण।

Haldi: a precious medicinal boon of nature

Pallavi Dixit
Assistant Professor, Deptt. Of Botany
Mahila Vidyalaya Degree College, Lucknow
drpallavidixit80@gmail.com

Abstract- Haldi is a precious medicinal boon of nature. Due to its excellent properties it has been not only used as spice but also used as medicine. It is also considered as auspicious and is a important part of Indian religious rituals. Some further evaluation needs to be carried out on turmeric in order to explore the concealed areas and their practical clinical applications which can use for the welfare of mankind.

Key words- Turmeric(Haldi), medicinal boon.

हल्दी एक प्रमुख भारतीय औषधि है। अपने अत्यन्त विशिष्ट गुणों के कारण हल्दी को न केवल औषधि के रूप में, वरन् धार्मिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण माना गया है। इसका पौधा 5 से 6 फुट तक बढ़ने वाला होता है, जिसकी जड़ों की गाठों से हल्दी मिलती है। औषधि–ग्रन्थों में इसे हल्दी के अतिरिक्त हरिद्रा, कुरकुमा, लौंगा, वरवर्णिनी, गौरी, क्रिमिघ्ना, योशितप्रिया, हरदल, टर्मरिक आदि नाम दिये गये हैं। भारत वर्ष में हल्दी को न केवल एक प्रमुख मसाले के रूप में प्रयोग किया जाता है, वरन् अपने अद्वितीय औषधीय गुणों के कारण एक प्रमुख प्राकृतिक औषधि के रूप में तथा भारतीय धार्मिक एवं सांस्कृतिक अवसरों पर भी इसका प्रयोग किया जाता है। हल्दी का लेटिन नाम– कुरकुमा लौंगा, अंग्रेजी नाम– टरमरिक व पारिवारिक नाम– जिन्जीबेरेसी है। इसमें उड़नशील तेल 5.8%, प्रोटीन 6.3%, द्रव्य 5.1%, खनिज द्रव्य 3.5%, और कार्बोहाइड्रेट 68.4%, के अतिरिक्त कुर्कमिन नामक पीतरंजक द्रव्य व विटामिन ए पाया जाता है।

हल्दी के प्रमुख औषधीय गुण

1. **ऑक्सीकरणरोधी गुण–** हल्दी के इस गुण की खोज सन् 1975 के प्रारम्भ में ही कर ली गयी थी। यह हीमोग्लोबिन की ऑक्सीडेशन से रक्षा करती है।[1,2]

2. **कृमिनाशक गुण–** हल्दी को कृमिहारा या कृमिनाशक(एन्टीथेलमिन्टिक) भी कहा जाता है। टरमरिक के जूस में कृमिनाशक गुण होता है। नेपाल के ग्रामीण इलाकों में टरमरिक पाउडर या पेस्ट को पानी में थोड़ा सा नमक डालकर उबालते हैं तथा इस जूस को कृमिनाशक औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है।[3]

3. **हड्डियों के रोग को दूर करने में सहायक**– हड्डियों के विभिन्न रोग, गठिया, वात दूर करने में भी हल्दी अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। रोजाना हल्दी मिश्रित दूध पीने से शरीर को पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम मिलता है। यह ऑस्टियोपोरोसिस के मरीजों को राहत पहुँचाता है। रियूमेटॉइड गठिया के कारण उत्पन्न सूजन के उपचार में भी हल्दी का प्रयोग किया जाता है।

4. **मधुमेह के उपचार में**– कच्ची हल्दी में इन्सुलिन के स्तर को संतुलित करने का गुण होता है। अतः यह मधुमेह के रोगी के लिए अत्यन्त लाभप्रद है। इंसुलिन के अलावा यह ग्लूकोज के स्तर को भी नियन्त्रित करता है।[4]

5. **श्वसन सम्बन्धी रोगों के उपचार में**– हल्दी को कफहारा, औषधि माना जाता है। हल्दी के ताजे राइजोम को कुकर खांसी(व्हूपिंग कफ) के उपचार में प्रयोग किया जाता है।[5] इसमें उपस्थित वोलाटाइल ऑयल ब्रांकियल अस्थमा के उपचार में भी अत्यन्त उपयोगी होते हैं।

6. **कैन्सररोधी गुण**– कच्ची हल्दी में कैंसर से लड़ने के गुण होते हैं। यह पुरूषों में होने वाले प्रोस्टेट कैंसर की कैंसर कोशिकाओं को बढ़ने से रोकने के साथ–साथ उन्हें समाप्त भी करती है। हल्दी में उपस्थित तत्व कैंसर कोशिकाओं से डी.एन.ए. को होने वाले नुकसान को रोकते हैं व कीमोथेरेपी के दुष्प्रभावों को भी कम करते हैं।[6,7]

7. **वैक्टीरियारोधी, फंगसरोधी व सूक्ष्मजीवी रोधी गुण–** अनेक शोधों से यह प्रमाणित हो चुका है कि टरमरिक अनेक प्रकार के वैक्टीरिया, पैथोजेनिक फंजाई एवं पैरासाइट्स की वृद्धि को रोकती है।[8]

8. **फोटोप्रोटेक्टर गुण**– यह गुण टरमरिक में ऑक्सीकरणरोधी गुण के कारण होता है। प्रयोगशालीय अध्ययनों से यह प्रमाणित हो चुका है कि टरमरिक सांद्र सूर्य से निकलने वाली अल्ट्रावॉयलट– बीटा किरणों से त्वचा को होने वाली हानि व सूजन की रोकथाम में काफी प्रभावशाली सिद्ध हुआ है। गामा–किरणों से होने वाली गुणसूत्रीय हानि के बचाव में भी हल्दी काफी लाभप्रद सिद्ध हुई है।[9]

9. **पाचन–सम्बन्धी गुण**– भारत में प्राचीन काल से हल्दी का प्रयोग दैनिक जीवन में मसाले के रूप में किया जाता रहा है। यह पाचन शक्ति को बढ़ाता है तथा पेट में गैस गठन को भी रोकता है।[10]

10. **मूत्रीय विकार**– अनेक नवीन शोधों व अध्ययनों से यह स्पष्ट व प्रमाणित किया जा चुका है कि कुरकूमिन का प्रयोग मूत्रीय विकारों के उपचार में किया जाता है। विभिन्न मूत्रीय संक्रमणों में टरमरिक राइजोम का प्रयोग किया जाता है। *कुरकूमिन* तथा *कुरकूमिनॉइड्स* का प्रयोग किडनी की पथरी के उपचार में भी किया जाता है।[11]

11. **रंगरूप वर्धक गुण**– प्राचीन काल से ही भारतीय महिलाओं के द्वारा हल्दी का प्रयोग त्वचा की रंगत के निखार के लिए किया जाता रहा है। वे हल्दी व चन्दन का पेस्ट बनाकर त्वचा पर लगाती थी, जिससे त्वचा में निखार आता है। अपने इसी गुण के कारण भारतीय वैवाहिक समारोहों में भी वर–वधू के सौन्दर्य को निखारने के लिए हल्दी का लेप लगाया जाता है व इसके औषधीय गुण त्वचा सम्बन्धी रोगों को भी दूर करते हैं। हल्दी के लिए संस्कृत भाषा में अनेक नाम प्रयोग होते हैं– वर्णदात्री, हेमरागिनी, हृदयविलासिनी इत्यादि जो कि इसके रूपरंग वर्धक गुण की पुष्टि करते हैं।

उपर्युक्त के अतिरिक्त हल्दी का प्रयोग विभिन्न दांत, नेत्र सम्बन्धी रोग व एनीमिया के उपचार में, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में भी किया जाता है। यह वात, कफ शामक, पित्तरेचक है। रक्त स्तम्भन, मूत्र रोग, त्वचा रोग आदि में इसका प्रयोग अत्यन्त लाभप्रद होता है। यकृत की वृद्धि में भी हल्दी का लेप लगाया जाता है।[12] अनुभूत आयुर्वेद वर्णन में हल्दी गांठों को चूने के साथ पकाकर, तत्पश्चात् सूखने पर चूर्ण बनाकर उपयोग करने से शरीर पुष्ट होता है। हल्दी वास्तव में प्रकृति का एक चमत्कारिक औषधीय वरदान है। हल्दी पर अभी और शोध अध्ययनों की जरूरत है जिससे इसके और नवीन औषधीय गुणों की जानकारी प्राप्त की जा सके तथा उनके प्रयोग विभिन्न रोगों के निवारण में किया जा सके। हल्दी न केवल हमारी रसोई की शान है, वरन् औषधीय व आध्यात्मिक रूप से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि हमारे भारतीय समाज में प्राचीन काल से लेकर आज तक हल्दी का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है।

सन्दर्भ

1. शर्मा ओ0 पी0(1976) एन्टीऑक्सीडेन्ट एक्टीविटी ऑफ कुरकूमिन एण्ड रिलेटिड कम्पाउण्ड बायोकेम फॉर्माकोल, खण्ड–25, मु0पृ0 1811–1812।
2. रूबी ए0 जे0; कुट्टन, जी0 दिनेश; राजशेखरन, के0 एन0 एवं कुट्टन, आर0(1995) एन्टीट्यूमर एण्ड एन्टीऑक्सीडेन्ट एक्टीविटी ऑफ नेचुरल कुरकूमिनॉइड्स कैंसन लिट, खण्ड–94, मु0पृ0 79–83।
3. नदकारनी के0 एम0(1976) इण्डियन मेटीरिआ मेडिका, 1.3 एडीशन, पॉपुलर प्रकाशन, बॉम्बे।
4. प्रशान्ती, डी जागर(2003) टरमरिकः द आयुर्वेदिक स्पाइस ऑफ द लाइफ।
5. नदकारनी के0 एम0(1976) इण्डियन मेटीरिआ मेडिका, 1.3 एडीशन, पॉपुलर प्रकाशन, बॉम्बे।
6. राव, सी0 वी0; रिवरसन, ए0; सिमी, वी0 एवं रेड्डी, बी0 एस0(1995) कीमोप्रीवेन्शन ऑफ कोलोन कारसीनोजेनेसिस बाइ डाइटरी कुरकूमिनः ए नेचुरली ऑकरिंग प्लॉट फीनालिक कम्पाउण्ड, कैसन रेस, खण्ड–55, मु0पृ0 259–66।
7. शिपट्ज, बी0; गिलादी, एन0; सागिव ई0; ली–एरी एस0; लिवरमेन ई0, कोजोनोव, डी0 एवं अन्य(2006) सीलीकोसिव एंड कुरकूमिन एडीटिविली इनहिबिट द ग्रोथ ऑफ कोलेस्ट्रॉल कैंसर इन रेट मॉडल, डाइजेशन, खण्ड–74, मु0पृ0 140–4।
8. भवानी शंकर, टी0 एन0 एवं श्रीनिवासा, मूर्ति. वी0(1979) इफेक्ट ऑफ टरमरिक(कुरकूमा लौंगा) फैक्शन ऑन द ग्रोथ ऑफ सम इनटेसटाईनल एण्ड पैथोजेनिक बैक्टीरिया इन विट्रो, इण्डियन जे0 एम्स0 वाओल, खण्ड–17, मु0पृ0 1363–1366।
9. खाजेहडेही, पी0(2012) टरमरिक, रीमर्जिंग ऑफ ए निगलेक्टेड, एशियन ट्रेडिशनल रेमेडी, जे. नेफरोपेथोल, खण्ड–1, अंक–1, मु0पृ0 17–22।
10. डुग्गी, श्री शैल; हेनड्रल, हरीश के0; हेन्ड्रल रविचन्द्रा; तुलसिआनन्द, जी0 एवं एस0डी0 श्रुथी(2013) टरमरिकःनेचुरल प्रेसीयस मेडिसिनः एशियन जर्नल ऑफ फार्माक्यिूटिकल एण्ड क्लीनिकल रिसर्च, खण्ड–6, अंक–3।
11. कोलम्मल, एम0(2005) फार्माकोग्नोसी ऑफ आयुर्वेदिक ड्रग्स, त्रिवेन्द्रम, फार्माकोग्नोसी यूनिट, गवर्नमेन्ट आयुर्वेद कालेज, 1979.
12. रामाडेनी, आर0 एवं रविन्द्रन पी0 एन0(2005) टरमरिकः मिथ्स एण्ड ट्रेडीशन्स स्पाइस इण्डिया, खण्ड–18, अंक–8, मु0पृ0 11–17।

न्यूट्रिनों दोलन

मीता साह
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, भौतिक शास्त्र विभाग
श्री जय नारायण पोस्ट ग्रेज्युएट कॉलेज
लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
meetasah16pangtey@gmail.com

प्राप्त तिथि–30.06.2016; स्वीकृत तिथि–30.08.2016

सार– सौर ऊर्जा की उत्पत्ति ऐसी नाभिकीय प्रक्रिया से होती है जिसमें हाइड्रोजन नाभिकों के विलय के द्वारा हीलियम नाभिक का निर्माण होता है तथा ऊर्जा के साथ ही पॉजिट्रॉन तथा न्यूट्रिनों उत्सर्जित होते हैं। वैज्ञानिकों ने इन न्यूट्रिनों को अवशोषित कर तथा उनकी गणना करके ब्रह्माण्ड तथा मूल कणों की कई रहस्यमयी परतों को खोला है। न्यूट्रिनों एस्ट्रोनॉमी में किये गये गहन शोध कार्यों द्वारा न्यूट्रिनों की तीन अवस्थाओं के बारे में जानकारी प्राप्त हुई है।

बीज शब्द– न्यूट्रिनो, सौर ऊर्जा, इलेक्ट्रॉन न्यूट्रिनो, टाऊ न्यूट्रिनो, म्यूऑन न्यूट्रिनो।

Neutrino oscillations

Meeta Sah
Associate Professor and Head, Department of Physics
Sri J. N. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
meetasah16pangtey@gmail.com

Abstract- The source of solar energy is such a nuclear process in which hydrogen nuclei fuse together to form Helium nucleus. In this process, energy is released along with positrons and neutrino. Scientists have absorbed and counted these neutrons thereby revealing many hidden mysteries of the universe and fundamental particles. Research work done in the field of Neutrino Astronomy has given information about three states of neutrino.

Key words- Neutrino, solar energy, electron neutrino, tau neutrino, muon neutrino.

भौतिक शास्त्र के लिए वर्ष 2015 का नोबेल पुरस्कार तकाकी कजिता(टोक्यो यूनिवर्सिटी) और आर्थर बी0 मैक्डोनाल्ड (क्वीन्स यूनिवर्सिटी, कनाडा) को संयुक्त रूप से न्यूट्रिनों दोलनों पर उनके शोध कार्य के लिए दिया गया। प्रो0 कजिता[1] ने 1998 में अपने शोध पत्र में इस बात को प्रस्तुत किया कि न्यूट्रिनों अपनी पहचान को अपने ही तीन अपरूपों में बदल सकता है। ये अपरूप हैं– इलेक्ट्रान न्यूट्रिनों, म्यूऑन न्यूट्रिनों तथा टाऊ न्यूट्रिनों। यह शोध कार्य तकाकी कजिता व उनके सहयोगियों द्वारा जापान स्थित भूमिगत सुपर कामिकान्डे डिटेक्टर में न्यूट्रिनों के व्यवहार को समझने के लिए किया गया। इस शोध के पश्चात् कजिता इस परिणाम में पहुंचे कि सूर्य में विलय प्रक्रिया के पश्चात् उत्पन्न न्यूट्रिनों वातावरण में अपनी यात्रा के दौरान अपने अलग–अलग रूपों में स्वयं को बदलते रहते हैं। प्रो0 मैक्डोनाल्ड और उनके शोध ग्रुप ने वर्ष 2001 में ऑन्टेरियो, कनाडा में अपने शोध पत्र में एक प्रयोग के परिणाम घोषित किये जिसमें सूर्य से धरती की सतह तक वातावरण को पार कर आने वाले न्यूट्रिनों को अवशोषित कर उनकी गणना तथा विवेचना की गई थी यह प्रयोग सडबरी न्यूट्रिनों ऑब्जरवेटरी[2] में धरती की सतह से 2 कि0मी0 नीचे किया गया। इसमें एक गोलाकार टैंक में हैवी वाटर लिया गया था जिसका प्रयोग न्यूट्रिनों को अवशोषित कर उनकी गणना करने के लिए किया गया था। मैक्डोनाल्ड और उनके सहयोगियों ने इस बात को दर्शाया कि प्रयोगात्मक रूप से प्राप्त न्यूट्रिनों की संख्या उस संख्या का एक तिहाई है जिसकी गणना सूर्य में चलने वाली विलय प्रक्रिया के आधार पर की गयी थी। इस शोध पत्र में बताया गया कि सूर्य से धरती की सतह तक आने वाले न्यूट्रिनों की संख्या का कम होना उनका उन विभिन्न अपरूपों में बदलना है जिन अपरूपों को प्रयोगों में गणना में शामिल नहीं किया गया या अन्य शब्दों में डिटेक्ट नहीं किया गया।

प्रो0 कजिता तथा प्रो0 मैक्डोनाल्ड द्वारा किये गये कार्य इस बात को प्रमाणित करते हैं कि चूँकि न्यूट्रिनों अपनी पहचान बदलने में सक्षम हैं अतः अनिवार्य रूप से उनका कुछ द्रव्यमान अवश्य होगा। इस आविष्कार ने वैज्ञानिकों की इस अवधारणा को गलत सिद्ध कर दिया है कि न्यूट्रिनों द्रव्यमान रहित इकाई है इस खोज के साथ ही पदार्थ की संरचना तथा ब्रम्हाण्ड की उत्पत्ति के बारे में वैज्ञानिक सोच काफी हद तक बदल जायेगी।

इसी क्रम में इस बात का संज्ञान अप्रासंगिक नहीं होगा कि सन् 2002 में भौतिक शास्त्र के लिए नोबेल पुरस्कार धरती पर आने वाले ब्रम्हाण्डीय न्यूट्रिनों की गणना के लिए दिया गया था। न्यूट्रिनों को एक काल्पनिक इकाई के रूप में मान्यता 1930 में वुल्फगैंग पॉली[3] ने दी थी। जिसे इन्रिको फर्मी ने न्यूट्रिनों(छोटा और तटस्थ) नाम दिया है। 1956 में फ्रेडरिक रेन्स तथा क्लाइड एल0 कोवान ने एक वृहद उपकरण नाभिकीय रियेक्टर के समीप लगाकर एन्टीन्यूट्रिनों को प्राप्त करने में सफलता हासिल की। एडिन्कटन ने 1920 में तथा बीसवीं सदी के चौथे दशक के उत्तरार्ध में हैनस ए0 बैथे(कॉरनैल यूनिवर्सिटी) ने इस बात को विज्ञान जगत के सामने रखा कि सौर ऊर्जा की उत्पत्ति नाभिकीय प्रक्रिया से होती है तथा सूर्य इस समय नाभिकीय प्रक्रिया के प्रथम चरण में है। इस चरण में चार हाइड्रोजन नाभिक(प्रोटॉन) विलय के द्वारा हीलियम नाभिक बनाते हैं। इस प्रक्रिया में हीलियम नाभिक के साथ ही दो पॉजिट्रान, लगभग 25 MeV ऊर्जा तथा दो न्यूट्रिनों उत्सर्जित होते हैं। दो अमेरिकी वैज्ञानिक रेमंड डेविस[4] तथा जॉन बाहकाल इस उत्सर्जित न्यूट्रिनों को प्राप्त कर तथा उनकी गणना कर इस बात को प्रमाणित करना चाहते थे कि सूर्य से उत्सर्जित ऊर्जा का स्रोत विलय प्रक्रिया ही है। परन्तु इस कार्य में सबसे बड़ी बाधा न्यूट्रिनों का गैर प्रतिक्रियाशील होता है। यह किसी भी प्रकार के पदार्थ को प्रभावित करने या उनके साथ क्रिया करने में नगण्य दिलचस्पी दिखाते हैं। अतः इनका विश्लेषण व गणना एक जटिल प्रक्रिया बन गई। करोड़ों की संख्या में न्यूट्रिनों हमारे आस–पास से गुजरते हैं परन्तु हमें उनकी उपस्थिति का कोई आभास नहीं होता है।

न्यूट्रिनों को प्राप्त करने के लिए रेमंड और वाहकाल ने एक वृहद टैक बनाया जिसमें 4,55,000 लीटर टेट्रा क्लोरोईथाईलीन भरा गया। न्यूट्रिनों इस द्रव में उपस्थिति क्लोरीन के एक विशिष्ट आइसोटोप से क्रिया कर उसे रेडियोधर्मी ऑर्गन में बदल देता है तीस वर्षों के लंबे अंतराल के पश्चात् लगभग 2000 न्यूट्रिनों ने क्लोरीन से क्रिया कर उसे रेडियो धर्मी ऑर्गन में बदल दिया। इस प्रकार रेमंड डेविस इस बात को सिद्ध करने में सफल हुए कि सूर्य से ऊर्जा विलय प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप उत्सर्जित होती है तथा इसी प्रक्रिया में न्यूट्रिनों भी निकलते हैं। 23 फरवरी 1987 को मासातोशी कोशिबा और उनके सहयोगियों ने भी एक दूरस्थ सुपरनोवा से आनेवाले न्यूट्रिनों का पता लगाया। इस प्रकार डेविस और कोशिबा की इस खोज ने एक नये व गहन शोध कार्य का मार्ग प्रशस्त कर दिया। भौतिक शास्त्र की इस नई शाखा को न्यूट्रिनों एस्ट्रोनॉमी कहा जा सकता है इस महत्वपूर्ण खोज के लिए प्रो0 रेमण्ड डेविस तथा मासातोशी कोशिबा को 2002 में भौतिक शास्त्र में नोबेल पुरस्कार दिया गया। यह प्रयोग और इसके निष्कर्ष भौतिक शास्त्र के लिए एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। वैज्ञानिकों ने और न्यूट्रिनों को पहचान कर ब्रह्मांड के अवयवों को जानने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बढ़ाया, परन्तु इस खोज ने भौतिक शास्त्रियों के मन में चिंता का बीज भी बो दिया। अवशोषित न्यूट्रिनों की संख्या उस संख्या की केवल एक तिहाई हिस्सा थी जिसका वैज्ञानिकों ने अपनी गणनाओं में अनुमान लगाया था। वैज्ञनिकों की यह चिन्ता निराधार नहीं थी, क्योंकि यदि न्यूट्रिनों की संख्या तिहाई रह गई है इसका अर्थ है कि नाभिकीय प्रक्रिया जो सूर्य के अन्दर चल रही है तथा न्यूट्रिनों के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है, वह भी अपने पूर्व स्तर से एक तिहाई रह गई है। इसका सीधा परिणाम यह होगा कि हमारी धरती एक असामयिक अंत की ओर अग्रसर हो रही है और इसका कारण होगा सौर ऊर्जा का लगातार क्षय। वैज्ञानिकों को इस त्रासदी में उम्मीद की एक ही किरण नज़र आ रही थी कि कही न्यूट्रिनों के व्यवहार या उनकी गणना में कोई पहलू ऐसा तो नहीं रह गया है जो उनकी गणनाओं में या अवलोकन में अछूता रह गया हो।

जैसा कि इस लेख में पहले भी उल्लेख किया है कि न्यूट्रिनों को बहुत वर्षों तक द्रव्यमान रहित इकाई माना जाता था। परन्तु यदि न्यूट्रिनों के पास द्रव्यमान हो तो इस बात की संभावना हो जाती है कि वह अपने विभिन्न अपरूपों के बीच अपनी पहचान बदलता रहे तथा संभवतः रेमण्ड डेविस तथा अन्य वैज्ञानिकों ने जिन न्यूट्रिनों को अपने प्रयोग में प्राप्त कर उनकी गणना की थी वह पूरी संख्या का केवल एक हिस्सा मात्र हो। क्या इस तरह की अवधारणा सत्य हो सकती है तथा केवल एक तिहाई न्यूट्रिनों पाये जाने की व्याख्या इस आधार पर की जा सकती है कि सूर्य से आने वाले न्यूट्रिनों तीन अलग–अलग अवस्थाओं के बीच दोलन करते रहते हैं। वैज्ञानिकों की यह अवधारणा सत्य सिद्ध हुई जब कजिता और मैकडोनाल्ड ने शोध पत्रों के माध्यम से घोषणा की कि न्यूट्रिनों अपनी पहचान तीन अवस्थाओं इलेक्ट्रॉन न्यूट्रिनों, टाऊ न्यूट्रिनों तथा म्यूऑन न्यूट्रिनों के बीच बदलते रहते हैं। कजिता अपने इस शोध की महत्ता बताते हुए कहते हैं कि उनका कार्य भौतिक शास्त्र की एक नयी शाखा को जन्म देगा जो कि मौलिक कणों के स्टैण्डर्ड मॉडल से भिन्न होगा। स्टैण्डर्ड मॉडल में लैपटॉन संख्या संरक्षित रहती है, न्यूट्रिनों द्रव्यमान रहित है तथा न्यूट्रिनों विभिन्न प्रकारों में परिवर्तित नहीं हो सकता है। अतः यह नये शोध कार्य पदार्थ और ब्रम्हाण्ड के विश्लेषण में स्टैण्डर्ड मॉडल से परे कई नये आयामों को जन्म देंगे। न्यूट्रिनों दोलनों की अवधारणा बहुत समय पहले वैज्ञानिकों के शोध कार्य का हिस्सा रही है। 1957 में पॉन्टेकोरवो[5] ने सुझाव दिया कि ν–ν का पारपरिक परिवर्तन संभव है। सन् 1962 में ν_μ की खोज के पश्चात् जेड माकी, एम0 नाकागावा तथा एस सकाटा[6] ने इस बात की संभावना व्यक्त की थी कि न्यूट्रिनों की दो अवस्थाएं न्यूट्रिनों की आइगम स्टेट का मिश्रण हो सकती है। वातावरण में न्यूट्रिनों दोलनों के बारे में कहा जा सकता है कि जिन न्यूट्रिनों की संख्या के आधार पर वैज्ञानिक चिंतित थे वह केवल इलेक्ट्रॉन न्यूट्रिनों थे जिन्हें प्रयोगशाला में डिटेक्ट किया गया था यह संख्या कुल संख्या की मात्र एक तिहाई थी। दो तिहाई न्यूट्रिनों, म्यूऑन न्यूट्रिनों तथा टाऊ न्यूट्रिनों अवस्थाओं के बीच दोलन करते रहते हैं।

न्यूट्रिनों के व्यवहार को जानना व समझना मौलिक कण भौतिकी ही नहीं बल्कि खगोल भौतिकी तथा ब्रम्हाण्ड विज्ञान के लिए भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वैज्ञानिक उन प्रक्रिया या उन कारणों का पता लगाने में प्रयासरत हैं जो न्यूट्रिनों को

द्रव्यमान प्रदान करने के लिए उत्तरदायी हैं। यद्यपि न्यूट्रिनों के दो अपरूपों के बीच का द्रव्यमान अंतर उच्च परिशुद्धता के साथ निर्धारित कर लिया गया है परन्तु पृथक रूप से न्यूट्रिनों का द्रव्यमान अभी तक संतोषजनक रूप से निर्धारित नहीं हो पाया है इन नई खोजों से ब्रम्हाण्ड की रहस्यमयी परतें किस सीमा तक खुलेंगी यह कई प्रश्न भविष्य में निहित है।

संदर्भ

1. फुकुदा, वाई0 एवं अन्य(सुपर–कैमिओकांडे कोलेबोरेशन)(24 अगस्त, 1998) एविडेंन्स फॉर ऑसिलेशंस ऑफ एट्मॉसफेयर न्यूट्रिनोस, फिजिकल रिव्यू लेटर्स, खण्ड–81, पृ0 1562।
2. अहमद, क्यू0 आर0 एवं अन्य(एस.एन.ओ. कोलैबोरेशन)(13 अगस्त, 2001) मेजरमेंट ऑफ द रेट ऑफ $\nu_e+d \rightarrow p+p+e^-$ इंटरेक्शन प्रोड्यूस्ड बाय 8_B सोलर न्यूट्रिनोज एट द सडबुरी न्यूट्रिनो ऑब्जर्वेटरी, फिजिकल रिव्यू लेटर्स, खण्ड–87, पृ0 071301।
3. पॉली, डब्ल्यू0(1930) लेटर टू द "रेडियो एक्टिव्स" इन टयूबिंजेन।
4. डेविस, आर0 जूनियर; हार्मर, डी0 एस0 एवं हॉफमॉ, के0 सी0(1968) फिजिकल रिव्यू लेटर्स, खण्ड–20, पृ0 1205।
5. पॉन्टीकॉर्वो, बी0(1957) सोवियत फिजिक्स, जे0ई0टी0पी0, खण्ड–6, पृ0 429।
6. माकी, जेड0; नाकागावा, एम0 एवं सकाता, एस0(1962) प्रोगरेस इन थियोरेटिकल फिजिक्स, खण्ड–28, पृ0 870।

ग्रीन हाउस प्रभावः एक वैश्विक समस्या

निरंजनी चौरसिया
एसोसिएट प्रोफेसर, रसायन शास्त्र विभाग
श्री जयनारायण स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
dr.niranjanichaurasia19@gmail.com

प्राप्त तिथि– 04.07.2016; स्वीकृत तिथि– 17.08.2016

सार– पृथ्वी की प्राकृतिक जलवायु निरन्तर बदलती रही है। ग्रीन हाउस प्रभाव के द्वारा पृथ्वी की सतह गर्म हो रही है। ग्रीन हाउस प्रभाव सूर्य की किरणें कुछ गैसों और वायुमण्डल में उपस्थित कुछ कणों से मिलकर होने की जटिल प्रक्रिया है। कुछ सूर्य की ऊष्मा वायुमण्डल से परावर्तित होकर बाहर चली जाती है लेकिन कुछ ग्रीन हाउस गैसों के द्वारा बनाई हुई परत के कारण बाहर नहीं जाती है। अतः पृथ्वी का निम्न वायुमंडल गर्म हो जाता है। ग्रीन हाउस प्रभाव एक प्राकृतिक प्रक्रिया है तथा यह जीवन को प्रभावित करती है। ग्रीन हाउस प्रभाव के बिना पृथ्वी का औसत तापमान वर्तमान सामान्य औसत तापमान 15^0से0ग्रे0 के स्थानपर–18^0से0ग्रे0 होगा। फिर भी वायुमंडल में ग्रीन हाउस गैसों जैसे CO_2, CH_4, N_20, O_3 और जलवाष्प तथा हैलोकार्बन की बढ़ी हुई मात्रा समस्या उत्पन्न करती हैं।

बीज शब्द– वायुमण्डलीय ग्रीन हाउस गैसें, ग्रीन हाउस प्रभाव, हैलोकार्बन।

Green House effect: a global problem

Niranjani Chaurasia
Assistant Professor, Department of Chemistry
Sri J.N.P.G. College, Lucknow-226001, U.P. India
dr.niranjanichaurasia19@gmail.com

Abstract- The earth's natural climate has always been and still constantly changing. Greenhouse effect is warming of the surface of the earth by a complex process involving sunlight, trace gases and particles in the atmosphere. Some of the heat energy escapes to the space but much of it is trapped by the layers of atmospheric greenhouse gases to outer space and get absorbed. Thus the earth's lower atmosphere heats up. The greenhouse effect is a natural phenomenon and vital to life. Without the greenhouse effect the earth's average temperature would be -18^0C, instead of current average temperature of 15^0C. However, problem arise when the atmospheric concentration of greenhouse gases such as CO_2, CH_4, N_2O, O_3, halocarbons and water vapour increases.

Key words- Atmospheric, Green House Gases, Green House Effect, Halocarbons.

ऊर्जा के मुख्य स्रोत हैं– 1. विकिरण ऊर्जा(सौर ऊर्जा), 2. उष्मीय ऊर्जा, 3. रासायनिक ऊर्जा(कार्बनिक यौगिकों के बन्ध), 4. यांत्रिक ऊर्जा(दो प्रकार स्थैतिक ऊर्जा(संचित ऊर्जा) और गतिज ऊर्जा(उपयोगी ऊर्जा)। सूर्य पृथ्वी पर जीवों के लिए सभी प्रकार के ऊर्जा का स्रोत है। सूर्य में नाभिकीय संलयन के द्वारा बहुत अधिक मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती है। जो सभी दिशाओं में विद्युत चुम्बकीय तरंगों के रूप में विकृत होती हैं। जो कि सौर विकरण कहलाती हैं। इसमें बहुत कम भाग पृथ्वी के वायुमंडल तक पहुँचता है। विकरण ऊर्जा की दृश्य सीमा की तरंग दैर्ध्य 390एन.एम. से 720एन.एम. होती है। हम सूर्य से विद्युत चुम्बकीय विकरण के द्वारा 1,73000 $X10^{12}$ वाट ऊर्जा प्राप्त करते हैं। जिसमें से

30%	विकिरण ब्रह्माण्ड(स्पेस) में परावर्तित हो जाता है।
23%	विकिरण जल चक्र में जल वाष्प और नमी में प्रयोग हो जाता है।
47%	विकिरण वायुमंडल, पृथ्वी तथा समुद्र के द्वारा अवशोषित होता है।
1%	से कम विकिरण हवा तथा वायु प्रवाह में प्रयोग होता है।
केवल लगभग 0.01% विकिरण प्रकाश संश्लेषण में प्रयोग होता है।	

ग्रीन हाउस प्रभाव; सामान्य धारणा– ग्रीन हाउस प्रभाव वह प्रभाव है जिसमें वायुमंडल में उपस्थित सूर्य प्रकाश विकिरण गैसों तथा कणों की जटिल क्रियाओं के द्वारा पृथ्वी की सतह तथा निम्न वायुमंडल गर्म हो जाता है। जब निम्न तरंग दैर्ध्य के विकरण यू.वी. 320–390एन.एम., दृश्य स्पेक्ट्रम तथा कुछ निम्न इंफ्रारेड) सूर्य से पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करते हैं तो इसका तीसरा भाग ब्रह्माण्ड में परावर्तित हो जाता है तथा बचे हुए भाग में कुछ वायुमंडल के द्वारा अवशोषित हो जाता है तथा कुछ पृथ्वी की सतह के द्वारा अवशोषित हो जाता है।(पृथ्वी उच्च तरंग दैर्ध्य के विद्युत चुम्बकीय विकरण निर्गत करती है। यहाँ पृथ्वी एक ब्लैक बॉडी की तरह कार्य करती है। जो एक अच्छा विकरक भी है।) कुछ ऊष्मीय ऊर्जा ब्रह्माण्ड से परावर्तित न होकर वायुमण्डल में उपस्थित ग्रीन हाउस गैसों के द्वारा अवशोषित हो जाती है जिससे पृथ्वी का वायुमंडल गर्म हो जाता है। यही सामान्य ग्रीन हाउस प्रभाव है।

ग्रीन हाउस प्रभाव का लाभदायक पहलू– सामान्यतः ग्रीन हाउस के बिना पृथ्वी का औसत तापमान– 18^0से0ग्रे0 होगा जो कि वर्तमान में 15^0से0ग्रे0 है, जिससे सामान्य जीवन संभव नहीं है। पृथ्वी का तापमान सामान्य बनाए रखने का श्रेय ग्रीन हाउस गैसों को है। इनकी मात्रा बढ़ने पर समस्या भी उत्पन्न होती है।

ग्रीन हाउस प्रभाव–नामकरण

ग्रीन हाउस या ग्लास हाउस का प्रयोग ठण्डे देशों में जहाँ वाह्य तापमान अत्यधिक कम होता है। आंतरिक वायुमण्डल को गर्म रखने के लिए किया जाता है। इन ग्रीन हाउसों में सूर्य की रोशनी पारदर्शी कांच के द्वारा आती है। प्रतिवर्तित उष्मा या रक्त विकरण आर पार नहीं हो पाते हैं। क्योंकि रक्त विकरण का कुछ विशिष्ट भाग कांच के द्वारा अवशोषित हो जाता है। इससे ग्रीन हाउस की आंतरिक सतह गर्म रहती है। जो कि पौधों तथा अन्य सामानों के लिए उपयोगी होती है। प्राकृतिक ग्रीन हाउस प्रभाव वायुमंडल के मानक पर यह है कि ग्रीन हाउस और ग्रीन हाउस गैसें ग्रीन हाउस के ग्लास कवच की तरह हैं।

ग्रीन हाउस गैसों के स्रोत–

कार्बन डाई ऑक्साइड (CO_2)	यह मुख्य ग्रीन हाउस गैस है। इसके मुख्य स्रोत कोयले का दहन, वनों का कटान, सीमेंट उद्योग।
मेथेन (CH_4)	यह दूसरी सबसे महत्वपूर्ण ग्रीन हाउस गैस है। इसके मुख्य स्रोत– ऑक्सीजन, जीवाणुओं की प्रक्रिया, आंतरिक कोयला खदानों में।
नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O)	यह गैस ग्रीन हाउस प्रभावमें 6% योगदान देती है। इसके मुख्य स्रोत उर्वरक, कोयला दहन।
हैलो कार्बन	यह मानव उत्पादित रासायनिक यौगिक है जिसमें हैलोजन परिवार के तत्व तथा कार्बन और अन्य गैसों से मिलकर हाइड्रो फ्लोरोकार्बन(एचएफसी) परफ्लोरोकार्बन(पीएफसी) और सल्फरहेक्साफ्लोराइड (एस.एफ.6) शामिलहैं।
सतही ओजोन(O_3)	ट्रोपोस्फीयर में उपस्थित यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रीन हाउस गैस है। जो औद्योगिक गतिविधियों से निकलती है।
जल वाष्प	यह प्राकृतिक श्वसन, तथा वाष्पीकरण से प्राप्त होती है। पृथ्वी का तापमान बढ़ने पर वायुमण्डल में इसकी मात्रा बढ़ जाती है।

गत दशक में मानव जनित अनियंत्रित औद्योगीकरण, अनियोजित शहरीकरण, जनसंख्या वृद्धि तथा अनेकानेक जीवनयापन कृत्यों द्वारा वातावरण निरन्तर प्रदूषित होता रहा है। वर्तमान में आवश्यकताओं की पूर्ति की अंधाधुंध दौड़ के कारण वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा सामान्य से लगभग 31 प्रतिशत बढ़ गई है जिसके कारण अधिक ऊष्मा निचले वातावरण में समाहित हो रही है, जो ग्रीन हाउस गैसों के सामंजस्य को अव्यवस्थित कर वैश्विक ताप में उत्तरोत्तर वृद्धि उत्पन्न कर रहा है। फलस्वरूप जलवायु को गंभीर रूप से प्रभावित कर अति वर्षा व सूखे जैसी परिस्थितियां उत्पन्न हो रही हैं। वर्तमान में पृथ्वी का तापमान औसतन 0.2 डिग्री से0ग्रे0 से 0.6 डिग्री से0ग्रे0 तक बढ़ा है, जिसके निकट भविष्य में 1.4 डिग्री से0ग्रे0 से 5.8 डिग्री से0ग्रे0 तक बढ़ने की आशंका है। तापमान वृद्धि के फलस्वरूप ग्लेशियर तेजी से पिघलेंगे, समुद्र का जलस्तर बढ़ेगा, जिससे कई तटवर्ती शहर जलमग्न हो जायेंगे। ऐसी स्थिति मानव जीवन हेतु विषम होगी। परिस्थितियों को देखते हुए विश्व के अनेक देशों ने संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सभा(यू.एन. एफ.सी.सी.) के अंतर्गत ग्रीन गैसों के प्रसारण को कम करने की दिशा में संधि की है।

ग्रीन हाउस गैसों के निष्कासन में कमी की आवश्यकता– ग्रीन हाउस गैसों के निष्कासन में कमी करना कठिन है परन्तु असंभव नहीं है। बहुत संख्या में अर्न्तराष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर संस्थाए इस पर कार्य कर रही हैं। कुछ महत्वपूर्ण तथ्य जिनके द्वारा इसके निष्कासन को कम किया जा सकता है, यथा–

1. खपत तथा उत्पादन में ऊर्जीय क्षमता की बढ़त होनी चाहिए। नई स्वचलित वाहन तकनीक की आवश्यकता।
2. वाहनों में पूर्ण रूप से ईंधन का दहन होना चाहिए जो कि ठीक रख–रखाव से संभव है।
3. ऊर्जा के नए स्रोतों का प्रयोग करना चाहिए जैसे– सौर ऊर्जा, जल विद्युत ऊर्जा, नाभिकीय ऊर्जा इत्यादि।

4. उद्योगों से निकलने वाले जहरीले पदार्थों के निष्कासन को कम करना चाहिए।
5. हैलोकार्बन के उत्पादन को कम करना चाहिए जैसे– फ्रिज, एयरकन्डीशन, में पुनः चक्रीय रसायनों का प्रयोग करना चाहिए।
6. ईंधन वाले वाहनों का प्रयोग कम करना चाहिए।
7. वनीकरण को बढ़ावा देना चाहिए तथा जंगलों को कटने से रोकना चाहिए।
8. समुद्रीय शैवाल बढ़ाना चाहिए ताकि प्रकाश संश्लेषण के द्वारा कार्बन डाई ऑक्साइड का प्रयोग किया जा सके।

उपरोक्त सभी प्रयास विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं के द्वारा किये जा रहे हैं। जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रीन हाउस प्रभाव को कम करके उसके द्वारा उत्पन्न जटिल समस्याओं को रोका जा सकता है। जिससे गरीबी, सामाजिक असमानता और पर्यावरण बचाव मुख्य रूप से ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याओं से निपटा जा सकता है, ताकि एक बेहतर भविष्य बने।

अवलोकित संदर्भ

1. जैकब, डैनियल जे0(1999) वायुमण्डलीय रसायन–एक परिचय, अध्याय–2, ग्रीन हाउस प्रभाव, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. डे, ए0 के0(2001) पर्यावरण रसायन, न्यू एज इंटरनेशनल प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
3. www.globalgiving.org
4. www.fightglobalwarming.com

दूब घास के औषधीय गुण

सन्तोष कुमार सिंह
सहायक प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
श्री जय नारायण महाविद्यालय, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
santoshsinghjnpg@gmail.com

प्राप्त तिथि– 04.07.2016; स्वीकृत तिथि– 27.09.2016

सार– दूब घास का औषधीय गुण हमारे जीवन में बहुत महत्वपूर्ण संस्कारों का एक अध्याय है। जो हमारे जीवन में बहुत सी औषधीय के रूप में प्रयोग किया जाता है। इतना ही नहीं मधुमेह रोगी के लिए भी बहुत लाभकारी प्रमाणित किया जा चुका है। अगर हम पानी के साथ ताजी दूब धुलकर उबाल कर सेवन करें तो 59 प्रतिशत ब्लक शुगर लेवल कम कर देता है।

बीज शब्द– दूब घास, पोयसी, हाइपोग्लास्मिक, एन्टीडॉयबेटिक, हाइपोलेपिडिमिक।

Medicinal use of *Cynodon dactylon*

Santosh Kumar Singh
Assistant Professor, Department of Chemistry
Sri J.N.P.G. College, Lucknow-226001
santoshsinghjnpg@gmail.com

Abstract- Medicinal activity of *Cynodon dactylon* (Family: Poaceae) is very useful and play an important role in our life activities. The study was undertaken to investigate the Hypoglycemic & Ant diabetic effect of single and repeat Oral administration of aqueous extract of grass resulted, significant reduction of 59% in the blood sugar level.

Key word- *Cynodon dactylon,* poaceae, hypoglycemic, antidiabetic, hypolipidimic.

दूब या दुर्वा (वैज्ञानिक नाम–'साइनोडॉन डेक्टिलॉन') वर्ष भर पायी जाने वाली घास है जो जमीन पर पसरते हुए या फैलते हुए बढ़ती है। हिन्दू संस्कारों एवं कर्मकाण्डों में इसका उपयोग किया जाता है तथा वर्ष में दो बार सितम्बर–अक्टूबर और फरवरी–मार्च में इसमें फूल आते हैं। महाकवि तुलसीदास ने दूब को अपनी लेखनी में इस प्रकार सम्मान दिया है– "राम दुर्वादल श्याम, पद्माक्षं पीतवाससा।"

प्रायः जो वस्तु स्वास्थ्य के लिए हितकर सिद्ध होती थी, उसे पूर्वजों ने धर्म के साथ जोड़कर उसका महत्व और भी बढ़ा दिया। दूब भी ऐसी ही वस्तु है, यह सारे देश में बहुतायत के साथ हर मौसम में उपलब्ध रहती है।

चित्र–1 दूब घास

चित्र–2 दूब घास

दूब को संस्कृत में 'दूर्वा', 'अमृता', 'अनन्ता', 'गौरी', 'महौषधि', 'शतपर्वा', 'भार्गवी' इत्यादि नामों से जानते हैं। दूब घास पर ऊषा काल में जमी हुई ओस की बूंदें मोतियों सी चमकती प्रतीत होती हैं। ब्रह्म मुहूर्त में हरी–हरी ओस से परिपूर्ण दूब पर भ्रमण करने का अपना निराला ही आनन्द होता है तथा आँखों के स्वास्थ्य के लिए श्रेयस्कर माना जाता है। पशुओं के लिए ही नहीं अपितु मनुष्यों के लिए पूर्ण पौष्टिक आहार है दूब। महाराणा प्रताप ने वनों में भटकते हुए जिस घास की रोटियां खाई थीं, यह भी दूब से ही निर्मित थीं। दूब में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। आयुर्वेद में दूब में उपस्थित अनेक औषधि गुण के कारण दूब को 'महौषधि' कहा गया है। आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार दूब का स्वाद कसैला मीठा होता है। विभिन्न पैत्तिक एवं कफज विकारों के शमन में दूब का निरापद प्रयोग किया जाता है। यह दाह शामक, रक्तदोष, मूर्छा, अतिसार, अर्श, रक्त पित्त, प्रदर, गर्भस्राव, गर्भपात, यौनरोग, मूत्रकृच्छ इत्यादि में विशेष लाभकारी है। दूर्वा कान्तिवर्धक, रक्त स्तंभक, उदर रोग, पीलिया इत्यादि में अपना चमत्कारी प्रभाव दिखाता है।

औषधि प्रयोग

1. दूब के काढ़े से कुल्ले करने से मुह के छाले मिट जाते हैं।
2. नकसीर में इसका रस नाक में डालने से लाभ होता है।
3. दूब के रस को हरा रक्त कहा जाता है। इसे पीने से एनीमिया ठीक हो जाता है।
4. इस पर नंगे पैर चलने से नेत्र ज्योति बढ़ती है जिससे लोगों को कम क्षमता वाले चश्मा लगने लगे।
5. दूब कुष्ठ (कोढ), दांतों का दर्द, पित्त की गर्मी के लिए लाभदायक है। इसका लेप लगाने से खुजली शांत हो जाती है।[1]
6. दूर्वा में रक्त में ग्लूकोज के स्तर का कम करने की क्षमता होती है। इसी कारण मधुमेह रोग नियंत्रित करने में सहायक है।[2]
7. दूर्वा घास शरीर में प्रतिरोधक क्षमता को उन्नत करने में सहायक होती है। इसमें एन्टीवायरल और एन्टी माइक्रोबियल (रोगाणुरोधी–बीमारी को रोकने की क्षमता) गुण होने के कारण यह शरीर के किसी भी बीमारी से लड़ने की क्षमता बढ़ाता है।[3]
8. दूर्वा के प्रयोग से स्त्रियों के स्वास्थ्य सम्बन्धी कई समस्या जैसे सफेद यौन स्राव, बवासीर आदि से राहत मिलती है। इसीलिए दही के साथ दूर्वा घास को मिलाकर सेवन करते हैं।
9. महिलाओं में जो मां बच्चों को दूध पिला रही है, उनके लिए लाभकारी है क्योंकि प्रोलेक्टिन हार्मोन को उन्नत करने में भी मदद करती है।[4]
10. दूर्वा घास से लगातार सेवन से पेट की बीमारी को खतरा कुछ हद तक कम होने के साथ पाचन शक्ति भी बढ़ती है। यह कब्ज, एसिडटी से राहत दिलाने में मदद करती है।
11. दूर्वा घास फ्लेवनाइड का मुख्य प्रधान स्रोत होता है जिसके कारण यह अल्सर रोग को रोकने में मदद करती है।[5]
12. यह सर्दी, खांसी एवं कफ विकारों को समाप्त करने में सहायक है।
13. दूर्वा मसूड़ों से रक्त बहने और मुंह से दुर्गन्ध निकलने की समस्या (पायरिया) से राहत दिलाती है।
14. दूर्वा घास त्वचा सम्बन्धी बीमारियों में भी सहायक होती है। इसमें एन्टी–इन्फ्लैमटेरी (सूजन और जलन को कम करने वाला) एन्टीसेप्टिक गुण होने के कारण त्वचा सम्बन्धी कई समस्याओं जैसे खेजली, त्वचा पर चकत्ते और एक्जिमा आदि समस्याओं से राहत दिलाने में मदद करती है। दूर्बा घास को हल्दी के साथ पीसकर पेस्ट बनाकर त्वचा के ऊपर लगाने से त्वचा सम्बन्धी कुछ समस्याओं से राहत मिलती है। कुष्ठ रोग और खुजली जैसी समस्याओं से राहत दिलाने में सहायता करती है।[6, 7, 8]
15. दूर्वा रक्त को शुद्ध करती है एवं लाल रक्त कणिकाओं को बढ़ाने में भी मदद करती है जिसके कारण हीमोग्लोबिन का स्तर बढ़ता है।
16. दूर्वा रक्त में कोलेस्ट्राल, एच0डी0एल0, वी0एल0डी0एल0 के स्तर को कम करके हृदय को मजबूती प्रदान करती है।[9]
17. इसके रस में बारीक पिसा नाग केशर और छोटी इलायची मिलाकर सूर्योदय के पहले छोटे बच्चों को नस्य दिलाने से वे तंदुरूस्त होते हैं।
18. दूर्वा घास पौष्टिकता से भरपूर होने के कारण शरीर को सक्रिय और ऊर्जायुक्त बनाये रखने में बहुत सहायता करती है। यह अनिद्रा रोग, थकान, तनाव जैसे रोगों में प्रभावकारी है।[10]
19. सुबह नंगे पांव हरी दूब वाली घास पर चलने से माइग्रेन रोग दूर होता है। ओसयुक्त दूब घास हमारे लिए एक्यूप्रेसर का काम करती है। वैसे आंख की रोशनी बढ़ाने के लिए बहुत सहायक होती है क्योंकि विटामिन 'ए' हमें मिलता है और इस प्रक्रिया से लोगों के चश्मे भी उतरने लगे हैं।
20. दूब के रस में अतीस के चूर्ण को मिलाकर दिन में दो–तीन बार चटाने से मलेरिया में लाभ होता है।

मधुमेह प्रबन्धन में सहायक– दूब घास मधुमेह रोगी के लिए बहुत लाभदायक होती है। हर्बल जानकारों के अनुसार करीब 10 ग्राम ताजी दूब घास एकत्रित करके साफ धोकर उसे छोटे–छोटे टुकड़ों में काट लें और उसे पानी में उबाल लें। फिर छानकर ठंडा करके खाली पेट सेवन करके मधुमेह बहुत हद तक नियंत्रित रहेगी।

प्रयोग द्वारा सिद्ध किया गया है कि सामान्य चूहे में 23 प्रतिशत ब्लड शुगर लेवल कम करने में सहायक होती है और मध्यम मधुमेह रोगी का 31 प्रतिशत और अधिक मधुमेह रोगी का 59 प्रतिशत ब्लड शुगर लेवल कम कर देती है और साथ–साथ ही शरीर का वजन दो सप्ताह में बढ़ने लगता है।[11,12] जो कि टाइप–1, टाइप–2 मधुमेह रोगी के लिए दूब घास बहुत अधिक लाभकारी है और टोटल कोलेस्ट्राल लो डेन्स्टी लेवल, टोटल टी0जी0 लेवल बहुत हद तक कम कर देती है।[13, 14]

हिन्दू समाज में शुभ कार्य जैसे पूजा–पाठ, शादी विवाह, गृह प्रवेश के लिए दूब घास का सदैव प्रयोग किया जाता है, क्योंकि भगवान गणेश को दूब घास से ही नहलाया जाता है। हमने कभी यह नहीं देखा है कि पशुओं में मधुमेह रोग पाया जाता है क्योंकि उनका मुख्यतः आहार दूब घास ही है जिससे वह सदैव स्वस्थ्य रहते हैं।

संदर्भ

1. धर, एम0 एल0; धवन एम0 एवं मल्होत्रा सी0 एल0(1968) इण्डियन जनरल ऑफ एक्सपेरिमेन्टल बायोलॉजी, खण्ड–6, मु0पृ0–232–245।
2. कृतिकर, के0 के0 एवं बसु, बी0 डी0(1980) इण्डियन मेडीसिनल प्लान्ट, खण्ड–द्वितीय, मु0पृ0–2650 से 2655।
3. अहमद, ए0, अख्तर एम0 एस0 एवं मलिक, टी0(2000) फाइटोथेरैपी रिसर्च, खण्ड–14, मु0पृ0–103–106।
4. डे, सी0(1998) ब्रिटेन जनरल ऑफ न्यूट्रीशन, खण्ड–80, मु0पृ0–506।
5. बेले, एल0 जे0 एवं डे, सी0(1989) डायबेटीज केयर, खण्ड–12, मु0पृ0–553–554।
6. चोपड़ा, आर0 एन0 एवं हॉण्डा के0 एल0(1982) इन्डीजीनियश ड्रग्स ऑफ इण्डिया, खण्ड–2, मु0पृ0–504–506।
7. अहमेद एस0 एवं रिजा, एम0 एस0 जब्बार(1994) फाइटोथेरेपिया, खण्ड–65, मु0पृ0–463–464।
8. कृतिकर, के0आर0 एवं बसु बी0 डी0(1933) इण्डियन मेडिसिनल प्लान्ट, खण्ड–4, मु0पृ0–10–20।
9. सिंह सन्तोष कुमार एवं गीता वातल(2009) इण्डियन जनरल ऑफ क्लीनिकल बायोकेमिस्ट्री, खण्ड–24(4), मु0पृ0–410–413।
10. राव, बी0 के0 एवं गिरि आर0 ए0(1999) जनरल ऑफ इथनोफर्माकोलॉजी, खण्ड–67, मु0पृ0–103–109।
11. सिंह, सन्तोष कुमार एवं गीता, वातल(2007) जनरल ऑफ इथनोफर्माकोलॉजी, खण्ड–114, मु0पृ0–174–179।
12. सिंह, सन्तोष कुमार एवं गीता, वातल(2007) जनरल ऑफ इकेम, खण्ड–17, मु0पृ0–1–7।
13. सिंह, सन्तोष कुमार एवं गीता, वातल(2008) जनरल ऑफ इकोफिजियोलॉजिकल अकूपेसनल हेल्थ, खण्ड–8, मु0पृ0–195–199।
14. सिंह, सन्तोष कुमार(2015) अनुसंधान विज्ञान शोध पत्रिका, खण्ड–3, अंक–1, मु0पृ0–219–222।

उच्च शिक्षा में आई.सी.टी. की भूमिका

श्वेता सिन्हा[1] एवं शालिनी लाम्बा[2]
[1]असिस्टेन्ट प्रोफेसर, कम्प्यूटर विज्ञान विभाग, नेशनल पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
[2] अध्यक्ष, कम्प्यूटर विज्ञान विभाग, नेशनल पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
singh_shweta2005@yahoo.com, shalinilamba22@gmail.com

प्राप्त तिथि– 06.07.2016; स्वीकृत तिथि– 22.08.2016

सार– सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी(*Information and Communication Technology, ICT*) एक व्यापक क्षेत्र है, जिसमें सूचना के संचार के लिए हर तरह की प्रौद्योगिकी समाहित है। यह वो प्रौद्योगिकी है जो कि सूचना के संचालन(रचना, भंडारण और उपयोग) की योग्यता रखता है तथा संचार के विभिन्न माध्यमों(रेडियो, टेलिविजन, सेलफोन, कम्प्यूटर, हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर, विभिन्न सेवाओं और अनुप्रयोगों) से सूचना के प्रसारण की सुविधा प्रदान करता है। कृषि, स्वास्थ्य, शासन प्रबन्ध और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में आई.सी.टी. के विकास का प्रभाव है। यह लेख उच्च शिक्षा में आई.सी.टी. की भूमिका को केंद्रित कर रहा है। शैक्षिक अवसरों को विस्तृत करने, उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय विकास एवं शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए आई.सी.टी. एक प्रभावशाली साधन है । सरकार आई.सी.टी.पर बहुत खर्च कर रही है। उच्च शिक्षा में बढ़ता नामांकन अनुपात तथा शिक्षा के विस्तार में प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धता में आई.सी.टी. की भूमिका पर नेशनल मिशन ऑन एजुकेशन बल देता है। आई.सी.टी. के शिक्षा में अभिग्रहण के प्रमुख कारक हैं– किसी भी प्रणाली का लक्ष्य, कार्यक्रम और पाठ्यक्रम, पढ़ने तथा पढ़ाने के तरीके, अधिगम सामग्री और संसाधन, संवाद, समर्थन और वितरण प्रणाली छात्र एट्यूटर्स, स्टाफ और अन्य विशेषज्ञ, प्रबंधन और मूल्यांकन। अतः आई.सी.टी. के कार्यान्वयन से उच्च शिक्षा में निश्चित ही सुधार होगा।

बीज शब्द– सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, उच्च शिक्षा, पठन और पाठन, प्रशासन।

Role of ICT in Higher Education

Shweta Sinha[1], Shalini Lamba[2]
[1]Assistant Professor, Department of Computer Science, National P.G. College, Lucknow-226001
[2]Head, Department Of Computer Science, National P.G. College, Luknow-226001, U.P., India
singh_shweta2005@yahoo.com, shalinilamba22@gmail.com

Abstract

ICT is a broader term that includes all technologies for the communication of information. It is the technology that enables the handling (creation, storage, and access) of information and facilitates different forms of communication (radio, television, cellular phones, computer , hardware and software, various services and applications for broadcasting information. The development of ICT has influenced all walks of life like agriculture, health, decision making, administration, and also education is no exception to this. This article focuses on the role of ICT in higher education. ICT is potentially a powerful tool for extending educational opportunities and resulting in a remarkable growth in the higher education sector and leading to quality enhancements. The government is spending a lot of money on ICT: the National Mission on Education is emphasizing on the role of ICT in increasing the enrolment ratio in higher education and availability of trained teachers in the process of dissemination of education. The main factors that affect the adoption of ICT in education are the mission or goal of a particular system, programs and curricula, teaching/learning strategies and techniques, learning material and resources, communication, support and delivery systems, students, tutors, staff and other experts, management and evaluation.

Keywords - ICT, Higher Education, Teaching and Learning, administration.

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी एक व्यापक क्षेत्र है जिसमें सूचना के संचार के लिए हर तरह की प्रौद्योगिकी समाहित है। यह वो प्रौद्योगिकी है जो कि सूचना के संचालन (रचना, भंडारण और उपयोग) की योग्यता रखता है तथा संचार के विभिन्न माध्यमों (रेडियो टेलिविजन, सेल फोन, कंप्यूटर और नेटवर्क, हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर, सैटेलाइट सिस्टम, विभिन्न सेवाओं और अनुप्रयोगों) से सूचना के प्रसारण की सुविधा प्रदान करता है। आई.सी.टी. कई लोगों के जीवन का अविभाज्य तथा स्वीकृत अंग बन गया है। कृषि, स्वास्थ्य, शासन प्रबन्ध और शिक्षा जैसे क्षेत्रो में के विकास का प्रभाव है। आई.सी.टी. एक विविध संग्रह है जिसमें विभिन्न प्रौद्योगिकी उपकरण निहित हैं। साथ ही साथ वीडियो कांफ्रेसिंग और इलेक्ट्रॉनिक मेल आदि जैसे प्रोटोकॉल और सेवाऐं भी सम्मिलित हैं। आई.सी.टी. एक प्लंबिंग प्रणाली की तरह है जहाँ सूचना(संग्रहित पानी) सूचना प्रौद्योगिकी(भण्डारण टंकी) में संचयित होती है तथा संचार प्रौद्योगिकी(पाइप) के माध्यम से संचार(बहता हुआ पानी) प्रापक के पास पहुँचता है। उपयोगी डाटा और सूचना के सृजन, संचरण, भंडारण, पुनः प्राप्ति और डिजिटल रूपों में संचालन जैसी आई.सी.टी. की डिजिटल प्रौद्योगिकी सूचना के पूरे चक्र में प्रयोग में लाई जाती है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विभिन्न घटक हैं–

1. **कम्प्यूटर हार्डवेयर प्रौद्योगिकी**– इसके अन्तर्गत माइक्रो–कम्प्यूटर, सर्वर, बडे मेनफ्रेम कम्प्यूटर के साथ–साथ इनपुट, आउटपुट एवं संग्रह करने वाली युक्तियाँ आती हैं।
2. **कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर प्रौद्योगिकी–** इसके अन्तर्गत ऑपरेटिंग सिस्टम, वेब ब्राउजर, डाटाबेस प्रबन्धन प्रणाली(DBMS) सर्वर तथा व्यापारिक, वाणिज्यिक सॉफ्टवेयर आते हैं।
3. **दूरसंचार व नेटवर्क प्रौद्योगिकी–** इसके अन्तर्गत दूरसंचार के माध्यम, प्रोसेसर तथा इंटरनेट से जुड़ने के लिये तार या बेतार पर आधारित सॉफ्टवेयर, नेटवर्क–सुरक्षा, सूचना का कूटन(क्रिप्टोग्राफी) आदि हैं।
4. **मानव संसाधन**– तंत्र प्रशासक(System Administrator), नेटवर्क प्रशासक(Network Administrator) आदि।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की महत्ता निम्नलिखित है–

1. सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, सेवा अर्थतंत्र(Service Economy) का आधार है।
2. पिछड़े देशों के सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए सूचना प्रौद्योगिकी एक उपयुक्त तकनीक है।
3. गरीब जनता को सूचना–सम्पन्न बनाकर ही निर्धनता का उन्मूलन किया जा सकता है।
4. सूचना–संपन्नता से सशक्तिकरण होता है।
5. सूचना तकनीकी, प्रशासन और सरकार में पारदर्शिता लाती है, इससे भ्रष्टाचार को कम करने में सहायता मिलती है।
6. सूचना तकनीक का प्रयोग योजना बनाने, नीति निर्धारण तथा निर्णय लेने में होता है।
7. यह नये रोजगारों का सृजन करती है।

उच्च शिक्षा में आई.सी.टी. का बहुत महत्व है। निवेश से लेकर प्रबंधन, दक्षता, शिक्षा शास्त्र, गुणवत्ता, अनुसंधान और नवाचार के प्रमुख मुद्दों से निपटने के लिए इस्तेमाल किये जाने वाली प्रौद्योगिकियों तक, उच्च शिक्षा में आई.सी.टी. के परिचय से पूरी शिक्षा प्रक्रिया पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

उच्च शिक्षा में आई.सी.टी. के अभिग्रहण से निम्नलिखित सुविधाएं प्राप्त होती हैं–

1. दूरवर्ती स्थानों में पढ़ाई की गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है।
2. उच्च शिक्षा संस्थानों में अधिक पारदर्शिता प्रणाली लाने से उनकी प्रक्रियाओं और अनुपालन मानदंडों को मजबूती मिलती है।
3. यह छात्रों के प्रदर्शन, नियुक्ति, वेबसाइट एनालिटिक्स, और ब्रांड के ऑडिट के लिए सोशल मीडिया मेट्रिक्स का विश्लेषण करने के लिए प्रयोग किया जाता है।
4. इंटरनेट(वर्चुअल क्लास रूम), उपग्रह और अन्य माध्यमों द्वारा पाठ्यक्रम वितरण के साथ दूरस्थ शिक्षा सुविधाजनक बना दी गयी है।

शिक्षण में कंप्यूटर आधारित शिक्षा तकनीकों का उपयोग भारत की प्रसिद्ध शिक्षा प्रणाली और संस्थानों द्वारा अपनाया गया है। शब्दों और प्रतीकों की विविधता कम्प्यूटर की महान शक्ति है जो शैक्षणिक प्रयास का केंद्र है। ई–लर्निंग और दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों में ऑनलाइन शिक्षा के माध्यम से शिक्षण अधिक रोचक और आसान हो रहा है। इंटरनेट तथा वर्ल्ड् वाइड वेब के माध्यम से शिक्षक अपने विद्यार्थियों तक पहुँच सकते हैं और उनको घर बैठे पढ़ा सकते हैं। इंटरनेट मानव ज्ञान का एक उच्चतम संग्रह है। आई.सी.टी. डिजिटल पुस्तकालय जैसे डिजिटल संसाधनों के सृजन की अनुमति देता है, जहाँ विद्यार्थी,

शिक्षक और व्यवसायी शोध सामग्री तथा पाठ्यक्रम सामग्री तक पहुँच सकते हैं। आई.सी.टी. शैक्षणिक संस्था के दिन–प्रतिदिन के प्रशासनिक गतिविधियों को आसान और पारदर्शी तरीके से नियंत्रित करने तथा समन्वय और निगरानी के लिए अवसर प्रदान करता है। पंजीकरण/नामांकन, पाठ्यक्रम आवंटन, उपस्थिति की निगरानी, समय सारिणी/वर्ग अनुसूची, प्रवेश के लिए आवेदन, छात्रों के दाखिले में जाँच इस तरह की जानकारियाँ ई–मीडिया द्वारा पाई जा सकती हैं।

आई.सी.टी. के सन्दर्भ में एक खोजपूर्ण प्रयास की आवश्यकता है। प्रेरणा शक्ति को प्रोत्साहित करने का यह सही समय है क्योंकि आशा है कि आई.सी.टी. के परिपालन से जीवन के हर क्षेत्र में प्रबल उन्नति को प्राप्त किया जा सकता है।

अवलोकित संदर्भ

1. डेवेलेपिंग रिसर्च–बेस्ड् लर्निंग यूजिंग आई.सी.टी. इन हाइयर एजूकेशन करीकुला–द रोल ऑफ रिसर्च एण्ड इवेल्यूएशन, http://knowledge.cta.int/en/content/view/full/12690
2. फरहनी, ए0 जे0(2008) ई–लर्निंगः ए न्यू पैराडिज्म इन एजूकेशन, अनिल वर्मा(सम्पादक), "इंफॉर्मेशन एण्ड कम्यूनिकेशन टेक्नोलॉजी", प्रथम संस्करण, इक्फाई यूनिवर्सिटी प्रेस, हैदराबाद, मु0पृ0 25–26।
3. सलेम, शेख(2012) रोल ऑफ आई.सी.टी. एज ए क्वालिटी टीचिंग टूल, एन इंटरनैशलन मल्टीडिसिप्लिीनरी जर्नल।
4. मीनाकुमारी, जे0 एवं कृष्णावेनी, आर0(2010) आई.सी.टी. बेस्ड एण्ड लर्निंग इन हाईयर एजूकेशन–ए स्टडी, इंटरनैशनल जर्नल ऑफ कम्प्यूटर एण्ड इमर्जिंग टेक्नोलॉजीज।

गुरूत्वीय तरंगें क्या हैं?

भानु प्रताप सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, गणित विभाग
नेशनल पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
bhanupratapsingh1996@gmail.com

प्राप्त तिथि– 19.07.2016; स्वीकृत तिथि– 22.08.2016

सार– यह लेख विज्ञान के इतिहास का वर्णन न करके केवल डॉ0 अल्बर्ट आइन्स्टीन द्वारा अपने सापेक्षवाद के सिद्धान्त में दिये गये गुरूत्वीय तरंगों के होने की पुष्टि कर रहा है। वर्षों के अनुसंधान के बाद वैज्ञानिकों ने यह प्रमाणित कर दिया कि बहुत भारी तारे जो ब्लैक होल भी कहे जाते हैं, एक दूसरे की कक्षा में घूमते हुए पास आकर टकराते हैं तो बहुत अधिक ऊर्जा दिक् में बिखेरते है। जिनसे गुरूत्वीय तरंगें भी उत्पन्न होती हैं, जो प्रकाश के वेग से चलकर हमारी पृथ्वी पर भी अनुभव की गई हैं।

बीज शब्द – सापेक्षवाद के सिद्धान्त, प्रमात्रा सिद्धान्त, ब्लैक होल, गुरूत्वीय तरंग।

What are Gravitational waves?

Bhanu Pratap Singh
Assistant Professor and Head, Department of Mathematics
National P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
bhanupratapsingh1996@gmail.com

Abstract- The purpose of this article is not to present a popular history of mathematical physics nor even to display for the general reader some of the result of research in the history of science, Rather the intention is to explore one important aspect of the great scientific revaluation of recent times which proves the existence of Gravitational wave, predicted by Dr. Albert Einstein about a hundred years ago in his general theory of relativity. Gravitational waves are ripples in the fabric of space time caused by some of the most violent and energetic processes in the universe. They are produced by catastrophic events such as colliding Black hole as well as the collapse of stellar super nova.

Key words- Theory of relativity, Quantum Theory, Black hole, Gravitational wave.

बीसवी सदी ने विज्ञान को जो बड़ी सैद्धान्तिक प्रणालियाँ दी उसने न केवल जनसाधारण बल्कि विज्ञान वेत्ताओं को भी ब्रह्माण्ड के शान्तिपूर्ण संचालन में अविश्वास करने को सर्वप्रथम बाध्य किया। इनमें एक मैक्स प्लांक का प्रमात्रा सिद्धान्त(Quantum Theory) था जिसका सम्बन्ध पदार्थ और शक्ति की मूलभूत इकाइयों से था। दूसरा सिद्धान्त था आइन्स्टीन का सापेक्षवाद(Theory of Relativity) जिसका सम्बन्ध दिक्–काल और एक सम्पूर्ण इकाई के रूप में ब्रह्माण्ड की रचना से था। आज मनुष्य के ज्ञान की अन्तः सीमाएँ प्रमात्रा सिद्धान्त से समझी जाती है और परमाणु, पदार्थ तथा शक्ति की मौलिक इकाईयाँ एवं उनसे सम्बन्धित हमारी धारणाएँ, जो अनुभव की दृष्टि से बहुत ही रहस्यमय तथा सूक्ष्म है प्रमात्रा–सिद्धान्त से निर्धारित है। ज्ञान की बाहरी सीमाएँ सापेक्षता के सिद्धान्त से जहाँ दिक् काल, गुरूत्वाकर्षण तथा उनसे सम्बन्धित हमारे सिद्धान्त, जो हमारे अनुभव की दृष्टि से या तो बहुत दूरस्थ है या बहुत विशाल, सापेक्षता की मदद से निरूपित हुए है।

यह दोनों महान वैज्ञानिक प्रणालियाँ बिल्कुल ही पृथक असम्बद्ध सैद्धान्तिक आधारों पर निर्भर करती है तथा अपने–अपने क्षेत्र में घटनाओं के सुदृढ़ और गणित विषयक सम्बन्धों पर प्रकाश डालती हैं। जहाँ मेक्स–प्लांक के समीकरणों का असाधारण तत्व, आधार रूप में यह मान्यता थी कि विकीर्ण शक्ति अखंडित धारा के रूप में नहीं वरन् पूरी तरह से खंडित रूप में प्रवाहित होती है, वहीं सापेक्षवाद ने हमारी अनेक धारणाओं को उनके प्रतिष्ठित स्थान से हटाकर, दिक्–काल के सम्बन्ध में हमारे सदियों पुराने विश्वास को विचलित कर दिया। सापेक्षवाद के अनुसार आकाश और काल स्वतंत्र सत्ताएँ नहीं रह गयी है वरन वह एक दूसरे पर निर्भर करती हैं।

वर्षों पूर्व मिन्काउस्की(Minkowaski) ने आकाश और काल से एक चतुर्विमितीय की संकल्पना के द्वारा अनुबन्धों को ज्यामितीय रूप दे दिया था, और आइन्स्टीन ने इसे मौलिक मानकर गुरूत्वाकर्षण की समस्याओं को 'ज्यामितीय पद्धति' के अनुसार हल करके विश्व को चकित कर दिया। इससे पूर्व के नियमों पर विचार करने का कोई लाभ नहीं रहा, कारण वह सब न्यूटन के गुरूत्वाकर्षण सिद्धान्त पर आधारित थे, जिनके अनुसार दो पिण्डों के मध्य आकर्षण बल उनके द्रव्यमानों के समानुपाती तथा उनकी दूरता के द्विघात का व्युत्क्रमानुपाती होता है। अतः इसके अनुसार विश्व का एक केन्द्र होना आवश्यक है जहाँ घनत्व महत्तम होगा तथा उससे दूरी के अनुसार घटता जायेगा और अंत में अत्यधिक दूरियों पर शून्य के अनन्त क्षेत्र होंगे, जहाँ घनत्व शून्य होगा। परन्तु प्रेक्षण यह सिद्ध करते हैं कि विश्व की रचना में चारों ओर समांगता है।

इस समांगता को ही आइन्स्टीन ने ब्रह्माण्डीय सिद्धान्त(Cosmological Principle) का नाम दिया और विश्वास दिलाया कि विश्व में आकाश की वक्रता समान है। वक्रता दो प्रकार की होती है ऋण तथा धन। इन दोनों के बीच शून्य वक्रता का आकाश युक्लिड ज्यामितीय आकाश कहलाता है जिसे वैज्ञानिक गलत सिद्ध कर चुके हैं। शून्य वक्रता के आकाश में किसी गोले का आयतन उसकी त्रिज्या के त्रिघात के अनुसार वृद्धि करता है, जबकि धन वक्रता के आकाश में गोले के आयतन की वृद्धि की दर इससे कम होती है तथा ऋणीय वक्र आकाश में इससे अधिक। अतः जब तक हमें निहारकाओं के विकासीय परिवर्तनों के विषय में और अधिक ज्ञान न प्राप्त हो जाय तब तक हम आकाश की वक्रता के विषय में किसी निश्चयात्मक परिणाम पर नहीं पहुँच सकते। जैसा कि आइन्स्टीन ने बताया कि चूँकि दिक् की ज्यामितीय या वक्रता उसके अन्दर निहित पदार्थों से निश्चित होती है, अतः ब्रह्माण्डीय समस्या का समाधान ब्रह्माण्ड के पदार्थ की औसत सघनता का निश्चय होने से ही सम्भव होगा। आइन्स्टीन का ब्रह्माण्ड यद्यपि अपरिमित नहीं है, तदापि इतना विशाल है कि उसमें अरबों ज्योर्तिमालाएँ समायी हुई हैं तथा प्रत्येक ज्योर्तिमाला में करोडों ज्वलंत तारे, अपरिमेय गैस, लोहे और पत्थर की शीत, प्रणालियाँ और ब्रह्माण्डीय रजकण हैं।

गुरूत्वाकर्षण– सापेक्षवाद में गुरूत्वाकर्षण का कारण ब्रह्माण्ड में आकाश की विकृति के कारण वक्रता को माना है। आइन्स्टीन का मत था कि वक्रता का मुख्य कारण कालाकाश(Space Time) में बहुत बड़े द्रव्यमानों का होना है। साधारणतः अधिक द्रव्यमान का किसी छोटे स्थान में होने से विश्व की वक्रता का अधिक होना। जैसा कि द्रव्यमान तेजी से ब्रह्माण्ड में चलायमान होते है जिससे वक्रता में नयापन आ जाता है, यह उनकी स्थिति के परिवर्तन को दर्शाता है। किसी–किसी परिस्थिति में तेजी से त्वरण करते हुए द्रव्य पुंज विशेष प्रकार की तरंगों को उत्पन्न कर देते है, जो बहुत तेजी से तथा प्रकाश के वेग से बाहर की तरफ गुरूत्वीय शक्ति को और वितरित करती है। इन्हीं बाहर की ओर निकलने वाली तरंगों को ही 'गुरूत्वीय तरंगों'(Gravitational Waves)[1] का नाम दिया गया जब यह तरंगें किसी पर्यवेक्षक के पास से गुजरती है तो उसे कालाकाश में एक परिवर्तन अनुभव होता है। जैसे–जैसे इनकी दूरी बढ़ती जाती है इनका परिमाण भी कम होता जाता है। गुरूत्वीय तरंगों की भविष्यवाणी आइन्स्टीन ने सापेक्षवाद में लगभग 100 वर्ष पूर्व कर दी थी, किन्तु बाद के 50 वर्षों तक न तो इसे ठीक से समझा गया और न ही इन तरंगों की उपयोगिता के बारे में तथा इनका पता लगाने में सोचा गया। पहली बार 1967 ई0 में अमेरिका की मैरीलेन्ड विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक डॉ0 जोसेव वेबर[2] ने इनके बारे में जानने का प्रयास किया। डॉ0 वेबर ने 1400 किलोग्राम के दो एल्यूमिनियम बेलन बनाकर और एक विशेष प्रकार के यंत्र से त्वरण उत्पन्न करके गुरूत्वीय क्षेत्र बनाकर इस प्रकार की तरंगों को उत्पन्न करने का प्रयास किया उनका प्रयोग इस बात पर आधारित था कि कालाकाश वक्र है परन्तु उनके द्वारा बनाई गई गुरूत्वीय तरंगों को बहुत ही कम ऊर्जा वाली होने से वह पूरी तरह प्रमाणित नहीं कर सके। आइन्स्टीन ने 1916 ई0 में ही यह भविष्यवाणी कर दी थी कि तीव्र गति से त्वरण करने वाले द्रव्य पुंज गुरूत्वीय तरंगों को बनाकर विकिरण करते हैं जो प्रकाश की गति से अपने साथ ऊर्जा का भी वितरण कर सकते हैं। यह प्रक्रिया तेजी से एक दूसरे का चक्कर लगाने वाले तारे, अधिनवतारे(Supernova) तथा वह बड़े द्रव्य पुंज जो आपतन(Collapse) की स्थिति में होने द्वारा सम्भव होती है। जब हमारे ब्रह्माण्ड की शुरूआत हुई होगी तो 'बिग–बैंग' द्वारा उत्पन्न यह तरंगें अवश्य पृथ्वी पर आई होगी।

पुरतो रीको नामक स्थान पर 1974 में दो वैज्ञानिकों ने गुरूत्वीय तरंगों के बारे में पहली बार सटीक जानकारी हासिल की। उन्होंने ब्रह्माण्ड के दो घने द्रव्य पुंज जो एक दूसरे की कक्षा में तेज गति से विचरण कर रहे थे, द्वारा उत्पन्न गुरूत्वीय तरंगों के अपने विशेष यंत्रों द्वारा होने का प्रमाण पाया। अपने 8 सालों के अनुसंधान के बाद उन्होंने यह देखा कि दोनों ही द्रव्य पुंज(तारे) धीरे–धीरे एक दूसरे के पास आ रहे हैं। लगभग 30 वर्षों के कठिन प्रयास के बाद उन्होंने इस प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न गुरूत्वीय तरंगों के निकलने का विश्व को प्रमाण दिया। जिसका पता डिटेक्टरों की मदद से लगाया गया। इसी प्रकार 14 सितम्बर 2015 को वैज्ञानिकों ने 'लेजर इंटरफेरोमीटर ग्रेविटेशनल वेव ऑब्जर्वेटरी' नामक संस्था द्वारा आयोजित प्रयोगों से प्रमाणित कर दिया कि ऐंठते हुए जब बड़े द्रव्य पुंज का रूप बदलता है तो इससे भी गुरूत्वीय तरंगें उत्पन्न होती है।

ब्लैक होल– गुरूत्वीय तरंगों की जानकारी देने में ब्लैक होल का बहुत अधिक महत्व है। दो ब्लैक होल जब एक दूसरे की परिक्रमा में घूमते हुए पास आकर टकराते हैं तो बहुत अधिक मात्रा में ऊर्जा भी उत्पन्न करते हैं जो ब्रह्माण्ड में चारों ओर गुरूत्वीय तरंगों द्वारा विकरित होती है। ब्लैक होल कोई छेद नहीं होता जैसा कि इसके नाम से लगता है यह कुछ बड़े द्रव्य पुंजों के अवशेष द्वारा जन्म लेते हैं इन्हें सुपर नोवा भी कहा जा सकता है तारों में होने वाले विशाल धमाके उन्हें नष्ट कर देते हैं और उनका विशाल पदार्थ अंतरिक्ष में फैल जाता है। लगभग 100 वर्ष पूर्व आइन्स्टीन ने अपने सापेक्षता के सिद्धान्त में जब गुरूत्वाकर्षण में छिपी शक्ति को समझकर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की विस्तृत रचना के दर्शन करके यह पुष्टि की कि गुरूत्वीय तरंगें भी प्रकाश की गति से यात्रा करती है। ब्लैक होल का द्रव्यमान इतना अधिक होता है कि वहाँ से बाहर निकलने के लिए पलायन गति प्रकाश की गति से अधिक होनी चाहिये जो सम्भव नहीं है अतः प्रकाश भी उनसे नहीं निकल सकता और वह दिखाई नहीं देते। लेकिन वैज्ञानिक कई साधन लगाकर उनकी स्थिति का पता लगा लेते हैं तथा उनके द्रव्यमान का अनुमान भी लगा लेते है। यह भी सच है कि ब्लैक होल में समा गई वस्तुएं सदैव के लिए खो जाती है। आइन्स्टीन के पास भले ही 100 वर्ष पूर्व ब्लैक होल का पूरा ज्ञान नहीं था फिर भी उन्होंने अपने गुरूत्वीय ज्ञान से यह जान लिया था कि प्रकाश की किरणें भी वहाँ से पलायन नहीं कर सकती। इसीलिये वह आकाश में काले धब्बों की तरह दिखाई देते हैं। कितनी विचित्र बात प्रतीत होती है कि ब्रह्माण्ड में जो प्रकाश के बड़े–बड़े पुंज हैं जिनके पास बहुत अधिक प्रकाश है वह हमें दिखाई नहीं देते। आज पूरे विश्व के वैज्ञानिक इनके बारे में जानकारियाँ लेने में लगे हैं। कई वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ब्लैक होल का गुरूत्वाकर्षण बल इतना अधिक होता है कि प्रकाश जो 1,86,000 मील प्रति सेकण्ड की गति से चलता है इससे नहीं निकल पाता है और वह काले धब्बों की तरह ही प्रतीत होते हैं।

इस वर्ष लीगो टीम के वैज्ञानिकों ने कठिन प्रयास करके कुछ ही महीनों में गुरूत्वीय तरंगों की दो बार झलक प्राप्त की। दो बड़े ब्लैक होल जो एक दूसरे की परिक्रमा करके एक दूसरे के समीप आ रहे थे आपस में टकराने लगे। संयोगवश कई वैज्ञानिकों ने इनके टकराने का अध्ययन किया और प्रयोगों द्वारा गुरूत्वीय तरंगों के पृथ्वी पर आने को प्रमाणित किया।

प्रथम टकराव– महत्वपूर्ण ढंग से 11 फरवरी, 2016 को लीगो के वैज्ञानिकों[3] ने यह घोषणा की कि दो ब्लैक होल जिनका द्रव्यमान हमारे सूर्य के द्रव्यमान से 29 तथा 36 गुना भारी थे एक दूसरे की परिक्रमा करके आपस से टकरा गये जिनसे एक नये और बहुत बड़े ब्लैक होल का जन्म हुआ और साथ–साथ बहुत अधिक मात्रा में गुरूत्वीय तरंगों का जन्म हुआ। वैज्ञानिकों का यह भी कहना था कि यह टकराव इतनी दूर हुआ होगा जहाँ से गुरूत्वीय तरंगें लाखों साल पहले चली होगी जो अब पृथ्वी पर पहुँच रही हैं। उस नये ब्लैक होल का द्रव्यमान हमारे सूर्य के द्रव्यमान से 62 गुना अधिक हो गया होगा तथा साथ में बहुत अधिक ऊर्जा भी बनी होगी।

दूसरा टकराव– संयोगवश लगभग तीन महीनों में ही लीगो टीम के वैज्ञानिकों ने दूसरी बार गुरूत्वीय तरंगों की झलक पाई। यह टकराव इसी वर्ष 15 जून, 2016 को हमारी पृथ्वी की प्रयोगशालाओं में अनुभव की गई। इस बार के दो ब्लैक होल जिनका द्रव्यमान हमारे सूर्य के द्रव्यमान से 14.2 तथा 7.5 गुना अधिक था टकरा कर एक दूसरे में मिलकर एक नये ब्लैक होल का निर्माण किया। इस बार भी वैज्ञानिकों ने गुरूत्वीय तरंगों के प्रमाण प्रस्तुत किये। इस नये ब्लैक होल का द्रव्यमान हमारे सूर्य के द्रव्यमान से 20.8 गुना अधिक रहने का संकेत प्राप्त हुआ तथा साथ–साथ पृथ्वी पर गुरूत्वीय तरंगों के बारे में भी अधिक से अधिक जानकारियाँ प्राप्त हुई। यह तरंगें अंतरिक्ष में फैलती हुई अब धरती पर प्रमाणित हुई। इनका पता दो भूमिगत डिटेक्टरों[4] की मदद से लगाया गया। यह तरंगें अंतरिक्ष के फैलाव का एक मापक है। इनकी खोज से दूर के तारों, आकाश–गंगाओं और ब्लैक होल सहित ब्रह्माण्ड के रहस्यों के बारे में विस्तृत जानकारी जुटाई जा सकेगी।

विश्व में अभी तक जितना भी ज्ञान प्राप्त हो चुका है, उसकी प्रगति में किस सिद्धान्त अथवा आविष्कार का हाथ सबसे अधिक है यह विवाद का विषय हो सकता है, किन्तु इसमें संदेह नहीं कि जिन अविष्कारों से ज्ञान की प्रगति में क्रान्ति कही जा सकती है, उनमें अलबर्ट आइन्स्टीन के सापेक्षवाद का स्थान हमेशा प्रमुख रहेगा।

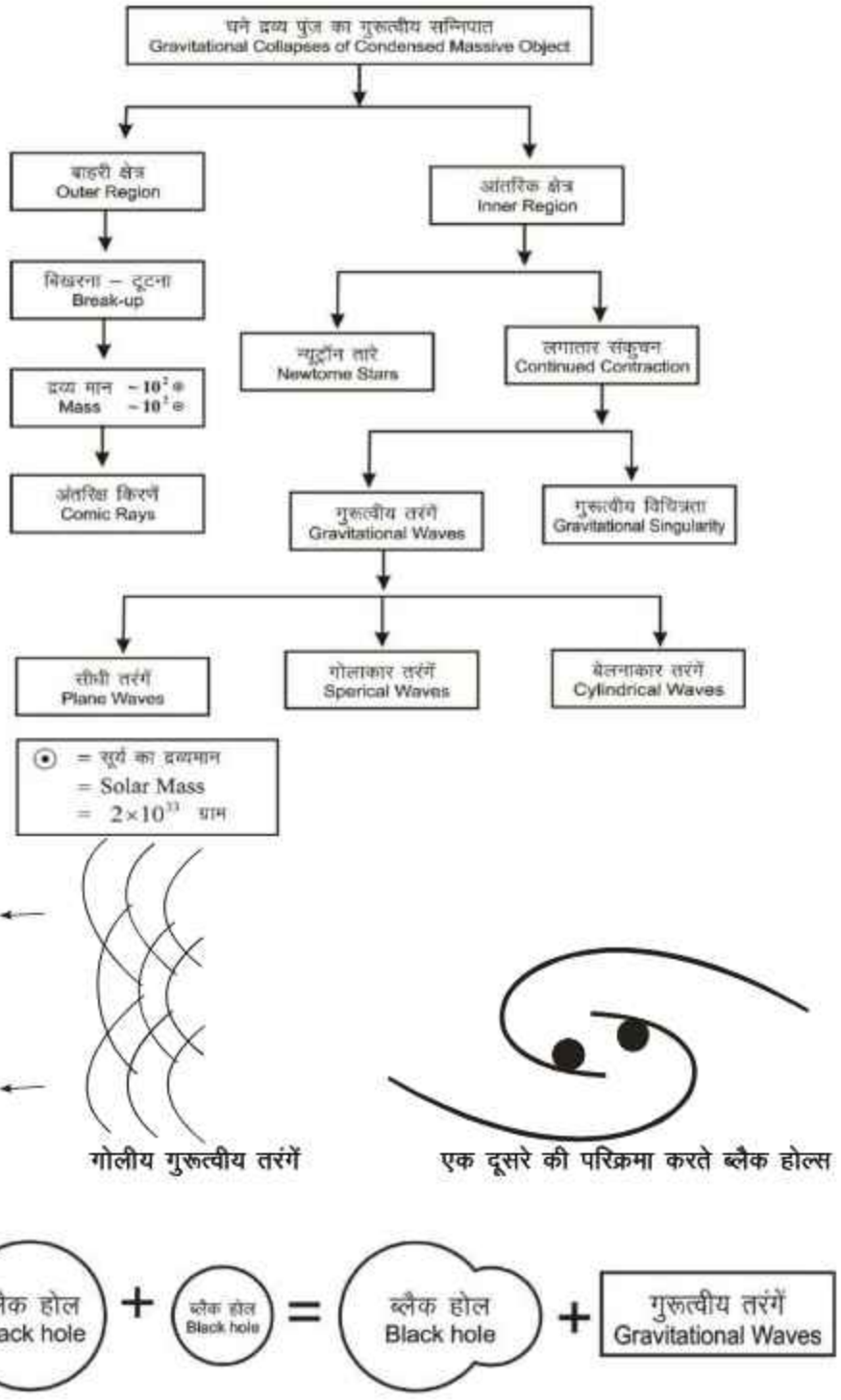

संदर्भ

1. ग्रेविटेशनल वेव डिटेक्टेड 100 इयर्स आफ्टर आइन्स्टीन प्रेडिक्शन, नेशनल साइंस फाउण्डेशन, 2016।
2. वेबर, जे0(1969) फिजकल रिव्यू लेटर, खण्ड–22, पृ0 1320।
3. ग्रेविटेशनल वेव्स फ्रॉम ब्लैक होल, बी0बी0सी0 न्यूज, 11 फरवरी 2016।
4. लीगो, डिटेक्शन आफ ग्रेविटेशनल वेव्स, ओपन ए न्यू विन्डोस, 2016।

भारत में जल संकट और संरक्षण

राजीव कुमार सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, गणित विभाग
पी0बी0पी0जी0 कॉलेज, प्रतापगढ़ सिटी, प्रतापगढ़–,230002 उ0प्र0, भारत
dr.rajeevthakur2012@gmail.com

प्राप्त तिथि– 23.07.2016; स्वीकृत तिथि– 14.09.2016

सार– पिछले कुछ दशकों से जल संकट भारत के लिए बहुत बड़ी समस्या है। इन दिनों जल संरक्षण शोधकर्ताओं के लिए मुख्य विषय है। जल संरक्षण की बहुत सी विधियां सफल हो रही है। जल संकट और जल संरक्षण से सम्बन्धित अनेक विषयों पर इस लेख में विचार किया गया है।

बीज शब्द– सार्वभौमिक विलायक, नलकूपों द्वारा रिचार्जिंग, रिसाव टैक द्वारा, कृत्रिम रिचार्ज प्रणाली।

Water problem in India and conservation

Rajeeve Kumar Singh
Assistant Professor, Department of Mathematics
P.B. P.G. College, Pratapgarh City, Pratapgarh-230002, U.P., India
dr.rajeevthakur2012@gmail.com

Abstract- Water crisis has been a huge problem for past few decades in India. Water conservation is an investigative area for researchers these days. There are many successful methods implemented so for to conserve water. Various issues related to water crisis & its conservation has been discussed briefly in this paper.

Key words- Universal solvent, recharging by tubewells, by leakage tank, artificial recharge system.

आधारभूत पंचतत्वों में से एक जल हमारे जीवन का आधार है। जल के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। इसलिए कवि रहीम ने कहा है– "रहिमन पानी राखिये बिन पानी सब सून। पानी गये न उबरै मोती मानुष चून।" यदि जल न होता तो सृष्टि का निर्माण सम्भव न होता। यही कारण है कि यह एक ऐसा प्राकृतिक संसाधन है जिसका कोई मोल नहीं है। जीवन के लिए जल की महत्ता को इसी से समझा जा सकता है कि बड़ी–बड़ी सभ्यताएं नदियों के तट पर ही विकसित हुई और अधिकांश प्राचीन नगर नदियों के तट पर ही बसे। जल की उपादेयता को ध्यान में रखकर यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम न सिर्फ जल का संरक्षण करें बल्कि उसे प्रदूषित होने से भी बचायें। इस सम्बन्ध में भारत के जल संरक्षण की एक समृद्ध परम्परा रही है और जीवन के बनाये रखने वाले कारक के रूप में हमारे वेद–शास्त्र जल की महिमा से भरे पड़े हैं। ऋग्वेद में जल को अमृत के समतुल्य बताते हुए कहा गया है– अप्सु अन्तः अमतं अप्सु भेषनं।[1]

जल की सरंचना– पूर्णतः शुद्ध जल रंगहीन, गंधहीन व स्वादहीन होता हैं इसका रासायनिक सूत्र H_2O है। ऑक्सीजन के एक परमाणु तथा हाइड्रोजन के दो परमाणु बनने से H_2O अर्थात जल का एक अणु बनता है। जल एक अणु में जहाँ एक ओर धनावेश होता है वहीं दूसरी ओर ऋणावेश होता है। जल की ध्रुवीय संरचना के कारण इसके अणु कड़ी के रूप में जुड़े रहते हैं। वायुमण्डल में जल तरल, ठोस तथा वाष्प तीन स्वरूपों में पाया जाता है। पदार्थों को घोलने की विशिष्ट क्षमता के कारण जल को सार्वभौमिक विलायक कहा जाता है। मानव शरीर का लगभग 66 प्रतिशत भाग पानी से बना है तथा एक औसत वयस्क के शरीर में पानी की कुल मात्रा 37 लीटर होती है। मानव मस्तिष्क का 75 प्रतिशत हिस्सा जल होता है। इसी प्रकार मनुष्य के रक्त में 83 प्रतिशत मात्रा जल की होती है। शरीर में जल की मात्रा शरीर के तापमान को सामान्य बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।[2]

जल संकट और भारत– आबादी के लिहाज से विश्व का दूसरा सबसे बड़ा देश भारत भी जल संकट से जूझ रहा है। यहाँ जल संकट की समस्या विकराल हो चुकी है। न सिर्फ शहरी क्षेत्रों में बल्कि ग्रामीण अंचलों में भी जल संकट बढ़ा है। वर्तमान में 20 करोड़ भारतीयों को शुद्ध पेयजल उपलब्ध नहीं हो पाता है। उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, तमिलनाडु और केरल जैसे राज्यों में जहाँ पानी की कमी बढ़ी है, वही राज्यों के मध्य पानी से जुड़े विवाद

भी गहराए हैं। भूगर्भीय जल का अत्यधिक दोहन होने के कारण धरती की कोख सूख रही है। जहाँ मीठे पानी का प्रतिशत कम हुआ है वहीं जल की लवणीयता बढ़ने से भी समस्या विकट हुई है। भूगर्भीय जल का अनियंत्रित दोहन तथा इस पर बढ़ती हमारी निर्भरता पारम्परिक जल स्त्रोतों व जल तकनीकों की उपेक्षा तथा जल संरक्षण और प्रबन्ध की उन्नत व उपयोगी तकनीकों का अभाव, जल शिक्षा का अभाव, भारतीय संविधान में जल के मुद्दे को राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्र में रखा जाना, निवेश की कमी तथा सुचिंतित योजनाओं का अभाव आदि ऐसे अनेक कारण है जिसकी वजह से भारत में जल संकट बढ़ा है। भारत में जनसंख्या विस्फोट ने जहाँ अनेक समस्याऐं उत्पन्न की हैं, वहीं पानी की कमी को भी बढ़ाया है। वर्तमान समय में देश की जनसंख्या प्रतिवर्ष 1.5 करोड़ प्रतिशत बढ़ रही है। ऐसे में वर्ष 2050 तक भारत की जनसंख्या 150 से 180 करोड़ की बीच पहुंचने की सम्भावना है। ऐसे में जल की उपलब्धता को सुनिश्चित करना कितना दुरूह होगा, समझा जा सकता है। आंकड़े बताते हैं कि स्वतंत्रता के बाद प्रतिव्यक्ति पानी की उपलब्धता में 60 प्रतिशत की कमी आयी है।[3]

जल संरक्षण एवं संचय के उपाय– जल जीवन का आधार है और यदि हमें जीवन को बचाना है तो जल संरक्षण और संचय के उपाय करने ही होंगे। जल की उपलब्धता घट रही है और मारामारी बढ़ रही है। ऐसे में संकट का सही समाधान खोजना प्रत्येक मनुष्य का दायित्व बनता है। यहीं हमारी राष्ट्रीय जिम्मेदारी भी बनती है और हम अंतर्राष्ट्रीय समुदाय से भी ऐसी ही जिम्मेदारी की अपेक्षा करते हैं। जल के स्त्रोत सीमित हैं। नये स्त्रोत हैं नहीं, ऐसे में जल स्त्रोतो को संरक्षित रखकर एवं जल का संचय कर हम जल संकट का मुकाबला कर सकते हैं। इसके लिए हमें अपनी भोगवादी प्रवित्तियों पर अंकुश लगाना पड़ेगा और जल के उपयोग में मितव्ययी बनना पड़ेगा। जलीय कुप्रबंधन को दूर कर भी हम इस समस्या से निपट सकते हैं। यदि वर्षा जल का समुचित संग्रह हो सके और जल के प्रत्येक बूंद को अनमोल मानकर उसका संरक्षण किया जाये तो कोई कारण नही कि वैश्विक जल संकट का समाधान न प्राप्त किया जा सके।[4] जल के संकट से निपटने के लिए कुछ महत्पूर्ण सुझाव यहां बिन्दुवार दिये जा रहे हैं–

1. प्रत्येक फसल के लिए ईष्टतम जल की आवश्यकता का निर्धारण किया जाना चाहिए और तद्नुसार सिंचाई की योजना बनानी चाहिए। सिंचाई कार्यों के लिए स्प्रिंकलर और ड्रिप सिंचाई जैसे पानी की कम खपत वाली प्रौद्योगिकियों को प्रोत्साहित करना चाहिए। कृषि में औसत व द्वितीयक गुणवत्ता वाले पानी के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए, विशेष रूप से पानी के अभाव वाले क्षेत्रों में।
2. विभिन्न फसलों के लिए पानी की कम खपत वाले तथा अधिक पैदावार वाले बीजों के लिए अनुसंधान को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
3. जहाँ तक सम्भव हो ऐसे खाद्य उत्पादों का प्रयोग करना चाहिए जिसमें पानी का कम प्रयोग होता है। खाद्य पदार्थों की अनावश्यक बर्बादी में कमी लाना भी आवश्यक है। विश्व में उत्पादित होने वाला लगभग 30 प्रतिशत खाना खाया नही जाता है और यह बेकार हो जाता है। इस प्रकार इसके उत्पादन में प्रयुक्त हुआ पानी भी व्यर्थ चला जाता है।
4. जल संकट से निपटने के लिए हमें वर्षा जल भण्डारण पर विशेष ध्यान देना होगा। वाष्पन या प्रवाह द्वारा जल खत्म होने से पूर्व सतह या उपसतह पर इसका संग्रह करने की तकनीक को वर्षा जल भण्डारण कहते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि तकनीक को न सिर्फ अधिकाधिक विकसित किया जाय बल्कि ज्यादा से ज्यादा अपनाया भी जाय। यह एक ऐसी आसान विधि है जिसमें न तो अतिरिक्त जगह की जरूरत होती है और न ही आबादी विस्थापन की। इससे मिट्टी का कटाव भी रूक जाता है तथा पर्यावरण भी संतुलित रहता है। बंद एवं बेकार पड़े कुओं, पुनर्भरण पिट, पुनर्भरण खाई तथा पुनर्भरण शॉफ्ट आदि तरीकों से वर्षा जल का बेहतर संचय कर हम पानी की समस्या से उबर सकते हैं।
5. वर्षा जल प्रबंधन और मानसून प्रबंधन को बढ़ावा दिया जाय और इससे जुड़े शोध कार्यों को प्रोत्साहित किया जाय। जल शिक्षा को अनिवार्य रूप से पाठ्यक्रम में जगह दी जाय।
6. जल प्रबंधन और जल संरक्षण की दिशा में जन जागरूकता को बढ़ाने का प्रयास हो। जल प्रशिक्षण को बढ़ावा दिया जाय तथा संकट से निपटने के लिए इनकी सेवाएं ली जाय।
7. पानी के इस्तेमाल में हमें मितव्ययी बनना होगा। छोटे–छोटे उपाय कर जल की बड़ी बचत की जा सकती है। मसलन हम दैनिक जीवन में पानी की बर्बादी कतई न करें और एक–एक बूंद की बचत करें। बागवानी जैसे कार्यों में भी जल के दुरूपयोग को रोकें।
8. औद्योगिक विकास और व्यवाहारिक गतिविधियों की आड़ में जल के अंधाधुंध दोहन को रोकने के लिए तथा इस प्रकार से होने वाले जल प्रदूषण को रोकने के लिए कड़े व पारदर्शी कानून बनाये जाए।
9. जल संरक्षण के लिए पर्यावरण संरक्षण जरूरी है। जब पर्यावण बचेगा तभी जल बचेगा। पर्यावरण असंतुलन भी जल संकट का एक बड़ा कारण है। इसे इस उदाहरण से समझ सकते हैं। हिमालय पर्यावरण के कारण सिकुडने लगे हैं। विशेषज्ञों के अनुसार सन् 2030 तक ये ग्लेशियर काफी अधिक सिकुड़ सकते हैं। इस तरह हमें जल क्षति भी होगी। पर्यावरण संरक्षण के लिए हमें वानिकी को नष्ट होने से बचाना होगा।
10. हमें ऐसी विधियां और तकनीकें विकसित करनी होगी जिनसे लवणीय और खारे पानी को मीठा बनाकर उपयोग में लाया जा सके। इसके लिए हमे विशेष रूप से तैयार किये गये वाटर प्लांटों को स्थापित करना होगा। चेन्नई में यह प्रयोग बेहद सफल रहा जहाँ इस तरह स्थापित किये गये वाटर प्लांट से रोजाना 100 मिलियन लीटर पानी पीने योग्य पानी तैयार किया जाता है।
11. प्रदूषित जल का उचित उपचार किया जाय तथा इस उपचारित जल की आपूर्ति औद्योगिक इकाईयों को की जाय।
12. जल प्रबंधन व शोध कार्यो के लिए निवेश को बढ़ाया जाय।

13. जनसंख्या बढ़ने से जल उपभोग भी बढ़ता है ऐसे में विशिष्ट जल उपलब्धता(प्रतिव्यक्ति नवीनीकृत जल संसाधन की उपलब्धता) कम हो जाती है। अतएव इस परिपेक्ष्य में हमे जनंसख्या पर भी ध्यान देना होगा।
14. हमें पानी के कुशल उपयोग पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। जल वितरण में असमानता को दूर करने के लिए जल कानून बनाने होंगे।

जलसंचय की विधियां

नलकूपों द्वारा रिचार्जिंग– छत से एकत्र पानी को स्टोरेज टैंक तक पहुंचाया जाता है। स्टोरेज टैंक का फिल्टर किया हुआ पानी नलकूपों तक पहुँचाकर गहराई में स्थित जलवाही स्तर को रिचार्ज किया जाता है। उपयोग न किये जाने वाले नलकूप से भी रिचार्ज किया जा सकता है।

गड्ढे खोदकर– ईंटों के बने ये किसी भी आकार के गडढे का मुंह पक्की फर्श से बंद कर दिया जाता है। इनकी दीवारों में थोड़ी थोड़ी दूर पर सुराख बनाये जाते है इसकी तलहटी में फिल्टर करने वाली वस्तुएं डाल दी जाती हैं।

सोक वेज या रिचार्ज साफ्ट्स– इनका उपयोग वहाँ किया जाता है जहाँ मिट्टी जलोढ़ होती है। इसमें 30 सेमी व्यास वाले 10 से 15 मीटर गहरे छेद बनाये जाते हैं, इसके प्रवेश द्वार पर जल एकत्र करने के लिए एक बड़ा आयताकार गड्ढा बनाया जाता है। इसका मुँह पक्की फर्श से बन्द कर दिया जाता है। इस गड्ढे में बजरी, रोड़ी, बालू इत्यादि डाले जाते हैं।

खोदे कुएं द्वारा रिचार्जिंग– छत के पानी को फिल्ट्रेशन बेड से गुजारने के बाद कुओं तक पहुंचाया जाता है। इस तरीके में रिचार्ज गति को बनाये रखने के लिए कुएं की लगातार सफाई करनी होती है।

खाई बनाकर– जिस क्षेत्र में जमीन की ऊपरी पर्त कठोर और छिछली होती है वहाँ इसका उपयोग किया जाता है। जमीन पर खाई खोदकर उसमें बजरी, ईंट के टुकड़े आदि को भर दिया जाता है। यह तरीका छोटे मकानों, खेल के मैदानों, पार्कों इत्यादि के लिए उपयुक्त होता है।

रिसाव टैंक– ये कृत्रिम रूप से सतह पर निर्मित जल निकाय होते हैं। बारिश के पानी को यहाँ जमा किया जाता है। इससे संचित जल रिसकर धरती के भीतर जाता है। जिससे भूजल स्तर ऊपर उठता है। संग्रहित जल को सीधे बागवानी इत्यादि कार्यों में प्रयोग किया जा सकता है। रिसाव टैंको को बगीचों, खुले स्थानों और सड़क के किनारे हरित पट्टी क्षेत्र में बनाया जाना चाहिए।

सरफेस रनऑफ हार्वेस्टिंग– शहरी क्षेत्रों में सतह माध्यम से पानी बहकर बेकार हो जाता है। इस बहते जल को एकत्र करके कई माध्यम से धरती के जलवाही स्तर को रिचार्ज किया जाता है।

रूफ टॉप रेनवाटर हार्वेस्टिंग– इस प्रणाली के तहत वर्षा का पानी जहाँ गिरता है वहीं उसे एकत्र कर लिया जाता है। रूफ टॉप हार्वेस्टिंग में घर की छत ही कैचमेन्ट क्षेत्र का काम करती है। बारिश के पानी को घर की छत पर ही एकत्र किया जाता है। इस पानी को या तो टैंक में संग्रह किया जाता है या फिर इसे कृत्रिम रिचार्ज प्रणाली में भेजा जाता है। यह तरीका कम खर्चीला और अधिक प्रभावकारी है।[5]

वास्तव में यह आज की जरूरत है कि हम वर्षा जल का पूर्ण रूप से संचय करें। यह ध्यान रखना होगा कि बारिश की एक बूंद भी व्यर्थ न जाए। इसके लिए रेन वॉटर हार्वेस्टिंग एक अच्छा माध्यम हो सकता है। आवश्यकता है इसे और विकसित व प्रोत्साहित करने की। इसके प्रति जनजागृति और जागरूकता को भी बढ़ाना समाज की आवश्यकता है।

सन्दर्भ

1. अग्रवाल, अनिल(2014–15) परीक्षा मंथन पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, इलाहाबाद, पृ0–207।
2. "पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी", अरिहन्त प्रकाशन, वर्ष 2014, पृ0 180।
3. प्रसाद, अनिरूद्ध(2009) पर्यावरण एवं पर्यावरणीय संरक्षण विधि की रूपरेखा सेण्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, पृ0–41।
4. श्रीवास्तव, डी0 के0 एवं राव, बी0 पी0(1998) पर्यावरण और पारिस्थितिकी, पृ0–259।
5. विज्ञान प्रगति–वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद, भारत, अक्टूबर 2011, पृ0 17–18।

भारत में ग्रीन हाउस कृषिः उत्पादन एवं उपयोगिता

ब्रजेश सिंह[1] एवं वर्षा रानी[2]
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
[2]असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय, भदोही–221401, उ0प्र0, भारत
singh.brajesh30@yahoo.com, dr.varsharani82@gmail.com

प्राप्त तिथि– 29.07.2016; स्वीकृत तिथि– 25.08.2016

सार– भारत एक कृषि प्रधान देश है । 50 प्रतिशत से ज्यादा जनसंख्या के लिए कृषि जीविकोपार्जन का स्रोत है। जैसे–जैसे औद्योगीकरण बढ़ रहा है, वैसे–वैसे कृषि उत्पादन तकनीकियों के विकास की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। ग्रीन हाउस कृषि श्रेष्ठ आधुनिक कृषि तकनीक के रूप में आई है। जिसके प्रयोग से उन जगहों पर भी फसलों का उत्पादन संभव हुआ जहां पहले संभव न था। ग्रीन हाउस कृषि से फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता बढ़ी है।

बीज शब्द– ग्रीन हाउस कांच, पारदर्शी प्लास्टिक चादरें, पराबैंगनी किरणें, उष्मीय विकिरण।

Green house agriculture in India: production and utility

Brijesh Singh[1] and Varsha Rani[2]
[1]Assistant Professor, Department of Chemistry
[2]Assistant Professor, Department of Hindi
Govt. Degree College, Bhadohi-221401, U.P., India
singh.brajesh30@yahoo.com, dr.varsharani82@gmail.com

Abstract- India being an agriculture based country and more than 50% of population involved in agriculture for their livelihood. With increase in indusrialization need of development in production technologies has also increased. Green house farming has emerged one of the best modern agricultural techniques to grow the crop in more areas, where it was not possible earlier. Green house farming has increased quality and production of crops.

Key words- Green house glasses, transperent plastic sheet, ultraviolet rays, thermal radiation.

किसी भी जैविक क्रिया के लिए उचित पर्यावरण की आवश्यकता होती है। अगर पर्यावरण उचित नहीं है तो जैविक क्रिया कम दर से बढ़ेगी या पूरी तरह से रुक जायेगी। पादप या प्राणि जीवन भी इसी सिद्धान्त से नियंत्रित है। कृषि में फसलों के लिए उचित पर्यावरण प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है जिसके फलस्वरूप उत्पादकता की उच्चतम सीमा प्राप्त हो सके। इसके लिए फसलों की उचित मौसम में बुआई करते हैं, सिंचाई और खाद का प्रबन्ध करते हैं। खरपतवार एवं बीमारियों को नियंत्रित करते हैं, तथा उचित समय पर फसल चक्र पूर्ण करते हैं। ऐसे में भी प्राकृतिक विपदाएं जैसे अतिवृष्टि या अनावृष्टि, ओलावृष्टि, कीट–प्रकोप, आदि उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव बनाये रखती हैं। परिणामस्वरूप खुले खेतों में परम्परागत खेती से कभी–कभी ही अधिकतम उत्पादकता प्राप्त हो पाती है। जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ती जा रही है और कृषि योग्य भूमि का आकार घटता जा रहा है, वैसे–वैसे कृषि उत्पादन की क्षमता बढ़ाना आवश्यक हो गया है, फिर इस बात की भी आवश्यकता है कि नागरिकों को उचित पोषण प्राप्त हो और उत्पादक को कम भूमि से अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त हो। फसलोत्पादन के लिए आवश्यक संसाधनों को एक निश्चित सीमा से अधिक बढ़ाना सम्भव नहीं है। ऐसे में कम से कम संसाधनों से अधिक से अधिक उत्पादन क्षमता का विकास आवश्यक हो गया है। भारत एक कृषि प्रधान देश है और लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या के लिए कृषि ही जीविकोपार्जन का स्रोत है। जैसे–जैसे औद्योगिकीकरण बढ़ रहा है और ग्रामीण युवक शिक्षित हो रहा है, वैसे–वैसे कृषि उत्पादन तकनीकियों के विकास की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। ऐसा न होने पर आशंका है कि आने वाले समय में कृषि उत्पादन के लिए समुचित मानव संसाधन जुटाना मुश्किल होगा। ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों एवं पहाड़ी क्षेत्रों से मैदानी क्षेत्रों में हो रहे युवा पलायन को रोकना अति आवश्यक है। इन सभी परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में ग्रीनहाउस तकनीकी का विकास भारत वर्ष के किसानों के लिए बहुत ही आवश्यक हो गया है। ग्रीन हाउस कांच से ढका इस्पात, एल्यूमीनियम या

बांस का बनाया जा सकता है। निर्माण सामग्री चयन फसल और स्थान विशेष के अनुसार किया जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि ग्रीन हाउस कृषि के उपयोग से उत्पादक को समुचित लाभ हो।

ग्रीन हाउस की उपयोगिता– भारत वर्ष में ग्रीनहाउस की उपयोगिता निम्नलिखित है।

1. जिन क्षेत्रों में परम्परागत खेती नहीं की जा सकती, उन परिस्थितियों में फसलोत्पादन की संभावना बन जाती है।
2. फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता बढ़ जाती है।
3. किसी भी स्थान पर वर्ष पर्यन्त फसलोत्पादन संभव है।
4. किसी भी फसल को किसी भी स्थान पर वर्ष पर्यन्त उत्पादित किया जा सकता है।
5. बहुत कम क्षेत्र में फलोत्पादन करके पर्याप्त जीविकोपार्जन संभव है।

ग्रीन हाउस तकनीक का विकास– ग्रीन हाउस तकनीकी का प्राथमिक विकास विश्व के ठंडे क्षेत्रों में लगभग दो शताब्दी पूर्व हुआ था। उन क्षेत्रों में अत्यधिक ठंड के कारण खुले खेतों में फसलोत्पादन कुछ महीनों के लिए संभव है। वहां सब्जियों, फलों और फूलों के उत्पादन को वर्ष पर्यन्त संभव बनाने के लिए कांच के घरों का उपयोग शुरू हुआ। 'ग्रीन हाउस प्रभाव' के कारण ठंडे मौसम में सूर्य के प्रकाश में इन कांच घरों में तापमान बढ़कर फसलोचित हो जाता है और फसलों से संबंधित जैविक क्रियाएं तेज गति से सम्पन्न होती हैं। इन कांच घरों में आवश्यकता अनुसार तापमान, आर्द्रता, प्रकाश, सिंचाई, पोषण, कार्बन डाइऑक्साइड गैस आदि के नियंत्रण का विकास होता गया और आज ग्रीन हाउस तकनीकी का स्वरूप अत्याधुनिक हो गया है। अब कई हैक्टेयर क्षेत्रफल में बने ग्रीनहाउस में फसलोत्पादन संबंधी क्रियाओं को कम्प्यूटर द्वारा नियंत्रित उपकरणों की सहायता से सम्पन्न कर, उत्पादकता की चरम सीमाओं की प्राप्ति संभव हो गई है। एक हैक्टेयर क्षेत्रफल में वार्षिक 700 टन खीरा उत्पादन और 350 टन टमाटर उत्पादन संभव हुआ है।[1] ग्रीन हाउस तकनीकी की उपयोगिता के कारण इसका प्रचलन अब विश्व के प्रत्येक भाग में हो रहा है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद प्लास्टिक पदार्थ के विकास के फलस्वरूप ग्रीनहाउस तकनीकी में मूलभूत परिवर्तन हुआ है। अब विश्व में लगभग 90 प्रतिशत नये ग्रीनहाउस आवरण के लिए प्लास्टिक की पारदर्शी चादरों का उपयोग होता है।

ग्रीन हाउस प्रभाव– ग्रीन हाउस प्रभाव पारदर्शी की सूर्य के प्रकाश से संबंधित गुणता पर आधारित है। प्रारम्भ में इस प्रभाव को कांच की गुणता से जोडा गया था। अब यह विदित है कि प्रत्येक पारदर्शी पदार्थ किसी न किसी सीमा तक ग्रीनहाउस प्रभाव पैदा करने में सक्षम है। यह वही प्रभाव है, जिसके कारण बंद घर में जाड़े के मौसम में कांच की खिड़की से आते हुए सूर्य के प्रकाश में बैठना अच्छा लगता है अथवा सर्दी की ऋतु में भी सूर्य के प्रकाश में बंद खिड़की वाली कार में तापमान का बढ़ जाना इसी ग्रीन हाउस प्रभाव का उदाहरण है। कांच या दूसरे पारदर्शी पदार्थ उष्मीय विकिरण के विभिन्न भागों के लिए अलग–अलग पारगमनांक दर्शित करते हैं। कांच की गुणता है कि यह सौर उर्जा के लगभग 80 प्रतिशत भाग को कांच घर में स्थित उपकरणों एवं सतहों के तापमान को बढ़ाती है। बढ़े हुए तापमान पर यह उपकरण और सतह उष्मीय विकिरण उत्पन्न करते हैं जो सुदूर लाल श्रेणी में आता है। इस सुदूर लाल श्रेणी के विकिरण को कांच बाहर नहीं जाने देता और इस प्रकार कांच में सौर उर्जा एकत्रित हो जाती है, जिससे तापमान भी बढ़ता है। यही प्रभाव प्लास्टिक की पारदर्शी चादरों वाले ग्रीनहाउस में भी पाया जाता है। फलस्वरूप बिना किसी कृत्रिम उर्जा के ग्रीनहाउस प्राकृतिक सौर उर्जा द्वारा तापमान बढ़ जाता है। यह ग्रीनहाउस प्रभाव शीतकाल में बेहतर फसल उत्पादकता के लिए उपयोगी है। ग्रीनहाउस की परिभाषा और उपयोगिता अब अधिक विस्तृत है। अब ग्रीनहाउस को संरक्षित खेती का पर्याय माना जाता है। जिसमें आवश्यकता अनुसार पर्यावरण नियंत्रण का वांछित कृषि कार्य किया जा सके।

ग्रीन हाउस तकनीकी द्वारा उगाई गई सब्जियां– जैसा कि उपरोक्त जानकारी से विदित है, ग्रीनहाउस का स्वरूप एवं इसकी कार्य प्रणाली का संबंध स्थान और अभीष्ट कृषि कार्यों से हैं। भारतवर्ष में मौसम और फसलों की बहुत विविधताएं हैं। अतः यह सम्भव नहीं है कि ग्रीनहाउस की कोई एक परिकल्पना सभी स्थितियों के लिए पर्याप्त होगी। हां कुछ सामान्य विचार हैं जिनको ध्यान में रखना लाभदायक है।

फसलों का चुनाव– आकार को ध्यान में रखते हुए आमतौर पर छोटे और कम आयतन के पौधों के लिए ग्रीनहाउस उपयुक्त है। बौनी प्रजाति के फल भी ग्रीनहाउस में उगाये जा सकते हैं। निम्नलिखित तालिका में उल्लिखित फसलों को ग्रीनहाउस में उगाया गया है। फसल का चुनाव ग्रीनहाउस की क्षमता, उत्पादक के अनुभव एवं ब्रिकी संबंधी कारकों के आधार पर होता है। फसलों की विस्तृत जानकारी तालिका–1 में दी गयी है।

तालिका–1 ग्रीन हाउस में उगाये जाने वाले फल, फूल एवं सब्जियां

सब्जियां	फूल	फल
टमाटर	गुलाब	स्ट्राबेरी
शिमला मिर्च	गुलदाउदी	अंगूर
खीरा	आर्किड्स	सिट्रस
पत्तागोभी	फॅर्न	आलू बुखारा
फूलगोभी	कारनेशन	आड़ू
ब्रोकोली	फ्रेशिया	केला
हरी प्याज	एन्थोरियम	पपीता
सेम	ग्लेडिओलस	खुमानी
मटर	लिली	
चुकन्दर	ट्यूलिप	
मिर्च	डेजी	
स्क्वैश	वैक्सफ्लावर	
भिंडी	रसकस	
शलगम	गर्नीगोजैन्थास	
मूली	एल्सट्रोनेटिया	
गजर	जरबेरा	
अदरक	बिगोनिया	
मिर्च	डेजी	

स्थापना सम्बन्धी आयाम– ग्रीन हाउस तकनीक की सब्जियों का विकास ठंडे प्रदेशों में शुरू हुआ।[2] अधिकतर ग्रीनहाउस अब पॉलीथीन या पी.वी.सी. की पराबैंगनी स्थिरीकृत पत्तियों के आवरण तथा इस्पात, एल्यूमीनियम, लकड़ी या बांस के ढांचे से बनते हैं। भारत में विलुप्त प्रायः वनों की स्थिति के कारण ढाचों के लिए लकड़ी का प्रयोग वांछनीय नहीं है लेकिन स्थित विशेष में लकड़ी और बांस का उपयोग वर्जित नहीं है। उदाहरण के लिए, देश में पूर्वोत्तर राज्यों में ऊँची गुणवत्ता के बांस आसानी से और कम कीमत पर उपलब्ध हैं। इन स्थानों पर बांस का उपयोग ग्रीनहाउस के ढांचे के निर्माण में किया जा सकता है। एल्यूमीनियम में जंग नहीं लगती एवं इसके उपयोग से ढांचे का भार कम किया जा सकता है । लेकिन भारतवर्ष में अभी ग्रीनहाउस के ढांचे में उपयुक्त एल्यूमीनियम मिश्रित धातु के हिस्से उपलब्ध नहीं है। अतः इस्पात का उपयोग अधिकतम है। जंग लगने को कम करने के लिए इस्पात को जस्तीकृत करना ठीक है। लकड़ी और बांस के ढांचे प्रायः 5–7 वर्ष तक आयु वाले होते हैं, जबकि धातु के ढांचे की आयु 20–25 वर्ष होती है। भारत वर्ष मे विद्युत महंगा है और हर समय उपलब्ध नहीं है। अतः नियंत्रित पर्यावरण वाले ग्रीनहाउस का प्रचलन कठिन ही नहीं अपितु महंगा हो जाता है। या तो अनवरत विद्युत प्राप्ति के लिए जनरेटर की स्थापना आवश्यक है या ग्रीनहाउस परिकल्पना प्राकृतिक संसाधन पर आधारित होनी चाहिए। ग्रीनहाउस की स्थापना ऐसे स्थान पर हो जहां वर्षा का पानी इकट्ठा न होता हो, जो सड़क के नजदीक हो, जहां समुचित धूप, अच्छा पानी और समुचित ऊर्जा उपलब्ध हो। भारतवर्ष में अधिकतर स्थानों पर ग्रीनहाउस पर समुचित सौर ऊर्जा का समावेश दिशामान पर निर्भर नहीं करता है लेकिन बहुविस्तरीय ग्रीनहाउस में परनाले की दिशा आमतौर पर उत्तर–दक्षिण होनी चाहिए। ग्रीनहाउस की परिकल्पना पर वायु वेग का प्रभाव बहुत महत्वपूर्ण होता है। ग्रीनहाउस से लगभग 30 मीटर उत्तर–पश्चिम दिशा में आंधी के प्रकोप को कम करने के लिए ऊँचे वृक्षों की कतार लगाना उपयोगी है। ग्रीनहाउस में पौधों की सिंचाई 'बूंद–सिंचाई विधि' (ड्रिप) द्वारा की जाती है। उचित उत्पादकता और लाभ के लिए ग्रीनहाउस का सफल प्रबंधन अति आवश्यक है। इस प्रबंधन में न सिर्फ फसलों का उत्पादन अपितु कटाई के उपरान्त समुचित उपचार एवं उत्पाद की बिक्री भी सम्मिलित है। उत्पाद की उचित बिक्री के अभाव में ग्रीन हाउस से लाभ बहुत कम हो सकता हैं।

ग्रीन हाउस फसलोत्पादन– ग्रीन हाउस तकनीक की सब्जियों के लिए काँच का घर होता है। ग्रीन हाउस की स्थापना तथा उसमें वातावरण अनुकूलन के लिए धन खर्च होता है इसलिए ग्रीनहाउस में उगाई गई फसल तभी लाभदायक हो सकती है, जबकि उससे अपेक्षाकृत अधिक कीमत प्राप्त हो सके। सामान्य रूप से ग्रीनहाउस में उत्पादित सब्जियों में ये मुख्य हैं– टमाटर, खीरा, शिमला मिर्च, सलाद, हरी प्याज, बंदगोभी, सेम, मटर, पालक, बैंगन, भिंडी, कद्दू, मूली आदि। फूलों में गुलाब कार्नेशन, जरबेरा, गुलदाउदी, बिगोनिया आदि मुख्य हैं। अच्छी गुणवत्ता युक्त स्ट्राबेरी भी ग्रीनहाउस में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। इनके अलावा तम्बाकू तथा औषधीय जड़ी–बूटियों के साथ–साथ पौध उत्पादन के लिए भी ग्रीनहाउस का उपयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है।[3] विभिन्न फसलों की उपज का ब्यौरा तालिका–2 में दर्शाया गया है।

तालिका–2 भारतवर्ष में ग्रीनहाउस में उत्पादित कुछ फसलों की उपज

सब्जी	उपज (टन/है)	फूल	उपज (लाख/ है)
टमाटर	140	गुलाब	15–20
शिमला मिर्च	90	गुलादाउदी	24–40
खीरा	180	जरबेरा	15–25
ब्रोकोली	15	कारनेशन	20–25
चप्पन कद्दू	35		

ग्रीन हाउस के अन्दर फसलोत्पादन में खासकर सब्जी उत्पादन में प्रजाति या चयन एक महत्वपूर्ण कारक है, इसलिए ग्रीनहाउस में अच्छी गुणवत्ता वाले अधिक उपज देने वाली संकर प्रजातियों का ही उपयोग करना चाहिए। सिंचाई के लिए बूंद–बूंद सिंचाई विधि का प्रयोग लाभप्रद होता है। ग्रीनहाउस के अन्दर सफाई अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि पुरानी पत्तियों आदि को न निकालने से रोग आक्रमण की संभावना बढ़ जाती है। खीरा व टमाटर जैसी फसलों में प्रूनिंग व ट्रेनिंग की भी आवश्यकता होती है। वैसे तो अवांछित वृद्धि व पुरानी पत्तियों को निकालने के लिए प्रत्येक फसल में प्रूनिंग की आवश्यकता पड़ती है। ट्रिमिंग की भी विभिन्न पद्धतियों का उपयोग कर सकते हैं, लेकिन वर्टिकल ट्रिमिंग विधि ज्यादा उपयोगी है। खासकर टमाटर, खीरा आदि जैसी फसलों के लिए। प्रूनिंग व ट्रिमिंग की वजह से संवातन रहता है और कीट–व्याधि का प्रकोप भी कम होता है। कीट–व्याधि नियंत्रण के लिए समय पर कीटनाशक व फफूंदीनाशक दवाओं का छिड़काव करते रहना चाहिए। ग्रीनहाउस के अंदर एकलिंगाश्रयी पौधों के लिए पर–परागण की आवश्यकता पड़ती है। यह कार्य हाथ से किया जाता हैं। परागण के लिए मादा फूल के ऊपर नर फूल के परागण को छोड़ देते हैं, इससे फल प्रतिशत भी बढ़ जाता है। यह कार्य प्रातः 8–10 बजे तक किया जाता है।

ग्रीन हाउस का रख रखाव– ग्रीन हाउस के रखरखाव के लिये निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

1. ग्रीन हाउस आवरण की सफाई नियमित अन्तराल पर करते हैं। धूल आदि के कणों द्वारा प्रकाश की पारगम्यता कम हो जाती है, खासकर पॉली ग्रीनहाउस में। इसलिए इनकी समय–समय पर धुलाई आवश्यक है।
2. पॉलीथीन आवरण को 3 साल के अन्तराल पर बदल देना चाहिए।
3. आवरण अगर कहीं फट गया हो तो उसकी मरम्मत करवाते रहना चाहिए।
4. ग्रीन हाउस में पम्प, पंखे इत्यादि की सर्विसिंग व देखभाल करनी चाहिए।
5. थर्मोस्टेट में कैलीब्रेशन की समय–समय पर जांच करते रहना चाहिए।

स्वरोजगार की संभावनायें– ग्रीन हाउस तकनीकी से उगाये गये फल और फूल, फसलोत्पादन एवं दूसरे कृषि कार्यों को बहुत लाभदायक तरीके से सम्पन्न किया जा सकता है। इसमें शिक्षित युवाओं के लिए रोजगार की व्यापक संभावनायें हैं। कोई भी युवक या युवती ग्रीनहाउस निर्माण या उनमें रखरखाव या उपयोग संबंधी कार्यों को अपनाकर जीविकोपार्जन कर सकते हैं। सिर्फ 1000 वर्ग मी. भूमि से ग्रीनहाउस तकनीकी का उपयोग करके एक परिवार के लिए समुचित आय प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार ग्रीनहाउस निर्माण या रखरखाव की गतिविधियों से भी काफी आय प्राप्त की जा सकती हैं। तीनों ही स्थितियों में प्रशिक्षण की आवश्यकता है और ऐसे प्रशिक्षण भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में प्राप्त किये जा सकते हैं।

संदर्भ

1. वूड्स(मई1988) ग्लास हाउसेज, हिस्ट्री ऑफ ग्रीन हाउसेज, आरम प्रेस, लंदन, आइ.एस.बी.एन.–906053–85–4।
2. ग्रीन हाउस ही है जलवायु परिवर्तन का कारण, दैट्स हिन्दी(हिन्दी), 03 अप्रैल 2008।
3. पटेल एवं अन्य(फरवरी 2014) एन एण्ड्रॉयड एप्लिकेशन फॉर फार्मर्स फॉर खरीफ एण्ड रबी क्रॉप, 0975–8887, अंक–88, पृष्ठ सं0–04।
4. इण्टरनेट स्रोत।
5. कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, विभिन्न वार्षिक रिपोर्ट।

आपदायें एवं आपदा प्रबन्धन

आशुतोष त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
प्रताप बहादुर पी0जी0 कॉलेज, प्रतापगढ सिटी, प्रतापगढ–230143, उ0प्र0, भारत
drashutoshtripathi6@gmail.com

प्राप्त तिथि–31.07.2016; स्वीकृत तिथि–14.09.2016

सार– जब प्रकृति में असंतुलन की स्थिति होती है, तब आपदायें आती हैं जिसके कारण विकास एवं प्रगति बाधक होती है। प्राकृतिक आपदाओं के अतिरिक्त कुछ विपत्तियाँ मानवजनित भी होती हैं। प्राकृतिक आपदायें जैसे– भूकम्प, सुनामी, भूस्खलन, ज्वालामुखी, सूखा, बाढ़, हिमखण्डों का पिघलना आदि हैं। धैर्य, विवके, परस्पर सहयोग व प्रबंधन से ही इन आपदाओं से पार पाया जा सकता है। आपदा प्रबंधन दो प्रकार से किया जाता है– आपदा से पूर्व एवं आपदा के पश्चात्।

बीज शब्द– सुनामी, भूकम्प, आतंकवाद, साम्प्रदायिक दंगे, संचार माध्यम।

Disasters and disaster management

Ashutosh Tripathi
Assistant Professor, Department of Chemistry
Pratap Bahadur P.G. College, Pratapgarh City, Pratapgarh-230143, U.P., India
drashutoshtripathi6@gmail.com

Abstract- Disasters are the result of imbalance in nature that leads to hindered development and progress. Besides natural calamities there are several manmade situations. Natural disasters are earthquake, Tsunami, landslide, eruption of volcanoes, draught, flood, melting of glaciers etc. Patience, intelligence, mutual cooperation and proper management are the remedial means . Disaster management is of two types- pre disaster and post disaster.

Key words-Tsunami, earthquake, terrorism, communal riots, communication media.

भारत की प्राकृतिक संरचना में पर्वतों, नदियों, समुद्रों आदि का बहुत महत्व है। इनसे असंख्य लोगों की आजीविका चलती है। लेकिन जब प्रकृति में असंतुलन की स्थिति होती है, तब आपदायें आती हैं। इनके आने से प्रगति बाधित होती है और परिश्रम तथा यत्न पूर्वक किये गये विकास कार्य नष्ट हो जाते हैं। ज्योतिष विज्ञान के अनुसार जब ग्रह बुरी स्थिति में होते हैं तब आपदायें आती हैं धर्म शास्त्र के अनुसार जब पाप बढ जाते हैं तब पृथ्वी पर आपदायें आती हैं इन आपदाओं में बाढ़, चक्रवात, बवन्डर, भूकम्प, भूस्खलन, सुनामी, सूखा, ज्वालामुखी विस्फोट, दावानल, टिड्डी दल का हमला, महामारी, समुद्री तूफान, गर्म हवाऐं और शीतलहर आदि इन प्राकृतिक आपदाओं के अतिरिक्त कुछ मानव जनित आपदायें हैं जैसे साम्प्रदायिक दंगे, आतंकवाद, आगजनी, शरणार्थी समस्यायें, वायु, रेल व सड़क दुर्घटनाएं आदि हैं। इसके अतिरिक्त भी अनेक प्रकार की आपदायें हैं जो मानव जीवन को तहस नहस कर देती हैं। भारत में 1980 से 2010 के बीच में समुचित आपदाओं में सूखा 7 बार, भूकम्प 16 बार, महामारी 56 बार, अत्याधिक गर्मी 38 बार, बाढ़ 184 बार, कीट संक्रमण 1 बार, बड़े पैमाने पर सूखा 34 बार, तूफान 92 बार, ज्वालामुखी 2 बार आ चुके हैं। जिनसे जन–जीवन अस्त व्यस्त हुआ और बहुत बड़ी आर्थिक और जन–जीवन की हानि हुयी।

भूकम्प– भूकम्प प्राकृतिक आपदा के सर्वाधिक विनाशकारी रूपों में से एक है, जिसके कारण व्यापक तबाही हो सकती है। भूकप का साधारण अर्थ है "भूमि का कांपना" अर्थात भूमि का हिलना। भूकम्प पृथ्वी की आंतरिक क्रियाओं के परिणाम स्वरूप आते हैं। पृथ्वी के आंतरिक भाग में होने वाली क्रियाओं का प्रभाव पर्पटी पर भी पड़ता है और उसमें अनेक क्रियायें होने लगती हैं। जब पर्पटी की हलचल इतनी शक्तिशाली हो जाती है कि वह चट्टानों को तोड़ देती है और उन्हें किसी भ्रंश के साथ गति करने के लिये मजबूर कर देती है, तब धरती के सतह पर कम्पन या झटके, उत्पन्न हो जाते हैं। कम्पन ही भूकम्प होते है, भूकम्प का पृथ्वी पर विनाशकारी प्रभाव भूस्खलन धरातल का धसाव मानव निर्मित पुलों, भवनों जैसी संरचनाओं की क्षति या नष्ट होने के रूप में दृष्टि गोचर होता है वैसे तो भूंकप पृथ्वी पर कहीं भी व कभी भी आ सकते हैं लेकिन इनकी उत्पत्ति के लिए कुछ क्षेत्र, बहुत ही संवेदनशील होते हैं। संवेदनशील क्षेत्र से तात्पर्य पृथ्वी के उन

दुर्बल भागों से है जहाँ बलन और भ्रंश की घटानाएं अधिक होती हैं इसके साथ ही महाद्वीप और महासागरीय सम्मिलन के क्षेत्र ज्वालामुखी भी भूकम्प उत्पन्न करने वाले प्रमुख स्थान हैं।

चक्रवात– हम सभी जानते हैं कि इसमें वायु बाहर की ओर से केन्द्र की ओर घूमती हुई ऊपर उठती है। इसके केन्द्र में न्यून वायुदाब तथा चारों ओर उच्च वायुदाब रहता है। वायु की क्षैतिज एवं लम्बवत दोनों ही गति तेज रहती है जिसमें आंधी, तूफान के साथ–साथ ओलावृष्टि तथा भारी वर्षा होती है। थोड़ी ही देर में मौसम परिवर्तित हो जाता है। इस सन्दर्भ में उष्ण कटिबन्धीय चक्रवातों–हरिकेन तथा टाईफून का उल्लेख करना महत्वपूर्ण है। चीन में इन्हें टाईफून तथा दक्षिणी संयुक्त राज्य एवं अमेरिका एंव मैक्सिको में इन्हे हरिकेन कहा जाता है इसकी गति 90–125 किमी प्रति घंटा तक देखी गयी है। वायु की तीव्र गति के कारण समुद्री जल के खम्भे बनकर तटवर्ती क्षेत्रों में घुसकर विनाश का भयावह ताण्डव करते हैं।

भूस्खलन– भूस्खलन भी एक प्राकृतिक घटना है भूस्खलन भूमि उपयोग को सीधा प्रभावित करता है। प्रायः पर्वतीय भागों जैसे भारत के हिमालयी पर्वत के ढालू भागों में घटती है। चट्टानों का नीचे खिसकना भूस्खलन कहलाता है। यह क्रिया प्राकृतिक एवं मानवीय कारणों से हो सकती है इसमें सड़क अवरूद्ध हो जाती है। बांध टूट जाते हैं तथा गांव शहर नष्ट हो जाते हैं, भूस्खलन के लिए प्राकृतिक कारणों में भूकम्प सबसे प्रभावशाली कारक है। इसके साथ ही वनों के ह्रास, जल के रिसाव, अपश्रय भू–क्षरण तथा अधिक वर्षा के साथ ही मानवीय क्रियायें जैसे– सड़क निर्माण, उत्खनन, सुरंग, बांध, जलाशय, से भूस्खलन को बढ़ावा मिलता है। सिक्किम, भूटान तथा नेपाल जैसे पहाड़ी क्षेत्रों में भूस्खलन के कारण प्रायः मार्ग अवरूद्ध हो जाते हैं।

बाढ़ आपदा– किसी बड़े भू–भाग का जलमग्न का जलमग्न होना जिसमें अपार जनधन की हानि होती है, बाढ़ कहलाती है। इसके उत्तरदायी कारकों को अतिश्रिष्ट पर्यावरण विनाश, भूस्खलन, बांध, तटबन्ध, तथा बैराज का टूटना, सड़क तथा अन्य निर्माण कार्य नदियों में गाद बढ़ना नदियों में निर्मित बांधों में तलछट भरना आदि है। केन्द्रीय बाढ़ आयोग की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 1953 से 1910 के मध्य औसत रूप से प्रतिवर्ष 7944 मि0 हे0 क्षेत्र बाढ़ से प्रभावित होता रहता है। बाढ़ द्वारा सर्वाधिक प्रभावित क्षेत्र वर्ष 1978 में 17500 मि0 हे0 क्षेत्र भी रहा है। 1953 से 1990 के मध्य की अवधि में औसत रूप से प्रतिवर्ष 12, 18, 690 भवन तथा 1532 व्यक्ति बाढ़ आपदा के शिकार हुए हैं। जबकि इसी अवधि में सर्वाधिक 3507542 भवनों का विनाश वर्ष 1978 में तथा सर्वाधिक 11316 व्यक्ति वर्ष 1977 में बाढ़ के शिकार हुए हैं। हमारे देश में न केवल बाढ़ प्रभावित भूभाग बढ़ता जा रहा है बल्कि बाढ़ प्रभावित जनसंख्या भी बढ़ती जा रही है। खाद्य एवं कृषि संगठन के एक ताजा अनुमान के अनुसार देश की लगभग 25 करोड़ आबादी उन क्षेत्रों में निवास कर रही है। जहाँ बाढ़ के प्रकोप की आशंका है।

सुनामी आपदा– सुनामी दो शब्दों से मिलकर बना है। TSU का अर्थ है बन्दरगाह और NAMI का अर्थ है लहरें। इसे ज्वारीय या भूकम्पीय लहरें भी कहते हैं। समुद्र की सतह हिलने के कारण तली के ऊपर भरा पानी ऊपर नीचे उठता गिरता है। जिससे सुनामी लहरें पैदा होती हैं। भारत में सुनामी का मुख्य केन्द्र उत्तरी भाग एक ही संवेदन शील भूकम्पीय पट्टी से जुड़ा है। यह पट्टी गुजरात के भुज क्षेत्र से हिमालय की तलहटी और म्यांमार होती हुयी सुमात्रा द्वीप तक है।

बादल फटना– इसमें हवायें तेजी से उठती हैं। बिजली की चमक एवं बादलों की गरज के साथ तीव्र वर्षा होती है। ओलापात भी हो सकता है। मूसलाधार वृष्टि के कारण गाँव के गाँव बह जाते है। इसके अतिरिक्त अनेक मानव जनित आपदायें होती हैं इनका निराकरण हमारी सूझबूझ, सावधानी, विवके व परस्पर सहयोग से संभव है। देश में लगभग हर समय किसी न किसी प्रकार की प्राकृतिक मानव–जनित या अन्य प्रकार की आपदायें आती रहती हैं। इसका प्रबन्धन करने की आवश्यकता होती है।

आपदा प्रबंधन– आपदा प्रबंधन के दो विभिन्न एवं महत्वपूर्ण पहलू है। आपदा पूर्व व आपदा पश्चात का प्रबंधन। आपदा पूर्व प्रबन्धन को जोखिम प्रबन्धन के नाम से भी जाना जाता है। आपदा के जोखिम भयंकरता व संवेदनशीलता के संगम से पैदा होते हैं जो मौसमी विविधता व समय के साथ बदलता रहता है। जोखिम प्रबन्धन के तीन अंग है। जोखिम की पहचान, जोखिम में कमी व जोखिम का स्थानान्तरण किसी भी आपदा के जोखिम को प्रबन्धित करने के लिए एक प्रभावकारी रणनीति की शुरूआत जोखिम की पहचान से ही होती है। इसमे प्रकृति ज्ञान और बहुत सीमा तक उसमें जोखिम के बारे में सूचना शामिल होती है। इसमें विशेष स्थान के प्राकृतिक वातावरण के बारे में जानकारी के अलावा वहाँ आ सकने का पूर्व निर्धारण शामिल है। इस प्रकार एक उचित निर्णय लिया जा सकता है कि कहाँ व कितना निवेश करना है। एक ऐसी परियोजना को डिजायन करने में मदद मिल सकती है। जो आपदाओं के गम्भीर प्रभाव के सामने स्थिर रह सकें। अतः जोखिम प्रबन्धन में व इससे जुड़े पेशेवरों का कार्य जोखिम क्षेत्रों का पूर्वानुमान लगाना व उसके खतरे के निर्धारण का प्रयास करना तथा उसके अनुसार सावधानी बरतना, मानव संसाधन व वित्त जुटाना व अन्य बुनियादी संरचनाओं को जोड़ना आपदा प्रबन्धन के इस उपशाखा का ही अंग है।
आपदा प्रबन्ध कई स्तर पर होते है।

केन्द्रीय स्तर पर आपदा प्रबन्धन– उच्च अधिकार प्राप्त समिति(एच0पी0सी0) ने राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक एवं प्रभावी आपदा प्रबन्धन व्यवस्था व आपदा प्रबन्धन मन्त्रालय गठित किया जाए जो कि बाढ़ में एन0सी0सी0एम0 जैसे केन्द्रों और प्राधिकरणों सहित उचित सहायक निकायों का गठन कर सकता है अथवा सहायता के लिए वर्तमान केन्द्रों का उपयोग हो सकता है। आपदा प्रबन्धन हेतु केन्द्र सरकार द्वारा जो सर्वदलीय समिति का गठन किया गया है उसके अध्यक्ष प्रधानमंत्री है। इस योजना के संचालन हेतु एवं वैज्ञानिक एवं तकनीकी सलाहकार समिति भी उसकी सहायता करेगी।

राज्य स्तर पर आपदा प्रबन्धन– हमारे देश में राष्ट्रीय आपदाओं से निपटने की जिम्मेदारी अनिवार्य रूप से राज्यों की है। केन्द्र सरकार की भूमिका भौतिक एवं वित्तीय संसाधनों की सहायता देने की है। अधिकतर राज्यों में राहत आयुक्त हैं जो अपने राज्यों में प्राकृतिक आपदाओं की स्थिति में राहत एवं पुनर्वास कार्यों के प्रभारी है तथा पूर्ण प्रभारी मुख्य सचिव होता है तथा राहत आयुक्त उसके निर्देश एवं नियन्त्रण में कार्य करते हैं। आपदा के समय प्रभावित लोगों तक पहुँचने के प्रयासों में सम्मिलित करने के लिए राज्य सरकार, गैर सरकारी संगठनों तथा अन्य राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों को आमन्त्रित करती है।

जिला स्तर पर आपदा प्रबन्धन– आपदा प्रबन्धन हेतु सभी सरकारी योजनाओं और गतिविधियों के क्रियान्वयन के लिए जिला प्रशासन केन्द्र बिन्दु है। कम से कम समय में राहत कार्य चलाने के लिए जिला अधिकरी को पर्याप्त अधिकार दिये गये हैं। प्रत्येक जिले में आने वाली आपदाओं से निपटने के लिये अग्रिम आपात योजना बनाना जरूरी है तथा निगरानी का अधिकार जिला मजिस्ट्रेट को है।

आपदा प्रबन्धन में महत्वपूर्ण क्षेत्र–

1. **संचार**– संचार आपदा प्रबन्धन में अत्यधिक उपयोगी हो सकता है। संचार साधनों के माध्यम से जागरूकता, प्रचार–प्रसार तथा आपदा प्रतिक्रिया के समय आवास सूचना व्यवस्था के माध्यम से काफी सहायक हो सकता है।

2. **सुदूर संवेदन**– अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी आपदा के प्रभाव को कारगर ढंग करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इसका उपयोग–
   1. शीघ्र चेतावनी रणनीति को विकसित करना
   2. विकास योजनाएं बनाने एवं लागू करने में
   3. संचार और सुदूर चिकित्सा सेवाओं सहित संसाधन जुटाने में
   4. पुनर्वास एवं आपदा पश्चात पुनर्निर्माण में सहायता हेतु किया जा सकता है।

3. **भौगोलिक सूचना प्रणाली**– भौगोलिक सूचना प्रणाली सॉफ्टवेयर भूगोल और कम्प्यूटर द्वारा बनाए गए मानचित्रों का उपयोग, स्थान आधारित सूचना के भण्डार के समन्यव एवं आंकलन के लिए रहता है। भौगोलिक सूचना प्रणाली का उपयोग वैज्ञानिक जाँच, संसाधन प्रबन्धन तथा आपदा एवं विकास योजना में किया जा सकता है।

आपदा नियन्त्रण में व्यक्ति की भूमिका– भूकम्प, बाढ़, आंधी, तूफान में एक व्यक्ति क्या प्रबन्धन कर सकता है। इसको आपदा के सन्दर्भ में निम्नलिखित भूमिका सुझायी गई है–

भूकम्प के समय व्यक्ति की भूमिका– ऐसे समय में बाहर की ओर न भागें, अपने परिवार के सदस्यों को दरवाजे के पास टेबिल के नीचे या यदि बिस्तर पर बीमार पड़े हों तो उन्हे पलंग के नीचे पहुँचा दें, खिड़कियों व चिमनियों से दूर रहें। घर से बाहर हों तो इमारतों, ऊँची दीवारों या बिजली के लटकते हुए तारों से दूर रहें, क्षतिग्रस्त इमारतों में दोबारा प्रवेश न करें।

भूकम्प का भी पूर्वानुमान लग सकेगा– टी0वी0 रेडियो, इन्टरनेट से जहाँ तक सम्भव हो जुड़े रहें, अधिक वर्षा और अकाल जैसी प्राकृतिक आपदाओं के पूर्वानुमान के बाद अब भूकम्प की भी भविष्यवाणी की जा सकेगी लेकिन इसका पता कम्प्यूटर पर काम कर रहे व्यक्ति को सिर्फ कुछ सेकेण्ड पहले ही लग सकेगा। कैलीफोर्निया इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, यू.एस. ज्योलॉजीकल सर्वे तथा कैलीफोर्निया के खनिज और भू–भागीय विभाग के भूकम्पशास्त्री लगातार भूकम्प की आन लाइन पर भविष्यवाणी कर सकने की कोशिश कर रहे हैं। यह आपातकाल में ऐसे आंकड़े भेजेगा जिससे कम्प्यूटर यूजर्स तक इमेल भेजा जा सकेगा। ट्राइनेट का लक्ष्य है कि 600 शक्तिशाली गति सेंसर और 150 बड़े इंटरनेशनल मिलकर आने वाले भूकम्पों के बारे में लोगों को सूचित करें। अगर ट्राइनेट अपने प्रस्तावित कार्य को करने में समर्थ हुआ तो कैलिफोर्निया भूकम्प क्षेत्र का निरीक्षण कर सकने वाला पहला राज्य होगा इस प्रकार भूकम्प का पूर्वानुमान लगाने की क्षमताएं विकसित हो चुकी हैं। संक्षेप में कैलीफोर्निया के खनिज और भूगर्भीय विभाग के प्रमुख जिम डेविड कहते हैं कि सेंसर पृथ्वी थरथराने जैसी घटना के तुरन्त बाद कम्प्यूटर के जरिए सूचना देने में सक्षम होगा।

वाहन में हो– यदि कार या बस में सवारी करते समय आपको भूकम्प के झटके महसूस हों तो चालक से वाहन को एक तरफ करके रोकने को कहें, वाहन के भीतर ही रहें।

घरों में हो– जितनी जल्दी हो सके चूल्हे आदि सभी तरह की आग बुझा दें, हीटर बन्द कर दें, यदि मकान क्षतिग्रस्त हो गया हो तो बिजली, गैस व पानी बन्द कर दें। यदि घर में आग लग गई हो और उसे तत्काल बुझाना सम्भव न हो तो तत्काल निकलकर बाहर जायें। यदि गैस बन्द करने के बाद भी गैस क रिसाव का पता चले तो घर से फौरन बाहर चले जायें। पानी बचायें आपातकालीन स्थिति के लिए सभी बर्तन भरकर रख लें। पालतू जानवरों को खोल दें।

बाढ़ के समय व्यक्ति की भूमिका– बाढ़ की पूर्व सूचना और सलाह के लिए रेडियो सुनें। यदि आपको बाढ़ की चेतावनी मिल गयी हो या आपको बाढ़ की आशंका हो तो बिजली के सभी उपकरणों के कनेक्शन अलग कर दें तथा अपने सभी मूल्यवान और घरेलू सामान कपड़े आदि को बाढ़ के पानी की पहुँच से दूर कर दें। खतरनाक प्रदूषण से बचने के लिए सभी कीटनाशकों को पानी की पहुँच से दूर ले जायें। यदि आपको घर छोड़ना ही पड़ जाये तो बिजली व गैस बन्द कर दें। वाहनों, खेती के पशुओं और ले जा सकने वाले सामान को निकट के ऊँचे स्थान पर ले जायें, यदि आपको घर से बाहर जाना पड़े तो घर के बाहरी दरवाजे और खिड़कियां बंद कर दें। कोशिश करें की आपकी बाढ़ के पानी में पैदल या कार से ना चलना पड़े। बाढ़ग्रस्त इलाकों में अपनी मर्जी से कभी भी भटकते न फिरें।

चक्रवात या आंधी तूफान में व्यक्ति की भूमिका– पूर्व सूचना व सलाह के लिए टी0वी0, रेडियो सुनें सुरक्षा के लिए पर्याप्त समय निकल जाने दें। चक्रवात कुछ ही घण्टो में दिशा, गति और तीव्रता बदल सकता है और मध्यम हो सकता है। इसीलिए ताजा जानकारी के लिए रेडियों टी0वी0 से निरन्तर सम्पर्क रखें।

तैयारी– यदि आपके इलाके में तूफानी हवाओं या तेज झंझावात आने की भविष्यवाणी की गई तो खुले पड़े तख्तों, लोहे की नाली, चादरों, कूड़े के डिब्बों या खतरनाक सिद्ध होने वाले किसी भी अन्य सामान को स्टोर में रखें या कसकर बांध दें, बड़ी खिड़कियो को टेप लगाकर बंद कर दें ताकि वे खड़खड़ाऐं नहीं, निकटतम आश्रय स्थल पर पहुंचे या कोई जिम्मेदार सरकारी एजेन्सी आदि हो तो इलाके को खाली कर दें।

जब तूफान आ जाये– घर के भीतर रहें तथा अपने घर के सबसे मजबूत हिस्से में शरण ले टी0वी0, रेडियो या अन्य साधनों से दी जाने वाली सूचनाओं का पालन करें। यदि छत उड़ने शुरू हो तो घर की ओट वाली खिड़कियों को खोल दें, यदि खुलें में हो तो बचने के लिए ओट लें तूफान के शान्त होने पर बाहर या समुद्र के किनारे ना जायें। आमतौर से चक्रवातों के साथ–साथ समुद्र या झीलों में बड़ी–बड़ी तूफानी लहरों उठती हैं तथा यदि आप तटवर्ती इलाके में रहते हों तो बाढ़ के लिए निर्धारित सावधानियां बरतें।

अवलोकित संदर्भ

1. चौहान, ज्ञानेन्द्र सिंह एवं पाहवा, एस0 के0(2013) भारत में आपदा प्रबन्धन, रिसर्च जनरल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेंट एन्ड सोशल साइंसेज।
2. रामजी एवं शर्मा, शिवानाथ, प्राकृतिक आपदा–सूखा एवं बाढ़ की समस्या।
3. मामोरिया, चतुर्भुज, भौगोलिक चिन्तन, साहित्य भवन, आगरा।
4. नेगी, पी0 एस0(2006–07) पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण भूगोल।
5. पाल, अजय कुमार, आपदा एवं आपदा प्रबन्धन।
6. आपदा प्रबन्धन राष्ट्रीय नीति–2005, भारत सरकार।
7. बवेजा, दर्शन, आपदा प्रबन्धन।
8. अवस्थी, एन0 एम0, पर्यावरणीय अध्ययन।

साइबर बुलीइंग

शालिनी लाम्बा[1], श्वेता सिन्हा[2] एवं प्रनती त्रिपाठी[3]
[1]अध्यक्ष, कम्प्यूटर विज्ञान विभाग, नेशनल पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
[2]असिस्टेन्ट प्रोफेसर, कम्प्यूटर विज्ञान विभाग, नेशनल पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
[3]छात्रा, बी0 सी0 ए0 , नेशनल पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
shalinilamba22@gmail.com, singh_shweta2005@yahoo.com, pranatitripathi@gmail.com

प्राप्त तिथि– 31.07.2016; स्वीकृत तिथि– 25.08.2016

सार– आज के समय में इंटरनेट ने सामाजिक संचार की एक अलग ही दुनिया खड़ी कर दी है और हमारा जीवन साइबर अर्थात् इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिकी से अनछुआ नहीं है। आधुनिक इंटरनेट प्रौद्योगिकी के माध्यम से किसी को परेशान या शर्मिंदा करने, धमकी देने, या किसी व्यक्ति को निशाना बनाने को साइबर बुलीइंग कहते हैं। सेलफोन, कंप्यूटर, टैबलेट तथा सामाजिक संचार उपकरण जैसे आधुनिक प्रौद्योगिकी इस सकारात्मक विचार के साथ बनाए गए थे कि इनके माध्यम से दोस्तों और परिवार से संपर्क में रहा जा सकता था, विद्यार्थी अपने विद्यालय से जुड़कर अपना ज्ञानवर्धन कर सकते थे। परन्तु आज के समय में अफवाहें फैलाने, सामाजिक नेटवर्किंग साइटों पर अवांछित पोस्ट, शर्मनाक तस्वीरों, वीडियो तथा वेबसाइट द्वारा इनका दुरूपयोग हो रहा है। साइबर बुलीइंग युवा स्तर पर साइबर हरेसमेंट कहलाता है। साइबर बुलीइंग किसी भी समय, किसी भी रूप में और जानबूझकर या अनजाने में हो सकती है। अब समय है जब अपने लिए युवाओं को एक सख्त कदम लेने की जरुरत है तथा साइबर आचार के बारे में जागरूकता फैलाकर स्टॉप साइबर बुलीइंग की ओर कदम बढ़ाने की आवश्यकता है।

बीज शब्द– साइबर बुलीइंग, इंटरनेट टेक्नोलॉली, सोशल नेटवर्क।

Cyber bullying: Resources and Prevention Strategies

Shalini Lamba[1]Shweta Sinha[2]Pranati Tripathi[3]
[1]Head, Department Of Computer Science, National P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
[2]Assistant Professor, Department Of Computer Science, National P.G. College, Lucknow-226001
[3]Student, B.C.A., National P. G. College, Lucknow-226001, U.P., India
shalinilamba22@gmail.com, singh_shweta2005@yahoo.com, pranatitripathi@gmail.com

Abstract- Now a days, the Internet has created a whole new world of social communications for us and our life is not untouched with "Cyber" i.e. the electronic technology. Cyber bullying is the use of modern internet technology to harass, threaten, embarrass, or target another person. The modern technologies like cell phones, computers, and tablets and social communication tools like social media sites, text messages, chat, and websites were designed with the positive thought of their involvement in the activities like connecting people with friends and family, helping students with school, imparting education and for entertainment etc. but they are now-a-days used with a negative approach to spread rumours, undesired posts on social networking sites, posting of unwanted and embarrassing pictures, videos, websites, or fake profiles. Cyber bullying can be said as Cyber harassment at the youth level. The Cyber bullying is more traumatic since it is harsh, public and moreover anonymous where youth has incomplete, wrong or sometimes no information about nameless attackers. Cyber bullying can happen in various forms at any time of day and night, and also intentionally or accidently. It is one of the most sensitive issues to be considered.

Keywords- Cyber Bullying, Internet Technology, Social Network.

एक दशक पहले तक साइबर बुलीइंग शब्द अस्तित्व में नहीं था, फिर भी आज के समय में यह समस्या अपरिहार्य है। प्रौद्योगिकी के जरिये किसी को निरन्तर धमकी देने, परेशान तथा अपमानित किये जाने को साइबर बुलीइंग कहते हैं। साइबर

बुलीइंग एक तरह का अपराध है जो बच्चों या फिर टीनेजर्स को टॉर्चर करने के लिए किया जाता है। अगर आकड़ों पर नजर डालें तो 20 प्रतिशत बच्चे साइबर बुलीइंग का शिकार होते हैं। इसके अलावा 79 प्रतिशत बच्चों को ऑनलाइन कई बार ऐसी स्थति का सामना करना पड़ता है जिससे उनके दिमाग पर नकारात्मक असर होता है। साइबर बुलीइंग शब्द साइबर और बुलीइंग शब्दों को मिला के बना है। ये वे शब्द हैं जिनका सामना हर किसी ने अपने जीवन में कभी न कभी और कहीं न कहीं किया है। आज के समय में इंटरनेट ने सामाजिक संचार की एक अलग ही दुनिया खड़ी कर दी है और हमारा जीवन साइबर अर्थात इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिकी से अनछुआ नहीं है। आज के भाग दौड़ तथा प्रतिस्पर्धा भरे समय में हर कोई किसी भी कीमत पर सफल और सर्वश्रेष्ठ बनना चाहता है, जिसके लिए वो किसी को हानि तक पहुंचा सकता है अर्थात "बुलीइंग" तक कर सकता है। अतः आधुनिक इंटरनेट प्रौद्योगिकी के माध्यम से किसी को परेशान या शर्मिंदा करने, धमकी देने, या किसी व्यक्ति को निशाना बनाने को साइबर बुलीइंग कहते हैं। सेल फोन, कंप्यूटर, टैबलेट तथा सामाजिक संचार उपकरण जैसे आधुनिक प्रौद्योगिकी इस सकारात्मक विचार के साथ बनाए गए थे कि इनके माध्यम से दोस्तों और परिवार से संपर्क में रहा जा सकता था, विद्यार्थी अपने विद्यालय से जुड़कर अपना ज्ञानवर्धन कर सकते थे। परन्तु आज के समय में अफवाहें फैलाने, सामाजिक नेटवर्किंग साइटों पर अवांछित पोस्ट, शर्मनाक तस्वीरों, वीडियो तथा वेबसाइट द्वारा इनका दुरूपयोग हो रहा है। साइबर बुलीइंग युवा स्तर पर साइबर हरासमेंट कहलाता है. साइबर बुलीइंग किसी भी समय, किसी भी रूप में और जानबूझकर या अनजाने में हो सकती है। हाल के शोध यह बताते हैं कि करीब 4 में से 1 टीनएजर साइबर बुलीइंग का शिकार हुआ है और 6 में से 1 ने यह माना है कि उन्होंने किसी को साइबर बुली किया है। समस्याएं तब पैदा होती हैं जब इस अनैतिक कृत्य के कारण पीड़ित को उस दुनिया में धकेल दिया जाता है जो कि अकेलेपन, डर तथा शर्मिंदगी से भरी है। 10 में से केवल 1 पीड़ित अपने माता–पिता अथवा किसी भरोसेमंद वयस्क को इसके बारे में बताता है और परिणाम स्वरुप पीड़ित 2 से 9 बार खुदकुशी करने की सोचता है।

स्कूल में बच्चों की आपसी खींचतान उतनी बुरी नहीं है क्योंकि वहां चीजें कुछ देर में सामान्य हो जाती हैं। लेकिन जब बच्चे ऑनलाइन छींटाकशी करते हैं, तो वहां वे एक बड़े नेटवर्क में होते हैं। साइबर बुलीइंग ज्यादा खतरनाक इसलिए भी है क्योंकि सोशल मीडिया के कारण यह सार्वजनिक रूप से देखी जा सकती है। परिणाम स्वरुप पीड़ित व्यक्ति के व्यवहार में बदलाव आने लगता है। वह अपना बचाव करने में असमर्थ हो जाता है। वह नए लोगों से मिलने में कतराता है। अतः पीड़ित खुदखुशी जैसा भयावह कदम उठाने पर मजबूर हो जाता है। ऐसी घटनाओं से कई बार निजी जिंदगी बुरी तरह से प्रभावित हो जाती है और कुछ हादसों में लोगों को अपनी जान भी गवाँनी पड़ती है। साइबर बुलीइंग अनजाने में भी हो सकती है। संदेशों की अवैयक्तिक प्रकृति के कारण भेजने वाले का लहजा नहीं समझ आता है– किसी के द्वारा किया गया मजाक किसी को अपनी बेइज्जती लग सकती है। फिर भी बार–बार भेजे गए ईमेल, संदेशों तथा ऑनलाइन पोस्ट शायद ही अनजाने में भेजे जाये। जानकारों के अनुसार साइबर बुलीइंग एक तरह का ऐसा बर्ताव है जो ऑनलाइन किया जाता है। इसमें झूठी अफवाहें, गंदी तस्वीरों के द्वारा बच्चों को टॉर्चर किया जाता है। कई बार ऑनलाइन गेम्स भी बच्चों पर साइबर बुलीइंग जैसा बर्ताव करते है। लेकिन साइबर बुलीइंग खतरनाक तब साबित होता है जब बच्चें इससे जुड़ी बाते अपने माता पिता को नहीं बताते। आकड़ों के अनुसार बच्चें रोज 6 से 7 घंटे सोशल नेटवर्किंग साइटों के अलावा दूसरी साइटों में बिताते हैं। 2013–2014 स्कूल क्राइम सप्लीमेंट (नेशनल सेंटर फॉर एजुकेशन स्टेटिस्टिक्स एंड ब्यूरो ऑफ जस्टिस स्टेटिस्टिक्स) यह इंगित करता है कि कक्षा 6–12 के 7% छात्रों ने साइबर धमकी का अनुभव किया। 2013 युथ रिस्क बेहेवियर सर्विलैंस सर्वे के मुताबिक 15% हाई स्कूल छात्र साइबर बुली हुए।

आज के समय में साइबर बुलीइंग जैसा अपराध अपना वर्चस्व जमाने में इसलिए भी कामयाब हो रहा है क्योंकि लोग अपनी दिनचर्या का ज्यादातर हिस्सा प्रौद्योगिकी को समर्पित कर रहे हैं जो कि उनको अपने करीबियों से जोड़े रखने में सहायक है। साइबर बुलिंग से निपटने के दो तरह के विकल्प हैं:

निजी स्तर पर–

1. अगर किसी फोरम पर कोई आपको तंग कर रहा है तो उस फोरम से निकल जाइए।
2. यदि आपको धमकी मिले तो इस पर पुलिस में रिपोर्ट दर्ज की जानी चाहिए।
3. अगर पुलिस एक्शन न ले तो सीधे वकील के जरिए केस दायर किया जा सकता है।

कानून की मदद से– सेक्शन 66 ए का क्लाज बी बुलिंग के लिए ठीक बैठता है. ये कानून इंटरनेट से जुड़े कानूनों का हिस्सा है. इनमें तीन साल तक की सजा होती हैं। यह कहना बहुत ही कठिन है कि माता–पिता को कब और कैसे हस्तक्षेप करना चाहिए। परंतु जिस तरह वे अपने बच्चों की असल जिन्दगी में शामिल रहते हैं, उसी प्रकार उनके साइबर जगत में भी साथ रह कर उनको साइबर बुलीइंग जैसे खतरों से बचा सकते हैं। सही ही कहा गया है– हमारा भविष्य हमारे वर्तमान पर निर्भर करता है। अतएव यही समय है जब अपने लिए युवाओं को एक सख्त कदम उठाने की आवश्यकता है तथा साइबर आचार के बारे में जागरूकता फैला कर स्टॉप साइबर बुलीइंग की ओर कदम बढ़ाने की आवश्यकता है साथ ही साथ युवा ये प्रतिज्ञा ले कि: न किसी को साइबर बुली करें और न उसका शिकार हों।

संदर्भ

1. ब्राउन, टी0(दिसम्बर 5, 2010) साइबर बुलीइंग–बींग प्रोटेक्टिव, इन 21 सेंचुरी बुलीइंग "साइबर बुलीइंग" एण्ड द नीड फॉर टेक्निकल इंटरनेट सेफ्टी, रिट्रीव्ड फ्रॉम वेबमास्टर ग्रूव्ज स्कूल।
2. गोमेज, एन0(दिसम्बर 8, 2010) साइबर बुलीइंग– द नेशन्स न्यू एपिडेमिक, रिट्रीव्ड फ्रॉम कन्वर्ज वेबसाइटः
http:// www.convergemag.com/policy/Cyberbullying-The-Nations-New-Epidemic.html
3.साइबर बुलीइंग(2010) रिट्रीव्ड फ्रॉम नेशनल क्राइम प्रिवेंशन काउंसिलः
http://www.ncpc.org/topics/cyberbullying.

अन्तःगृहीय प्रदूषण

कल्पना सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन शास्त्र विभाग
श्री जय नारायन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
kalpanajnpg@gmail.com

प्राप्त तिथि– 31.07.2016; स्वीकृत तिथि–18.09.2016

सार– वायु प्रदूषक प्रतिरक्षण हमारे घर का आन्तरिक हिस्सा बन रहे हैं यह एक गहन चिन्ता का विषय है। इसलिये हमें आवासीय वायु गुणवत्ता को बेहतर बनाने के लिये प्रयास करने होंगे। आन्तरिक वातावरण में उपस्थित वायरस, बैक्टीरिया, परागकण, धुआँ, आर्द्रता, विभिन्न मानव जनित क्रियाओं में उत्सर्जित होने वाली गैस, रसायनिक पदार्थ स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। ये पदार्थ एलर्जी संक्रमण व कई घातक रोगों का कारण है। बदलती जीवन शैली में हम सुख सुविधाओं पर ज्यादा ध्यान देते हैं जब कि अपने जीवन में आधे से ज्यादा समय श्वसन क्रिया में आन्तरिक वायु को प्रयोग करते हैं। प्रस्तुत लेख आन्तरिक वायु प्रदूषकों के स्वास्थ्य पर प्रभाव व नियंत्रण के उपाय पर आधारित है।

बीज शब्द– आन्तरिक वायु , जैविक क्रियायें, संक्रमण, स्वास्थ्य प्रभाव, धुआँ।

Indoor Air Pollution

Kalpana Singh
Assistant Professor, Department of chemistry
S.J.N. P.G. College Lucknow- 226001, U.P., India
kalpanajnpg@gmail.com

Abstract- Indoor air pollution is a major problem in our daily life. Efficient corrective methods are urgently needed to combat the problem of Indoor air quality Virus Bacteria pollen grains, smoke, humidity, chemical substances and gases released in anthropogenic activity have adverse health effects in humans . Indoor air is dominant exposure for humans, more than half of the body's intake during life time is air inhaled in the home. This article is a study based on the effect of indoor air pollutant and their control measures.

Key words- Indoor air, biological activity, infection, health effect, smoke.

प्रस्तावना– पर्यावरण प्रदूषण एक विस्तृत विषय है, और जब वायु प्रदूषण की बात होती है तब हमारा मन ऊँची फैक्टरी से, वाहनों से, ईंधन के जलने से निकलने वाले धुँए की ओर जाता है। आज के परिवेश में जब लोग अधिकांश समय घर के अन्दर व्यतीत करते हैं इसलिये हमें घर के अन्दर की वायु बाहरी वायु से ज्यादा प्रभावित करती है। यू0एस0ए0 एन्वायरनमेंट प्रोटेक्शन एजेन्सी के अनुमानित आंकडों के अनुसार लोग लगभग 90% समय इनडोर व्यतीत करते हैं। अच्छा आन्तरिक वातावरण इसमें रहने वाले लोगों को अच्छा स्वास्थ्य व आराम देता है। सिक बिल्डिंग सिन्ड्रोम SBS व बिल्डिंग रिलेटेड इलनेस[2] की समस्या आन्तरिक वायु के कारण ही होती है। घर के अन्दर प्रदूषित वायु कई गम्भीर बीमारियों को जन्म देती है। हाल ही में प्रकाशित विश्व स्वास्थ्य संगठन(W.H.O.) की रिपोर्ट में कहा गया है कि आन्तरिक वायु में उपस्थित प्रदूषक वाह्य वायु की तुलना में 1000 गुना[3] ज्यादा आसानी से मनुष्य के फेफडों में पहुँच जाते हैं। और वाह्य वायु की तुलना में आंतरिक वायु में प्रदूषकों की सांद्रता ज्यादा होती है। आन्तरिक वायु प्रदूषण के कारण प्रतिवर्ष विश्व स्तर पर मरने वालों की संख्या 3.5 मिलियन है जो कि वाह्य प्रदूषण से मरने वालों की संख्या से बहुत ज्यादा है। भारत में उच्च रक्तचाप के बाद दूसरे स्थान पर आन्तरिक वायु प्रदूषण से मरने वाले हैं। इन्टरनेशनल एनर्जी एजेन्सी द्वारा आन्तरिक वायु प्रदूषण के असमय मृत्यु के वर्ष 2015 के व वर्ष 2040 के सम्भावित आंकडे (विश्व स्तर पर भारत व चीन)के लिये प्रकाशित किये गये हैं। सारणी–1 में वर्ष 2015 के व सारणी–2 में वर्ष 2040 के सम्भावित आंकडें दर्शाये गये हैं।

आन्तरिक वायु प्रदूषक के श्रोत– दहन श्रोत– घरों के अन्दर चूल्हा जलने से बिल्डिंग व औद्योगिक इकाईयों में दहन प्रक्रिया से कार्बन डाईऑक्साइड CO_2, कार्बन मोनोऑक्साइड CO, व नाइट्रोऑक्साइड NO ओजोन उत्सर्जित करने वाले श्रोत–फोटोकॉपी करने वाली मशीन, वातानुकूलित स्प्रे।

फॉरमेल्डिहॉइड उत्सर्जन के श्रोत–	बिल्डिंग मटीरियल, पेपर की प्रिंटिंग
रेडॉन उत्सर्जन के श्रोत–	पुरानी बिल्डिंग, नींव ,व दरारों से
धूम्रपान–	कैंसर कारक बेन्जो–पाइरीन, बेन्जो – एन्थ्रासीन
जैविक क्रियायें–	वातावरण में ऑक्सीजन को कम कर देती है।
CO_2 की मात्रा में बढोत्तरी–	तापमान में वृद्धि व आर्द्रता में वृद्धि उत्पन्न करती है।

सारणी–1(वर्ष 2015 के आंकड़े)

	वायु प्रदूषण के कारण असमय मरने वालों की संख्या	आन्तरिक वायु प्रदूषण के कारण	बाह्य वायु प्रदूषण के कारण
विश्व स्तर पर	6.5 मिलियन	3.5 मिलियन	3.0 मिलियन
भारत	1.6 मिलियन	1 मिलियन	5,90,000
चीन	2.2 मिलियन	1.2 मिलियन	1 मिलियन

सारणी–2(**वर्ष 2040 के लिए संभावित आंकड़े**)

	वायु प्रदूषण के कारण असमय मरने वालों की संख्या	आन्तरिक वायु प्रदूषण के कारण	बाह्य वायु प्रदूषण के कारण
विश्व स्तर पर	7.5 मिलियन	3 मिलियन	4.5 मिलियन
भारत	1.7 मिलियन	800,000	900,000
चीन	2.5 मिलियन	1 मिलियन	1.5 मिलियन

स्वास्थ्य पर प्रभाव– विभिन्न आन्तरिक वायु प्रदूषक स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होते हैं। इन प्रदूषकों के घातक प्रभाव के कारण इनको तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है।

श्रेणी	स्वास्थ्य पर प्रभाव	प्रदूषक
एलर्जी कारक–	नाक व गले में जलन, सर्दी जुकाम व छींक आना	धूल, परागकण, लकड़ी का धुआँ
संक्रमण कारक–	नाक व गले में संक्रमण, निमोनिया, सिनूसाइटिस, श्वसन तन्त्र में संक्रमण, ब्रॉन्काइटिस	बैक्टीरिया, वायरस, कवक
रसायनिक यौगिक–	नेत्रदोष, सिरदर्द, अवसाद, कमजोर याददाश्त, असमय मृत्यु	फार्मल्डिहाईड, कार्बनमोनोऑक्साइड, कीटनाषक, टॉलुईन, बेन्जीन

आन्तरिक वायु प्रदूषण के नियंत्रण के उपाय–

1. प्रदूषक उत्सर्जक श्रोत को नियंत्रित करके ।
2. घर के दरवाजे व खिडकियां खुले रखें जिससे स्वच्छ वायु का आवागमन हो सके ।
3. खाना पकाने के लिये ऐसे ईंधन का प्रयोग किया जाये जिसका पूर्ण रूप से दहन हो।
4. धूम्रपान को हतोत्साहित करना चाहिये क्योंकि इसमें कैंसर कारक बेन्जोपाइरीन व बेन्जोऐन्थ्रासीन पदार्थ होते हैं।
5. घर में इंडोर पौधे प्रदूषकों को अवषोषित कर वायु की गुणवत्ता बनाये रखते हैं। उदाहरण के लिये– बैम्बूपाम, स्पाइडर प्लांट, क्राइजेन्थेमम, चाइनीज एवरग्रीन आदि। पौधे वायु से फार्मल्डिहाइड , बेंजीन, व कार्बन मोनोऑक्साइड को हटा देते हैं।
6. जागरूकता अभियान के माध्यम से
7. सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जैसी वैकल्पिक ऊर्जा का प्रयोग करके

निष्कर्ष– आंतरिक वायु प्रदूषण की समस्या का प्रभावी समाधान नित्यप्रति घरेलू कार्यों में समायोजन, स्वास्थ्य उर्जा पर्यावरण हाउसिंग व ग्रामीण विकास के लिये उत्तरदायी एजेन्सी के बीच सहयोग व समन्वय से किया जा सकता है।

अवलोकित संदर्भ

1. सेंटर फॉर सांइस एनवायरमेंट (सीएसई) की रिपोर्ट।
2. केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की बेबसाइट।
3. विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट।
4. इन्टरनेशनल एनर्जी एजेन्सी की रिपोर्ट, वर्ष 2015।

कीटों में जैविक साहचर्य

अशोक कुमार[1] एवं सुधीश चन्द्र[2]
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, [2]पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
ashokbsnv11@gmail.com; sudhish1953@gmail.com

प्राप्त तिथि– 31.07.2016; स्वीकृत तिथि– 02.09.2016

सार– प्रकृति में कई जीव–जन्तु जैविक साहचर्य स्थापित कर जीवन यापन करते हैं। प्रायः यह युक्ति भोजन उपलब्धता व सुरक्षा हेतु की जाती है। सामाजिक व विशेषकर उपनिवेशी कीटों की प्रजातियों की जीवन शैली में विविध साहचर्य की स्थितियाँ पाई जाती हैं। विभिन्न चीटियों की प्रजातियाँ सहजीविता, पारिपोषिता, सहभोजिता, जैवभंडारण व दासता के उत्कृष्ट उदाहरण जैव साहचर्य द्वारा परिलक्षित करते हैं।

बीज शब्द– जैविक साहचर्य, चीटियाँ, सहजीविता, पारिपोषिता, सहभोजिता।

Biological association in insects

Ashok Kumar[1] and Sudhish Chandra[2]
[1]Assistant Professor, [2]Former Associate Professor and Head, Department of Zoology
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
ashokbsnv11@gmail.com; sudhish1953@gmail.com

Abstract-Several living beings lead their life by establishing biological association in nature. Generally this arrangement is for procuring food and safety. Social and mainly colonial insects maintain different levels of biological association in their life. Several species of ants show unique examples of symbiosis, parasitism, commensalism, bio storage and slavery by establishing biological association.

Key words-Biological association, ants, symbiosis, parasitism, commensalism.

विभिन्न जीवों में जैविक साहचर्य का प्राकृतिक महत्व है। बहुधा जीवधारी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से एक दूसरे से कमोवेश संबंधित रहते हैं। विभिन्न जातियों में साहचर्य की क्रमिकता में अन्तर होता है, कुछ जीवों में साहचर्य उनके जीवन की आवश्यकता बन जाती है, जिससे एक दूसरे के बिना उनका निर्वहन दुरुह हो जाता है। ऐसी स्थिति में वे प्रायः परस्पर साहचर्य का लाभ उठाते हैं।[1] साहचर्य का प्रमुख उद्देश्य जीवन यापन व सुगम भोजन प्राप्ति होता है। कीटों में विशेषकर सामाजिक व उपनिवेशी प्रजातियों में यथा चीटी, दीमक आदि में जैविक साहचर्य के प्रसंग अधिकाधिक हैं।[2] इनमें साहचर्य स्थिति तथा जीवनशैली में बहुत सी विविधताएं पायी जाती हैं। सामाजिक कीटों का एकीकृत व्यवहार निवसित श्रमिकों के मध्य परस्पर संबंध व संप्रेषण से उत्पन्न होता है तथा यह संबंध सूत्र विभिन्न सामूहिक कार्यों के सफलतापूर्वक निर्वहन में सहायक होता है। इन कीटों के जटिल उपनिवेशों में जाति प्रथा, दास प्रथा, जैवीय भंडार गृह, सहजीविता तथा परिपोषिता के विभिन्न स्वरूप प्रदर्शित होते हैं।

चीटियों के उपनिवेशों में कुछ भृंगकीट पाये जाते हैं। इनकी उपस्थिति रहस्यास्पद है। संभवतः चीटियां इन भृंगकीटों को पालतू बनाकर रखती हैं, तथा इनके साथ खेलती है। हीटेरियस नामक भृंगकीट चीटियों के उपनिवेश में प्रायः पाये जाते हैं, जिन्हें चीटियाँ भोजन उपलब्ध कराती हैं तथा इनके डिम्भकों की देखरेख करती हैं। चीटियाँ प्राकृतिक रूप से भृंगकीट के सिर को चाटती हैं तथा रसास्वादन से आनंदित होती हैं। जब चीटियाँ सिर को चाटना प्रारम्भ करती हैं तब भृंगकीट अपना सिर कुशलता से मोड़कर अपने वक्ष के नीचे छुपा लेता है, जिससे चीटियाँ सिर को चाटने से वंचित हो सकें। ऐसी स्थिति में चीटियाँ लालच वश कीट के सम्मुख अपने उदर से कुछ भोजन पदार्थ वमन द्वारा बाहर निकाल देते हैं, इस प्रकार से भृंगकीट अपना सिर पुनः बाहर कर वमन किया हुआ भोजन खाने लगता है तथा चीटियाँ पुनः कीट के सिर को चाटने लगती हैं। यह प्रक्रिया एक दूसरे की संतुष्टि तक चलती रहती है।

कुछ चीटियों की प्रजातियां, एफिड व कुछ अन्य पादपभोजी कीटों को अपने उपनिवेश के अन्दर पालतू बनाकर तथा इनके निकटवर्ती वासस्थानों पर सुरक्षा उपलब्ध कराकर साहचर्य जीवन व्यतीत करती हैं।[3] ऐसा माना जाता है कि वे परस्पर सम्पर्क बनाये रखते हैं। उपनिवेश के अंदर के प्रवासी एफिड्स को प्रायः चीटियाँ अपने अग्रपाद व स्पर्शकों की

सहायता से सहलाती हैं जिससे उत्तेजित होकर एफिड अपने पाचन अंगों से धीरे–धीरे उदर के अंतिम छोर पर हनीड्यू की बूँदों का उत्सर्जन करते हैं, जिसका चीटियाँ आवश्यकतानुसार रसास्वादन करती हैं। माना जाता है कि हनीड्यू उत्सर्जन की मात्रा चीटियों के सहलाने की प्रक्रिया पर निर्भर करती है। निकटवर्ती स्थानों के एफिड्स, सहचरी चीटियों के क्षणिक स्पर्श से सामान्यतया गुदा द्वारा ड्यू उत्सर्जित करती है जिसे चीटियाँ भोजन के रूप में उपयोग करती है, बदले में चीटियाँ इन्हें सुरक्षा प्रदान करती हैं।

पॉलीयार्गस प्रजाति की चीटियों में साहचर्य के साथ दास प्रथा भी विकसित होती है। यह फार्मिका प्रजाति की चीटियों के वासस्थान का निरंतर पता रखती हैं। पॉलीयार्गस चीटियों के झुंड, फार्मिका चीटियों के उपनिवेशों पर आक्रमण कर, उनके कोषिकों(प्यूपा) को उठा लाते हैं और अपने वासस्थान पर रखते हैं। समयानुसार इन कोषिकों से जब फार्मिका के वयस्क उत्पन्न होते हैं, तो उस स्थान को अपना ही घर समझकर श्रमिकों का कार्य करने लगते हैं। इनसे उत्पन्न रसायनिक गंध डिम्भ व वयस्क, वर्तमान या भविष्य की श्रमिक चीटियों को वासस्थान चुनने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।[4] फार्मिका श्रमिकों की मृत्यु के उपरान्त ही पॉलीयार्गस श्रमिक कॉलोनी के कार्य करते हैं। *फार्मिका सबइन्टीग्रा* प्रजाति की चीटियाँ, अन्य चीटियों के डिम्भक व इल्लियों पर आक्रमण कर उन्हें अपने बांबी में ले आते हैं, जिससे उत्पन्न वयस्क इनके लिए दास का कार्य करते हैं। फार्मिका चीटियों द्वारा बंधुआ आक्रमण इनके ड्यूफोर ग्रन्थि द्वारा स्रावित फीरोमोन द्वारा समन्वित होता है। इनसे स्रावित रसायन दूसरे चीटियों के आवास की रक्षक चीटियों को अपने से भ्रमित करने में सहायता करते हैं।[5] यद्यपि ऐसा विदित है कि चीटियाँ अपने आवास की अन्य संगियों को उपनिवेश की विशिष्ट गंध से पहचानने में सक्षम हैं।[6] चीटियों के समूह से दृढ़ांग श्रमिकों का चयन व निवासस्थल के भीतर भोजन संकलन की कला विशिष्ट है। हनीएंट प्रजाति की चीटियों में साहचर्य द्वारा जैविक भंडार स्थापित किये जाते हैं। इन चीटियों के उपनिवेशों में कुछ विशेष कक्ष होते हैं, जिनके तल चौरस, दीवारें चिकनी एवं छत अन्दर से खुरदुरी होती है। इन कक्षों में एक विशेष प्रकार का कौतुक देखने को मिलता है। ऐसे कक्ष की छत से बहुत सी चीटियाँ लटकती रहती हैं। श्रमिक चीटियाँ भोज्य पदार्थ बाहर से एकत्र कर इन चीटियों के सम्मुख वमन कर देती हैं, जिसे लटकती चीटियाँ अपने उदर में समाहित करती रहती हैं और इतनी मोटी हो जाती है कि चल फिर भी नहीं सकतीं। ऐसी सैकड़ों चीटियाँ उपनिवेश में सुरक्षित रहती हैं। विषम परिस्थितियों में जब भोजन की कमी होती है तो उपनिवेश की सभी चीटियाँ भंडारित चीटियों में उपलब्ध प्रचुर भोज्य पदार्थ का, इन्हें मारकर शनैः शनैः उपयोग करती हैं।

जैविक साहचर्य में सहजीविता कई कीटों में पाई जाती हैं।[7] दीमक की आँत्र में उपस्थित ट्राइकोनिम्फा नामक प्रोटोजोआ परजीवी की भांति रहते हैं तथा दोनों परस्पर एक दूसरे के जीवन यापन के पूरक होते हैं। दीमक लकड़ी को खाने की क्षमता रखता है, पर ट्राइकोनिम्फा की सहायता के बिना पचा नहीं सकता। इस प्रकार दोनों ही प्राणि एक–दूसरे को नुकसान पहुँचाये बिना एक साथ जीवन यापन करते हैं। कुछ कीट, उदाहरणार्थ "इकनोमोन" अपने अंडे दूसरे कीटों के इल्लियों के बीच देता है, तथा अंडे परिपोषी में ही विकसित होते हैं। इनके अण्डे से विकसित कीट परिपोषी को ही खाने लगते हैं, परन्तु उसे पूर्णतया समाप्त नहीं करते जिससे परिपोषिता के माध्यम से जीवन यापन चलता रहे। इसी प्रकार "मिरमोनिसस" नामक बरूथी, स्यूडोलेटिया नामक मॉथ कीट की कर्णगुहा में सैकड़ों की संख्या में रहते हैं तथा भोजन पर निर्भर करते हैं। सभी बरूथी स्थानाभाव के कारण कष्ट उठा लेते हैं परन्तु कीट पर ही भोजन हेतु निर्भर करते हैं। सभी बरूथी स्थानाभाव के कारण कष्ट उठा लेते हैं परन्तु दूसरी कर्णगुहा को अछूता रखते हैं, जिससे परिपोषी जीवित रहे तथा परिपोषिता साहचर्य चलता रहे।

संदर्भ

1. ब्रुस्का, आर0 सी0 एवं ब्रुस्का, जी0 एल0(2002) इनवर्टीब्रेट्स, सिनेर एसो0 इं0 पब्लिशर्स।
2. हिन्डे, आर0 ए0(1970) एनीमल बिहेवियर, मैकग्रॉ हिल, न्यूयॉर्क।
3. होलडाब्लर, बी0 एवं विल्सन, ई0 ओ0(1990) द ऐन्ट्स, बेलनैप प्रेस, हॉवर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. मैकग्लेम, टी0 पी0(2012) सीरियलमोनोडोमी इन ऐन्ट्स, इको0 इन्टो0, खण्ड–23, मु0पृ0 621–626।
5. विल्सन, ई0 ओ0(1975) सोसियो बायलोजी, बेल्कमैप प्रेस, कैम्ब्रिज।
6. डबी, ए0; रेताना, जे0; लेनार, ए0 एवं सर्डा, एम्स(2008) नेस्ट मूविंग बाई पॉलीडोमस एन्ट0 जर्न0 इथो0, खण्ड–26, मु0पृ0 119–126।
7. श्रीवास्तव, के0 पी0 एवं धालीवाल, जी0(2014) टेक्स्ट बुक ऑफ इन्टोमोलॉजी, कल्याणी पब्लिशर्स, हैदराबाद।

विज्ञान समाचार(नवीन जानकारी)

दीपक कोहली
पताः 5/104, विपुल खंड, गोमती नगर, लखनऊ–226010, उ0प्र0, भारत
deepakkohli64@yahoo.in

प्राप्त तिथि– 30.05.2016; स्वीकृत तिथि– 21.09.2016

सार– प्रस्तुत लेख में विश्व में हो रहे, नवीनतम विज्ञान शोध कार्यों की जानकारी दी गयी है। प्रमुख रूप से शैवाल से जैव ईंधन बनाने की तैयारी, रोबोट योग शिक्षक के रूप में घावों से बचाने वाले स्मार्ट मोजे, गुरूत्वीय तरंगों की खोज, बबल पेन का अविष्कार, पौधे के लिए स्मार्ट पॉट आदि विषयों को समाहित किया गया है। यह लेख विज्ञान जगत में हो रही प्रगति की जानकारी प्रदान करने के उद्देश्य को पूरा करता है।

बीज शब्द– विज्ञान शोध कार्य, शैवाल, जैव ईंधन, रोबोट, स्मार्ट मोजे, बबल पेन, स्मार्ट पॉट।

Science News(Latest Information)

Deepak Kohli
Add: 5/104, Vipul Khand, Gomti Nagar, Lucknow-226010, U.P., India
deepakkohli64@yahoo.in

Abstract- The article provides the knowledge about the latest scientific researches all over the world. Biofuel from Algae, Robot as a yoga teacher, Smart socks for preventing wounds, invetnion of Bubble pen, Smart pot for plants etc are the main topics covered in the aritcle. It fulfills the aim to provide latest knowledge about Scientific world.

Key words- Scientific researches, algae, biofuel, robot, smart socks, bubble pen, smart pot.

1. **शैवाल से जैव ईंधन बनाने की तैयारी में वैज्ञानिक**– जीवाश्म ईंधन(तेल और गैस) के प्रयोग से पर्यावरण को हो रही हानि से बचाने के लिए वैज्ञानिक शैवाल से जैव ईंधन बनाने की तैयारी कर रहे हैं। अमेरिका की 'डेलावर यूनिवर्सिटी' की सहायक वैज्ञानिक 'जेनिफर स्टेवार्ट' और उनकी टीम शैवाल से जैव ईंधन बनाने के प्रयासों में लगी है ताकि पर्यावरण को हानि पहुँचाने वाली कार्बन डाई ऑक्साइड तथा अन्य प्रकार के हानिकारक उत्सर्जन को कम किया जा सके। डॉक्टर स्टेवार्ट दुनिया भर में पाये जाने वाले शैवाल की एक प्रजाति *हेट्रोसिग्मा अकाशिवो* पर काम कर रही हैं। इस प्रजाति में एक विशेष प्रकार का एंजाइम पाया जाता है, जो नाइट्रिक ऑक्साइड को नाइट्रोजन में बदल सकता है व इस नाइट्रोजन का प्रयोग किया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने बताया कि एक एकड़ में मक्का और गन्ने को लगाकर जितना जैव ईंधन तैयार किया जा सकता है, उतने ही क्षेत्र में शैवाल लगाने से इसकी तुलना में 12 गुना जैव ईंधन तैयार किया जा सकेगा। इतना ही नहीं समुद्र में पाए जाने वाले शैवाल का प्रयोग करने से इन्हें विकसित करने में समुद्र के पानी का इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे साफ पीने का पानी और दूसरे जरूरी कार्यों के लिए संरक्षण संभव हो सकता है।

2. **योग भी सिखाएगा रोबोट**– तकनीकी विशेषज्ञों ने दुनिया का पहला पारिवारिक रोबोट तैयार किया है। यह रोबोट न केवल घर के कामों में मदद करेगा, बल्कि बच्चों को कहानियाँ भी सुनाएगा और आपकी सेहत का ख्याल भी रखेगा। लॉस वेगास में हाल ही में हुए मेले में चीनी कम्पनी 'यूबी टेक' ने यह रोबोट पेश किया। कम्पनी ने रोबोट को 'अल्फा–2' नाम दिया है। कम्पनी ने बताया कि बहुत शीघ्र ही यह रोबोट बाजार में आ सकता है। रिपोर्ट के अनुसार, यह अल्फा 2 आवाज से नियन्त्रित होता है और यह घर की लाइट जलाने व बन्द करने जैसे छोटे काम से लेकर, आपकी डायरी व्यवस्थित करने और बच्चों को सोते समय कहानियाँ सुनाने तक के सभी काम कर सकता है। इस रोबोट के जोड़ों में 20 सर्वो मोटर लगाई गई हैं। इन मोटरों की सहायता से यह एक सामान्य व्यक्ति की तरह काम कर सकता है। इस रोबोट की लंबाई लगभग 19 इंच है। अल्फा 2 को निर्माता कंपनी यूबीटेक ने एक बयान में बताया कि यह रोबोट बिना स्क्रीन वाले स्मार्टफोन की तरह है।

इसमें आप एप स्टोर से आवश्यकता के अनुसार एप डाउनलोड कर सकते हैं और यह रोबोट उस एप की तरह काम करने लगेगा। जैसे कि सुबह उठकर आप योग करते हैं तो यह रोबोट योग की विभिन्न मुद्राएँ पहले स्वयं कर के दिखाएगा फिर आप उसे देखकर सही मुद्रा में योगासन कर सकते हैं। इस तरह यह रोबोट आपकी सेहत का ख्याल भी रखेगा। यह रोबोट एंड्रॉयड ऑपरेटिंग सिस्टम पर काम करेगा।

3. **काले बेजान पत्थरों पर उगाये हरे जंगल**– जिन काले पत्थरों पर जीवट दूब भी नहीं पनप पाती, उन पर प्राकृतिक जंगल और हरियाली उगाकर धनबाद(बिहार) के 'डॉ0 ई0वी0आर0 राजू' आज विश्वभर में प्रसिद्ध हो गये हैं। खदान क्षेत्रों के बेजान पत्थरों पर प्राकृतिक हरियाली का यह प्रयोग अब पर्यावरण चिंतकों के लिए उदाहरण बन गया है। केवल चार वर्ष पहले धनबाद के कुसुंडा क्षेत्र के पत्थरों के ढेर के पाँच एकड़ पर शुरू हुआ 'इको रेस्टोरेशन'(पारिस्थतिकी पुर्नस्थापन) का यह काम 25 जगहों पर फैलकर अब चार सौ एकड़ तक फैल गया है। यह सब 'भारत कोकिंग कोल लिमिटेड'(बीसीसीएल), धनबाद के पर्यावरण विभाग के प्रमुख डॉ0 ई0वी0आर0 राजू के कारण सम्पन्न हुआ। सन् 2010 में राँची हाईकोर्ट ने एक जनहित याचिका पर बीसीसीएल को हिदायत दी कि कोल कम्पनियां ओपन कास्ट से पत्थरों का पहाड़ बना रही हैं, बदले में न कोई पर्यावरण संतुलन का प्लान है और न ही कोई संतोषजनक अभियान। कोर्ट के निर्देश पर तय हुआ कि वैज्ञानिकों और संस्थानों से सलाह लेकर रोड मैप और मॉडल बनाया जाए। यहीं से मुहिम की शुरूआत हुई। डॉ0 राजू के नेतृत्व में उनकी टीम ने अध्ययन किया। फिर सेंटर ऑफ एक्सीलेंस, दिल्ली के विशेषज्ञ डॉ0 सी0आर0 बाबू एवं केन्द्रीय वन शोध संस्थान, देहरादून के विशेषज्ञ डॉ0एच0बी0 वशिष्ठ के परामर्श से डॉ0 राजू ने यहाँ काम शुरू किया। डॉ0 ई0वी0आर0 राजू ने ईको रेस्टोरेशन की प्रक्रिया को अपनाया। इस प्रक्रिया के तहत पहले घास, फिर झाड़ियाँ और उसके बाद पेड़ उगाए जाते हैं। इसे इसलिए अपनाया जाता है ताकि प्राकृतिक जंगल जैसी व्यवस्था कायम हो और न केवल पेड़–पौधे, लता–झाड़ी बल्कि इनके साथ के सहजीवी यानी कीट–पतंग, पक्षी–सांप भी उन्मुक्त होकर बस सकें। कुछ दिन पहले ही यहाँ सांप का केंचुल देखकर वैज्ञानिकों को जैव–विविधता और उसकी खाद्य श्रृंखला के बहाल होने का अहसास हो गया है। इको रेस्टोरेशन का पहला चरण घास की खेती का है। कम्पोस्ट और माटी की गोली बनाकर उसमें जोधपुर से घास की स्थानीय प्रजाति के बीज डाले गये। उन्हें पत्थरों पर रोपा गया। इसी घास के पौधों के बीच झाड़ियों के बीज डाले गये। अंतिम चरण में वृक्ष लगाए गए। इस समय चालीस प्रजाति के वृक्ष यहाँ उग आए हैं। उनमें जामुन, आँवला, आम जैसे फलदार वृक्ष तो हैं ही, साथ ही सेमल, अमलतास, पलाश, शीशम, सागौन भी प्राकृतिक हरियाली को बढ़ा रहे हैं। इको रेस्टोरेशन के कारण डॉ0 ई0वी0आर0 राजू एवं बीसीसीएल(भारत कोकिंग कोल लिमिटेड) को देश–विदेश में खूब प्रसिद्धि मिली है।

4. **स्मार्ट मोजे जख्मों से बचाएंगे**– वैज्ञानिकों ने ऐसे 'स्मार्ट' मोजे बनाए हैं, जो डायबिटीज के मरीजों का अंग–भंग होने से रोकने में सहायक हो सकते हैं। डायबिटीज के मरीजों के घाव जल्दी ठीक नहीं हो पाते। कई बार घाव की हालत ऐसी हो जाती है कि मरीज को बचाने के लिए उससे प्रभावित पैर या हाथ काटने पड़ते हैं। इस समस्या को देखते हुए शोधकर्ताओं ने ऐसे मोजे विकसित किए हैं जो दबाव के प्रति विशेष संवेदनशील हैं। इन मोजों को स्मार्टफोन के साथ जोड़ा जा सकता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि ये मोजे डायबिटीज मरीजों के पैरों में अल्सर(जख्म) होने की आशंका को कम करने में मदद कर सकते हैं। जिससे उन्हें जख्म के कारण पैर काटने की नौबत नहीं आएगी। इस मोजे को इजरायल की 'द हिब्रू यूनिवर्सिटी ऑफ येरूशलम' और 'हदासाह मेडिकल सेंटर' के शोधकर्ताओं ने विकसित किया है। उन्होंने इनका नाम 'सेंसगो' रखा है। ये मशीन के माध्यम से धोए जा सकते हैं। इनमें दबाव महसूस करने वाले दर्जनों सूक्ष्म सेंसर लगाए गए हैं। शोधकर्ताओं ने कहा कि ये मोजे विभिन्न स्थितियों में अपना दबाव बदलने में सक्षम हैं। अगर इनको पहनने वाला व्यक्ति गलत मुद्रा में बैठता है, या उसमें कोई शारीरिक विकृति होती है, या उसके जूते सही नाप के नहीं हैं तब ये मोजे अपना दबाव बदलकर अपने उपयोगकर्ता को संदेश देंगे।

5. **हिन्द महासागर में छेद करने की तैयारी**– ब्रिटेन के वैज्ञानिकों ने पहली बार पृथ्वी की सतह के नीचे के बारे में और अधिक जानकारी पाने के लिए हिंद महासागर की तली में छेद करना आरम्भ कर दिया है। सूत्रों के अनुसार वैज्ञानिक पृथ्वी के अंदरूनी भाग(मेंटल) से चट्टान का नमूना लेना चाहते हैं। इसका उद्देश्य पृथ्वी की बनावट के बारे में चली आ रही मान्यताओं की जाँच के लिए पृथ्वी के गहरी तह तक जाना है। इस अभियान के दौरान इस बात का भी पता लगाया जाएगा कि क्या पृथ्वी पर मौजूद जीवन अधिक विपुल मात्रा में और भीतर तक फैला है, जो शायद पहले सोचा नहीं गया था। ज्ञातव्य है कि इससे पहले भी पृथ्वी की तह में छेद करने के कई असफल प्रयास किए जा चुके हैं। समुद्र की सतह से पाँच किलोमीटर नीचे तक छेद करना कठिन है और जटिल भी। कार्डिफ यूनिवर्सिटी, ब्रिटेन के भूगर्भ विज्ञानी प्रोफेसर क्रिस मैक्लिऑड ने बताया कि इस अभियान में कदाचित कई वर्ष लगेंगे। यह परियोजना इन्टरनेशनल ओशन डिसकवरी प्रोग्राम (आई.ओ.डी.पी.) के अन्तर्गत कार्यान्वित की जा रही है।

6. **वैज्ञानिकों ने गुरूत्वीय तरंगों की खोज की**– अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में उस समय खुशी की लहर दौड़ गई, जब वैज्ञानिकों ने यह घोषणा की उन्होंने अंततः उन गुरूत्वीय तरंगों की खोज कर ली है, जिसकी भविष्यवाणी आइंस्टीन ने एक सदी पहले ही कर दी थी। वैज्ञानिकों ने इसे एक महान उपलब्धि करार देते हुए इसकी तुलना उस क्षण से की है, जब ग्रहों

को देखने के लिए गैलीलियों ने दूरदर्शी यंत्र का आविष्कार किया था। ब्रह्मांड में जोरदार टक्करों के कारण पैदा होने वाली इन तरंगों की खोज खगोलविदों को इसलिए उत्साहित कर रही है क्योंकि इससे ब्रहमाण्ड का अवलोकन उसकी क्रमबद्धता में करने का एक नया रास्ता खुल गया है। उनके लिए यह एक मूक फिल्म से बोलती फिल्मों में प्रवेश करने जैसा है क्योंकि ये तरंगे ब्रहमाण्ड की आवाज हैं। कोलंबिया विश्वविद्यालय के अंतरिक्ष विज्ञानी और खोज दल के सदस्य एस0 मार्का ने कहा कि इस क्षण से पहले तक हमारी नजरें जो आसमान की ओर होती थीं लेकिन हम वहाँ का संगीत नहीं सुन पाते थे। इस नई खोज में खगोलविदों ने अत्याधुनिक एवं बेहद संवेदनशील लेजर इंटरफेरोमीटर ग्रेविटेशनल वेव आब्जरवेटरी का प्रयोग किया, जिसकी लागत 1.1 अरब डॉलर है। इसकी मदद से उन्होंने दूर दो ब्लैक होल के बीच हुई हालिया टक्कर में पैदा हुई गुरुत्वीय तरंग का पता लगाया। वैज्ञानिक इसे हिग्स बोजॉन(गॉड पार्टिकल) की खोज से बड़ी खोज कह रहे हैं।

7. **पर्यावरण के लिए वरदान हैं ऊदबिलाव**– ब्रिटेन की 'यूनिवर्सिटी ऑफ स्टर्लिंग' के शोध दल के प्रमुख "निगेल बिलवे" ने बताया है कि उनके शोध से पता चला है कि ऊदबिलाव पर्यावरण के लिए बहुत लाभकारी हैं। यह प्राणि पूरे परिवेश में बदलाव ला सकते हैं, जैव–विविधता में सुधार कर सकते हैं, पर्यावरण प्रदूषण में कमी ला सकते हैं और बाढ़ जैसी आपदा को भी रोक सकते हैं। इसके अलावा खेती से निकले खर–पतवार को भी खत्म करके ऊदबिलाव अहम भूमिका निभा सकते हैं। जिन क्षेत्रों में ऊदबिलाव थे, वहाँ खर–पतवार में चालीस प्रतिशत की कमी देखी गई। ब्रिटेन की 'यूनिवर्सिटी ऑफ स्टर्लिंग के शोध दल के प्रमुख निगेल बिलवे ने बताया है कि उनके शोध से पता चलता है कि ऊदबिलाव पर्यावरण के लिए काफी लाभकरी हैं। उनके रहन–सहन और खानपान के कारण जैव विविधता में 28 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है। इस प्रकार ऊदबिलाव पर्यावरण हितैषी(Ecofriendly) माने जा सकते हैं।

8. **टूटी हड्डियां जल्दी जुड़ेंगी**– इमारती लकड़ी के लिए प्रसिद्ध शीशम में कई औषधि गुण भी हैं। 'केंद्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान(सीडीआरआई), लखनऊ' के वैज्ञानिकों ने शीशम की पत्तियों में हड्डियों को मजबूती देने वाले तत्व की पहचान की है जो टूटी हड्डियों को तेजी से जोड़ने के साथ महिलाओं में मेनोपॉज के बाद होने वाली ऑस्टियोपोरोसिस बीमारी को भी रोकता है। शोधकर्ता टीम की प्रमुख 'डॉ0 रितु त्रिवेदी' के अनुसार शीशम की पत्तियों में 'कैंपीयूनिन' नामक तत्व की पहचान प्रथम बार की गई है। यह हड्डियों को मजबूती देता है। अभी हड्डियों को जुड़ने में लगभग छह सप्ताह लगते हैं लेकिन इस तत्व से बनी औषधि के सेवन से हड्डियों को जुड़ने में कम समय लगेगा। इस औषधि का कोई दुष्प्रभाव भी नहीं होगा। शीशम की पत्तियाँ खाई भी जा सकती हैं या इनका पेस्ट हड्डियों पर भी लगा सकते हैं। गुजरात की एक कम्पनी इस पर दवा भी बना रही है। शीशम की पत्तियाँ हड्डियों को जोड़ने के साथ–साथ एण्टी एलर्जिक भी होती हैं। इनको खाना लाभदायक होता है। शीशम(*Dalbergia sissoo*) की पत्तियों से तैयार औषधि हड्डियों की मजबूती हेतु अत्यन्त लाभदायक होगी और किसानों की शीशम की खेती करने हेतु आर्थिक लाभ अर्जित करने के उद्देश्य से प्रोत्साहित भी करेगी।

9. **सूक्ष्म तत्वों को उत्कीर्ण करने के लिए 'बबल पेन' का आविष्कार**– वैज्ञानिकों ने एक नया 'बबल पेन' बनाया है जो कि किसी सतह पर सूक्ष्म तत्वों को उत्कीर्ण करने के लिए सूक्ष्म बुलबुलों का इस्तेमाल करता है। इस आविष्कार से छोटी मशीनों, ऑप्टिकल कम्प्यूटर व सोलर पैनल जैसे अनेक उपकरणों के विश्वनिर्माण में मदद मिल सकती है। सूक्ष्म तत्वों की आस्तियों व संचालन को बरकरार रखते हुए उनके साथ काम करना कठिन होता है। किसी अधःस्तर पर सामग्री को उकेरने की मौजूदा लेखन प्रणालियाँ किसी स्थान विशेष पर सूक्ष्म तत्वों(नैनोपार्टिकल) को सटीक ढ़ंग से रखने में सक्षम नहीं हैं। 'कॉकरेल स्कूल ऑफ इंजीनियरिंग, टेक्सास विश्वविद्यालय,' ऑस्टिन, अमेरिका के अनुसंधानकर्ताओं ने बबल–पेन लीथोग्राफी तकनीक का विकास किया है जिसकी सहायता से सोना, सिलीकॉन एवं अन्य तत्वों के सूक्ष्म कणों का नैनो मैनुफैक्चरिंग में उपयोग किया जा सकता है। बबल पेन के जरिए इन सूक्ष्म तत्वों को विभिन्न आकारों, आकृतियों में तीव्रगति से जल्दी व्यवस्थित किया जा सकता है। यह तकनीक विशेष रूप से विज्ञान एवं औषधि के क्षेत्र में उपयोगी साबित होगी। इस अनुसंधानकर्ता टीम के प्रमुख सहायक प्रोफेसर 'यूबिंग झेंग' हैं। यह शोध विज्ञान के जर्नल 'नैनो लैटर्स' जो अमेरिका से प्रकाशित होता है, के नवीनतम अंक में प्रकाशित हुआ है।

10. **पौधों को जीवित रखने के लिए नया स्मार्ट पॉट**– जिन लोगों को पौधे उगाने में रूचि है और जगह की कमी है तो अब निराश होने की आवश्यकता नहीं है, एक ऐसा 'स्मार्ट पॉट' आ गया है, जिसके जरिए आप आसानी से घर में ही बड़े पौधे उगा सकते हैं। फ्रांस की इलेक्ट्रॉनिक्स कम्पनी 'पैरॉट' ने एक ऐसे स्मार्ट पॉट को प्रस्तुत किया है, जो किसी भी पौधे को जीवित रखने का दावा करता है। इस पॉट में कई सेंसर लगे होते हैं, जो पौधे के उचित विकास को सुनिश्चित करने के लिए तापमान, पीएच, प्रकाश, नमी और उर्वरक के स्तर को मापता है। इससे आसानी से यह पता लगाया जा सकता है कि पौधे को पानी और सूर्य की रोशनी उचित मात्रा में मिल रही है अथवा नहीं ? इस बारे में जानकारी स्मार्ट फोन पर 'फ्लॉवर पॉवर' एप के जरिए मिल जाएगी। इस पॉट में दो लीटर तक पानी आ सकता है, जो कई पौधों के लिए एक सप्ताह तक पानी की पूर्ति करता है। इस पॉट को डिजाइन करने वाले 'विंसेट बिहलर' ने कहा, इस तकनीक से पता लग जाएगा कि पौधे का ध्यान कैसे रखना है? पानी की आवश्यकता होने पर पॉट स्वयं ही पौधे के लिए पानी की पूर्ति करेगा। पैरॉट कंपनी

इस पौधे को वैश्विक स्तर पर जल्द ही बाजार में लाएगी, इसके साथ ही एप भी जारी होगा, जिसमें सात हजार पौधों के बारे में जानकारी होगी।

संदर्भ

1. झेंग, यूबिंग; लिल, लिनहन; पेंग, जिआओली; डन, एण्ड्रयू के0 तथा पेरिलो, पी0(2006) नैनो लेटर्स, खण्ड–16, अंक–1, मु0पृ0 701–708।
2. www.science.com

खांसी में रक्तस्राव की उपेक्षा चिन्ताजनक

के0 के0 पाण्डेय
सीनियर थोरेसिक एण्ड कार्डियोवैस्कुलर सर्जन
इन्द्रप्रस्थ अपोलो हॉस्पिटल्स, सरिता विहार, नई दिल्ली–110076, भारत
drpandeykk@gmail.com

प्राप्त तिथि– 13.06.2016; स्वीकृत तिथि– 21.09.2016

सार– हमारे देश में असंख्य लोग खांसते समय बलगम में खून आने की समस्या से ग्रसित हैं। इस प्रकार के रोगी समस्या के वास्तविक कारणों से अनभिज्ञ होने के कारण अज्ञानतावश इस जीवन घातक रोग का उचित उपचार नहीं कराते हैं। प्रस्तुत लेख में खांसी में खूनी बलगम आने के सम्भावित कारणों का उल्लेख तथा उनके उचित उपचार हेतु दिशा निर्देश प्रस्तुत किये गये हैं।

बीज शब्द– खांसी में खून, अज्ञानता, थोरेसिक सर्जन।

Ignorance of bleeding cough-threat to life

K. K. Pandey
Senior Thoracic and Cardiovascular Surgeon
Indraprastha Apollo Hospitals, Sarita Vihar, New Delhi-110076, India
drpandeykk@gmail.com

Abstract- In our country, innumerable persons suffer from passing out blood during coughing. Due to the lack of awareness for the actual cause of cough with blood they unknowingly bear the risk of threat to life. This article presents various causes of coughing with blood and informs about the proper way to deal with them.

Key words- cough out blood, ignorance, Thoracic surgeon.

हमारे भारतीय उपमहाद्वीप में सभी आयु के असंख्य व्यक्ति जीवन के किसी न किसी पड़ाव पर खांसी से ग्रसित होते हैं। कभी–कभी सर्दियों प्रारम्भ होते ही खांसी की तीव्रता बढ़ जाती है और सूखा बलगम गीला होकर सफेद स्राव के रूप में परिवर्तित हो जाता है। प्रायः मौसम परिवर्तित होने पर निरन्तर और भयानक खांसी की घटनायें अत्यधिक बढ़ जाती हैं। हमारे उपमहाद्वीप में लोग अनेकों प्रकार की एलोपैथिक दवायें तथा घरेलू मिश्रणों को आजमाते हैं। कुछ समय के लिए उन्हें राहत भी मिल जाती है परन्तु खांसी की शिकायत पूरी तरह से ठीक नहीं होती क्योंकि हमारे यहाँ लोग खांसी होने के कारण पर ध्यान नहीं देते। हमारे चिकित्सक भी खांसी के कारणों की खोज के प्रति ज्यादातर गंभीर नहीं होते। सूखी खांसी का बार–बार आना ही नहीं, बल्कि खांसते समय खून का आना चिन्ता का विषय है। खांसी में खून का आना एक गंभीर और खतरनाक समस्या है। ऐसी हालत में लापरवाही करना मौत को दावत देने के समान है। हमेशा याद रहे कि खांसते समय खून निकलने की समस्या को गम्भीरतापूर्वक लेना चाहिये तथा तुरंत थोरेसिक सर्जन(वक्ष/छाती के शल्य चिकित्सक) से सम्पर्क करना चाहिये अन्यथा अज्ञानतावश अमूल्य मानव जीवन की क्षति हो सकती है।

खांसते समय खून क्यों आता है?– खांसी में खून आने के अनेकों कारण हैं। हमारे देश में सबसे अधिक महत्वपूर्ण कारण है– ट्यूबरक्युलर इन्फेक्शन(क्षयरोग संक्रमण)। जब क्षयरोग संक्रमण उचित देखभाल व उपचार के अभाव में अकस्मात् बहुत बढ़ जाता है तो रोगी की खांसी में खून आने लगता है। कभी–कभी तो खून का आना इतना कष्टदायक और घातक होता है कि सक्रंमित फेफड़े से रक्त निकलकर सामान्य फेफड़े में भर जाने के कारण कुछ ही घण्टों में मरीज की मृत्यु हो जाती है। प्रायः देखा गया है कि क्षयरोग के सफलतापूर्वक नियन्त्रण के उपरांत भी रोगी की खांसी में खून आता रहता है इसका कारण सीधा सा है कि सफल उपचार के बाद क्षयरोग संक्रमण तो फेफड़ें से दूर हो जाता है परन्तु संक्रमणका अवशिष्ट भाग फेफड़ों में बड़ी–बड़ी गुहाओं(cavity) के रूप में बचा रह जाता है। फेफड़ों के इस रिक्त भागों में अन्य प्रकार के जीवाणु मुख्यतः कवक(फन्गस), आसानी से प्रवेश कर जाते हैं और स्थायी रूप से स्थापित हो जाते हैं। चिकित्साशास्त्र में इस स्थिति को "एस्पर्जिलोमा" या "एस्पर्जिलोसिस" कहते हैं जिसके कारण खांसते समय खून निकलने की समस्या बनी रहती है। कभी–कभी तो खून इतनी ज्यादा मात्रा में निकलता है कि जीवन का खतरा भी उत्पन्न हो जाता है। हमारे देश में लाखों मरीज एस्पर्जिलोमा बीमारी से पीड़ित हैं और अज्ञानतावश अनेकों प्रकार के अनुचित इलाज

करते रहते हैं। जिसके कारण फेफड़ों का स्वस्थ भाग भी संक्रमित हो जाता है और मृत्यु के अलावा कोई रास्ता नहीं बचता।

फेफड़ों में बार–बार होने वाले संक्रमण से बचें– खांसी के समय बलगम में खून आने का दूसरा महत्वपूर्ण कारण है श्वांसनलिकाविस्फार(Bronchiectasis) की बीमारी। इस बीमारी के कारण श्वांसनली में बार–बार संक्रमण होने से लगातार बनी रहने वाली सूजन व जलन से श्वांसनली अत्यधिक क्षतिग्रस्त हो जाती है। जिसके कारण फेफड़ों में विस्तारित श्वांसनली की शाखायें या तो संकुचित हो जाती है या फिर सूजकर गुब्बारे की भांति हो जाती हैं। श्वांसनली की दोनों ही परिस्थितियाँ छाती से बलगम निकलने की प्रक्रिया को पूर्णतः बाधित कर देती है। बलगम श्वांसनली से होकर बाहर निकल जाने के बजाय श्वांसनली के भीतर ही स्थायी रूप से जमा रह जाता है। श्वांसनली की शाखाओं के समीप स्थित रक्त नलिकायें पतली व महीन होकर फैलकर चौड़ी(dialated) हो जाती हैं। ऐसी परिस्थिति में खांसते समय पड़ने वाले दबाव से रक्त नलिकायें फट जाती हैं और मरीज के मुँह से निकलने वाले बलगम में खून आने लगता है। श्वांसनलिकाविस्फार(Bronchiectasis) से पीड़ित रोगी को हृदय अथवा छाती के शल्यचिकित्सक से संपर्क कर फेफड़े के क्षतिग्रस्त भाग से जल्द से जल्द मुक्ति पानी चाहिए अन्यथा फेफड़े का स्वस्थ भाग भी सक्रंमित हो जायेगा। ऐसे रोगियों की खांसी में इतना अधिक खून भी निकल जाता है कि आकस्मिक रूप से रक्त चढ़ाने की आवश्यकता पड़ जाती है जिससे रोगी के जीवन को बचाया जा सके।

धूम्रपान से बचें– धूम्रपान से कैंसर भी होता है जो खांसी में खून आने का प्रमुख कारण हो सकता है। हमारे देश में खांसी के साथ बलगम में खून आने की तीसरी मुख्य वजह है– फेफड़ों का कैंसर। छोटे व बड़े सभी शहरों में युवाओं में धूम्रपान की प्रवृत्ति बढ़ने के कारण फेफड़ों में कैंसर के रोगियों की संख्या तेजी से बढ़ रही हैं। यहाँ तक कि गाँवों में हुक्का गुड़गुड़ाने के चलन की वजह से भी फेफड़ों के कैंसर के मरीज लगातार बढ़ते जा रहे हैं। किसानों तथा खेतों में काम करने वाले मजदूरों में धूम्रपान के कारण फेफड़ों के कैंसर में बढ़ोत्तरी हो रही है। देखा गया है कि पहाड़ी इलाकों में रहने वाले लोग कम उम्र से ही धूम्रपान प्रारम्भ कर देते हैं। यह एक गंभीर विषय है और इस पर तत्परता से ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि धूम्रपान से न केवल कैंसर होता है अपितु शरीर के विभिन्न अंगों में शुद्ध ऑक्सीजनयुक्त रक्त पहुँचाने वाली रक्तनलिकाओं को भी संकुचित करता है। जिससे फेफड़ों के साथ ही हाथ–पैर भी बेकार हो जाते हैं यदि बहुत लम्बे समय से धूम्रपान करने वाले व्यक्ति के खांसते समय निकलने वाले बलगम में खून आता है तो फेफड़ों में कैंसर होने की दशा से इंकार नहीं किया जा सकता है।

फेफड़ों में फोड़े के कारण खूनी बलगम– खूनी बलगम आने का चौथा कारण है फेफड़ों में मवाद का भर जाना जो सामान्य भाषा में फेफड़ों में फोड़े(abscess) की बीमारी के नाम से जाना जाता है। गंभीर संक्रमण से रक्तनलिकायें कमजोर हो जाती हैं और अचानक दबाव पड़ने पर फट जाती हैं जिससे बलगम में खून आता है। कभी–कभी युवा स्त्री व पुरुषों में फेफड़ों की रक्तनलिकाओं की संरचना में गड़बड़ी होती है। इस स्थिति में जन्म से ही फेफड़ों में पहुँचने से पूर्व ही रक्तनलिकायें आपस में जुड़ी होती हैं। रक्तनलिकाओं की इस संरचनात्मक गड़बड़ी को "पल्मोनरी आरटेरियो वीनस फिस्च्यूला"(पी.ए.वी.एम.) कहते हैं। कभी–कभी सड़क दुर्घटना के दौरान छाती में चोट लग जाने पर भी मवाद एकत्र हो जाता है जिसके कारण फेफड़ों के भीतर स्थित श्वांसनली फेफड़ों की बाहरी दीवारों से जुड़ जाती है। चिकित्सा की भाषा में इस बीमारी को "ब्रांको प्यूलर फिस्च्यूला" कहते हैं। इस खतरनाक स्थिति में भी मरीज के बलगम में खांसते समय खून आ सकता है।

अगर बलगम में खून आये, तो कहाँ जायें?– अगर आप खांसी से लगातार परेशान हैं और बलगम में खून आता है तो हाथ पर हाथ रखकर न बैठें और तुरत बिना कोई देर किये छाती के शल्य चिकित्सक(Thoracic surgeon) से सम्पर्क करें। ध्यान रखें थोरेसिक सर्जन न कि किसी सामान्य शल्य चिकित्सक से सम्पर्क करना है। पुरानी खांसी और बलगम में खून आने के कारण की जाँच पड़ताल करना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि कारण जानने के बाद ही समस्या से छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार की समस्या से पीड़ित मरीज को ऐसे अस्पताल में जाना चाहिए जहाँ छाती तथा हृदय की शल्य चिकित्सा नियमित रूप से होती हो। समस्या के कारण और गम्भीरता को जानने के लिए कुछ आधुनिक जाँच जैसे ब्रान्कोस्कोपी, थोरेकोस्कोपी, मिडियास्टिनोस्कोपी, सी.टी. गाइडेड बायोप्सी और पैरास्टर्नोटामी आदि की आवश्यकता पड़सकती है। अस्पताल में जाने से पहले सुनिश्चित कर लें कि वहाँ आधुनिक रक्त बैंक, आकस्मिक चिकित्सा यूनिट और गम्भीर उपचार की सुविधा आदि उपलब्ध हों। आकस्मिक चिकित्सा कक्ष में पर्याप्त वेन्टिलेटर(वायुतंत्र) की उपलब्धता होनी चाहिए क्योंकि जीवन को खतरा होने पर यह यंत्र बहुत उपयोगी होगा। यह भी सुनिश्चित कर लें कि अस्पताल में विशेष रूप से "आरटरी इम्बोलाइजेशन फैसिलिटी" उपलब्ध है या नहीं। जीवन के लिए घातक रक्तस्त्राव की स्थिति में यह सुविधा रोगी के लिए जीवन की रक्षा कर सकती है।

अगर बलगम में खून आये, तो क्या करें?– बलगम में खून आने की स्थिति में छाती–शल्य चिकित्सक से शीघ्रातिशीघ्र सम्पर्क करें। खूनी बलगम के कारणों का पता लगायें। जाँच के लिए छाती का एक्स–रे, छाती का मल्टीस्लाइड सी.टी. स्कैन, छाती की एम0आर0आई0 तथा फेफड़ों की बायोप्सी आदि की आवश्यकता होती है। यदि संक्रमण के कारण फेफड़े का कोई भी भाग पूरी तरह से क्षतिग्रस्त हो गया हो तो जितनी जल्दी संभव हो सक्रमित भाग से मुक्ति पाने का प्रयास करना चाहिए। खून आने की समस्या का यही एकमात्र स्थायी उपचार है। संक्रमित भाग को निकालने का अन्य फायदा

है कि फेफड़े के क्षतिग्रस्त भाग के आस–पास के स्वस्थ भाग को हानि से बचाया जा सकता है। यदि बलगम में खून का कारण फेफड़े का कैन्सर हो तो शल्य चिकित्सक द्वारा पूरे फेफड़े को निकालकर मरीज की जान बचाई जा सकती है तथा दूसरे फेफड़े को भी बचाया जा सकता है। सामान्यतः लोगों को भ्रम होता है कि एक फेफड़ा निकाल देने पर मरीज जीवित रहेगा भी या नहीं। यह एक निराधार भ्रम है। जिस प्रकार एक किडनी दान करने के बाद भी व्यक्ति सामान्य जीवन जी सकता है उसी प्रकार एक फेफड़े द्वारा भी वह सामान्य रूप से जीवन बिता सकता है। इसलिए कैन्सरग्रस्त फेफड़े को पूरी तरह हटाने में जरा भी संकोच नहीं करना चाहिए। एक अनुभवी छाती के शल्यचिकित्सक द्वारा ही इस प्रकार की शल्यचिकित्सा करानी चाहिए। बहुधा यह पाया गया है कि हृदय की शल्य चिकित्सा करने वाले चिकित्सकों को अक्सर छाती की शल्य चिकित्सा करने का पर्याप्त अनुभव नहीं होता। अतः शल्यचिकित्सक का चुनाव करते समय इस महत्वपूर्ण बात का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है।

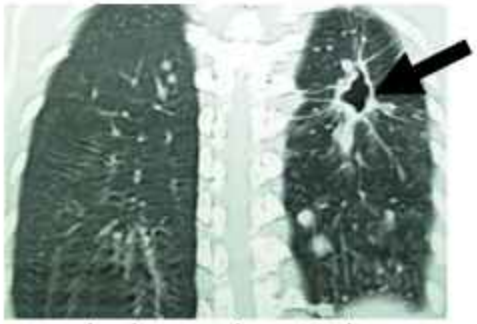

फेफड़ों का क्षयरोग खांसी में

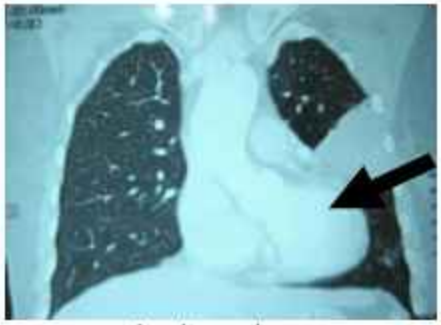

फेफड़ों का कैन्सर

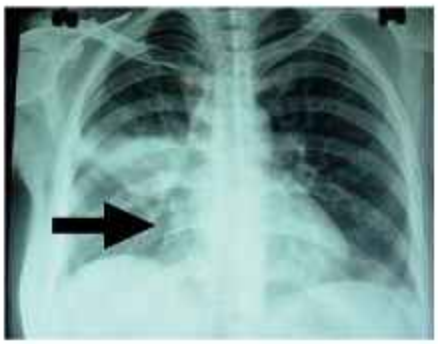

फेफड़ों में व्याप्त फोड़े

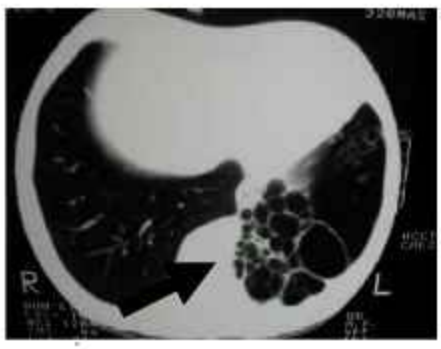

श्वांसनलिकाविस्फार(ब्रान्केक्टेसिस)

फेफड़ों में फंगस वाला ट्यूमर

शल्य चिकित्सा द्वारा हटाया गया फंगस का गोला (एस्पर्जिलोमा)

डिजिटल लॉकरः भारत सरकार की एक पहल

राकेश कुमार सिंह[1] एवं रंजन सिंह[2]
[1]वैज्ञानिक–डी (सूचना प्रौद्योगिकी), गोविंद बल्लभ पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण एवं सतत् विकास संस्थान, कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा, उत्तराखंड, भारत
[2]एम.सी.ए. छात्रा, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत
rksingh@gbpihed.nic.in; ranjan418@yahoo.com

प्राप्त तिथि– 31.07.2016; स्वीकृत तिथि– 28.09.2016

सार– सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी तकनीक का प्रयोग पूरे विश्व में निरन्तर बढ़ता जा रहा है। विकास की इस कड़ी में भारत भी अछूता नहीं रहा है और आज लगभग सभी सरकारी एवं गैर–सरकारी कार्यों में सूचना प्रौद्योगिकी तकनीक का प्रयोग बढ़ा है। भारत में डिजिटल इण्डिया प्रोग्राम के अंतर्गत सरकार द्वारा ऐसी बहुत सी योजनाऐं चलायी गयी हैं जो नागरिकों के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुई हैं। इन योजनाओं के द्वारा सरकारी कार्यों में पारदर्शिता बढ़ी है एवं कार्यों में गति आयी है। नागरिक डिजिटल तकनीक द्वारा विभिन्न सरकारी योजनाओं का लाभ घर बैठे ऑनलाईन माध्यम से उठा सकते हैं। डिजिटल लॉकर, डिजिटल इंडिया प्रोग्राम के तहत शुरु की गई एक योजना है। डिजिटल लॉकर सुविधा के द्वारा भारतीय नागरिक अपने सभी अहम दस्तावेज इंटरनेट पर डिजिटल रूप में ऑनलाईन स्टोर कर सकते हैं। डिजिटल लॉकर सुविधा का लाभ उठाने के लिए नागरिकों के पास आधार कार्ड होना आवश्यक है।

बीज शब्द– डिजिटल लॉकर, आधार कार्ड, सूचना प्रौद्योगिकी, डिजिटल इंडिया, ई–हस्ताक्षर, आदि ।

Digital Locker: an initiative of Government of India

[1]Rakesh Kumar Singh and [2]Ranjan Singh
[1]Scientist-D, Information Technology, Govind Ballabh Pant Himalaya Paryavaran & Development Institute, Kosi-Katarmal, Almora-263601, Uttarakhand, India
[2]M.C.A. Student, I.G.N.O.U., New Delhi, India
rksingh@gbpihed.nic.in, ranjan418@yahoo.com

Abstract- Use of information and communication technology (ICT) is increasing constantly in the world. India is no exception to this link development and today, almost all government and non-government operations increased use of information technology techniques. There are many such schemes undertaken by the government of India under digital india programme which are very beneficial for the citizens. Transparency in government activities are being increased due to these schemes and routine work speeding up. Citizines can take benefits of various government schemes with the use of this digital technology by sitting at home through online mode. Digital locker is the scheme which was started under digital India programme. Indian citizens can store their important documents on the internet in digital form by using this digital locker facility. Citizens need to have aadhar card to avail the facility of digital locker.

Key Words- *Digital Locker, Aadhaar Card, Information Technology, Digital India, e-Signature, etc.*

1. **डिजिटल लॉकर क्या है?** डिजिटल लॉकर या डिजिलॉकर, भारत के प्रधानमंत्री के महत्वाकांक्षी डिजिटल इंडिया प्रोग्राम का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इस योजना को डिजिटल इंडिया प्रोग्राम के तहत 1 जुलाई, 2015 से शुरू किया गया। अंग्रेजी भाषा के शब्द डिजिटल लॉकर का हिंदी में शाब्दिक अर्थ है अंकीय तिजोरी या इलेक्ट्रॉनिक तिजोरी जो दस्तावेजों की छायाप्रति सुरक्षित रखने के काम आती है। इस वेबसाईट सेवा के माध्यम से भारतीय नागरिक जन्म प्रमाण पत्र, वोटर आईडी, पासपोर्ट, पैन कार्ड, शैक्षणिक प्रमाण पत्र जैसे अहम दस्तावेजों को ऑनलाइन स्टोर कर सकते हैं। सभी दस्तावेजों को डिजिटल तरीके से सुरक्षित करने के बाद ई–हस्ताक्षर सुविधा का प्रयोग करते हुए डिजिटल हस्ताक्षर भी करने होते हैं ताकि आपके दस्तातवेज पूरी तरह सुरक्षित रहें। यह एक तरह से ड्रॉपबॉक्स की तरह क्लाउड स्पेस है जो उन उपयोगकर्ताओं को निशुल्क दिया जाता है जो आधार कार्ड पंजीकृत हैं। उपयोगकर्ताओं को 1 जीबी का स्पेस भी

दिया जाता है अर्थात वो अपने सही तरह के पहचान के दस्तावेज इंटरनेट पर अपलोड करके सुरक्षित रख सकते हैं और बाद में जरुरत होने पर कहीं से भी उन दस्तावेजों को देख एवं उपयोग कर सकते हैं।

यह सुविधा पाने के लिए बस उपयोगकर्ता के पास भारत सरकार द्वारा प्रदत्त आधार कार्ड होना चाहिए। आधार का नंबर फीड कर आप डिजिटल लॉकर अकाउंट खोल सकते हैं। इस सर्विस की सबसे खास बात यह है कि आप कहीं भी अपने दस्तावेज में डिजिटल लिंक पेस्ट(यूआरएल) कर दीजिये, अब आपको बार–बार कागजों का प्रयोग नहीं करना होगा। इसके अलावा बाद में कई तरह की सरकारी सुविधाओं को डिजिटल लॉकर से जोड़ दिए जाने की सरकार की योजना है जिसमें व्यक्ति के दस्तावेजो के सत्यापन की जरुरत होती है अर्थात आपको अगर किसी सरकारी विभाग में कुछ काम है तो आप आराम से केवल आधार कार्ड के नंबर के माध्यम से अपनी सारी सुविधाओं को ले सकते हैं और सरकारी विभाग से वो दस्तावेज मैप कर दिए जायेंगे तो आपको अपने दस्तावेजों को साथ लाने ले जाने से मुक्ति मिलेगी और ऑनलाइन सत्यापन होना संभव होगा। आधार अंक की अनिवार्यता होने की वजह से यह तय किया गया है कि इस सरकारी सुविधा का लाभ सिर्फ भारतीय नागरिक ही ले सकें और जिसका भी खाता हो, उसके बारे में सभी जानकारी सरकार के पास हो। कोई भी ठग, झूठा और अप्रमाणित व्यक्ति इसका उपयोग ना कर सके इसके लिये आधार कार्ड होने की अनिवार्यता अति आवश्यक है क्योंकि आधार कार्ड भी भारत सरकार द्वारा पूरी जाँच पड़ताल के बाद ही जारी किया जाता है। इस तरह से इस प्रणाली के दुरुपयोग की संभावना बेहद कम हो जाती है।

2. **डिजिटल लॉकर एकाउंट खोलना और लॉग इन करना**– डिजिटल लॉकर खोलना बहुत आसान है, बस आपको https://digilocker.gov.in पर लॉगइन करना होगा। उसके बाद अपने आधार कार्ड का नंबर डालकर आपको रजिस्ट्रेशन की प्रक्रिया पूरी करनी होगी, उसके बाद आपके मोबाइल नंबर पर एक ओटीपी(वन टाइम पासवर्ड) आपको प्राप्त होगा जो इंटर कर देने के बाद आपकी रजिस्ट्रेशन प्रक्रिया पूरी हो जाएगी। रजिस्ट्रेशन प्रक्रिया के दौरान मांगी गई सूचनाओं को ऑन लाईन फार्म में भरना आवश्यक है। एक बार रजिस्ट्रेशन प्रक्रिया पूरी हो जाने के बाद आपसे एक आईडी और पासवर्ड बनाने को कहा जाता है और उसके बाद आप कभी भी अपनी आईडी और पासवर्ड का इस्तेमाल करते हुए आसानी से लॉग इन कर सकते हैं और इस सुविधा का लाभ ले सकते हैं। लॉग इन करने के बाद आपके सामने एक डैशबोर्ड होगा जहाँ आप अपने निजी दस्तावेजों की स्कैन कॉपी(सॉफ्ट कॉपी) अपलोड कर सकते हैं, जो हमेशा के लिए उसमें लोड हो जायेगी। आपका लॉगइन आईडी और पासवर्ड आपका अपना होगा जिससे आप कभी भी और कहीं भी लॉगइन कर सकते हैं। इस लॉकर के जरिये धोखाधड़ी नहीं हो सकती है और ना ही नकली दस्तावेजों का चक्कर होता है, यह पूरी तरह से नीट एंड क्लीन प्रोसेस है। अगर आप किसी सार्वजनिक कंप्यूटर पर अपना डाटा प्राप्त करना चाहते हैं तो भी आप अपने आधार कार्ड और ओटीपी के माध्यम से लॉग इन कर सकते हैं और सुरक्षा की दृष्टि से यह बहुत सुविधाजनक भी है। इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार ने विगत दिनों में डिजिटल लॉकर का नया वर्जन 1.5 लॉन्च किया है।

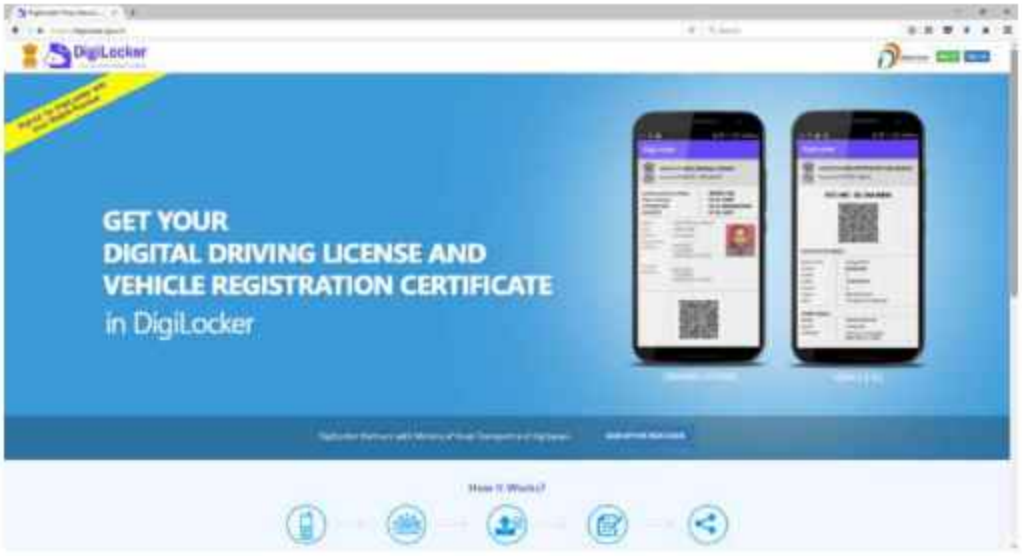

चित्र–1– डिजिटल लॉकर का वेब पौंटल (https://digilocker.gov.in)

3. **डिजिटल लॉकर का चरणबद्ध उपयोग**– डिजिटल लॉकर को खोलने के लिए आपको कुछ बातों का ध्यान रखना होगा। यहाँ पर डिजिटल लॉकर खोलने ओर उसका उपयोग करने के महत्वपूर्ण बिन्दुओं को एक–एक करके दर्शाया गया है। नीचे दिए गए निर्देशों का पालन करें ओर डिजिटल लॉकर का ठीक से इस्तेमाल करें–

- सबसे पहले https://digilocker.gov.in वेबसाइट पर जाकर अपनी आईडी बनानी होगी। आईडी बनाने के लिए आपको वेबसाइट पर दिए गए साईन–अप बटन पर क्लिक करें।
- यहाँ पर आप अपना वैध आधार कार्ड नंबर डाल कर नीचे दिए गए किसी एक विकल्प को चुनें:
  - ❖ **पहला विकल्प**: ओटीपी(वन टाइम पासवर्ड) चुनने पर यूजर के आधार कार्ड पर रजिस्टर किये गए मोबाइल नंबर पर एक नंबर आएगा। इस नंबर से आप अपना डिजिटल लॉकर इस्तेमाल कर पायेंगे।
  - ❖ **दूसरा विकल्प**: फिंगर प्रिन्ट, इसका चुनाव करने से आपको अपना डिजिटल लॉकर इस्तेमाल करने के लिए अपने फिंगर प्रिंट का इस्तेमाल करना होगा।
- लॉगिन होने के बाद आपसे जो इन्फॉर्मेशन मांगी जाए उसे भरें। इसके बाद आपका एकाउंट बन जाएगा। एकाउंट खुलने के बाद आप कभी भी इस पर अपने पर्सनल डॉक्युमेंट्स अपलोड कर सकेंगे।

4. **डिजिटल लॉकर में दस्तावेजों को कैसे अपलोड करें–** आप जिन दस्तावेजों को डिजिटल लॉकर में अपलोड करना चाहते हैं उनकी मूल प्रति को स्कैनर द्वारा स्कैन करें। एक समय में एक ही दस्तावेज, अपलोड किया जा सकता है। इसकी प्रक्रिया निम्न है–

- अपलोड किए जाने वाले दस्तावेज के प्रकार का चयन करें।
- लोकेशन का चयन करें और फाइल को सेलेक्ट करें।
- दस्तावेज के बारे में संक्षिप्त विवरण लिख दें।
- आवश्यक जानकारी देने के बाद, अपलोड बटन पर क्लिक कर दें।

5. **दस्तावेजों को डिजिटल लॉकर में रखने के फायदे**

- आपको अपने सभी दस्तावेजों को हर बार, हर जगह उठाकर ले जाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। आवश्यकता पड़ने पर आप डिजिटल लॉकर का इस्तेमाल कर सकते हैं।
- डिजिटल लॉकर का डैशबोर्ड बहुत ज्यादा सुविधा जनक है और साथ ही यूजर फ्रेंडली भी है इसलिए आप आराम से अगर आपको थोड़ी भी कम्प्यूटर की जानकारी है तो इसे इस्तेमाल कर सकते हैं।
- आपको जीवनकाल के लिए 1 जीबी का स्टोरेज स्पेस दिया जाता है इसलिए आपको इसके लिए भुगतान करने की भी कोई आवश्यकता नहीं है और यह सर्विसेज आपके लिए पूरी तरह निशुल्क है।
- ई–दस्तावेजों की प्रमाणिकता को सुनिश्चित किया जा सकता है और फर्जी दस्तावेजों का बनना बंद होगा।
- कहीं भी कभी भी, दस्तावेजों का इस्तेमाल किया जा सकता है।
- डिजिटल लॉकर के लिए आपके पास आधार कार्ड होना आवश्यक है। साथ ही आपका मोबाइल नम्बर, उस आधार कार्ड में लिंक होना चाहिए।
- इस सुविधा की खास बात ये है कि एक बार लॉकर में अपने दस्तावेज अपलोड करने के बाद आप कहीं भी अपने प्रमाणपत्र की मूलप्रति के स्थान पर अपने डिजिलॉकर की वेब कड़ी(यूआरएल) दे सकेंगे।

6. **डिजिटल लॉकर में सुरक्षा**– इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रबन्धित यह लॉकर एसएसएल के द्वारा एचटीटीपीएस सुरक्षा प्रणाली द्वारा सुरक्षित है जो कि फिलहाल वेबसाइट सुरक्षा के लिए सबसे सुरक्षित प्रणाली है। वेबसाइट के यूआरएल (https://digilocker.gov.in) में https:// और उसके आगे एक हरा ताला इसकी सुरक्षा का द्योतक है। यहाँ s का अर्थ अंग्रेजी का शब्द secure है जिसका हिंदी में अर्थ सुरक्षित होता है। अगर आप https:// और हरा ताला नहीं देख पा रहे हैं तो इसका मतलब है आप किसी फर्जी वेबसाइट पर हैं जो आपकी जानकारियाँ चुरा सकती है।

अवलोकित सन्दर्भ

i. https://digilocker.gov.in
ii. http://hindi.webdunia.com/it-news/digital-locker-scheme-115021800063_1.html
iii. http://hindi.oneindia.com/news/india/what-is-digital-locker-358264.html
iv. https://hi.wikipedia.org/wiki/डिजिटल लॉकर
v. http://www.guide2india.org/know-digital-locker-in-hindi
vi. http://www.mybigguide.com/2015/04/Use-Aadhar-Card-to-Open-Digital-Locker.html
vii. http://www.amarujala.com/news-archives/india-news-archives/digital-locker-hindi-news-rk
viii. http://naidunia.jagran.com/search/digital-locker
ix. http://hindi.goodreturns.in/classroom/2015/07/how-to-open-digital-locker-000298.html
x. https://www.mygov.in/group-issue/beta-release-digital-locker-system

नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान–वर्ष 2016

दिव्यांश श्रीवास्तव
छात्र, ला मार्टीनियर कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
divyansh_21@hotmail.com

प्राप्त तिथि– 14.10.2016; स्वीकृत तिथि– 20.10.2016

सार– प्रस्तुत लेख में वर्ष–2016 हेतु चिकित्सा, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, साहित्य, शांति एवं अर्थशास्त्र के क्षेत्रों में अभूतपूर्व योगदान दिये जाने वाले नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वानों एवं उनके योगदान का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

बीज शब्द– नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान, चिकित्सा, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, शांति, अर्थशास्त्र, साहित्य।

Nobel award winner laureates-year 2016

Divyansh Srivastava
Student, La Martiniere College, Lucknow-226001, U.P., India
divyansh_21@hotmail.com

Abstract- The short description of Nobel award winner laureates and their contributions for the year 2016 in the areas of Medicine, Physics, Chemistry, Peace, Economics and Literature is given in the present article.

Key words- Nobel award winner laureates, Medicine, Physics, Chemistry, Peace, Economics, Literature.

1. चिकित्सा के क्षेत्र में

योशीनोरी ओशूमी
(जन्म–1945, फुकुओका, जापान)

वर्ष 2016 में चिकित्सा के क्षेत्र में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा नियुक्त नोबेल एसेम्बली ने केरोलिन्स्का इंस्टीट्यूट, स्वीडन, में दिनांकः 03.10.2016 को जापान के टोक्यो इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, टोक्यो के चिकित्सा विज्ञानी प्रोफेसर **योशीनोरी ओशूमी** को "**मिकेनिज्म फॉर ऑटोफेजी**" पर उनकी खोज के लिए प्रदान किया गया। शरीर में ऑटोफेजी वह मूलभूत प्रक्रिया है जिसमें शरीर के प्रतिरोधी तंत्र में कोशिकीय अवयवों का क्षरण(डिग्रेडेशन) व पुनःचक्रण(रिसायक्लिंग) होता है।

"**ऑटोफेजी**" शब्द का अर्थ होता है– स्वयं को स्वयं ही मारना(सेल्फ ईटिंग)। मानव की कोशिकाओं में छोटे–छोटे कोष्ठक होते हैं जिन्हें "सैल्स" कहते हैं। सन् 1960 में पहली बार, वैज्ञानिकों ने इन छोटे कोष्ठकों में "लाइसोसोम" नामक

गोलाकार बोरे जैसा एक रचना पायी, जो पुराने हो गये कोशिकाओं को स्वयं ही खा जाता है अर्थात् नष्ट कर देता है ताकि नयी कोशिकाएं उसकी जगह ले सकें, परन्तु इसे सिद्ध कर पाना अत्यन्त कठिन था। सन् 1990 के प्रारम्भ में योशीनोरा ओशूमी द्वारा इससे संबंधित लगातार अनेकों बुद्धिजनक परीक्षण किये गये। योशीनोरा ने बेकरी में प्रयुक्त यीस्ट(खमीर) को ऑटोफेजी के लिए आवश्यक जीन की पहचान के लिए प्रयोग किया। परीक्षणों के उपरांत वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यीस्ट(खमीर) में ऑटोफेजी की क्रिया विधि ही वह अत्याधुनिक प्रक्रिया है जो मानव कोशिकाओं में घटित होती है।

उनकी इस खोज से कैंसर, पार्किंसन और टाइप–2 डायबिटीज जैसी बीमारियों को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिलेगी। योशीनोरा ओशुमी को नोबेल पुरस्कार की सम्पूर्ण राशि(80 लाख स्वीडिश क्रोनर या 9.33 लाख डॉलर या लगभग 6.20 करोड़ रुपये) का पूरा हिस्सा प्राप्त होगा।

2. **भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में**

डेविड जे0 थाउलेस
(जन्म–1934, बिअर्सडेन, यू0के0)

एफ0 डन्कन एम0 हेल्डेन
(जन्म–1951, लन्दन, यू0के0)

जे0 माइकल कोस्टेर्लिट्ज
(जन्म–1942, एबरडीन, यू0के0)

वर्ष 2016 में भौतिक विज्ञान में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा यूनिवर्सिटी ऑफ वाशिंगटन, सीटल, वाशिंगटन, यू0एस0ए0 के भौतिकविद्, सेवानिवृत्त **प्रोफेसर डेविड जे0 थाउलेस**, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी, एन0जे0, यू0एस0ए0 के भौतिकविद् **प्रोफेसर एफ0 डन्कन एम0 हेल्डेन** तथा ब्राउन यूनिवर्सिटी, प्रोविडेंस, रोड्स आइसलैंड, यू0एस0ए0 के भौतिकविद् **प्रोफेसर जे0 माइकल कोस्टेर्लिट्ज** को संयुक्त रूप से प्रदान किये जाने की घोषणा दिनांकः 04.10.2016 को की गई। कन्डेन्स्ड मैटर फिजिक्स के तीनों भौतिक शास्त्रियों को भौतिकी का नोबेल पुरस्कार उनके कार्य "**फॉर थियोरेटिकल डिस्कवरीज ऑफ टोपोलॉजिकल फेज ट्रांजीशन एण्ड टोपोलॉजिकल फेजेज ऑफ मैटर**"(**पदार्थ के विचित्र रूपों के अध्ययन**) पर प्रदान किया गया। ब्रिटिश वैज्ञानिकों की इस खोज से भविष्य में छोटे सुपरफास्ट कम्प्यूटरों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त होगा। अमेरिका में रह रहे तीनों वैज्ञानिकों ने उच्च गणित के ज्यामिति विस्तार वाली धारा "**टोपोलॉजी(संस्थिति विज्ञान)**" का प्रयोग कर पदार्थ की विलक्षण अवस्थाओं का रहस्य उजागर किया। नोबेल एसेम्बली के कथनानुसार इन वैज्ञानिकों ने एक ऐसी अबूझ दुनिया को समझने का रास्ता प्रशस्त किया है, जहाँ पदार्थ कई विचित्र रूपों में मौजूद हो सकते हैं। पदार्थ यानि सुपरकंडक्टर्स, सुपरफ्ल्यूड्स या पतली मैग्नेटिक फिल्मों आदि की असामान्य अवस्थाओं का अध्ययन करने के लिए उन्होंने अत्याधुनिक गणितीय विधा "**टोपोलॉजी**" का उपयोग किया।

"**टोपोलॉजी**" पद्धति व विधा, ज्यामिति गणित के विस्तार वाला एक बड़ा क्षेत्र है। इसमें उन गुणों का अध्ययन किया जाता है, जो वस्तुओं को सतत् रूप से विकृत करने पर भी उनमें बने रहते हैं। इन वैज्ञानिकों के शोध निष्कर्ष के बाद यह माना जा रहा है कि यह गुण एक सामान्य पदार्थ में भी विकसित किया जा सकता है। जिसके चलते किसी छोटी चीज में भी ढेर सारी ऊर्जा का संचय एवं सूचनाओं का संग्रह किया जा सकता है। **प्रोफेसर** डेविड जे0 थाउलेस को पूर्व में वोल्फ प्राइज इन फिजिक्स, डिराक मेडल ऑफ द इंस्टीट्यूट ऑफ फिजिक्स, मैक्सवेल मेडल एण्ड प्राइज(1973), लार्स ओसेंगर(2000) प्राप्त हैं। **प्रोफेसर** एफ0 डन्कन एम0 हेल्डेन को पूर्व में आलिवर ई0 बक्ले कन्डेन्स्ड मैटर प्राइज(1993) प्राप्त है। इन वैज्ञानिकों को नोबेल पुरस्कार राशि के तहत 80 लाख स्वीडिश क्रोनर(9.33 लाख डॉलर, लगभग 6.20 करोड़ रूपये) का आधा हिस्सा **प्रोफेसर** डेविड जे0 थाउलेस को तथा बचे हुए आधे हिस्से को दो अन्य पुरस्कृत **प्रोफेसर** एफ0 डन्कन एम0 हेल्डेन एवं **प्रोफेसर** जे0 माइकल कोस्टेर्लिट्ज के मध्य बराबर–बराबर बाँटा जायेगा।

3. रसायन विज्ञान के क्षेत्र में

जीन–पियरे सॉवेज
(जन्म–1944, पेरिस, फ्रांस)

सर जे0 फ्रेजर स्टोड्डार्ट
(जन्म–1942, एडिनबर्ग, यू0के0)

बर्नार्ड एल0 फेरिन्गा
(जन्म–1951, बर्जर–कॉम्पसकम, द नीदरलैंड्स)

वर्ष 2016 में रसायन विज्ञान में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा स्वीडन में दिनांकः 05.10.2016 को घोषित किये गये। यूनिवर्सिटी ऑफ स्ट्रॉसबर्ग, स्ट्रॉसबग, फ्रांस, के **प्रोफेसर जीन–पियरे सॉवेज**, नॉर्थवेस्टर्न यूनिवर्सिटी, इवान्स्टन, आई.एल., यू0एस0ए0, के **प्रोफेसर सर जे0 फ्रेजर स्टोड्डार्ट**, यूनिवर्सिटी ऑफ ग्रोनिन्जेन, ग्रोनिन्जेन, द नीदरलैण्ड्स, के **प्रोफेसर बर्नार्ड एल0 फेरिन्गा** को रसायन विज्ञान के क्षेत्र में **"फॉर द डिजायन एण्ड सिन्थेसिस ऑफ मॉलिक्यूलर मशीन्स"(सूक्ष्म आणविक मशीन की संरचना एवं संश्लेषण के लिए)** पर अभूतपूर्व योगदान हेतु संयुक्त रूप से नोबेल पुरस्कार हेतु चयन किया गया। इन वैज्ञानिकों ने मिलकर एक ऐसी आणविक मशीन के विकास पर अनुसंधान किया जो बाल से भी एक हजार गुना पतली है। इससे इस प्रकार की सूक्ष्म मशीनों के बनाने में मदद मिलेगी जिसका प्रयोग शरीर के भीतर दवा पहुँचाने के लिए किया जा सकेगा। उदाहरण के लिए कैंसर की कोशिकाओं में ऐसी नैनो मशीनों की सहायता से दवा पहुँचाई जा सकेगी जो अभी तक संभव नहीं हो पाई है। नैनोटेक्नोलॉजी के क्षेत्र में इस थ्योरी की सहायता से स्मार्ट मशीनों को तैयार किया जा सकेगा। इन वैज्ञानिकों के इस अमूल्य योगदान से भविष्य में अणुओं को जोड़कर कार की मोटर से लेकर छोटी मांसपेशियों तक का निर्माण संभव होगा।

4. **शांति के क्षेत्र में**

जुआन मैनुएल सैंटोस(जन्म–1951, बोगोटा, कोलम्बिया)

वर्ष 2016 में शांति के नोबेल पुरस्कार हेतु दिनांकः 07.10.2016 को नॉर्वीजियन नोबेल एकेडेमी, ओस्लो, नॉर्वे, के अध्यक्ष कॉसी कलमन फाइव द्वारा कोलंबिया के राष्ट्रपति जुआन मैनुएल सैंटोस को उनके द्वारा देश में पिछले पचास वर्षों से चल रहे गृह युद्ध को समाप्त करने की दिशा में किये गये निर्णायक प्रयासों के चलते चुना गया। इस गृह युद्ध में 2 लाख बीस हजार लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ी तथा साठ लाख लोगों को विस्थापित होना पड़ा था। सैंटोस को पुरस्कृत करने के फैसले को कई क्षेत्रों में आश्चर्यजनक माना जा रहा है। इसका कारण यह है कि पिछले महीने 26 सितम्बर, 2016 को विद्रोही संगठन रिवोल्यूशनरी आर्म्ड फोर्सेज ऑफ कोलंबिया(एफ0ए0आर0सी0) के प्रमुख रॉड्रिगो लॉनडोनो के साथ सैंटोज ने जो ऐतिहासिक शांति समझौता किया था, उसकी शर्तों को मतदाताओं ने शुरू में ही खारिज कर दिया था। इसके लिए 2 अक्टूबर, 2016 को जनमत संग्रह प्रस्तावित था परन्तु देशवासियों के विरोध को देखते हुए ऐसा संभव नहीं हो सका। यह पुरस्कार घोषित करने के पीछे नोबेल समिति के अध्यक्ष द्वारा यह दलील दी गई कि गृह

युद्ध प्रभावित देश में इस प्रयास से शांति स्थापित करने में मदद मिलेगी तथा सम्पूर्ण विश्व में इसके चलते शांति प्रक्रिया में तेजी आयेगी। अक्टूबर 10, 2016 को दिये गये अपने एक कथन में कोलंबिया के राष्ट्रपति जुआन मैनुएल सैंटोस द्वारा नोबेल समिति द्वारा प्रदान की जाने वाली नोबेल पुरस्कार राशि (80 लाख स्वीडिश क्रोनर(9.33 लाख डॉलर, लगभग 6.20 करोड़ रूपये) को अपने देश में संघर्ष पीड़ितों हेतु दान कर दिये जाने की घोषणा की गई।

5. **अर्थशास्त्र के क्षेत्र में**

ओलिवर हार्ट
(जन्म–1948, लन्दन, यू0के0)

बेंग्ट होल्म्सट्रॉम
(जन्म–1949, फिनलैण्ड)

वर्ष 2015 में, अल्फ्रेड नोबेल की स्मृति में अर्थशास्त्र विज्ञान के लिए प्रदान किया जाने वाला सवेरिजेस रिक्सबैंक पुरस्कार 68 वर्षीय ब्रिटिश मूल के अमरीकी अर्थशास्त्री प्रोफेसर **ओलिवर हार्ट**, अर्थशास्त्र विभाग, हार्वर्ड विश्वविद्यालय, कैम्ब्रिज, यू0एस0ए0, तथा 67 वर्षीय फिनिश मूल के अमरीकी अर्थशास्त्री एवं प्रबंधन प्रोफेसर **बेंग्ट होल्म्सट्रॉम**, मैसाक्यूसेट्स इंस्टीटूट ऑफ टेक्नोलॉजी, कैम्ब्रिज, एम0ए0, यू0एस0ए0, को संयुक्त रूप से उनके उत्कृष्ट कार्य **'फॉर देयर कॉन्ट्रीब्यूश्सन्स टू कॉन्ट्रेक्ट थ्योरी'(अनुबंध सिद्धांत पर योगदान हेतु)** को चुना गया। नोबेल समिति के कथनानुसार वर्ष 2016 के विजेताओं ने अनुबंध सिद्धांत को विकसित किया है। इसमें शीर्ष अधिकारियों के लिए प्रदर्शन आधारित वेतन, बीमा में कटौती योग्य व सह भुगतान और सार्वजनिक क्षेत्र की गतिविधियों का निजीकरण जैसे अनुबंध प्रारूप में कई विविध मामलों का व्यापक विश्लेषण किया गया है।

इन दोनों अर्थशास्त्रियों को नोबेल पुरस्कार राशि के तहत 80 लाख स्वीडिश क्रोनर(9.33 लाख डॉलर, लगभग 6.20 करोड़ रूपये) का आधा–आधा हिस्सा प्राप्त होगा।

6. **साहित्य के क्षेत्र में**

बॉब डायलन(जन्म–1941, ड्यूलुथ, मिन्नेसोटा, यू0एस0ए0)

वर्ष 2016 में साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार हेतु रॉयल स्वीडिश एकेडमी द्वारा दिनांक 13.10.2016 को 75 वर्षीय अमेरिकी गायक, कलाकार, व संगीत लेखक **बॉब डायलन** को उनके उल्लेखनीय कार्य **'फॉर हैविंग क्रियेटेड न्यू पोएटिक**

एक्सप्रेशन्स विदिन द ग्रेट अमेरिकन सॉन्ग ट्रेडिशन'(**अमेरिकी गीतों की परंपरा में कविता के नये भावों को रचने के लिए**) के लिए चुना गया। साहित्य के नोबेल पुरस्कारों के इतिहास में यह पहली बार है जब किसी गीतकार और गायक को इस पुरस्कार हेतु चुना गया है। बॉब डायलन का लेखन उपन्यास, कविता या किसी परम्परागत विधा में नहीं आता है, जिसके लिए अभी तक यह पुरस्कार दिया जाता रहा है। इस कारण से साहित्यकारों के एक समूह ने इसका विरोध करते हुए कहा है कि इससे साहित्य की सीमाओं को पुनः परिभाषित करना होगा। यद्यपि साहित्य के नोबेल पुरस्कारों हेतु लोकगायकों का नामांकन तो पहले भी कई बार हुआ है लेकिन कभी भी उन्हें पुरस्कार हेतु गंभीर दावेदार नहीं माना जाता था। बॉब डायलन ने सन् 1959 में संगीत के क्षेत्र में कार्य प्रारम्भ किया था। तब से अब तक उनके द्वारा अमेरिकन संगीत परिपाटी को नये आयाम प्रदान किये गये हैं तथा पिछले पाँच दशकों से प्रचलित संगीत व संस्कृति में उनका प्रभाव रहा है। सन् 1965 में उनके द्वारा छः मिनट तक अकेले रिकार्ड किया गया उनका संगीत "**लाइक ए रोलिंग स्टोन**" आज भी अमेरिका में प्रचलित संगीतों में शुमार है। बॉब डायलन को अमेरिकन लोक संगीत पुनरुद्धार का द्योतक माना जाता है। उनके द्वारा गाये गये शुरुआती गीत "**ब्लोइन इन द विन्ड**" व "**टाइम्स दे आर ए–चेंजिन**" अमेरिकन सिविल अधिकार और युद्ध विरोधी आंदोलन के गान के रूप में प्रचलित हुए। सन् 1960 के मध्य में बॉब डायलन द्वारा की गई रिकॉर्डिंग को तत्कालीन रॉक संगीतज्ञों द्वारा भी अपनाया गया जिसके चलते वह अमेरिकन संगीत के उच्च शिखर पर पहुँच गये, जिसके कारण उन्हें लोक संगीत आंदोलन के अन्य विरोधियों की निन्दा व आलोचना का सामना भी करना पड़ा। डायलन के गीतों में विभिन्न राजनीतिक, सामाजिक, दार्शनिक और साहित्यिक प्रभाव भी देखने को मिलते हैं। उनके संगीत कैरियर के प्रारम्भिक दौर में वह प्रसिद्ध संगीतकार लेखकों वुडी गुथराई, रॉबर्ट जॉनसन तथा हैंक विलियम्स से अत्यन्त प्रभावित थे तथा उन्होंने कई भाषाओं– अंग्रेजी, स्कॉटिश एवं आयरिश में संगीत लिखे तथा गाये।

सन् 1994 से अब तक डायलन ने ड्रॉइंग और पेंटिंग्स की छः किताबें प्रकाशित की तथा उनका कार्य विश्व की बेहतरीन गैलरीज में प्रदर्शित हुआ। संगीतज्ञ के रूप में डायलन ने 100 मिलियन रिकॉर्ड से अधिक बेचे, जिसने उन्हें अपने समय के सर्वाधिक बिकने वाले कलाकार व संगीतज्ञ के रूप में स्थापित किया। डायलन को कई प्रसिद्ध पुरस्कार भी प्राप्त हुए जिनमें ग्रैमी एवार्ड्स, ए गोल्डेन ग्लोब एवार्ड, तथा एकेडेमी एवार्ड आदि प्रमुख हैं। डायलन को रॉक एण्ड रोल हाल ऑफ फेम, मिन्नेसोटा म्यूजिक हाल ऑफ फेम, नैशविले हाल ऑफ फेम तथा सॉन्गराइटर्स हाल ऑफ फेम में भी सम्मिलित किया गया। वर्ष 2008 में पुलित्जर ज्यूरी द्वारा डायलन को उनके कार्य "his profound impact on popular music and American culture, marked by lyrical compositions of extraordinary poetic power." पर स्पेशल साईटेशन पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। मई 2012 में अमेरिका के राष्ट्रपति बाराक ओबामा द्वारा डायलन को "**प्रेसिडेंशियल मेडल ऑफ फ्रीडम**" सम्मान से नवाजा गया। बॉब डायलन को नोबेल पुरस्कार की सम्पूर्ण राशि(80 लाख स्वीडिश क्रोनर या 9.33 लाख डॉलर या लगभग 6.20 करोड़ रुपये) का पूरा हिस्सा प्राप्त होगा।

संदर्भ

1. www.nobelprize.org
2. हिन्दी दैनिक समाचार पत्र– दैनिक जागरण, अमर उजाला, हिन्दुस्तान, दिनांकः 04, 05, 06, 08, 11, 14 2016।

भारत में जल संसाधनों की उपलब्धता, उनका उपयोग तथा प्रबंधन राजभाषा तकनीकी परिसंवाद(सेमिनार)–एक आख्या

नवीन प्रकाश सिंह "नवीन"
पूर्व महाप्रबंधक(भूविज्ञान), ओ.एन.जी.सी. तथा अध्यक्ष, भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा–390010, गुजरात, भारत
सूर्यांश, ए–5 साकेत हाउसिंग कॉलोनी, सूसन–तरसाली रिंग रोड, बड़ौदा–390010, गुजरात, भारत
naveenpsingh@hotmail.com

प्राप्त तिथि– 29.09.2016; स्वीकृत तिथि– 14.10.2016

सार– "भारत में जल संसाधनों की उपलब्धता, उनका उपयोग तथा प्रबंधन" विषयक एक दिवसीय(दिनांकः 28 सितम्बर, 2016) राजभाषा तकनीकी परिसंवाद(सेमिनार) का आयोजन ऑयल एण्ड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड(ओ.एन.जी.सी.) बड़ौदा, गुजरात, तथा भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा, गुजरात, में आयोजित किया गया। प्रस्तुत आख्या इस एक दिवसीय परिसंवाद की सम्पूर्ण शैक्षणिक एवं तकनीकी गतिविधियों पर आधारित है।

बीज शब्द– जल संसाधन, भौमजल(ग्राउंड वाटर), जल संरक्षण।

Govt. language technical Seminar on "Availability, utility and management of water resources in India"- a report

Naveen Prakash Singh "Naveen"
Ex General Manager(Geology), O.N.G.C. and President
Geological Parishad, Baroda-390010, Gujarat, India
Suryansh, A-5 Saket Housing Colony, Susan-Tarsali Ring Road
Baroda-390010, Gujarat, India
naveenpsingh@hotmail.com

Abstract- One day technical seminar on availability, utility and management of water resources in India was held on 28 September, 2016 at Baroda, Gujarat, in joint collaboration with Oil and Natural Gas Corporation Limited(O.N.G.C.) and Geological Parishad, Baroda. Report embodies academic and technical activities during the Seminar.

Key words- Water resources, ground water, water conservation.

ऑयल एण्ड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड(ओ.एन.जी.सी.) बड़ौदा, गुजरात, तथा भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा, गुजरात, के संयुक्त प्रयासों से "भारत में जल संसाधनों की उपलब्धता, उनका उपयोग तथा प्रबंधन" पर हिन्दी भाषा के माध्यम में 28 सितम्बर, 2016 को एक दिवसीय परिसंवाद आयोजित हुआ। इस परिसंवाद में लगभग 200 प्रतिभागियों ने भाग लिया। सर्वप्रथम उद्घाटन सत्र का आयोजन हुआ। इस सत्र के मुख्य अतिथि श्री उमाशंकर पाण्डेय, कार्यकारी निदेशक–प्रधान, भूभौतिकीय सेवायें, ओ.एन.जी.सी., मुंबई और विशिष्ट अतिथि श्री अरुण कुमार, द्रोणी प्रबंधक, ओ.एन.जी.सी., बड़ौदा तथा डॉ0 नवीन प्रकाश सिंह "नवीन", अध्यक्ष, भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा, थे। श्री उमेश चन्द्र सक्सेना, समूह महाप्रबंधक–प्रधान क्षेत्रीय संगणक केन्द्र, ओ.एन.जी.सी., बड़ौदा तथा आंशिक रूप से श्री एम0 ए0 हसीन, महाप्रबंधक–प्रखंड, प्रबंधक, ओ.एन.जी.सी. ने इसका संयोजन किया। उद्घाटन सत्र का शुभारम्भ दीप प्रज्जवलन तथा सरस्वती वंदना से हुआ। इस सत्र का संचालन श्री ए0 के0 राय, उपमहाप्रबंधक(भूभौतिकी), ओ.एन.जी.सी. ने किया। इस अवसर पर, मंचासीन महानुभावों ने अपने–अपने विचार प्रकट किये। इन पंक्तियों के लेखक ने, अपने कथन में उक्त ज्वलंत समस्या को रेखांकित करते हुए जल संग्रहण एवं संरक्षण पर जोर दिया और विशेष रूप से भौमजल(ग्राउन्ड वाटर) के अतिशोषण को नियंत्रित करने तथा संरक्षित करने पर विशेष बल दिया। यही नहीं, वरन हिन्दी भाषा के माध्यम में इस विज्ञान विषयक परिसंवाद को ऊँचाई पर ले जाने के लिए लेखक ने ओ.एन.जी.सी. के द्रोणी प्रबंधक श्री कुमार की सराहना की। तत्पश्चात्, कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री उमाशंकर पाण्डेय ने जल के दार्शनिक पक्ष को उजागर करते हुए जल की महत्ता पर प्रकाश डाला और इसके उचित उपयोग का परामर्श दिया। परिसंवाद की प्रशंसा करते हुए उसको सामयिक और उपयोगितापूर्ण बताया। अंत में द्रोणी प्रबंधक श्री कुमार ने बड़े संतुलित और सटीक शब्दों में जल संबंधित समस्याओं का उल्लेख किया और ऐसे कार्यक्रमों से दोहरा लाभ बताया। उनका कथन था, ऐसे परिसंवादों के आयोजन से राजभाषा की सेवा होती है और विविध विषयों पर विज्ञान विषयक ज्ञान का अर्जन भी होता है। इस परिप्रेक्ष्य में उन्होंने भूविज्ञान परिषद की भूमिका की भी सराहना की और परिसंवाद के सफलता की कामना की। उद्घाटन सत्र का समापन मुख्य अतिथि द्वारा परिसंवाद के

सद्यः प्रकाशित प्रगति अंक(प्रोसीडिंग) के लोकार्पण से हुआ। इस प्रगति अंक में कुल 30 प्रपत्र/तकनीकी आलेख समाविष्ट हैं यद्यपि विभिन्न कारणों से सबका प्रस्तुतीकरण संभव न हो पाया है।

मुख्य अतिथि श्री उमाशंकर देव पाण्डेय कार्यकारी निदेशक–प्रधान, भूभौतिकीय सेवाएं, ओ.एन.जी.सी., मुम्बई द्वारा परिसंवाद के प्रगति अंक का लोकार्पण

उद्घाटन सत्रोपरांत अल्पाहार के अल्पविराम के पश्चात् पोस्टर सत्र का उद्घाटन हुआ। इस पोस्टर सत्र में कुल 12 प्रपत्र सम्मिलित किये गये थे, परन्तु केवल 5 प्रपत्रों का ही प्रदर्शन हुआ। दो प्रपत्रों को छोड़कर अन्य तीन प्रपत्रों में जल संग्रहण और संरक्षण के संबंध में जानकारी दी गई। दो प्रपत्र क्रमशः जल को वैद्युत संलेख से खोजने तथा जल के वेग मापन के लिए समर्पित थे। प्रपत्र के लेखक प्रतिभागियों के समक्ष अपने–अपने आलेखों का सार संक्षेप बड़े उत्साह से प्रस्तुत कर रहे थे और प्रतिभागी बड़े मनोवेग से उनको सुन रहे थे और पोस्टर भी देख, पढ़ रहे थे। दर्शक प्रतिभागियों के प्रश्नों का उत्तर भी लेखक बड़े संतोषजनक ढंग से दे रहे थे। पोस्टर सत्र का समापन निश्चित समय से हो गया।

पोस्टर सत्रोपरांत तीन तकनीकी सत्र संचालित किये गये जिनमें कुल 14 प्रपत्र/तकनीकी आलेख प्रस्तुत किये गये। प्रथम सत्र के सत्राध्यक्ष श्री डी0 के0 दासगुप्ता, पूर्व कार्यकारी निदेशक, ओ.एन.जी.सी. तथा सहसत्राध्यक्ष श्री एस0 पाणिग्रही, कार्यकारी निदेशक–प्रधान, भूभौतिकीय सेवाएं ओ.एन.जी.सी. थे। प्रथम तकनीकी सत्र में कुल 4 प्रपत्र प्रस्तुत किये गये, जो मूल रूप से अतिविशिष्ट श्रेणी में रखे जा सकते हैं और विषय की दृष्टि से यह प्रपत्र एक बड़ी परिधि को आत्मसात् करते हैं। राष्ट्रीय जलनीति से लेकर सुदूर संवेदन द्वारा जल प्रबंधन तक तथा भौमजल के विस्तृत वर्णन से लेकर बाढ़–सूखा प्रबंधन तक जल संसाधनों के एक विस्तृत क्षेत्र को समेटे यह चारों प्रपत्र लेखकों ने बड़े सुचारु रूप से प्रस्तुत किये। सत्र की समाप्ति पर सत्राध्यक्ष ने प्रस्तुत किये गये समस्त तकनीकी आलेखों की समीक्षा भी की।

भोजनावकाश के उपरांत द्वितीय सत्र प्रारम्भ हुआ, जिसके सत्राध्यक्ष श्री उमाशंकर पाण्डेय, कार्यकारी निदेशक–प्रधान, भूभौतिकी सेवाएं, ओ.एन.जी.सी., मुम्बई तथा सहसत्राध्यक्ष श्री ए0 के0 परख, महाप्रबंधक, प्रखंड प्रबंधक, ओ.एन.जी.सी. थे। इस सत्र में कुल छः प्रपत्र/तकनीकी आलेख प्रस्तुत किये गये, जिनमें तीन प्रपत्र क्रमशः प्रतिरोधकता आँकड़ों के द्विविम व्युत्क्रमण(टू डायमेंशनल इनवर्जन) द्वारा, भूभौतिकीय सर्वेक्षण द्वारा तथा कुप संलेख निर्वचन द्वारा भौमजल(ग्राउन्ड वाटर) की खोज पर आधारित प्रपत्र थे। शेष तीन प्रपत्रों में दो प्रपत्र वर्षा जल संग्रहण(रेन वाटर हार्वेस्टिंग) को समर्पित थे, जबकि अन्य एक तकनीकी आलेख में मानव गतिविधियों से गोदावरी डेल्टा विकास में हुए कुप्रभाव पर प्रकाश डाला गया। सभी प्रपत्रों के लेखकों ने अच्छा प्रस्तुतीकरण किया और प्रश्नों के सटीक उत्तर भी दिये परन्तु एक प्रपत्र जिसमें संलेख निर्वचन द्वारा जैसलमेर के बान्दह शैल समूह में अलवण जल के भण्डार की ओर संकेत किया गया था, वह शैल समूह की आश्मिकी(लिथोलॉजी) और अवसादिकीय पर्यावरण के अनुरूप नहीं लगता था इसलिए इस पर अधिक चर्चा हुई फिर भी समयाभाव के कारण स्थिति स्पष्ट नहीं हो पाई। इस सत्र का समापन सत्राध्यक्ष एवं सहसत्राध्यक्ष की समीक्षात्मक टिप्पणियों से हुआ।

तृतीय तथा अंतिम सत्र के सत्राध्यक्ष श्री अरुण कुमार, समूह महाप्रबंधक–द्रोणी प्रबंधक, ओ.एन.जी.सी., बड़ौदा और सहसत्राध्यक्ष श्री एम0 ए0 हसीब, महाप्रबंधक–प्रखण्ड प्रबंधक, ओ.एन.जी.सी. थे। इस सत्र में मात्र 4 प्रपत्र ही प्रस्तुत किये गये, शेष के लेखक अनुपस्थित थे। एक प्रपत्र को छोड़कर तीन प्रपत्र मुख्यतः जल संरक्षण तथा प्रबंधन पर आधारित थे। यद्यपि उनमें अंतर भी था जैसे एक केवल वर्षा जल संरक्षण पर था, दूसरा वर्षा जल तथा भौमजल के प्रबंधन पर था जबकि तीसरा ग्रामीण पेयजल प्रबंधन पर विस्तृत वर्णन सहित प्रस्तुत किया गया था शेष एक प्रपत्र भूभौतिकी सर्वेक्षण के

आधार पर भौमजल अन्वेषण पर था। सभी लेखकगणों का प्रस्तुतीकरण सराहनीय था और हिन्दी भाषा का उपयोग भी अब सही ढंग से किया जाने लगा है। ओ.एन.जी.सी., बड़ौदा तथा भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा का हिन्दी भाषा के माध्यम से प्रत्येक परिसंवाद आयोजित करने का यह संयुक्त अभियान बहुत सफल रहा है। हिन्दी के प्रति वैज्ञानिक समाज में जो सम्मान का भाव जाग्रत हो रहा है वह स्वागत योग्य है। यह सत्र भी समय से समाप्त हुआ। सत्राध्यक्ष के आग्रह पर सहसत्राध्यक्ष ने समीक्षात्मक टिप्पणी की। सत्राध्यक्ष ने प्रतिभागियों को परिसंवाद में भाग लेने के लिए धन्यवाद देकर सत्र का समापन कर दिया।

परम्परागत समापन सत्र भी आयोजित किया गया। श्री डी0 के0 शर्मा, पूर्व महाप्रबंधक(भूभौतिकी) ने समस्त प्रस्तुत किये गये तकनीकी आलेखों की अतिसंक्षिप्त समीक्षा प्रस्तुत की, तत्पश्चात् स्मृति चिन्ह प्रदान किये गये। बाहर से आये प्रतिभागियों से चाय के अल्प विरामों और भोजन के अंतराल के मध्य प्रतिक्रियाओं का आदान–प्रदान हुआ। प्रतिभागी तकनीकी आलेख के प्रस्तुतीकरण के उपरांत समयाभाव वश उस पर होने वाली चर्चा से बहुत संतुष्ट नहीं लगे। उनका विचार था कि लोगों को खुलकर बोलने का समय नहीं मिलता है। फिर भी प्रतिभागी कुल मिलाकर प्रसन्न लगे।

उक्त परिसंवाद में पोस्टर सत्र से लेकर तीसरे सत्र तक जो भी प्रस्तुत किया गया उस पर आधारित सार–संक्षेप निम्न पंक्तियों में दिया जा रहा है। इस परिसंवाद द्वारा यह रेखाकित करने का प्रयास किया गया है कि भारत के विभिन्न अंचलों में जल संसाधनों की क्या स्थिति है और भारत की बढ़ती जनसंख्या, बदलती जीवन शैली तथा बढ़ते शहरीकरण के परिप्रेक्ष्य में मृदु जल(फ्रेश वाटर) की मांग और आपूर्ति को लेकर क्या किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, भौमजल(ग्राउन्ड वाटर) के अतिशोषण पर तथा प्रदूषण पर चिन्ता व्यक्त की गई। उसकी खोज, उसके आपूरण तथा शुद्धिकरण के उपाय भी सुझाये गये। भारत की जनसंख्या, विश्व की कुल जनसंख्या के 17 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करती है जबकि विश्व के कुल अलवण जल का मात्र 4 प्रतिशत ही भारत के पास उपलब्ध है। अप्रैल 2015 के एक आंकलन के अनुसार भारत की कुल वार्षिक वर्षा जल उपलब्धता 1869 बिलियन क्यूबिक मीटर(बी.सी.एम.) थी, परन्तु व्यवहार्य जल उपलब्धता 1,123 बी.सी.एम. प्रति वर्ष थीं। इस व्यवहार्य जल संसाधन में से धरातलीय जल और भौमजल का भाग क्रमशः 690 बी.सी.एम. प्रति वर्ष और 433 बी.सी.एम. प्रति वर्ष है। 34 बी.सी.एम. को प्राकृतिक विसर्जन के लिए छोड़कर देश भर के लिए कुल वार्षिक भौमजल की उपलब्धता 399 बी.सी.एम. प्रति वर्ष पाई गई है। आज अपने देश में 1544 घनमीटर मृदु जल प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष मिलता है। इस प्रकार भारत एक "जल त्रस्त" देश है और क्रमशः अपर्याप्त जल की स्थिति की ओर बढ़ रहा है। इसलिए अब उन तरीकों या प्रणालियों अथवा नवाचारों(इनोवेशन) की ओर ध्यान देना अनिवार्य हो गया है जिनसे हम अपने जल संसाधनों को उचित उपयोग द्वारा संग्रहण और संरक्षण से दीर्घायु कर सकते हैं।

सम्पूर्ण भारत में जल की उपलब्धता अत्यन्त असमान है, विशेष रूप से भौमजल की, जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर यथेष्ट भिन्नता प्रदर्शित करता है। सिंधु–गंगा–ब्रह्मपुत्र के जलोढ़(अल्यूविअल) मैदानों के जलभृतों(अक्विफर्स) में अत्याधुनिक अलवण जल है परन्तु प्रायद्वीपीय क्षेत्र जो भारत के दो तिहाई भाग का प्रतिनिधित्व करता है, उसमें भौमजल की अल्पता है, क्योंकि वहाँ से कठोर चट्टानों के 5 मीटर से 15 मीटर मोटाई के ऊपरी अपक्षीण आवरण में ही जल का संग्रहण हो सकता है। आज जल संसाधनों का सबसे बड़ा उपभोक्ता कृषि क्षेत्र है, जो भारत के कुल अलवण क्षेत्र का 84 प्रतिशत उपयोग करता है, जबकि घरेलू और औद्योगिक जगत क्रमशः 12 प्रतिशत तथा 4 प्रतिशत का ही उपयोग करते हैं। हमारे देश में मुख्य खाद्य फसलों के उत्पादन हेतु सिंचाई के लिए ब्राजील, चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका की तुलना में दोगुने या चौगुने जल का उपयोग किया जाता है। यदि वैज्ञानिक विधि से कृषि के लिये जल का उपयोग किया जाय तो वर्तमान उपयोग के आधे जल को बचाया जा सकता है। कृषि क्षेत्र की सिंचाई का एक बड़ा हिस्सा 62.4 प्रतिशत तथा 85 प्रतिशत पेयजल ग्रामीण क्षेत्रों के लिए और 50 प्रतिशत पेयजल शहरी क्षेत्रों के लिए पूर्णतया भौमजल पर निर्भर है। भौमजल पर इस अतिनिर्भरता के कारण भौमजलस्तर(वाटर लेवल) में मूलभूत गिरावट आई है। भौमजल अन्वेषण हेतु भूभौतिकीय सर्वेक्षण, सुदूर संवेदन(रिमोट सेन्सिंग) तथा प्रतिरोधकता आंकड़ों के द्विविम व्युत्क्रमण(टू डाइमेन्शनल इनवर्जन) द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों में जलभृत आंकलन आदि पर भी प्रकाश डाला गया। इसके अतिरिक्त कूप संलेखों(वेल लॉग्स) द्वारा अलवण जल के अनुक्षेत्र भी सुनिश्चित किये जाते हैं

सेंट्रल ग्राउन्ड वाटर बोर्ड(सी.जी.डब्ल्यू.बी.) ने भौमजल विकास स्थिति और भौमजलस्तर की दीर्घकालीन प्रवृत्ति के आधार पर कुछ इकाईयाँ निर्धारित की हैं और इन्हें वर्गीकृत भी किया है। वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार देश की कुल इकाइयों में 30 प्रतिशत इकाइयां अतिशोषित या क्रान्तिक या अर्धक्रान्तिक स्थिति में हैं। पंजाब, हरियाणा, दिल्ली और राजस्थान राज्यों में भौमजल का निष्कर्षण दायित्वहीन ढंग से किया गया है। और यदि वहाँ इसी दर से निष्कर्षण होता रहा तो एक दशक में भौमजल की पूरी तरह समाप्त हो जाने की आशंका है। वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार भौमजल की वार्षिक निकासी 245 बी.सी.एम. हुईहै और भौमजल की विकास स्थिति 62 प्रतिशत है। 1960 की "हरित क्रांति" के पश्चात् लगातार भौमजल का उपयोग सिंचाई में और पेयजल के लिए बढ़ता जा रहा है। इसके फलस्वरूप आज लाखों नलकूप देश के विभिन्न राज्यों में वेधित किये गये हैं। भौमजल के अतिनिष्कर्षण से भौमजलस्तर औसतन 1 मीटर से 3 मीटर तक प्रतिवर्ष गिरता जा रहा है। पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान, तमिलनाडु, कर्नाटक आदि राज्य बहुत प्रभावित हुए हैं। समुद्र तटीय क्षेत्रों में भौमजल के अधिक निष्कर्षण से समुद्र जल के अतिक्रमण के कारण लवणता बढ़ती जा रही है और पानी पेयजल के अनुपयुक्त हो जाने का खतरा बढ़रहा है।

जल प्रदूषण एक गंभीर खतरा है। दो प्रकार के प्रदूषक इसे प्रदूषित कर रहे हैं। एक वह जो प्राकृतिक भूजनित(जियोजेनिक) होते हैं जैसे– संखिया(आरसेनिक), फ्लुओराइड, नाइट्रेट तथा लोहा इत्यादि। दूसरे प्रदूषकों में सम्मिलित होते हैं बैक्टीरिया फॉस्फेट तथा भारी धातु जो मनुष्यों के क्रियाकलापों का परिणाम हैं। यह है मलजल(सीवेज), कृषि संबंधित विषाक्त पदार्थ तथा औद्योगिक बहिःस्राव(एफ्लुअन्ट)। गड्ढों में अपशिष्ट का भराव, सेप्टिक टैन्क, रिसते भूमिगत गैसटैन्क तथा रासायनिक खादें और कीटनाशकों का अति उपयोग प्रदूषण के मुख्य स्रोत हैं। वर्ष 2014–15 में भौमजल पर हुए आंकलन के अनुसार भूजनित संदूषकों से पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, असम, मणिपुर और कर्नाटक प्रभावित हुए हैं। वर्ल्ड वाटर इंस्टीट्यूट के अनुसार गंगा नदी में प्रत्येक मिनट लगभग 11 लाख लीटर गंदे नाले का पानी गिराया जाता है। यूनेस्को द्वारा दी गई विश्व जल विकास रिपोर्ट में भारतीय जल को दुनिया के अति प्रदूषित पानी में तीसरे स्थान पर रखा गया है। शहरों के मलजल, अपशिष्ट जल और औद्योगिक बहिःस्राव को प्रशोधित करना आवश्यक है इसके लिए आवश्यकतानुसार प्रशोधन संयंत्र लगाने की आवश्यकता है यद्यपि केन्द्र और राज्य सरकारों की ओर से इस दिशा में कार्य हुआ है परन्तु वह यथेष्ट नहीं है। अपशिष्ट जल को प्रशोधित करने के पश्चात् के अतिरिक्त अन्य कार्यों जैसे– कारखानों में, सिंचाई में, बागवानी आदि में प्रयोग किया जा सकता है। इस तरह अलवण जल की आंशिक पूर्ति होगी।

भौमजल के दीर्घकालीन उपयोग के लिए मांग और आपूर्ति प्रबंधन की आवश्यकता है अर्थात् यदि भौमजल का निष्कर्षण किया जाय तो इसके अनुसार ही पुनर्भरण द्वारा इसका संवर्धन किया जाय। कृषि क्षेत्र में भौमजल को अधिक दक्षता से उपयोग किया जाय, भौमजल का प्रबंधन और नियंत्रण जलभृत(अक्विफर) के मानचित्रण के आधार पर किया जाय और इसमें किसानों की सक्रिय सहभागिता अनिवार्य है। हमें कृषि की सिंचाई में जल के अपव्यय को बचाने के लिए नवाचार(इनोवेशन) और विशेष कुशलता की आवश्यकता है। हमें जल की बचत वाली तकनीकों को जैसे ट्रप्स तथा सेक्त सिंचाई प्रणाली(ड्रिप एण्ड स्प्रिन्कलर इरीगेशन सिस्टम) या ट्रप्स तथा रिसाव(ड्रिप एण्ड ट्रिकल) सिंचाई प्रणाली को अपनाने की आवश्यकता है, जिससे नियंत्रित एवं प्रभावी तरीके से फसलों को जल मिल सके। इसके अतिरिक्त किसानों को इस बात के लिए भी प्रोत्साहित किया जाय कि वह अधिक जल वाली फसलों को जैसे गेहूँ, धान तथा गन्ना के स्थान पर अल्प जल उपयोग करने वाली फसलें जैसे दालें, ज्वार तथा जौ आदि की खेती करें। भौमजल के संबंध में एक अति विशिष्ट सूचना प्रसारित करने की आवश्यकता है कि ऐसे अनुक्षेत्र(जोन) जिनमें भौमजल का पुनर्भरण(रिचार्ज) होता है उन्हें संरक्षित करना अति आवश्यक है जैसे– उत्तर प्रदेश के भाभर फुटहिल्स तथा तराई क्षेत्र, हरियाणा में अरावली तथा भूड़ क्षेत्र, देश के कछारी मैदान, दलदल और आर्द्र भूमि। इन क्षेत्रों को पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील अनुक्षेत्र घोषित करना चाहिए।

वर्षा जल संग्रहण(रिन हार्वेस्टिंग), संरक्षण(कंजरवेशन) और प्रबंधन पर प्रपत्रों में बल दिया गया। जल संसाधन का प्राथमिक स्रोत वर्षण(प्रेसिपिटेशन) है जो वर्षा एवं हिमपात से प्राप्त होता है। भारत में कुल वर्षा जल का आंकलन 400 मिलियन हेक्टेअर मीटर्स प्रति वर्ष किया गया है, जिसका वितरण मुख्यतः तीन प्रकार से होता है। 185 मिलियन हेक्टेअर मीटर्स जल जहाँ ढाल मिलता है उधर प्रवाहित होकर जलाशयों, सरावरों और नदियों में चला जाता है जो अंततः सागर में समा जाता है। 50 मिलियन हेक्टेअर मीटर्स परिस्रवित होकर अधस्तल में सपृक्त अनुक्षेत्र में संग्रहीत हो जाता है और 165 मिलियन हेक्टेअर मीटर्स मृदा द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है जो मृदा को आर्द्रता प्रदान करता है और इसका कुछ भाग वाष्पीकृत हो जाता है। देश की महत्वपूर्ण सम्पदाओं में जल संसाधन एक प्रमुख घटक है। देश का धरातलीय जल एवं भौमजल संसाधन कृषि, पेयजल, औद्योगिक गतिविधियों, जल विद्युत उत्पादन, पशुधन उत्पादन, वनरोपण, मत्स्य पालन, नौकायन और मनोरंजक गतिविधियों आदि में मुख्य भूमिका निभाता है। भारत एक विकासशील देश है। प्रत्येक क्षेत्र में उसकी प्रगति हो रही है और होनी है, साथ ही उसकी जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। अतः वर्ष 2025 तक 1093 बिलियन क्यूबिक मीटर्स जल की आवश्यकता होगी। इसलिए हमारा देश वर्षा जल को बहकर समुद्र में समा जाने दे ऐसी विलासिता को आश्रय देने में सक्षम नहीं है। वर्षा जल संग्रहण(रिन हार्वेस्टिंग) शहरों के लिए बड़ा कारगर उपाय है। इससे छतों का पानी एकत्रित कर इससे जलभृतों का पुनर्भरण किया जाता है ताकि भौमजल का संवर्धन हो सके। जल संरक्षण(कंजर्वेशन) में बहुत सी ऐसी संक्रियाएं सम्मिलित हैं जिससे वर्षाजल को रोकने के उपाय के साथ–साथ अपशिष्ट जल का पुनःचक्रण(रिसाइक्लिंग) भी किया जाता है। जल का उचित उपयोग भी आवश्यक होता है जहाँ भी जल का अपव्यय होता है उसे घटाना और उचित उपयोग करना अनिवार्य है। मौजूदा जलाशयों के जीर्णोद्धार, कायाकल्प और नवीनीकरण के लिए अल्प जल क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। गाँवों में और आस–पास के क्षेत्रों में उपलब्ध जलाशयों की सूची बनानी चाहिए और उनका मानचित्रण भी करना चाहिए। इन जलाशयों में जल संग्रहण होने से पुनर्भरण में भी सहायता मिलेगी और वर्षा जल एकत्रित होने के लिए प्राकृतिक साधन भी उपलब्ध हो जायेंगे।

भारत में जल संसाधनों का प्रबंधन और बाढ़ तथा सूखे से निपटने के उपायों पर कुछ प्रपत्रों ने ध्यान आकर्षित किया। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप हरित गृह गैसों के उत्सर्जन में वृद्धि के कारण वैश्विक तापवृद्धि हो रही है, ग्लेशियर पिघल रहे हैं, जलवायु में परिवर्तन हो रहा है, वर्षा अनियंत्रित हो गई है, नदी द्रोणियों में जल की कमी हो रही है और बड़ी–बड़ी नदियाँ नगरों के मल–जल का परिवहन कर रही हैं। ऐसे परिदृश्य में जल संसाधनों का उचित प्रबंधन आज की अनिवार्य आवश्यकता है। राजस्थान में परंपरागत जल संरक्षण प्रणालियों को पुनर्जीवित किया जा रहा है जिससे अप्रत्याशित सफलता मिली है। जल प्रबंधन का पहला पाठ है– 1. जल संग्रहण, 2. इसी प्रकार जलागम का विकास करना भी आवश्यक है इसका अर्थ यह है कि मृदा(सॉयल), वनस्पति और जल का एक साथ संरक्षण और विकास, 3.

जल का पुनःचक्रण और पुनःउपयोग जैसे शोधित अपशिष्ट जल औद्योगिक क्षेत्रों में काम में लाया जा सकता है। इसी तरह शहरी क्षेत्रों में नहाने और बर्तन साफ करने के उपरांत जल बागवानी के काम में लाया जा सकता है, 4. जल समर प्रबंधन– इसके अंतर्गत बहते हुए जल को रोकना और विभिन्न विधियों से जैसे जलाशयों द्वारा, परिस्रवण कुँओं द्वारा पुनर्भरण की वृद्धि करना सम्मिलित ह इसके अतिरिक्त धरातलीय जल का कुशल प्रबंधन भी जल संभर प्रबंधन का अंग है। केन्द्र और राज्य सरकारों ने देश में बहुत जल संभर विकास कार्यक्रम चलाये हैं। कुछ गैर सरकारी संगठनों द्वारा भी चलाये जा रहे हैं। "हरियाली" केन्द्र सरकार द्वारा जल संभर विकास परियोजना है जिसमें ग्रामीण जनता के लिए पेयजल, सिंचाई, मत्स्य पालन और वनरोपण के लिए जल संरक्षण करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है, 5. जल प्रदूषण की रोकथाम के लिए भी लोगों में जागरुकता लाने की आवश्यकता है।

बाढ और सूखे से निपटने के लिये अनेक प्रबंधन किये गये हैं और किये जा रहे हैं जैसे नदियों को जोडना, बाँध बनाना, लोगों को बाढ़ से बचाने के लिये उपाय करना, सूचना तंत्र का विकास करना, नये घरों का ऊँचाई पर निर्माण करना, वृक्षारोपण करना, नये जल संचयन जलाशयों का निर्माण करना आदि। इसी प्रकार सूखे से बचने के लिये जल का संग्रहण करना होगा, जल द्वारा सिंचाई, घरेलू तथा औद्योगिक उपयोग सभी क्षेत्रों में सूखे से निपटा जा सकता है। अब वह स्थिति आ गई है कि केन्द्र और राज्य सरकारी संस्थाओं, गैर–सरकारी तथा सामाजिक संस्थाओं, शैक्षणिक संस्थानों और जन प्रतिनिधियों को मिलकर उपयुक्त प्रबंधन युक्तियों को देश में विकसित करने के लिये समन्वित प्रयास करना अति आवश्यक है। इसके अतिरिक्त जल संसाधनों के प्रति और विशेष रूप से भौमजल के प्रति दुरुपयोग को रोकने के लिये जागरुकता अभियान चलाये जाने चाहिए, क्योंकि जल नहीं रहा तो समस्त सृष्टि का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जायेगा।

बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय(के0के0वी0)
(लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)
स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत

(नैक प्रत्यायित "बी" संस्था)

बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद

www.bsnvpgcollege.in/vp

परिषद के कार्य

1. विज्ञान की विभिन्न धाराओं में समय–समय पर **संगोष्ठी का आयोजन** कराना,
2. छात्र/छात्राओं हेतु ग्रीष्मकालीन/शीतकालीन **कार्यशालाओं** का आयोजन,
3. वर्ष में एक बार **"अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)"** का प्रकाशन,
4. मेधावी छात्रों को विज्ञान शोध के क्षेत्र में प्रोत्साहन,
5. समाज व छात्र/छात्राओं को विज्ञान विषय हिन्दी में पढ़ना प्रेरित करना,
6. वैज्ञानिक शोध को हिन्दी में प्रोत्साहित करना,
7. समाज में विज्ञान हेतु जागरुकता पैदा करना आदि।

लक्ष्य

अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका), बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद, लखनऊ, द्वारा क्रियेटिव कॉमन्स(सी.सी.) एट्रीब्यूशन 4.0 इंटरनैशनल लाइसेंस के अंतर्गत हिन्दी में प्रकाशित ओपेन एक्सेस, पियर रिव्यूड, वार्षिक, अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान शोध पत्रिका है। जिसका मुख्य उद्देश्य वैज्ञानिक सोच को हिन्दी में व्यक्त करने तथा वैज्ञानिक शोध को हिन्दी में प्रस्तुत करने की रूचि रखने वाले शोधार्थियों, शिक्षकों एवं वैज्ञानिकों को एक ऐसा मंच प्रदान करने का है जहाँ से उनके कार्य को राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सराहा जा सके। वर्तमान में एक वर्ष में केवल एक अंक के प्रकाशन का लक्ष्य है जिसे भविष्य में आवश्यकता अनुसार एक वर्ष में दो अंक के प्रकाशन तक बढ़ाया जा सकता है। पत्रिका में विज्ञान की सभी धाराओं(**भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, गणित, प्राणि विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, सांख्यिकी, कम्प्यूटर विज्ञान, अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी, पर्यावरण विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान** आदि) में प्राप्त पत्रों को उपयुक्त समीक्षा उपरांत स्वीकृत होने पर प्रकाशित किया जायेगा।

प्रकाशन हेतु प्रस्तुत भाग–1 से भाग–4 के सभी प्रकार के शोध पत्रों/लेखों में **सार/ऐब्स्ट्रेक्ट हिन्दी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं** में दिया जाना आवश्यक है।

भाग–1–शोध पत्र/आलेख

भाग–2–समीक्षा–तकनीकी लेख, सम्मानित शोध ग्रंथ सारांश, शोध परियोजना, शोध प्रकाशन, शोध विद्या आदि।

भाग–3–महत्वपूर्ण विषयों पर आधारित वैज्ञानिक लेख(**लेख के अंत में प्रयुक्त सामग्री का संदर्भ भी दें**)

भाग–4–पुस्तक समीक्षा, संगोष्ठी/कार्यशालाओं संबंधित आख्या, व्यावहारिक विज्ञान से जुड़ी खबरें, वरिष्ठ वैज्ञानिकों के शोध अनुभवों पर आधारित साक्षात्कार/जीवनी/उपलब्धियां, राष्ट्रीय प्रयोगशाला/शोध संस्थान, नवीन वैज्ञानिक विषयों पर शोध विमर्श, साइंटून्स, शैक्षिक विज्ञापन आदि।(**लेख के अंत में प्रयुक्त सामग्री का संदर्भ भी दें**)

इस पत्रिका की प्रिंट–प्रति एवं ई–प्रति दोनों प्रकाशित होंगी।

प्रकाशन हेतु शोध पत्र की प्रस्तुतियां

विज्ञान शोध पत्रिका में प्रकाशन हेतु इच्छुक छात्र/छात्राओं, शोध छात्र/छात्राओं, शिक्षकों, वैज्ञानिकों व अन्य शिक्षाविदों से प्रस्तुतियां इस आशय के साथ आमंत्रित हैं कि वह किसी अन्य पत्रिका में प्रकाशन हेतु न तो स्वीकृत हैं और न ही प्रकाशन हेतु समीक्षारत हैं। पत्रिका में प्रकाशित शोध पत्रों/समीक्षा लेखों/वैज्ञानिक लेखों का कॉपीराइट बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद का होगा। एक लेखक पत्रिका के प्रत्येक भाग में प्रकाशन हेतु प्रस्तुतियाँ प्रेषित कर सकता है। भाग–3 एवं भाग–4 में प्रकाशन हेतु प्रस्तुत सभी वैज्ञानिक लेखों के अंत में संदर्भ दिया जाना आवश्यक है। पत्रिका के किसी भी भाग में प्रकाशन हेतु पत्र(एम0 एस0 वर्ड फाइल) ई–मेल के माध्यम से **संपादक–डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव**, एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग, बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ, को उनके ई–मेल पते dksflow@hotmail.com पर प्रेषित किये जायेंगे। समीक्षा उपरांत स्वीकृत होने पर पत्रिका के प्रारूप के अनुसार पत्र की एम0 एस0 वर्ड में .डॉक फाइल इसी ई–मेल पते पर प्रकाशन हेतु पुनः मांगी जायेगी। जिसे पुनः पत्रिका के प्रारूप के आधार पर जाँच करने के उपरांत अंतिम बार लेखक को अवलोकनार्थ भेजा जायेगा तथा इसे कम से कम समय(दो से तीन दिन के अंदर) में पुनः अंतिम प्रकाशन हेतु प्रस्तुत करना होगा।

नियम एवं शर्तें

1. आजीवन सदस्यता शुल्क–रू0 2000/–, संस्थाओं/पुस्तकालयों की आजीवन सदस्यता हेतु शुल्क रू0 3000/–, विद्यार्थियों/शोध छात्र–छात्राओं हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क रू0 1000/– एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क रू0 300/–। सभी लेखकों के लिए विज्ञान परिषद की सदस्यता प्राप्त करना अनिवार्य है।
2. वार्षिक व सत्रवार सदस्यता शुल्क–रू0 500/–
3. 10 मुद्रित पृष्ठों वाले शोध पत्रों/लेखों की छपाई हेतु कोई प्रोसेसिंग शुल्क नहीं लगेगा, तत्पश्चात् प्रति पृष्ठ रू0 50/– देय होंगे।
4. सभी पत्र/लेख हिन्दी के क्रुति देव 010 फांट एवं 12 पॉइंट साइज में तैयार किये जायें।
5. भाग–1, भाग–2, भाग–3, भाग–4 के सभी शोध पत्रों/लेखों में प्रयुक्त सामग्री का क्रम निम्नवत होना चाहिए–
   हिन्दी में शीर्षक,
   हिन्दी में लेखक का नाम, विभाग एवं संस्था का पता(सेवानिवृत्त होने की स्थिति में घर का स्थायी पता) ई–मेल पते सहित,
   हिन्दी में सारांश,
   अंग्रेजी में शीर्षक,
   अंग्रेजी में लेखक का नाम, विभाग एवं संस्था का पता(सेवानिवृत्त होने की स्थिति में घर का स्थायी पता) ई–मेल पते सहित,
   अंग्रेजी में सारांश(एब्स्ट्रेक्ट)
   प्रस्तावना/भूमिका
   सामग्री एवं विधि
   परिणाम/चर्चा
   निष्कर्ष
   आभार(यदि देना चाहें तो)
   संदर्भ(संदर्भों को लेख में ही क्रमीकरण करते हुए उचित स्थान पर पंक्ति के ऊपर 1,2,3,..... इत्यादि अंकित करके लिखें जैसे जैन व शर्मा[1], श्रीवास्तव एवं अन्य[2])
6. शोध पत्र व पुस्तकों के संदर्भ इस प्रकार तैयार किये जायें–
   सक्सेना, पी0 डी0 तथा शर्मा, ए0 के0(1991) मेडिसिनल प्लांट आफ वाटर, ज0 आफ बायो0, खण्ड 21, अंक 3, मु0पृ0 121–132।
   श्रीवास्तव, डी0 के0(2013) ज्यामिति, पियरसन एजुकेशन, प्रथम संस्करण, नई दिल्ली, पृ0 121।
7. लेखकों को अपने शोध पत्रों, समीक्षा लेखों, तकनीकी लेखों एवं वैज्ञानिक लेखों की मौलिकता एवं कॉपीराइट स्थानांतरण प्रमाण पत्र बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद को निर्धारित प्रारूप(**नियमावली के अंत में संलग्न**) पर देना आवश्यक होगा।
8. सभी छपे हुए लेखों के **25 रि–प्रिंटस लेने अनिवार्य होंगे, जिनका शुल्क रू0 650/–** होगा।

9. पत्रिका पूर्ण रूप से ओपेन एक्सेस पियर रिव्यूड सिस्टम पर आधारित होगी जिससे कि कोई भी पाठक छपे हुए पत्रों को पढ़ सकता है तथा शुल्क मुक्त रूप से शैक्षिक उपयोग हेतु डाउनलोड कर सकता है।
10. स्वीकृत पत्रों की उपलब्धता के आधार पर विज्ञान की सभी धाराओं के पाठकों की रूचि को ध्यान में रखते हुए सभी धाराओं का कम से कम एक पत्र अवश्य छापा जायेगा। यदि किसी एक धारा में एक वर्ष में कई पत्र छपने हेतु स्वीकृत किये जाते हैं तक उन्हें वरीयता के आधार पर पत्रिका के दूसरे अंक में छपने हेतु सुरक्षित रखा जायेगा।
11. पत्रिका का क्रय मूल्य–रू0 300/–
12. सभी प्रकार के भुगतान "**बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद**" या "B.S.N.V. Vigyan Parishad" के नाम पर, चेक/डीडी के माध्यम से होंगे, जो कि **लखनऊ** में देय होगा। किसी भी प्रकार की अन्य जानकारी प्राप्त करने हेतु पत्राचार– **डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव (सचिव, बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद) एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग, बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ(उ0 प्र0)–226001, भारत**, पर उनके ई–मेल: dksflow@hotmail.com या मोबाइल– **09935623044** पर किया जा सकता है।

बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय

स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ–226001, भारत

बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद

सदस्यता प्रारूप

पासपोर्ट फोटो

1. नाम(प्रो0 / डॉ0 / श्री / श्रीमती) :
2. पत्राचार वाला पता :
3. फोन / फैक्स / मो0 / ई–मेल / वेब पता :
4. वर्तमान पद :
5. संस्था / सम्बद्धता :
6. जन्म तिथि / आयु :
7. शैक्षिक योग्यता :
8. विषय विशेषज्ञता :
9. पुरस्कार / मान्यताएं :
10. अन्य :
11. भुगतान विवरण :
(नकद / चेक / डी. डी. नं0, दिनांक, रू0 में सदस्यता शुल्क, बैंक सूचना)

नोट:–

- सभी प्रकार के शुल्क "**बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद**" के नाम से **लखनऊ** पर देय होंगे।
- आजीवन सदस्यता शुल्क रू0 2000 / – एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क रू0 500 / –, विद्यार्थियों / शोध छात्र–छात्राओं हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क रू0 1000 / – एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क रू0 300 / –
- भारत के बाहर के सभी देशों हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क $ 100 एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क $ 40, विद्यार्थियों / शोध छात्र–छात्राओं हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क $ 30 / – एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क $ 10
- विद्यार्थी / शोध छात्र–छात्राएं सदस्यता प्रारूप के साथ अपनी वर्तमान संस्था द्वारा प्राप्त पहचान पत्र की प्रति अवश्य संलग्न करें।
- सदस्यता प्रारूप व्यक्तिगत रूप में या डाक के माध्यम से **डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव**, एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग(सचिव, बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद), बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज(के0 के0 वी0), स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ(उ0 प्र0)–226001, के नाम से प्रेषित किये जायें।

दिनांक: **हस्ताक्षर**

BLANK

बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय
स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ–226001, भारत

बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद

संस्था सदस्यता / पुस्तकालय सदस्यता प्रारूप(आजीवन)

1. संस्था का नाम :
2. पत्राचार वाला पता :
3. फोन / ई–मेल / वेब पता :
4. शैक्षणिक संस्था / शोध संस्थान:
5. सम्बद्धता(वि0वि0 अथवा अन्य) :
6. अन्य :
7. भुगतान विवरण :
   (चेक / डी0डी0 नं0, दिनांक, रू0 में सदस्यता शुल्क, बैंक सूचना)

नोट:–

- सभी प्रकार के शुल्क "**बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद**" के नाम से **लखनऊ** पर देय होंगे।
- संस्थाओं हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क– **रू0 3000 / –(तीन हजार मात्र)**।
- भारत के बाहर के सभी देशों हेतु संस्थाओं का आजीवन सदस्यता शुल्क– $100
- सभी आजीवन सदस्य संस्थाओं को "**विज्ञान शोध पत्रिका**" की एक प्रति शुल्क मुक्त रूप से उनके डाक वाले पते पर रजिस्टर्ड पार्सल से भेजी जायेगी।
- सदस्यता प्रारूप व्यक्तिगत रूप में या डाक के माध्यम से **डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव**, एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग(सचिव, बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद), बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज(के0 के0 वी0), स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ(उ0 प्र0)–226001, के नाम से प्रेषित किये जायें।

दिनांक:

संस्था के सक्षम अधिकारी के हस्ताक्षर
नाम व मोहर सहित

BLANK

लेखक सहमति पत्र

सेवा में,

दिनांकः

सचिव
बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज(के0के0वी0)
लखनऊ–226001

महोदय,

प्रमाणित किया जाता है कि मेरा शोध पत्र/समीक्षा लेख/वैज्ञानिक लेख(वि0शो0प0–खण्ड– , अंक–1, वर्ष–) जिसका कि शीर्षक .....
.....
.....है, एक मौलिक लेख है जो अन्य किसी पत्रिका/जर्नल में न तो छपा है, न ही स्वीकृत है। मैं अपने उक्त लेख के समस्त कॉपीराइट बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद को हस्तगत करने के लिए अपनी सहमति देता हूँ/देती हूँ।

सधन्यवाद

प्रार्थी/प्रार्थिनी

(डॉ0/श्री/श्रीमती/प्रो0)
पता–

ई–मेल–

मो0–

BLANK

With best compliments:

Alok Haldar
Prop.

Alok Prakashan

Lucknow / Allahabad

Premiere Publisher of Intermediate and Graduate Level Books in Science, Art & Commerce

Address:
ALOK PRAKASHAN
Gwyne Road, Aminabad, Lucknow
Phone : 0522-2628711, Mob.: 9415006028

With best compliments:

Vivek Malviya
Prop.

Prakashan Kendra

Lucknow

Leading Publisher of Graduate Level Text Books of Science, Arts & Commerece

Address:
PRAKASHAN KENDRA
Daliganj Railway Crossing, Sitapur Road, Lucknow - 226020
Phone : 0522- 2323035, 2367314, Mob. : 9415021225

आर.एन.आई., भारत सरकार / 1272856 / यू.पी.एच.आई.एन.–46478; दिनांक: 09.06.2015

नोबेल पुरस्कार विद्वान – वर्ष 2016

चिकित्सा →

योशीनोरी ओशूमी
(जन्म–1945, फुकुओका, जापान)

← शांति

जुआन मैनुएल सैंटोस
(जन्म–1951, बोगोटा, कोलम्बिया)

भौतिक विज्ञान →

डेविड जे0 थाउलेस
(जन्म–1934, बिअर्सडेन, यू0के0)

एफ0 डन्कन एम0 हेल्डेन
(जन्म–1951, लन्दन, यू0के0)

जे0 माइकल कोस्टेर्लिट्ज
(जन्म–1942, एबरडीन, यू0के0)

रसायन विज्ञान →

जीन–पियरे सॉवेज
(जन्म–1944, पेरिस, फ्रांस)

सर जे0 फ्रेजर स्टोड्डार्ट
(जन्म–1942, एडिनबर्ग, यू0के0)

बर्नार्ड एल0 फेरिन्गा
(जन्म–1951, बर्जर–कॉम्पसकम, द नीदरलैंड्स)

साहित्य →

बॉब डायलन
(जन्म–1941, ड्यूलुथ, मिन्नेसोटा, यू0एस0ए0)

ओलिवर हार्ट
(जन्म–1948, लन्दन, यू0के0)

बेंग्ट होल्म्सट्रॉम
(जन्म–1949, फिनलैण्ड)

← अर्थशास्त्र